बृहत पाराशर होरा शास्त्रम्

भाषा-टीका

ज्यौतिषाचार्य पं. गणेशदत्त पाठक

❋ श्रीगणेशाय नमः ❋

बृहत्-
पाराशरहोराशास्त्रम्

काशीस्थ जोखीराम मटरूमल गोयनका महाविद्यालय
पूर्व ज्योतिषविभागाध्यक्षेण
स्वर्गीय गणेशदत्तपाठकेन
सम्पादितम्।

तया—
सोदाहर[illegible] सहितम्

प्रकाशक
सावित्री ठाकुर प्रकाशन
रथयात्रा, वाराणसी

प्रमुख वितरक
ठाकुर प्रसाद कैलाशनाथ बुकसेलर
राजादरवाजा, वाराणसी

प्रकाशक
सावित्री ठाकुर प्रकाशन
रथयात्रा, वाराणसी
फोन-0542-3257309

संशोधित परिवर्तित संस्करण
सन् २००९

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन सुरक्षित।

मूल्य : रु० २००.०० (दो सौ रुपये)

मुद्रक
सावित्री प्रिंटिंग प्रेस
वाराणसी

Sri Ganeśāya Namaha

Brihat-
Pārāśarhorāśāstram

Edited by
Late Ganesh Dutt Pathak
Former Head, Department of Jyotish
Jokhiram Matarumal Goenka Mahavidyalaya
Varanasi

Enriched with
Hindi Meanings and Examples

Published by
Savitri Thakur Prakashan
Rathyatra, Varanasi

Distributed by
Thakur Prasad Kailashnath Bookseller
Rajadarwaja, Varanasi

Publisher
Savitri Thakur Prakashan
Rathyatra, Varanasi

© All Rights Reserved with the Publisher

Price : Rs. 200.00 (Rupees Two Hundred)

Printed at
Savitri Printing Press
Varanasi

भूमिका

ज्योतिषशास्त्र सिद्धान्त संहिता और होरा नामक तीन स्कंधों में प्रसिद्ध है। यह वेद का प्रधान अङ्ग माना जाता है। उपर्युक्त तीनों स्कंधों में प्रतिपाद्य विषय स्वतन्त्र हैं। किन्तु सिद्धान्त स्कंध के आश्रित शेष दोनों स्कंध हैं।

वेदों में, ब्राह्मण-ग्रन्थों में, श्रौत सूत्रों में, मीमांसा आदि दर्शनों में, पाणिनि सूत्रों में और पुराण-इतिहास में प्रसंगानुसार प्रयोजनवश ज्योतिष विद्या के अनेक प्रकीर्णक विषय सूत्ररूप से उपलब्ध हैं। इसके स्वतन्त्र विषय लगध मुन्युक्त (वेदाङ्गज्योतिष) नामक अति प्राचीन प्रसिद्ध ग्रंथ में प्रतिपादित हैं।

तात्पर्य यह है कि प्रत्येक यज्ञादि और गृह्योक्त संस्कारों के अथवा धार्मिक आचारों के कर्तव्य के काल का ज्ञान ज्योतिष के ही ऊपर निर्भर माना गया है। इसी कारण वेद में काल के संवत्सर, अयन, ऋतु आदि विभाग और नक्षत्रों का दैवतक सम्बन्धादि प्राप्त होते हैं। इसका विशेष विवरण अथर्ववेद में कालक्रमानुसार चर्चा है।

पंचभूतों के प्राकृतिक विभिन्न गुण-धर्मों से वेष्ठित भौतिक जगत् जड़ पिंड अपने अणु संसक्तावयवों से सदा स्पन्द क्रियाशील रहा करते हैं। मानस जीवन का अथवा स्थावर-जंगम विश्व के प्रत्येक वस्तु का परस्पर में दिव्य भौम एवं अन्तरिक्ष विविध उत्पात अर्थात् चेष्टाओं से प्रत्यक्ष-परोक्ष वशीकारक प्रभाव माना गया है और यही आरम्भ की भूमि है। तात्पर्य यह है कि विज्ञानानुमोदित प्राकृतिक अनुपात से अनुकूल क्रिया, प्रतिकूल अर्थात् शुभाशुभ ग्रह-नक्षत्रों के पिंडस्थ तत्त्व आकर्षण शक्ति द्वारा रश्मियों से प्रतिफलित होकर ऋतुधर्मानुसार अपने परिणामजन्य परिपाकों को प्राप्त हुआ करते हैं और इसका निदर्शन अन्य वस्तुओं की अपेक्षा सहज ही चेतन-पिंडों में अनुभूत होकर देखा जाता है। इस सूक्ष्म रहस्य की संगति अति कठिन है। आचार्य वराहमिहिर ने बृहत् जातक में लिखा है–

होरेत्यहोरात्र विकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवेसदादि यत्तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति।।

इसमें जन्मान्तरवाद अर्थात् जीवों के परिमाणवाद को आधार मानकर शुभाशुभ कर्म संस्कार का शरीर द्वारा भोग रूप से अभिव्यक्त होना प्रगट किया है। यहाँ मूलभूत अनिर्वचनीय सत्य फलित विद्या की सत्यता का एक मात्र स्तम्भ है। प्रत्येक नैसर्गिक घटना का कालज्ञान और आधाराधेय भाव से स्वरूप फल प्राप्ति परिणामान्तर में स्थित होकर भिन्न स्वरूप में प्रगट होती है। इसी गूढ़ तत्त्व को ऋषि-मुनियों ने अपने दिव्य दृष्ट से जानकर परिभाषाओं के भेद से संसार को सूचित किया है। इससे भौतिक पदार्थों के सिवाय ग्रहों का मानवीय सम्बन्ध उपपत्ति सिद्ध होता है।

यह निःसन्देह है कि वेंदिक ज्यौतिष तत्त्व का विकास ऋषि-मुनियों के समय से लेकर कालक्रमानुसार बढ़ता गया है और विभिन्न प्रकारों से इसकी उपयोगिता की परीक्षा करके वशिष्ठ, नारद, कश्यप, गर्ग आदि के संहिता-ग्रंथों की सृष्टि हुई। इसके अंग-उपांगों का आविष्कार समीकरण एवं उनके अनुयायी महाविशाल जाल भूपृष्ठ पर आकाश मध्य रेखा तक सीधा सम्बन्ध स्थापित करके ही छोड़ा और भविष्य में इनके अनुयायियों को वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, निग्रह आदि के सहारे कल्पना जालों को नवीन रूप देकर अनन्त की ओर प्रवृत्त होने के लिए पर्याप्त सामग्री छोड़ दी है।

प्रस्तुत ग्रंथ भी उन्हीं ऋषियों में से एक आचार्य की कृति है। इसके अनेक संस्करण निकले हुए हैं। जिनमें परस्पर पाठभेद हैं। इसकी कतिपय पांडुलिपियाँ भी कई स्थानों में वर्तमान हैं। मैने उन्हीं पांडुलिपियों में से कुछ एक का सहारा लेकर इस ग्रंथ का संपादन यथामति भाषाटीका में सोदाहरण किया है।

भ्रांति होना मनुष्य धर्म है। इस नीति के अनुसार सम्भवतः मुझसे भी कुछ भ्रांति और त्रुटि हो गई हो, अतः सज्जन विद्वत् गणों से करबद्ध प्रार्थना है कि उक्त त्रुटिओं के लिए क्षमा करते हुए मुझे सूचित करेंगे।

संवत् २०२९
श्रा० शु० १५

विनीत :
गणेशदत्त पाठक

विषय-सूची

विषयः	पृष्ठांकः	विषयः	पृष्ठांकः
मङ्गलाचरणम्	१७	खवेदांशम्	६०
अवतारवादः	१८	अक्षवेदांशम्	६१
राशिप्रभेदाध्यायः	२२	षष्ठ्यंशम्	६३
ग्रहस्वरूपाध्यायः	२६	वर्गभेदान्	६७
ग्रहाणामुच्चनीचम्	३२	षोडशवर्गविवेकाध्यायः	६९
ग्रहाणां मूलत्रिकोणम्	३२	षट्-सप्तवर्गाणां विंशोपकम्	७२
ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रामित्रत्वम्	३३	दशवर्गाणां विंशोपकम्	७२
तात्कालिकमित्रशत्रुत्वम्	३३	षोडशवर्गाणां विंशोपकम्	७२
पञ्चधा मैत्री	३४	विंशोपकबलस्य स्पष्टीकरणम्	७३
ग्रहाणामुच्चादिबलम्	३५	फलकथने विशेषः	७३
धूमाद्यप्रकाशग्रहानयनम्	३६	भावानां केन्द्रादि संज्ञा	७४
अप्रकाशग्रहाणां फलम्	३७	तन्वादिभावानां संज्ञा	७५
गुलकादिकालज्ञानम्	३७	राशिदृष्टिभेदाध्यायः	७६
प्राणपदसाधनम्	३८	राशिदृष्टिचक्रम्	७८
निषेकलग्नानयनम्	४०	ग्रहाणां दृष्टिचक्रम्	७९
भावलग्नानयनम्	४१	अरिष्टाध्यायः	८०
होरालग्नानयनम्	४२	अरिष्टभंगाध्यायः	८७
घटीलग्नानयनम्	४२	अप्रकाशग्रहफलाध्यायः	८८
वर्णदलग्नानयनम्	४३	धूमग्रहफलम्	८८
फलविचारम्	४५	पातफलम्	९०
षोडशवर्गप्रकरणम्	४७	परिधिफलम्	९२
गृहहोराकथनम्	४७	चापफलम्	९३
द्रेष्काणम्	४८	शिखिफलम्	९५
चतुर्थांशम्	४८	गुलिकफलम्	९७
सप्तमांशम्	४९	प्राणपदफलम्	९९
नवमांशम्	५०	अर्गलाध्यायः	१००
दशमांशम्	५१	कारकाध्यायः	१०५
द्वादशांशम्	५२	योगकारकम्	१०८
षोडशांशम्	५३	स्थिरकारकम्	१०९
विंशांशकम्	५४	भावकारकम्	११०
सिद्धांशम्	५६	सूर्यादिग्रहाणां कारकत्वम्	१११
भांशम्	५८	कारकांशफलम्	११२
त्रिंशांशम्	५९	कारकांशस्थितग्रहाणां फलम्	११५

विषयः	पृष्ठांकः	विषयः	पृष्ठांकः
कारकाशाद्धनभावफलम्	११८	पारिजातादि योगफलम्	२१९
कारकांशात्तृतीयभावफलम्	११९	विशेषयोगफलम्	२२१
कारकांशात्पंचमभावफलम्	१२०	राजयोगाध्यायः	२२२
कारकांशात्षष्ठभावफलम्	१२१	राजप्रधानयोगाध्यायः	२२६
कारकांशात्सप्तमभावफलम्	१२१	धनयोगाध्यायः	२२८
कारकांशादष्टमभावफलम्	१२१	दरिद्रयोगाध्यायः	२३०
कारकांशान्नवमभावफलम्	१२२	ग्रहाणामवस्थाध्यायः	२३२
कारकांशाद्दशमभावफलम्	१२३	अवस्थाफलम्	२३५
कारकांशादव्ययभावफलम्	१२३	आयुर्दायाध्यायः	२६०
विशेषफलम्	१२५	स्पष्टायुसाधनप्रकारः	२७३
आरूढमाह	१२९	मारकप्रकरणम्	२९२
पदादेकादशभावफलम्	१३०	पित्रादिनिर्याणाध्यायः	३०८
पदाद्द्वादशभावादीनां फलम्	१३१	मारकभेदाध्यायः	३१४
पदात्सप्तमभावफलम्	१३३	अष्टकवर्गाध्यायः	३१७
उपपदप्रकरणम्	१३५	त्रिकोणशोधनम्	३२५
कारकमारकविचाराध्यायः	१४२	एकाधिपत्यशोधनम्	३२७
द्वादशभावेषु विचार्यत्वम्	१४८	पिण्डोत्पत्याध्यायः	३२८
तनुभावफलम्	१५२	अष्टकवर्गफलाध्यायः	३३४
धनभावफलम्	१५३	सर्वाष्टकवर्गफलम्	३४४
सहजभावफलम्	१५६	भावफलम्	३४५
चतुर्थभावफलम्	१५७	पूर्वजन्मशापद्योतकाध्यायः	३५२
पञ्चमभावफलम्	१६०	दशाध्यायः	३७४
षष्ठभावफलम्	१६४	विंशोत्तरी दशा	३७५
सप्तमभावफलम्	१६७	षोडशोत्तरी दशा	३७७
अष्टमभावफलम्	१७३	द्वादशोत्तरी दशा	३७८
नवमभावफलम्	१७५	अष्टोत्तरी दशा	३७९
दशमभावफलम्	१७९	पञ्चोत्तरी दशा	३८०
एकादशभावफलम्	१८१	शताब्दिका दशा	३८१
द्वादशभावफलम्	१८३	चतुरशीताब्दिका दशा	३८२
भावेशफलाध्यायः	१८४	द्विदशासप्ततिका	३८३
नाभतादि योगाध्यायः	१९८	षष्ट्यब्दिका दशा	३८३
राजयोगादिफलाध्यायः	२१७	षट्त्रिंशतिका दशा	३८४
ग्रहाणां चतुर्विध संबंध	२१९	कालदशा	३८५

विषयः	पृष्ठांकः
चक्रदशा	२८६
चरदशा	४०१
नवांशस्थिरदशा	४०४
ब्रह्मदशा	४०७
केन्द्रदशा	४०८
कारककेन्द्रदशा	४१०
मण्डूकदशा	४११
शूलदशा	४१२
योगार्धदशा	४१३
दृग्दशा	४१४
त्रिकोणदशा	४१६
नक्षत्रदशा	४१७
तारादशा	४१८
वर्णददशा	४१९
पञ्चस्वरदशा	४२०
योगिनीदशा	४२१
पिंडांशादिदशा	४२३
सन्ध्यादशा	४२३
पाचकदशा	४२३
नवांशकारकदशा	४२४
राश्यंशकदशा	४२५
नक्षत्रदशामाह	४२६
दशाफलाध्यायः	४२६
रविदशाफलम्	४२६
चन्द्रदशाफलम्	४२८
भौमदशाफलम्	४३०
राहुदशाफलम्	४३१
गुरुदशाफलम्	४३२
शनिदशाफलम्	४३३
बुधदशाफलम्	४३४
केतुदशाफलम्	४३६
शुक्रदशाफलम्	४३६
भावेशानां दशाफलम्	४३८
अन्तर्दशादिफलविचाराध्यायः	४४६
अन्तर्दशानयनप्रकारः	४४७
अन्तर्दशाफलम्	४४८
सूर्यान्तर्दशाफलम्	४५२
चन्द्रान्तर्दशाफलम्	४६१
भौमान्तर्दशाफलम्	४७०
राह्वन्तर्दशाफलम्	४८१
गुर्वन्तर्दशाफलम्	४९४
शन्यन्तर्दशाफलम्	५०५
बुधान्तर्दशाफलम्	५१६
केत्वन्तर्दशाफलम्	५२७
शुक्रान्तर्दशाफलम्	५३७
प्रत्यन्तर्दशाध्यायः	५४७
प्रत्यन्तर्दशानयन प्रकारः	५४७
अथ सूर्यान्तरे सूर्यादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५४८
अथ चन्द्रान्तरे चन्द्रादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५०
अथ भौमान्तरे भौमादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५१
अथ राह्वन्तरे राह्वादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५२
अथ गुर्वन्तरे गुर्वादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५४
अथ शन्यन्तरे शन्यादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५५
अथ बुधान्तरे बुधादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५७
अथ केत्वन्तरे केत्वादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५८
अथ शुक्रान्तरे शुक्रादीनां प्रत्यन्तरदशाफलम्	५५९
अथ सूक्ष्मान्तरदशाध्यायः	५६१
अथ सूक्ष्मान्तरानयनप्रकारः	५६१
अथ सूर्यान्तरे सूर्यादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६१

विषयः	पृष्ठांकः
अथ चन्द्रान्तरे चन्द्रादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६३
अथ भौमप्रत्यन्तरे भौमादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६४
अथ राहुप्रत्यन्तरे राह्वादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६५
अथ गुरुप्रत्यन्तरे गुर्वादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६७
अथ शनिप्रत्यन्तरे शन्यादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६८
अथ बुधप्रत्यन्तरे बुधादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५६९
अथ केतुप्रत्यन्तरे केत्वादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५७१
अथ शुक्रप्रत्यन्तरे शुक्रादीनां सूक्ष्मान्तरदशाफलम्	५७२
अथ प्राणदशाफलाध्यायः	५७४
अथ प्राणदशानयनप्रकारः	५७४
अथ सूर्यप्राणदशाफलम्	५७५
अथ चन्द्रप्राणदशाफलम्	५७६
अथ भौमप्राणदशाफलम्	५७७
अथ राहोः प्राणदशाफलम्	५७९
अथ गुरोः प्राणदशाफलम्	५८०
अथ शनेः प्राणदशाफलम्	५८२
अथ बुधप्राणदशाफलम्	५८३
अथ केतुप्राणदशाफलम्	५८५
अथ भृगोः प्राणदशाफलम्	५८६
अथ सुदर्शनचक्रविवरणम्	५८८
ज्योतिषारशरहोरायाउत्तरार्धम्	
अथाष्टकवर्गाध्यायः	५९१
अथ रवेः करणसंख्यां करप्रदग्रहांश्चाह	५९४
अथ चन्द्रस्य करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	५९६
अथ भौमस्य करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	५९७
अथ बुधस्य करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	५९९
अथ गुरोः करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	६००
अथ भृगोः करणसंख्या करणप्रदग्रहांश्चाह	६०१
अथ शनेः करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	६०२
अथ लग्नस्य करणसंख्यां करणप्रदग्रहांश्चाह	६०३
अथ रविभावस्थानप्रदान्	६०४
अथ चन्द्ररभावस्थानप्रदान्	६०५
अथ भौमभावस्थानप्रदान्	६०६
अथ बुधभावस्थानप्रदान्	६०५
अथ गुरोः भावस्थानप्रदान्	६०७
अथ भृगोः भावस्थानप्रदान्	६०८
अथ शनेः भावस्थानप्रदान्	६०९
अथ लग्नस्य भावस्थानप्रदान्	६१०
अथ राशिगुणकबोधकचक्रम्	६११
अथ ग्रहगुणक बोधकचक्रम् करणस्थानलेखनविधिश्च	६११
अथ ग्रहभावसाधनम्	६१२
अथ दृष्टिबलसाधनम्	६१४
अथ उच्चबलसाधनम्	६१५
अथ सप्तवर्गजबलसाधनम्	६१६
अथ युग्मायुग्मबलसाधनम्	६१८
अथकेन्द्रादिद्रेष्काणबलसाधनम्	६१८
अथ दिग्बलसाधनम्	६१९
अथ कालबल-नतोन्नतबल साधनम्	६१९
अथ पक्षबलसाधनम्	६२०
अथ दिवारात्रित्रिभागबलसाधनम्	६२०
अथ वर्षेशादिसाधनम्	६२१

विषयः	पृष्ठांकः	विषयः	पृष्ठांकः
अथ कालबलसाधनम्	६२२	अथ द्विग्रहादियोगे निर्णयः	६३९
अथ अयनबलसाधनम्	६२३	अथ इष्टकष्टरश्मेः प्रयोजनम्	६३९
अथ युद्धादिबलसाधनम्	६२४	अथ पञ्चरश्मियोगफलम्	६३९
अथ गतिबलसाधनम्	६२४	अथ दशरश्मियोगफलम्	६३९
अथचेष्टाबलसाधनम्	६२४	अथ एकादशतो त्रयोदशपर्यन्त-	
अथ नैसर्गिकबलसाधनम्	६२६	रश्मिफलम्	६३९
अथ षड्बलैक्यचक्रम्	६२७	अथ चतुर्दशतः पञ्चदशपर्यन्त-	
अथ भावबलम्	६२७	रश्मिफलम्	६४०
अथ विशेषसंस्कारः	६२८	अथ षोडषतः द्वाविंशतिपर्यन्त-	
अथ कालविशेषबलाधिक्यता	६२८	रश्मिफलम्	६४०
अथ भानां दिग्बलम्	६२८	अथ त्रयोविंशतितः त्रिंशत्पर्यन्त	
अथ षड्बलैक्ये शुभाशुभादिकम्	६२९	रश्मिफलम्	६४०
अथ स्थानादिबल पृथक्-पृथक्		अथ एकत्रिंशतः चतुस्त्रिंशपर्यन्त-	
सुबलित्वम्	६२९	रश्मिफलम्	६४१
अथ भावफलदाताग्रहः	६२९	अथ त्रिंशत्रश्मिफलम्	६४१
अथैतच्छास्त्राधिकारि-		अथ रश्मौ विशेषफलम्	६४२
लक्षणम्	६३०	अथ राजयोगे विशेषः	६४२
अथेष्टकष्टाध्यायः	६३०	अथ विशेषः	६४२
अथ चेष्टारश्मिसाधनम्	६३१	अथ योगानां फलव्यवस्था	६४२
अथ शुभाशुभरश्मिसाधनम्	६३१	अथ लोकयात्राप्रकरणम्	६४२
अथ इष्टकष्टसाधनम्	६३१	अथ अष्टवर्गरेखाणांफलम्	६४२
अथ सप्तवर्गजशुभाशुभसाधनम्	६३२	अथ मृत्युसमयज्ञानम्	६४४
अथ पूर्वोक्तफले शुभाशुभत्वम्	६३२	अथ पिण्डोत्पत्तिः	६४५
अथ दिग्बलादौ शुभाशुभत्वम्	६३३	अथ रश्मिगुणकांकः	६४५
अथ पूर्वोक्तशुभाशुभबलस्य		अथ ग्रहगुणकांकः	६४५
स्पष्टीकरणम्	६३३	अथ एकाधिपत्यशोधनम्	६४६
अथ सग्रहे भावफले विशेषः	६३३	अथ मातृपित्रोः मृत्युकालः	६५०
अथ अष्टकवर्गे विशेषः	६३४	अथ चतुर्थभावात्सूर्याच्च	
अथ रश्मिफलवर्णनाध्यायः	६३४	आयुसाधनम्	६५१
अथ उच्चस्थानस्थरश्मिध्रुवाङ्कः	६३५	अथ ध्रुवाङ्कद्वारा आयुर्विचारः	६५१
अथ विशेषसंस्कारः	६३६	अथ रश्मितः आयुर्विचारः	६५२
अथ अन्यसंस्कारः	६३७	अथ करणाद्यभावे करणादिद्वारा	
अथ मतान्तराद् रश्मिहानिवृद्धिः	६३७	भावविचारः	६५२
अथ ग्रहाणामष्टधागतिः	६३८	अथ भावानां संस्कारविशेषाद्	
अथ योगविशेषात् ह्रासवृद्धिः	६३८	फलविचारः	६५२

विषयः	पृष्ठांकः	विषयः	पृष्ठांकः
अथ प्रकारांतरेण भावफलविचारः	६५३	अथ आयुषः प्रकारान्तराणि	६७८
अथ अष्टकवर्गफलाध्यायः	६५४	अथ पिण्डायुषः ध्रुवाङ्कः	६७९
अथ तत्राष्टकवर्गे विचारणीयः	६५४	अथ नैसर्गिकरश्मिजायुषोः	६७९
अथ पित्र्यरिष्टविचारः	६५७	अथ ध्रुवांकेभ्यो आयुसाधन-	
अथ विशेषः	६५७	प्रकारः	६८०
अथ पित्रृमरणकालः	६५७	अथ नवांशायुर्दायसाधनम्	६८०
अथ चन्द्राष्टकवर्गस्य फलम्	६५७	अथ नवांशायुर्दाये विशेषः	६८१
अथ भौमाष्टकवर्गफलम्	६५८	अथ नवांशायुर्दाये ध्रुवांकाः	६८१
अथ बुधाष्टकवर्गफलम्	६५९	अथ नक्षत्रायुर्दायानयनम्	६८२
अथ गुर्वष्टकवर्गफलम्	६५९	अथ आयुषः ह्रासवृद्धेः योगः	६८३
अथ शुक्राष्टकवर्गफलम्	६६०	अथ आयुष्ययोगाः	६८३
अथ शनेरष्टकवर्गफलम्	६६०	अथ केन्द्रादि आयुष्यः	६८४
अथ विशेषः	६६२	अथ पूर्वोक्तायुषे हानिः	६८४
अथ अवस्थात्रयविचारः	६६२	अथ पूर्वोक्तफलस्य पुष्टिः	६८६
अथ सर्वाष्टकवर्गफलम्	६६२	अथ अस्तंगतग्रहस्य तथा	
अथ भावफलम्	६६३	लग्नस्य आयुः	६८६
अथ समुदायाष्टकवर्गफलम्	६६४	अथ लग्ने क्रूरग्रहे सति	६८७
अथ रेखाशान्तिफलम्	६६५	अथ अष्टमभावे केन्द्रे च	
अथ भावानां फलसमयः	६६९	शुभापापयोगे	६८७
अथ शुभपापभेदात्भावफले		अथ राहुयुक्तलग्नस्य आयु-	
विशेषः	६७०	विचारः	६८८
अथ कारकविचारः	६७०	अथ द्रेष्काणवशात् हानिवृद्धिः	६८८
अथ दृष्टिवशात्भावफलस्य		अथ अष्टकवर्गोत्पन्न अंशायुषि	
व्यवस्था	६७१	हरणम्	६८९
अथ स्त्रीपुरुषयोः स्वभावविचारः	६७१	अथ अन्तर्दशाप्रकारः	६८९
अथ स्वभावे ह्रासवृद्धिः	६७१	अथ समच्छेदाभावस्थानम्	६९०
सूर्यादिग्रहाणां स्थानसम्बन्धा-		अथ अन्तर्दशानियमः	६९०
त्पाचकादिग्रहाः	६७२	अथ पिण्डायुषि भेदानि	६९१
अथ सूर्यादिग्रहाणां गोचरे		अथ आयुषः ग्रहणे नियमः	६९२
फलकालः	६७३	अथ विशेषः	६९२
अथ भावफलानामवधिः	६७३	अथ भावानुसारेणायुविचारः	६९३
अथ योगानां भंगयोगः	६७४	अथ मिश्रायुर्दायक्रमः	६९४
अथ पुनः प्रकारान्तरेण	६७५	अथ आयुर्दायसंख्या	६९४
अथ भावानां संज्ञा	६७६	अथ अमिश्रायुषे भेदः	६९४
अथ ग्रहात् भावविचारः	६७७	अथ पिण्डायुषः भेदः	६९५

विषयः	पृष्ठांकः
अथ प्रकारान्तरेण	६९५
अथ योगान्तरम्	६९७
अथ रश्मिवशेनायुर्ग्रहणे नियमः	६९७
अथ भावविचारस्य रीतिः	६९९
अथ दशवर्गरीत्या भाग्योदय-विचारः	७००
अथ भाग्योदयसमयः	७००
अथ प्रकारान्तरेण	७००
अथ ग्रहाणां विशेषफलानि	७०१
अथ चन्द्रस्य फलम्	७०१
अथ भौमस्य फलम्	७०२
अथ बुधस्य फलम्	७०२
अथ गुरोः फलम्	७०३
अथ भृगोः फलम्	७०४
अथ शनेः फलम्	७०४
अथ फलप्राप्तेः समयः	७०५
अथ मुहूर्त्तलक्षणम्	७०६
अथ विनाडेः ३२ मुहूर्त्ताः	७०७
अथ षष्ठिघट्यात्मकमुहूर्त्ताः	७०८
अथ कालांशराशिचक्रमुहूर्त्ता	७०८
अथ नित्योदयस्य क्रमः	७०८
अथ नित्योदयघटीप्रमाणम्	७०९
अथ प्रकारान्तरेण राशीनां मानानि	७०९
अथ दशवर्गानां फलम्	७०९
अथ राहोः गतिः	७११
अथ अस्य प्रयोजनम्	७११
अथ पित्र्याद्यरिष्टविचारः	७१२
अथ सुगतिदुर्गति विचारः	७१२
अथ कुब्जादियोगाः	७१३
अथ योगान्तरम्	७१४
अथ मृत्युकालज्ञानम्	७१४
अथ अल्पमध्यदीर्घायुज्ञानम्	७१४
अथ चतुर्दशग्रहाणां षष्ठ्यंशादिः	७१५
अथ नक्षत्रगणनाक्रमः	७१५
अथ षष्ठ्यंशोत्पत्तौ फलम्	७१६
अथ मृतपुत्रकन्यायोगः	७१६
अथ संन्यासयोगः	७१७
अथ परमहंसादियोगाः	७१७
अथ प्रवज्यायां निष्ठायोगः	७१८
अथ अंशविशेषे जातायां स्त्रीलक्षणम्	७१८
अथ दशमभावानुसारफलम्	७१९
अथ मेषादिराशीनां फलानि	७२०
अथ सूर्यादीनां कालांशफलम्	७२१
अथ षष्ठ्यंशफलम्	७२२
अथ षष्ठ्यंशे विशेषः	७२३
अथ मरणनिमित्तानि	७२४
अथ नवांशद्वारा मरणनिमित्तानि	७२४
अथ राशिनिमित्ततो मृत्यविचारः	७२४
अथ कालादिसूर्यान्तचतुर्दश-ग्रहाणामंशेन मृत्युज्ञानम्	७२५
अथ रश्मिद्वारा वर्षा नयने हरांशज्ञानम्	७२५
अथ अंशायुहारः	७२६
अथ राशीनामंशायुर्दाये हारः	७२६
आथ पूर्वोक्तानां फलविचारः	७२७
अथ योगज्ञानम्	७२७
योगान्तरम्	७२८
अन्यविशेषः	७२९
अथ वर्षचर्यादिफलाध्यायः	७३०
तत्रादौ राश्यंशफलम्	७३०
अथ सूर्यादिग्रहाणां द्वादश-भावफलम्	७३६
अथ चन्द्रस्य द्वादशभावफलम्	७३७
अथ भौमस्य द्वादशभावफलम्	७३७
अथ बुधस्य द्वादशभावफलम्	७३८
अथ गुरुशुक्रयोः द्वादशभावफलम्	७३८
अथ शनेः द्वादशभावफलम्	७३९
अथ ग्रहाणां दृष्टिवशात् सूर्या-दीनां फलम्	७३९

विषयः	पृष्ठांक	विषयः	पृष्ठांक
अथ चन्द्रस्य फलम्	७४०	अथ आरूढलग्नादायुर्निर्णयः	७५३
अथ भौमस्य फलम्	७४०	अथ मृत्युलक्षणम्	७५३
अथ बुधस्य फलम्	७४०	अथ योगान्तरम्	७५३
अथ गुरोः फलम्	७४१	अथ राहुकालसमायोगलक्षणम्	७५३
अथ भृगोः फलम्	७४१	अथ नक्षत्रतिथिवारेषु दिशाक्रमः	७५४
अथ स्थानबलयुक्तसूर्यादि-ग्रहाणां फलम्	७४१	अथ द्वितीयभावाद्दष्टमभाव पर्यन्तम्	७५५
अथ दिग्बलयुक्तसूर्यादि-ग्रहाणां फलम्	७४२	अथ रोगिणः मृत्युसम्बन्धिप्रश्नम्	७५५
अथ कालबलयुक्तसूर्यादि-ग्रहाणां फलम्	७४३	अथ नक्षत्रक्रमेण कालस्या-वयवान्	७५६
अथ चेष्टाबलयुक्तसूर्यादि-ग्रहाणां फलम्	७४३	अथ प्रश्नकर्त्तुः अशुभलक्षणं तथा शुभप्रश्नः	७५६
अथ इष्टबलयुक्तसूर्यादि-ग्रहाणां फलम्	७४३	अथ अनादि ज्ञानम्	७५७
अथ फलान्तरम्	७४४	अथ वर्षमासतिथिज्ञानम्	७५७
अथ दशाफलम्	७४५	अथ वर्षज्ञानम्	७५७
अथ मासचर्यायुकरणम्	७४५	अघ प्राणलग्नादेः ज्ञानम्	७५८
तत्रादौ भावसंधिस्थग्रहाणां फलम्	७४५	अथ जन्मनक्षत्रज्ञानम्	७५८
अथ भावानां फलम्	७४६	अथ प्रकारान्तरेण मासादिः	७५८
अथ भावानां स्थानांकसंख्यामाह	७४६	अथ बलविचारः	७५९
अथ भावानां करणसंख्यामाह	७४६	अथ दृष्टिविचारः	७५९
अथ पूर्वोक्तस्थानकरणसंख्यानां शुभाशुभत्वं विशेष फलम्	७४६	अथ ग्रहाणां स्थानदिग्बलम्	७६०
अथ जातिदेशानुसारेण फले तारतम्यम्	७४७	अथ अयनबलम्	७६०
अथ दिनचर्याप्रकरणम्	७४८	अथ पक्षचेष्टाम् दिवादिबल	७६०
अथ प्रश्नाध्यायः	७४९	अथ दशवर्गबलम्	७६१
अथ ज्योतिषशास्त्रज्ञाने उपायः	७५०	अथ शास्त्रस्य वेदाङ्गत्वप्रति-पादनम्	७६१
अथ दैवज्ञलक्षणम्	७५१	अथ अध्यायानुक्रमः	७६२
अथ प्रश्नकर्त्तुः नियमः	७५२	अथ शास्त्रफलं तथा शास्त्र-परम्परा	७६३
		अथ अन्तर्दशादिचक्रम्	७६४
		इतिचक्रम्	७८८

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता।

श्रीगणेशाय नमः

अथ बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्

भाषा-टीकासहितम्

पूर्वार्धम्

श्रीगणेशं गुरुं नत्वा नत्वाम्बां सुमतिप्रदाम्।
पाराशरीयहोरायाः कुर्वे टीकां सुबोधिनीम्।।१।।

मैत्रेय उवाच—

नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा।
परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञानध्वंसिने।।१।।
इति स्तुत्या सुसंहृष्टो मुनिस्तत्त्वविदाम्बरः।
अथादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां शुभम्।।२।।

मैत्रेय जी ज्योतिषशास्त्र के सार पदार्थ को जानने के लिए पाराशर जी की स्तुति करते हैं।

अज्ञान को नाश करने वाले परम आनन्द को देनेवाले सर्वदा ज्ञान को देनेवाले भगवन् परमपूज्य आपको नमस्कार है। इस स्तुति से तत्त्व के जानने वालों में श्रेष्ठ मुनि प्रसन्न होकर ज्यौतिष (ग्रहों) के शुभ तत्त्व शास्त्र का आदेश करने लगे।।१-२।।

पराशर उवाच—

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम्।
प्रणम्य पाञ्चजन्यं च वीणां याभ्यां धृतं द्वयम्।।३।।

पराशर जी बोले— सफेद वस्त्र को धारण किये हुये, पांचजन्य को लिये हुये विष्णु को एवं सफेद वस्त्र को धारण किये हुये, वीणा को लिये हुये सरस्वती को प्रणाम कर।।३।।

सूर्यं नत्वा ग्रहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम्।
वक्ष्यामि वेदनयनं यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम्।।४।।

संसार के उत्पत्ति के कारण ग्रहों के स्वामी सूर्य को नमस्कार करके जैसा मैंने ब्रह्मा के मुख से सुना है वैसा ही वेद के नेत्र को (ज्यौतिष- शास्त्र) कहूँगा।।४।।

शान्ताय गुरुभक्ताय ऋजवेऽर्चितस्वामिने।
आस्तिकाय प्रदातव्यं ततः श्रेयो ह्यवाप्यति।।५।।

इस शास्त्र को शान्तस्वभाव गुरुभक्त, सीधे, स्वामीभक्त और आस्तिक को देना चाहिए। इससे कल्याण की प्राप्ति होती है।।५।।

न देयं परशिष्याय नास्तिकाय शठाय च।
दत्ते प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संशयः।।६।।

दूसरे के शिष्य को, नास्तिक और मूर्ख को नहीं देना चाहिए। ऐसा करने से प्रतिदिन दुःख होता है, इसमें संशय नहीं है।।६।।

अथ सृष्ट्यारम्भमाह—

एकोऽव्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः।
शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः।।७।।

एक अव्यक्त आत्मावाले विष्णु हैं जो कि अनादि, समर्थ, ईश्वर, शुद्ध सतोगुणी, जगत् के स्वामी, निर्गुण होते हुए भी तीनों गुणों से युक्त हैं।।७।।

संसारकारकः श्रीमान्नियमितात्मा प्रतापवान्।
एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया।।८।।

संसार को बनाने वाले सर्व सम्पत्ति से युक्त, नियतात्मावाले, प्रतापी हैं। वे अपने एक अंश से सम्पूर्ण जगत् की लीला से ही रचना करते और पालन करते हैं।।८।।

त्रिपादं तस्य देवस्य ह्यमृतं तत्त्वदर्शिभिः।
विदन्ति तत्प्रमाणं च सप्रधानं तथैकपात्।।९।।

इनके तीन चरण अमृतमय हैं जिसे तत्त्वदर्शी लोग जानते हैं। प्रधान के सहित प्रमाणस्वरूप एक चरण से।।९।।

व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते।
यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः।।१०।।

व्यक्त और अव्यक्त आत्मावाले विष्णु को वासुदेव कहते हैं। जो अव्यक्त विष्णु हैं वे दो शक्तियों से युक्त हैं।।१०।।

व्यक्तात्मकस्त्रिशक्तीभिः संयुतोऽनन्तशक्तिमान्।
सत्त्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूशक्तिश्च रजोगुणः।।११।।

व्यक्त आत्मावाले विष्णु तीन शक्तियों से युक्त होने से अनन्त शक्तिवाले कहे जाते हैं। तीनों शक्तियों में श्री शक्ति सत्त्वगुण प्रधान, भू शक्ति रजोगुण प्रधान है।।११।।

शक्तिस्तृतीया प्रोक्ता नीलाख्या ध्वान्तरूपिणी।
वासुदेवश्चतुर्थोऽभूच्छ्रीशक्त्या प्रेरितो यदा।।१२।।

तीसरी नील शक्ति तमोगुण प्रधान है। इनसे भिन्न श्रीशक्ति से प्रेरित चौथे वासुदेव हैं।।१२।।

सङ्कर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्त्तिधृक्।
तमःशक्त्यान्वितो विष्णुर्देवः सङ्कर्षणाभिधः।।१३।।

वे संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध नामक मूर्ति को धारण करते हैं, तमः शक्ति से युक्त विष्णु संकर्षण नाम से।।१३।।

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्याऽनिरुद्धः सत्त्वया युतः।
महान्सङ्कर्षणाज्जातः प्रद्युम्नादहंकृतिः।।१४।।

रज शक्ति से प्रद्युम्न, सत्त्व शक्ति से युक्त अनिरुद्ध होते हैं। संकर्षण से महत्तत्त्व की उत्पत्ति और प्रद्युम्न से अहंकार की उत्पत्ति हुई।।१४।।

अहङ्कारात्स्वयं जातो ब्रह्माहङ्कारमूर्त्तिधृक्।
सर्वेषु सर्वशक्तिश्च स्वशक्त्याधिकया युतः।।१५।।

अहंकार से अहंकार की मूर्त्ति को धारण किये हुए ब्रह्मा हुए। सभी लोगों में सभी शक्तियाँ हैं किन्तु जिस शक्ति से जो उत्पन्न हुए हैं वह शक्ति उनमें अधिक है।।१५।।

अहङ्कारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तराद्।
सात्त्विको राजसश्चैव तामसश्चेदहंकृतिः।।१६।।

अहंकार भी सात्त्विक, राजस, तामस क्रम से वैकारिक, तैजस और तामस नाम से तीन प्रकार के हैं।।१६।।

देवा वैकारिकाज्जातास्तैजसादिन्द्रियाणि च।
तामसाश्चैव भूतानि खादीनि स्वशक्तिभिः।।१७।।

वैकारिक से देवता, तैजस से इन्द्रिय और तामस से पंचमहाभूतों की उत्पत्ति हुई है। ये सभी अपनी-अपनी शक्ति से उत्पन्न हैं।।१७।।

श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदापाति जगत्त्रयम्।
भूशक्त्या सृजते विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽत्ति हि।।१८।।

श्री शक्ति से युक्त होकर विष्णु (वासुदेव) तीनों का पालन करते हैं, भू शक्ति से (विष्णु) ब्रह्मा जगत् की सृष्टि करते हैं और नील शक्तिसम्पन्न शिव तीनों लोकों का लय करते हैं।।१८।।

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा विराजते।
सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि।।१९।।

हे ब्रह्मन्! सभी जीवों में परमात्मा स्थित हैं और यह समस्त जगत् परमात्मा में स्थित है।।१९।।

सर्वेषु चैव जीवेषु स्थितं ह्यंशद्वयं क्वचित्।
जीवांशमधिकं तद्वत्परमात्मांशकः किल।।२०।।

सभी जीवों में दो अंश अधिक होते हैं, किसी में जीवांश अधिक होता है और किसी में परमात्मांश अधिक होता है।।२०।।

सूर्यादयो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामद्विषादयः।
एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः।।२१।।

सूर्यादि ग्रहों में, ब्रह्मा, शिव आदि देवता तथा अन्य अवतारों में परमात्मांश अधिक होता है।।२१।।

शक्तयश्च तथैतेषामधिकांशाः श्रियादयः।
अन्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेया जीवांशकाधिकाः।।२२।।

इनकी जो शक्तियाँ (लक्ष्मी आदि) हैं इनमें भी परमात्मांश अधिक होता है। अन्य देवता और उनकी शक्तियों में जीवांश अधिक होता है।।२२।।

अवतारवादः।

पराशर जी के उत्तर से शंकित हो मैत्रेय जी ने पुनः प्रश्न किया।

मैत्रेय उवाच—

रामकृष्णादयो ये च ह्यवतारा रमापतेः।
तेऽपि जीवांशसंयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर।।२३।।

मैत्रेय जी बोले— हे मुनीश्वर! राम, कृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार हैं क्या वे भी जीवांश से युक्त हैं।।२३।।

पराशर उवाच—

रामः कृष्णश्च भो विप्र नृसिंहः शूकरस्तथा।
इति पूर्णावतारश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः।।२४।।

पराशर जी बोले– हे विप्र! राम, कृष्ण, नृसिंह और शूकर ये पूर्ण अवतार हैं। अन्य अवतार जीवांश से युक्त हैं।।२४।।

अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मनः।
जीवानां कर्मफलदो ग्रहरूपी जनार्दनः।।२५।।

अजन्मा परमात्मा के अनेक अवतार हैं। जीवों के कर्मानुसार फल देने के लिए ग्रहरूप जनार्दन भगवान् का अवतार है।।२५।।

दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये।
धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहाज्जाताः शुभाः क्रमात्।।२६।।

दैत्यों के बल को नाश करने के लिए और देवताओं का बल बढ़ाने के लिये तथा धर्म को स्थापित करने के लिये ग्रहों से शुभद अवतार हुए हैं।।२६।।

रामोऽवतारः सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः।
नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च।।२७।।

जैसे सूर्य का रामावतार, चन्द्रमा का कृष्णावतार, भौम का नृसिंहावतार और बुध का बौद्धावतार है।।२७।।

वामनो विबुधेज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च।
कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैंहिकेयस्य सूकरः।।२८।।

बृहस्पति का वामन अवतार, शुक्र का भार्गव (परशुराम) अवतार, शनि का कूर्म अवतार, राहु का सूकर अवतार है।।२८।।

केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः।
परमात्मांशमधिकं येषु ते च वै खेचराभिधाः।।२९।।

केतु का मत्स्यावतार हुआ है, अन्य अवतार भी ग्रहों से ही हुए हैं। जिनमें परमात्मांश अधिक है वे खेचर यानि देव कहे जाते हैं।।२९।।

जीवांशमधिकं येषु जीवास्ते वै प्रकीर्त्तिताः।
सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्मांशनिःसृताः।।३०।।
रामकृष्णादयः सर्वे ह्यवतारा भवन्ति वै।
तत्रैव ते विलीयन्ते पुनः कार्यान्तरे सदा।।३१।।

जिनमें जीवांश अधिक हैं वे जीव कहे जाते हैं। सूर्य आदि ग्रहों से परमात्मांश निकल कर ही राम, कृष्ण आदि अवतार हुए हैं। वे अपने-अपने कार्यों को करके पुनः उन्हीं में लीन हो जाते हैं।।३०-३१।।

जीवांशनिःसृतास्तेषां तेभ्यो जाता नरादयः।
तेऽपि तथैव लीयन्ते तेऽव्यक्ते समयान्ति हि।।३२।।

उन्हीं (सूर्यादिग्रहों) में से जीवांश के निकलने से मनुष्य आदि जीवों की सृष्टि होती हैं वे भी इहलोक में अपने-अपने कार्यों को करके अन्त में उन्हीं में लीन हो जाते हैं। ये ग्रह भी प्रलय के समय अव्यक्त परमात्मा में लीन हो जाते हैं।।३२।।

इदं ते कथितं विप्र स यस्मिन् वै भवेदिति।
भूतान्यपि भविष्यन्ति तत्तत्सर्वज्ञतामियात्।।३३।।

हे विप्र! इस प्रकार से मैंने सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय जैसे होती है, हुई है और होगी उन सभी को तुम से कहा। इन सबको वही सर्वज्ञ (परमात्मांश पुरुष) ही जानता है।।३३।।

विना तज्ज्योतिषं नान्यो ज्ञातुं शक्नोति कर्हिचित्।
तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः।।३४।।

इन सभी बातों को बिना ज्योतिषशास्त्र के कोई कभी भी नहीं जान सकता है। इसलिये इस शास्त्र का अध्ययन अवश्य करना चाहिए, विशेषकर ब्राह्मण को अवश्य करना चाहिए।।३४।।

यो नरः शास्त्रमज्ञात्वा ज्यौतिषं खलु निन्दति।
रौरवं नरकं भुक्त्वा चान्धत्वं चान्यजन्मनि।।३५।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखंडे सृष्ट्यादिक्रमशास्त्रावतरणं नाम प्रथमोऽध्यायः।।१।।

जो मनुष्य इस शास्त्र को न जानते हुए ज्योतिषशास्त्र की निन्दा करता है, वह रौरव नरक को भोगकर दूसरे जन्म में अन्धा होता है।।३५।।

इति पाराशरहोरायां सुबोधिन्यां प्रथमोऽध्यायः।।१।।

अथ राशिप्रभेदाध्यायः

मैत्रेय उवाच–

यदव्यक्तात्मको विष्णुः कालरूपो जनार्दनः।
तस्याङ्गानि निबोध त्वं क्रमान्मेषादि राशयः।।१।।

मैत्रेय जी बोले– जो व्यक्त (प्रकट रूप) विष्णु काल (समय) रूपी जनार्दन हैं, उनके अंगों का ज्ञान क्रम से मेषादि राशियों द्वारा बताइये।।१।।

पराशर उवाच—

अहोरात्र्याद्यन्तलोपाद्धोरेतिं प्रोच्यते बुधैः।
तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्म फलं वदेत्।।२।।

पराशर जी बोले— अहोरात्र शब्द के आदिम वर्ण 'अ' और अन्तिम वर्ण 'त्र' का लोप हो जाने से होरा शब्द होता है, जिसका ज्ञान होने से जातक के शुभ-अशुभ फल का ज्ञान होता है।।२।।

मेषो वृषश्च मिथुनः कर्कसिंहकुमारिकाः।
तुलालिधनुषो नक्रकुम्भमीनास्ततः परम्।।३।।

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन ये बारह राशियाँ हैं।।३।।

शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तयः।
गुह्योरुजानुयुग्मे वै युगलें जङ्घके तथा।।४।।

जन्मलग्न से उक्त बारह राशियाँ क्रम से शिर, मुख, दोनों भुजायें, हृदय, पेट, कटि, बस्ति (नाभिलिंग के मध्यभाग को बस्ति कहते हैं), गुह्यस्थान (स्त्री-पुरुष के चिह्न), उरु, दोनों जानु, जंघे हैं।।४।।

चरणौ द्वौ तथा लग्नात् ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात्।
चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।।५।।

दोनों चरण कालपुरुष के अंग में हैं। मेषादि राशियों की क्रम से चर, स्थिर, द्विस्वभाव तथा क्रूर, शुभ और पुरुष स्त्री संज्ञायें हैं।।५।।

पित्तानिलस्त्रिधा त्वैक्यं श्लेष्मिकाश्च क्रियादयः।
रक्तवर्णो बृहद्गात्रश्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी।।६।।

पित्त, वायु, पित्त वायु कफ तीनों मिले हुए, और कफ प्रकृति है मेष राशि का लाल वर्ण, बड़ी शरीर, चार पैर, रात में बलवान् हैं।।६।।

अथ मेषराशिस्वरूपम्—

पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी।
पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।।७।।

पूर्व दिशा, क्षत्रिय वर्ण, पर्वतीय प्रदेश में घुमनेवाली, रजोगुणी, पृष्ठोदयी अग्निराशि है और इसके स्वामी मंगल हैं।।७।।

अथ वृषराशिस्वरूपम्—

श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घः चतुष्पाच्छर्वरी बली।
याम्येट् ग्राम्यो वणिग्भूमिः स्त्री पृष्ठोदयो वृषः।।८।।

वृष राशि का श्वेत (सफेद) वर्ण, लम्बी शरीर, चार पैर, रात्रिबली, दक्षिण दिशा, ग्रामवासी, वैश्यवर्ण, भूमिप्रिय, पृष्ठोदयी है और शुक्र इसके स्वामी हैं।।८।।

अथ मिथुनराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम्।
प्रत्यक्स्वामी द्विपाद्रात्रिबली ग्राम्याग्रगोऽनिली।।९।।
समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।

मिथुन राशि शीर्षोदय, पुरुष-स्त्री, पुरुष गदा को लिए और स्त्री वीणा को लिए हुए, पश्चिम दिशा का स्वामी, द्विपद, रात्रिबली, ग्राम में रहनेवाला, वायु प्रकृति है।।९।।

समान (चौखूटी) शरीर, हरे रंग की है और बुध इसके स्वामी हैं।

अथ कर्कराशिस्वरूपम्—

पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।।१०।।
बहुपटुतरः स्थौल्यतनुः सत्त्वगुणी बली।
पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगाङ्कोऽधिपतिः स्मृतः।।११।।

कर्क राशि का पाटल (थोड़ा लाल और सफेद मिला हुआ) वर्ण, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात में बली है।।१०।।

अत्यन्त विद्वान्, स्थूल शरीर, जल में रहने वाली, पृष्ठोदयी राशि है और चन्द्रमा इसके स्वामी हैं।।११।।

अथ सिंहराशिस्वरूपम्—

सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली।
शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेद्युवीर्यवान्।।१२।।

सिंह राशि सतोगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय वर्ण, बलवान्, शीर्षोदयी राशि, लम्बी शरीर, पांडुवर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी, दिन में बली है और सूर्य इसके स्वामी हैं।।१२।।

अथ कन्याराशिस्वरूपम्—

पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता।
शीर्षोदया च मध्याङ्गा द्विपाद्याम्यचरा स्मृता।।१३।।

कन्या राशि पर्वत में विशेष रुचिवाली, दिवाबली, शीर्षोदयराशि, मध्यम शरीर, द्विपद, दक्षिण दिशा में रहनेवाली, वैश्यवर्ण है।।१३।।

ससस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभञ्जिनी।
कुमारी तमसायुक्ता बालभावा बुधाधिपः।।१४।।

धान को भूजती हुई, चित्र वर्ण (छींट) के वस्त्र को पहने हुई कन्या तमोगुण से युक्त बालभाव वाली है और बुध इसके स्वामी हैं।।१४।।

अथ तुलाराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयी द्युवीर्याढ्यस्तथा शूद्रो रजोगुणी।
शुक्रोऽधिपो पश्चिमेशो तुलो मध्यतनुर्द्विपात्।।१५।।

तुलाराशि शीर्षोदयी, दिवाबली, शूद्रवर्ण, रजोगुणी, पश्चिम दिशा की स्वामी, मध्यम शरीरवाली है और शुक्र स्वामी हैं।।१५।।

अथ वृश्चिकराशिस्वरूपम्—

शीर्षोदयोऽथ स्वल्पाङ्गो बहुपाद्ब्राह्मणो बली।
सौम्यस्थो दिनवीर्याढ्यः पिशङ्गो जलभूचरः।
रोमस्वाढ्योऽतितीक्ष्णाङ्गो वृश्चिकश्च कुजाधिपः।।१६।।

वृश्चिक राशि— शीर्षोदय राशि, छोटा शरीर, अनेक चरण, ब्राह्मण वर्ण, उत्तर दिशा में बली, दिवाबली, धुम्रवर्ण जलीय भूमि पर चलने वाली है।।१६।।

रोम से युक्त शरीर, अत्यन्त तीखे अंगोवाली है और भौम स्वामी हैं।

अथ धनुराशिस्वरूपम्—

अश्वजङ्घो त्वथ धनुर्गुरू स्वामी च सात्त्विकः।।१७।।
पिङ्गलो निशि वीर्याढ्यः पावकः क्षत्रियो द्विपाद्।
आदावन्ते चतुष्पाद् समगात्रो धनुर्धरः।।१८।।

धन राशि को घोड़े का जंघा है, सात्त्विक राशि है।।१७।।

पिंगल वर्ण, रात्रिबली, अग्निराशि, क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्ध द्विपद और उत्तरार्ध चतुष्पद, समान शरीर, धनुष को लिये हुए है।।१८।।

पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजवान्पृष्ठतोद्गमी।

पूर्वदिशा का स्वामी, भूमि पर रहने वाली, तेजस्वी, पृष्ठोदयी है और गुरु इसके स्वामी हैं।

अथ मकरराशिस्वरूपम्—

मन्दाधिपस्तमी भौमी याम्येट्च निशि वीर्यवान्।।१९।।
पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः मकरो जलभूचरः।

आदौ चतुष्पादन्ते च द्विपदो जलगो मतः।।२०।।

मकर राशि तमोगुणी, भूतत्व, दक्षिण दिशा का स्वामी, रात्रिबली है।।१९।।

पृष्ठोदयी, बड़ा शरीर, जलीय भूमि में चलनेवाली, पूर्वार्ध चतुष्पद और उत्तरार्ध द्विपद, जल में रहने वाली है और शनि स्वामी हैं।।२०।।

अथ कुम्भराशिस्वरूपम्—

कुम्भः कुम्भी नरो बभ्रुः वर्णमध्यतनुर्द्विपात्।
द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः।।२१।।
शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः।

कुम्भ राशि— घड़ा लिये हुए, पुरुष नेवले के रंग के जैसा (भूरा) वर्ण, मध्यम शरीर, द्विपद, दिवाबली, जल में रहने वाली (जलचर), वायु प्रकृति, शीर्षोदयी तम प्रकृति है।।२१।।

शूद्रवर्ण, पश्चिम देश वा दिशा का स्वामी है और शनि स्वामी हैं।

अथ मीनराशिस्वरूपम्—

मीनौ पुच्छास्य संलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली।।२२।।
जली सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः।
अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी।।२३।।

मीनराशि— दो मछलियों में एक का मुख दूसरे की पूँछ में लगा हुआ स्वरूप, दिन में बली हैं।।२२।।

जलचर, सतोगुणी, ब्राह्मण वर्ण, चरण हीन, मध्यम शरीर, उत्तर दिशा का स्वामी, उभयोदयी है।।२३।।

सुराचार्याधिपश्चास्य राशीनां गदितं मया।
त्रिंशद्भागात्मकः स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च।।२४।।

गुरु स्वामी हैं। इस प्रकार मैंने ३० अंश के राशियों का स्वरूप कहा, इनके स्थूल और सूक्ष्म फल ग्रन्थों में कहे हुए हैं।।२४।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां राशिस्वरूपाध्यायः द्वितीयः।।२।।

अथ ग्रहस्वरूपाध्यायः।।३।।

पराशर उवाच—

कालात्मा च दिवानाथो मनः कुमुदबान्धवः।
सत्त्वं कुजो विजानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः।।१।।

पराशरजी बोले– हे विप्र ! सूर्य कालपुरुष (उत्पन्न पुरुष) की आत्मा, चन्द्रमा मन, मंगल सत्त्व, बुध वाणी है।।१।।

देवेज्यो ज्ञानसुखदो भृगुवीर्यप्रदायकः।
विचार्यतामिदं सर्वं छायासूनुश्च दुःखदः।।२।।

गुरु ज्ञान और सुख और शुक्र बल के तथा शनि दुःख के स्वामी हैं।।२।।

राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मजः।
बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ।।३।।

ग्रहों में सूर्य और चन्द्रमा राजा, मंगल नेता, बुध राजकुमार, गुरु और शुक्र मन्त्री हैं।।३।।

प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ।
एवं क्रमेण वै विप्र! सूर्यादीनां विचिन्तयेत्।।४।।

शनि दास और सेना राहु तथा केतु हैं। इस प्रकार सूर्यादि ग्रहों से विचार करना चाहिए।।४।।

रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः।
अत्युच्चाङ्गो रक्तभौमो दुर्वाश्यामो बुधस्तथा।।५।।

हे द्विजश्रेष्ठ ! सूर्य का श्यामता लिये हुए रक्तवर्ण, चन्द्रमा का गौरवर्ण, मंगल का ऊँचा शरीर रक्तवर्ण, बुध का दूर्वा के समान श्यामवर्ण है।।५।।

गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेयः शुक्रः श्यामस्तथैव च।
कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम।।६।।

गुरु का गौरवर्ण, शुक्र का श्याम वर्ण और शनि का काला वर्ण है।।६।।

वह्न्यम्बुशिखिजा विष्णुविडौजशचिका द्विज।
सूर्यादीनां खगानाञ्च नाथाः ज्ञेया क्रमेण च ।।७।।

सूर्य के अग्नि, चन्द्रमा के जल, भौम के स्वामि कार्त्तिक, बुध के विष्णु, गुरु के इन्द्र, शुक्र के इन्द्राणी और शनि के ब्रह्मा स्वामी हैं।।७।।

क्लीवौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीन्दुभृगुर्द्विज।
नरा शेषाश्च विज्ञेया भानुभौमौ गुरुस्तथा।।८।।

बुध और शनि ये नपुंसक, चन्द्रमा और शुक्र स्त्रीग्रह और शेष सूर्य, भौम और गुरु ये पुरुषग्रह हैं।।८।।

अग्निभूमिनभस्तोयवायवः क्रमतो द्विज।
भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वाश्चामी प्रकीर्त्तिताः।।९।।

भौमादि ग्रहों में क्रम से अग्नि, भूमि, आकाश, जल, वायु ये तत्त्व हैं।।९।।

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज।
शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिः शूद्रो द्विजोत्तम।।१०।।

गुरु-शुक्र का ब्राह्मण वर्ण, भौम-सूर्य का क्षत्रिय वर्ण, चन्द्रमा-बुध का वैश्य वर्ण और शनि का शूद्र वर्ण है।।१०।।

चन्द्रसूर्यगुरुसौम्या भृग्वारशनयो द्विज!।
सत्त्वं रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात्।।११।।

चन्द्र, सूर्य, गुरु इनका सतोगुणी स्वभाव, बुध-शुक्र का रजोगुणी स्वभाव और भौम-शनि का तमोगुणी स्वभाव है।।११।।

मधुपिङ्गलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज।
पित्तप्रकृतिको श्रीमान्पुमानल्पकचो द्विज।।१२।।

सूर्य— मधु के सदृश पीले नेत्रोंवाला, चौखूटी शरीर, स्वच्छ कान्ति वाला, पित्त प्रकृति, दर्शनीय, पुरुषग्रह, थोड़े बालों से युक्त स्वरूपवाला है।।१२।।

बहु वातकफः प्राज्ञश्चन्द्रो वृत्ततनुर्द्विज!।
शुभदृक् मधुवाक्यश्च चञ्चलो मदनातुरः।।१३।।

चन्द्रमा— वायु और कफ से युक्त प्रकृति, बुद्धिमान्, गोल शरीर, सुन्दर नेत्र, मीठे वचन बोलनेवाला, चंचल और कामी है।।१३।।

क्रूररक्तेक्षणो भौमश्चपलोदारमूर्त्तिकः।
पित्तप्रकृतिकः क्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज।।१४।।

भौम— क्रूर स्वभाव, रक्तवर्ण की दृष्टि, चपल, उदार स्वभाव, पित्त प्रकृति, क्रोधी, पतली मध्यम कद की शरीरवाला है।।१४।।

वपुः श्रेष्ठो श्लिष्टवाक्य ह्यतिहास्यरुचिर्बुधः।
पित्तवान्कफवान्विप्र मारुतप्रकृतिकस्तथा।।१५।।

बुध— अच्छी शरीर, तोतली बोली वाला, अत्यंत हँसी करनेवाला, पित्त-कफ-वायु से युक्त प्रकृतिवाला है।।१५।।

बृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिङ्गलो मूर्धजेक्षणः।
कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः।।१६।।

गुरु—लम्बी शरीर, पीले शिर के केश और दृष्टि वाला, कफ प्रकृति, बुद्धिमान्, सभी शास्त्रों का जाननेवाला है।।१६।।

सुखी कान्तवपुः श्रेष्ठ सुलोचनो भृगोः सुतः।
काव्यकर्त्ता कफाधिक्यानिलात्मा वक्रमूर्धजः।।१६।।

शुक्र—सुन्दर शरीर, सुखी, अच्छे सुन्दर नेत्रोंवाला, काव्य (कविता) करनेवाला, कफ-वायुमिश्रित प्रकृति, टेढ़े शिर के बालों वाला है।।१७।।

कृशदीर्घतनुः सौरिः पिङ्गदृष्ट्यनिलात्मकः।
स्थूलदन्तोऽलसो पङ्गु खररोमकचो द्विज!।।१८।।

शनि—दुर्बल लम्बी शरीर, पीले नेत्र, वायु प्रकृति, मोटे दाँत, आलसी, पंगु, रूखे रोम और बालों वाला है।।१८।।

धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयङ्करः।
वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्भानुः प्रतिमः शिखी।।१९।।

राहु—धुएँ के सदृश वर्ण, नीले रंग की शरीर, जंगल में रहनेवाला, भयंकर, वायु प्रकृति और बुद्धिमान् है। केतु का भी स्वरूप राहु के समान ही है।।१९।।

अस्थिरक्तस्तथा मज्जा त्वक्वसावीर्यस्नायवः।
तासामीशा क्रमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विजाः।।२०।।

सूर्य आदि क्रम से अस्थि (हड्डी), रक्त, मज्जा, त्वक् (चर्म), वसा, वीर्य, स्नायु (नस) इनके स्वामी हैं।।२०।।

देवालयं जलं वह्नी क्रीडादीनां तथैव च।
कोशशय्या ह्युत्कराणामीशाः सूर्यादयः क्रमात्।।२१।।

एवं सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से देवालय, जलाशय, अग्निस्थान, क्रीडास्थान, कोश (खजाना), शय्यास्थान, ऊसरभूमि ये स्थान हैं।।२१।।

अयनक्षणवासर्तुमासपक्षसमा द्विज!।
सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२२।।

सूर्य आदि ग्रह क्रम से अयन, क्षण (मुहूर्त), वासर (दिन), ऋतु, मास, पक्ष, वर्ष के स्वामी हैं।।२२।।

कटुलवणतिक्तमिश्रमधुरोकषायकाः ।
क्रमेण सर्वे विज्ञेया सूर्यादीनां द्विजोत्तम।।२३।।

सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से कटु, लवण, तीता मिश्रित, मधुर, खट्टा, और कसैला ये रस हैं।।२३।।

बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे।
वारुणे सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे।।२४।।

बुध-गुरु पूर्वदिशा (लग्न में) में, सूर्य-भौम दक्षिण दिशा (दशम) में, शनि पश्चिम (सप्तम) में, शुक्र-चन्द्रमा उत्तर (चतुर्थ) में बली होते हैं।।२४।।

निशायां बलिनश्चन्द्रकुजसौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिनशेषा द्विजोत्तम।।२५।।

चन्द्रमा, भौम, शनि ये रात में बली, बुध दिन-रात्रि दोनों में और शेष सूर्य, गुरु, शुक्र दिन में बली होते हैं।।२५।।

कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्याः वीर्ययुताः सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः।।२६।।

कृष्णपक्ष में पापग्रह और शुक्लपक्ष में शुभग्रह बली होते हैं। उत्तरायण में शुभग्रह और दक्षिणायन में पापग्रह बली होते हैं।।२६।।

स्वदिवससमहोरामासपैः कालवीर्यकम्।
शकुवुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तराः।।२७।।

जो ग्रह जिस दिन का, वर्ष का, होरा का और मास का स्वामी होता है वह अपने दिन, वर्ष, होरा, मास में बली होता है। शनि, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, चंद्र और सूर्य यथोत्तर बली होते हैं। अर्थात् शनि से भौम, भौम से बुध, बुध से गुरु, गुरु से शुक्र, शुक्र से चन्द्रमा और चन्द्र से सूर्य बली होता है।।२७।।

स्थूलान् जनयति सूर्यो दुर्भगान् सूर्यपुत्रकः।
क्षीरोपेतांस्तथा चन्द्रः कण्टकाद्यान्धरासुतः।।२८।।

स्थूल वृक्षों का कारक सूर्य है, दुष्ट वृक्षों का कारक शनि, दूधवाले वृक्षों का चन्द्रमा, काँटेवाले वृक्षों का भौम है।।२८।।

गुरुज्ञौ सफलान्विप्र पुष्पवृक्षान्भृगोः सुतः।
नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एवं ज्ञेया खगाः द्विज।।२९।।

फूलवाले वृक्षों का गुरु-बुध, फूल के वृक्षों का शुक्र और नीरस वृक्षों का शनि कारक है।।२९।।

राहुश्चाण्डालजातिश्च केतुर्जात्यन्तरस्तथा।
शिखिस्वर्भानुमन्दानां वल्मीकस्थानमुच्यते।।३०।।

राहु की चांडाल जाति और केतु वर्णशंकर जाति का है। केतु, राहु और शनि का वल्मीक (विमौट) स्थान है।।३०।।

चित्रकन्था फणीन्द्रस्य केतोश्छिद्रयुतो द्विज।
सीसं राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम।।३१।।

अनेक रंग के कपड़ों से कथरी (गुदरी) राहु का और केतु का छेदों से युक्त वस्त्र है। राहु का शीशा और केतु का नीलमणि धातु है।।३१।।

गुरोः पीताम्बरं विप्र! भृगोः क्षौमं तथैव च।
रक्तक्षौमं भास्करस्य इन्दोः क्षौमं सितं द्विज!।।३२।।

गरु का पीताम्बर, शुक्र का रेशमी वस्त्र, सूर्य का लाल रंग का, चन्द्रमा का श्वेत रेशमी वस्त्र है।।३२।।

बुधस्य तु कृष्णक्षौमं रक्तवस्त्रं कुजस्य च।
वस्त्रं चित्रं शनेर्विप्र! पट्टवस्त्रं तथैव च।।३३।।

बुध का काले रंग का, भौम का लाल रंग का वस्त्र और शनि का चित्रवर्ण पट्टवस्त्र है।।३३।।

भृगोर्ऋतुवसन्तश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः।
चन्द्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्चैव तथा विदः।।३४।।

शुक्र की वसन्तऋतु, भौम और रवि की ग्रीष्मऋतु, चन्द्रमा की वर्षाऋतु, बुध की शरद्ऋतु है।।३४।।

हेमन्तोऽपि गुरोर्ज्ञेयः शनेस्तु शिशिरो द्विज!।
अष्टौ मासाश्च स्वर्भानोः केतोर्मासत्रयं द्विज!।।३५।।

गुरु की हेमन्त ऋतु और शनि की शिशिर ऋतु है। राहु का ८ मास और केतु का ३ मास है।।३५।।

राह्वारपङ्गुचन्द्राश्चं विज्ञेया धातुखेचराः।
मूलग्रहौ सूर्यशुक्रौ अपरा जीवसंज्ञकाः।।३६।।

राहु, भौम और चन्द्रमा धातु के स्वामी, सूर्य-शुक्र मूल के स्वामी और शेष बुध, गुरु, केतु जीव के स्वामी हैं।।३६।।

ग्रहेषु मन्दो वृद्धोऽस्ति आयुर्वृद्धिप्रदायकः।
नैसर्गिके बहुसमान्ददाति द्विजसत्तम।।३७।।

सभी ग्रहों में शनि वृद्ध (निर्बल) है, किन्तु निसर्ग आयु साधन करने में बहुत वर्ष को देता है।।३७।।

अथ ग्रहाणामुच्चनीचमाह—

अजो वृषो मृगः कन्या कुलीरझषतौलिकाः।
सूर्यादीनां क्रमादेतास्तुङ्गसंज्ञाः प्रकीर्त्तिताः।।३८।।
दिग्गुणाष्टयमा भागा तिथिभूतर्क्षनखासमा।
स्वोच्चात्सप्तमभं नीचं पूर्वोक्तांशैः प्रकीर्त्तितम्।।३९।।

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला राशियों में १०, ३, २८, १५, ५, २७ अंश सूर्यादि ग्रहों के उच्च होते हैं और अपनी उच्च राशि से सातवीं राशि में उतने ही अंश तक नीच होते हैं।।३८-३९।।

स्पष्टार्थ चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
मे.	वृ.	म.	क.	क.	मी.	तु.	उच्चराशयः
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	अंशाः
तु.	क.	क.	मी.	म.	क.	मे.	नीचराशयः
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	अंशाः

अथ ग्रहाणां मूलत्रिकोणमाह—

विंशतिरंशाः सिंहे कोणमपरे स्वभवनमर्कस्य।
उच्चं भागत्रितयं वृषमिन्दोः शेषांशास्युस्त्रिकोणकाः।।४०।।

सूर्य का सिंह राशि में २० अंश तक मूलत्रिकोण है, शेष १० अंश स्वराशि है। चन्द्रमा का वृष राशि के आरम्भ से ३ अंश तक उच्च है, इसके बाद के अंश मूलत्रिकोण हैं।।४०।।

द्वादशभागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभं तु भौमस्य।
उच्चफलं च कन्यायां बुधस्य तिथ्यंशकैः सदा भवेत्।।४१।।

भौम का मेष राशि में १२ अंश तथा मूलत्रिकोण है, शेष अंश स्वराशि है। बुध का कन्या राशि में १५ अंश तक उच्च, इसके बाद ५ अंश तक मूलत्रिकोण और शेष अंश स्वराशि है।।४१।।

ततस्त्रिकोणजाते पंचभिरंशैः स्वराशिजं परतः।
दशभिर्भागैर्जीवस्य त्रिकोणफलं स्वयं परं चापे।।४२।।

गुरु का धन राशि में १० अंश तक मूलत्रिकोण तथा शेष अंश स्वराशि है।।४२।।

शुक्रस्य तु तिथयोऽशास्त्रिकोणभपरे तुले स्वराशिश्च।
शनेः कुम्भे नखांशास्त्रिकोणं परतस्तु स्वराशिजं ज्ञेयम्।।४३।।

तुला राशि में १५ अंश तक शुक्र का मूलत्रिकोण और शेष अंश स्वराशि है। कुम्भ राशि में २० अंश तक शनि का मूलत्रिकोण हैं तथा शेष अंश स्वराशि है।।४३।।

अथ ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रामित्रत्वमाह—

रवेः समो ज्ञः सितसूर्यपुत्रावरी परे ये सुहृदो भवन्ति।
चन्द्रस्य नारी रविचन्द्रपुत्रौ स्मृतास्तु शेषग्रहाः समाः।।४४।।

सूर्य के बुध सम, शुक्र-शनि शत्रु और शेष चन्द्रमा, भौम, गुरु मित्र हैं। चन्द्रमा के कोई शत्रु नहीं हैं, सूर्य-बुध मित्र हैं और शेष ग्रह सम हैं।।४४।।

समौ सितार्की शशिजश्च शत्रुर्मित्राणि शेषाः पृथिवीसुतस्य।
शत्रुः शशी सूर्यसितौ च मित्रे समापरे स्युः शशिनन्दनस्य।।४५।।

भौम के शुक्र-शनि सम हैं, बुध, शुक्र और शेष ग्रह मित्र हैं। बुध के चन्द्रमा शत्रु, सूर्य-शुक्र मित्र और शेष ग्रह सम हैं।।४५।।

गुरोर्ज्ञसशुक्रौ रिपुसंज्ञकौ तु शनिः समोऽन्ये सुहृदो भवन्ति।
शुक्रस्य मित्रे बुधसूर्यपुत्रौ समौ कुजार्यावितरावरीतौ।।४६।।

गुरु के बुध-शुक्र शत्रु, शनि सम और शेष ग्रह मित्र हैं। शुक्र के बुध, शनि मित्र, भौम-गुरु सम और शेष ग्रह शत्रु हैं।।४६।।

शनेः समो वाक्पतिरिन्दुसूनु शुक्रौ च मित्रे रिपवः परेऽपि।
ध्रुवं ग्रहाणां चतुराननेन शत्रुत्वमित्रत्वसमत्वमुक्तम्।।४७।।

शनि के गुरु सम, बुध-शुक्र मित्र और शेष ग्रह शत्रु हैं। इस प्रकार से ब्रह्माजी ने ग्रहों के मित्र, सम, शत्रु को कहा है।।४७।।

अथ तात्कालिकमित्रशत्रुत्वमाह—

दशायबन्धुसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम्।
तत्काले सुहृदो ज्ञेयः शेषस्थाने त्वमित्रकम्।।४८।।

जो ग्रह जिस ग्रह से १०।११।४।३।२।१२ वें स्थान में होता है वह ग्रह उस ग्रह का तात्कालिक मित्र होता है, शेष स्थानों में शत्रु होता है।।४८।।

अथ पञ्चधा मैत्रीमाह—

तात्कालिके निसर्गे च मित्रत्वे त्वधिमित्रकम्।
द्वयोर्मित्रसमत्वे च मित्रं शत्रुः शत्रुसमत्वके।।४९।।

जो ग्रह जिस ग्रह का तात्कालिक और निसर्ग में मित्र होता है वह उस ग्रह का अधिमित्र होता है। तत्काल में मित्र और निसर्ग में सम हो तो वह मित्र होता है। तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक सम हो तो शत्रु होता है।।४९।।

समौ तु शत्रुमित्रत्वे शत्रुशत्रौ त्वधिशत्रुकम्।
एवं पञ्चप्रकाराः स्युः ग्रहाणां मित्रता बुधैः।।५०।।

नैसर्गिक मित्र और तात्कालिक शत्रु या नैसर्गिक शत्रु और तात्कालिक मित्र हो तो सम होता है। तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक सम हो तो शत्रु होता है और तात्कालिक शत्रु और नैसर्गिक शत्रु हो तो अधिशत्रु होता है। इस प्रकार ग्रहों की पाँच प्रकार की मैत्री होती है।।५०।।

उदाहरण

नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

ग्रहाः	श.	शु.	बृ.	बु.	मं.	चं.	सू.
मित्र	बु. शु.	बु. श.	सू. चं. मं.	सू. शु.	सू. चं. बृ.	सू. बु.	चं. मं. बृ.
सम	बृ.	मं. बृ.	श.	चं. बृ. श.	शु. श.	मं. बृ. शु. श.	बृ.
शत्रु	सू. चं. मं.	सू. चं.	बु. शु.	चं.	बु.		शु. श.

जन्माङ्गम्

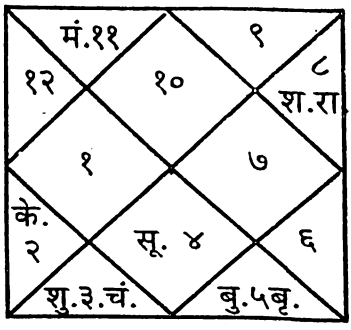

अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
चं. बु. बृ. शु.	सू. बु. बृ. शु.	श.	सू. चं. बृ. शु. श.	सू. चं. बु. शु. श.	सू. चं. बु. बृ.	मं. बु. बृ.	मित्राणि
मं. श.	मं, श.	सू. चं. बु. बृ. शु.	मं.	मं.	मं. श.	सू. चं. शु.	शत्रवः

अथ पञ्चधा मैत्रीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
चं. बृ.	सू. बु.		सू. शु.	सू. चं.	बु.	बु.	अधिमित्राणि
बु.	बृ. शु.		चं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.	मित्राणि
मं. गु.		सू. चं. बृ. श.	मं.	मं. बु. शु.	सू. चं. श.	मं. शु.	समाः
	मं.	शु.					शत्रवः
श.	श.	बु.				सू. चं.	अधिशत्रवः

अथ ग्रहाणामुच्चादिबलमाह—

स्वोच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम्।
स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्त्तितम्।।५१।।

यदि ग्रह अपनी उच्च राशि में हो तो सम्पूर्ण शुभ बल, अपने मूलत्रिकोण राशि में हो तो ३ चरण, अपनी राशि में हो तो आधा बल, मित्र की राशि में हो तो १ चरण है।।५१।।

पादार्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुभे।
तद्वद्दुष्टबलं ब्रूयाद् व्यत्ययेन विचक्षणः।।५२।।

सम की राशि में हों तो आधा बल प्राप्त करता है। नीच अस्त और शत्रु की राशि में हो तो शून्य बल पाता है। इसके विपरीत शेष अशुभ बल पाता है।।५२।।

अथ बलचक्रम्

उच्च	मूलत्रिकोण	स्वर्क्ष	मित्र क्षेत्र	सम	नीच अस्त	शत्रु
१	०	०	०	७	०	०
०	४५	३०	१५	३०	०	०

अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहानयनमाह—

सदा चतुर्भैः विश्वांशैः नखलिप्ताधिको रविः।
धूमो नाम महादोषः सर्वकर्मविनाशकः।।५३।।

सूर्य में ४ राशि १३ अंश २० कला जोड़ देने से धूम नाम का महादोष होता है, जो कि सभी कार्यों का विनाशक होता है।।५३।।

धूमो मण्डलतः शुद्धो व्यतीपातोऽत्र दोषदः।
सषड्भेऽत्र व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषदः।।५४।।

धूम को १२ राशि में घटा देने से शेष व्यतीपात नाम का दोष होता है। व्यतीपात में ६ राशि जोड़ देने से परिवेष नाम का दोष होता है।।५४।।

परिवेषश्युतश्चक्रादिन्द्रचापस्तु दोषदः।
त्र्यंशोनात्यष्ट्यंशा युतश्चापः केतुग्रहो भवेत्।।५५।।

परिवेष को १२ राशि में घटाने से इन्द्रचाप नामक दोष होता है। १७ अंश में अंश का तृतीयांश १० कला घटाने से शेष १६°।४०′ इन्द्रचाप में जोड़ने से केतु नाम का दोष होता है।।५५।।

एकराशियुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्ववत्समः।
अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः।।५६।।

केतु में १ राशि जोड़ देने से पूर्वोक्त सूर्य के तुल्य हो जाता है। यही अप्रकाशग्रह हैं, जो कि दोषरूप पापग्रह हैं।।५६।।

उदाहरण–स्पष्ट सूर्य ३।१०।२६।२९ इसमें ४ राशि १३ अंश २० कला जोड़ने से ८।१।४६।२० धूम ग्रह हुआ। इसको १२ राशि में घटाने से ३।२८।१३।४० यह व्यतीपात ग्रह हुआ। इसमें ६ राशि जोड़ने से ९।२८।१३।४० यह परिवेष ग्रह हुआ। इसे १२ राशि में घटाने से २।१।४६।२० यह इन्द्रचाप हुआ। इसमें १६ अंश ४० कला जोड़ने से २।१८।२६।२० यह केतु ग्रह हुआ। इसमें १ राशि जोड़ने से पूर्वोक्त सूर्य के तुल्य ३।१८।२६।२० हुआ।

अथाऽप्रकाशग्रहाणां फलमाह—

भान्विन्दुलग्नगेष्वेषु वंशायुर्ज्ञाननाशनम्।
एषां बह्वर्कदोषाणां स्थितिः पद्मासनोदिताः।।५७।।

पूर्वोक्त धूम आदि अप्रकाश ग्रह यदि सूर्य-चन्द्र लग्न से युक्त हों तो क्रम से वंश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं। इस प्रकार दोषकारक अप्रकाश ग्रहों की स्थिति ब्रह्मा ने कही है।।५७।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां ग्रहस्वरूपाध्यायस्तृतीयः।।३।।

अथ लग्नाध्यायः।।४।।

तत्रादौ गुलिकादिकालज्ञानमाह—

रविवारादिशन्यन्तं गुलिकादि निरूप्यते।
दिवसानष्टधा कृत्वा वारेशाद्गणयेत्क्रमात्।।१।।

रवि से शनि पर्यन्त वारों में गुलिक आदि का निरूपण कर रहे हैं। (जिस दिन इनका विचार करना हो उस दिन के) दिनमान में आठ का भाग देने से जो लब्ध हो उतना ही एक खंड का मान होता है; वारेश से (जिस दिन विचार कर रहे हों उस वार से खंडों के अनुसार अपने इष्टकाल तक) गिनने से।।१।।

अष्टमांशो निरीशः स्याच्छन्यंशो गुलिकः स्मृतः।
रात्रिरप्यष्टधा भक्त्वा वारेशात्पञ्चनादितः।।२।।

आठवें भाग का स्वामी कोई नहीं होता और शनि का खंड गुलिक होता है। इसी प्रकार रात्रिमान का भी (यदि रात्रि का जन्म हो तो) आठ भाग करके वारेश से पाँचवें वार से गिनने से।।२।।

गणयेदष्टमो खण्डो निष्पत्तिः परिकीर्त्तितः।
शन्यंशो गुलिकः प्रोक्तो गुर्वंशो यमघण्टकः।।३।।

शनि का अंश (खंड) गुलिक होता है और आठवें खंड का कोई स्वामी नहीं होता है। शनि का अंश गुलिक, गुरु का अंश यमघंट होता है।।३।।

भौमांशो मृत्युरादिष्टो रव्यंशो कालसंज्ञकः।
सौम्यांशोऽर्धप्रहरकः स्पष्टकर्मप्रदेशकः।।४।।

भौम का मृत्यु, रवि का काल और बुध का अर्धप्रहर होता है।।४।।

उदाहरण—जैसे संवत् २०३१ श्रावण कृष्ण १३ शनिवार को दिनमान ३२/५० है और इसी के बराबर इष्टकाल भी है। इसमें आठ का

भाग देने से ४।६।१५ यह लब्धि हुई। यहाँ वारेश शनि से गणना करने से प्रथम खंड ही गुलिक हुआ। इसी को इष्टकाल मानकर सूर्य को स्पष्ट कर लग्न लाने से गुलिक लग्न ४।९।२६।२५ हुआ।

अथ गुलिकध्रुवाङ्कचक्रम्

रवि	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वाराः
७	६	५	४	३	२	१	दिवा
३	२	३	७	६	५	४	रात्रौ

अथ प्राणपदसाधनम्—

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्याप्तैश्च पलैर्युताः।
दिनकरेणापहृतं शेषं प्राणपदं स्मृतम्।।५।।

यहाँ प्राणपद साधन के दो प्रकार दिये हैं—

(१) इष्टकाल के घटी को ४ से गुणा कर एक जगह रख देवें। पलों में १५ का भाग देकर लब्धि को चतुर्गुणित इष्ट घटी में जोडकर योगफल में १२ का भाग देने से जो शेष बचे, वह प्राणपद की राशि होती है।।५।।

शेषात्पलान्तादिद्विगुणी विधाय राश्यंशसूर्यर्क्षनियोजितौ च।
तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्।।६।।

शेष बचे हुए पलों को दूना करने से अंश होता है। इस प्रकार से राशि और अंश मध्यम प्राणपद के होते हैं।।६।।

अथच—स्वेष्टकालं पलीकृत्य तिथ्याप्तं भादिकं च यत्।।७।।
चरागद्विभके भानौ योज्यं स्वे नवमे सुते।।७।।
स्फुटं प्राणपदं तस्मात् पूर्ववच्छोधयेत्तनुम्।।७।।

इसमें सूर्य की राशि चर-स्थिर-द्विस्वभाव के अनुसार सूर्य की राशि अंश, सूर्य की राशि से नवीं राशि और अंश तथा सूर्य की राशि से पाँचवीं राशि और अंश को जोड़ देने से राश्यादि स्पष्ट प्राणपद होता है। ऐसा करने से यदि जन्मलग्न का अंश और प्राणपद का अंश बराबर हो तो इष्टकाल शुद्ध होता है।

(२) इष्टकाल को पलात्मक बनाकर उसमें १५ का भाग देकर लब्धि राशि और अंश लाकर उसमें ऊपर कहे हुए अनुसार सूर्य की राशि के अनुसार राशि-अंश जोड़ने से स्पष्ट राश्यादि प्राणपद होता है। इससे जन्म-

लग्न को शुद्ध करना चाहिए। अर्थात् लग्न का अंश और प्राणपद का अंश समान होना चाहिए।।७।।

विना प्राणपदाच्छुद्धो गुलिकाद्वा निशाकराद्।
तदशुद्धं विजानीयात्स्थावराणां तदेव हि।।८।।

जो जन्मलग्न प्राणपद या गुलिक या चन्द्रमा से शुद्ध न की गई हो वह अशुद्ध होती है और वह स्थावर की जन्मलग्न होती है।।८।।

द्वयोर्हीनबलेऽप्येवं गुलिकात्परिचिन्तयेत्।
तस्मात्तत्सप्तमस्थात्तदंशाच्च कलत्रतः।।९।।

इसलिए उससे सप्तम से या उसके अंश से लग्न का संशोधन करना चाहिए। दोनों निर्बल हों तो गुलिक (माँदी) विचार करे।।९।।

तथैव तत्त्रिकोणे वा जन्मलग्नं विनिर्दिशेत्।
मनुष्याणां पशूनां य द्वितीये दशमे रिपौ।।१०।।

प्राणपद की राशि से त्रिकोण (५।९।१) राशि में मनुष्यों के जन्मलग्न की राशि होती है। २, ६, १०वीं राशि पशुओं की है।।१०।।

तृतीये मदने लाभे विहङ्गानां विनिर्दिशेत्।
कीटसर्पजलस्थानां शेषस्थानेषु संस्थितः।।११।।

३।७ वीं राशि में चिडियों का और शेष राशियों में कीट, सर्प, जल में रहनेवाले जीवों का जन्म होता है।।११।।

उदाहरण—जैसे संवत् २०१३ श्रावण कृष्ण १३ शनिवार को इष्ट-३२।५० पर लग्न ९।१७ में जन्म हुआ। इष्टकालिक सूर्य ३।१८ है।

श्लोक ६१-६२ के अनुसार प्रथम प्रकार से प्राणपद का साधन—
इष्टघटी X ४= ३२ X ४ = १२८
इष्टपल ÷ १५ = ५० ÷ १५ = ३ शेष ५
१२८ + ३ = १३१
१३१÷१२=१० लब्धि का त्याग कर देने से शेष ११ प्राणपद की राशि और पल शेष को दूना करने से १० अंश यह मध्यम प्राणपद हुआ। सूर्य चर राशि में है अतः सूर्य के राशि-अंश में जोड़ने से ११।१०°+३।१८।२२।२८ यह स्पष्ट प्राणपद हुआ।

श्लोक ६३ के अनुसार—
इष्टकाल ३२।२८।३०
इसका पल=१९४९।३० इसमें १५ का भाग देने से १२९ लब्धि-राशि हुई और शेष १३/३० को दूना करने से २७ अंश हुआ। सूर्य को चर राशि में होने से सूर्य में जोड देने से १२९।२७

३।१८
१३३।१५

१।१५° यह स्पष्ट प्राणपद हुआ, जिससे 'प्राणत्रिकोणे प्रवदन्ति लग्नम्' और 'लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्' यह सिद्ध होता है।

प्राणपद की राशि मिथुन से जन्मलग्न की राशि तक गिनने से जन्मलग्न की राशि आठवीं आती है। अतः इष्टशोधन करना आवश्यक है, जिससे दोनों का परस्पर त्रिकोणत्व हो जाय। इसलिए इष्टकाल में १५ पल कम करने से ३२।३५ इष्टमान कर उपर्युक्त विधि से प्राणपद बनाने से १।२८ आया। यहाँ राशि तो ठीक आई, यानि वृषराशि, जिससे जन्मलग्न ९वीं राशि है किन्तु लग्नांश और प्राणांश एक नहीं हुए। अतः ६ पल और ३० विपल और घटा देने से शुद्ध इष्टकाल ३२।२८।३० हुआ। इस पर से प्राणपद बनाने से १/१५ आया, जो कि उक्त वाक्य के अनुसार शुद्ध है।

विशेष—वस्तुतः प्राणपद शब्द का अर्थ है—प्राण देनेवाला पद (स्थान) या अंश। यह सूर्योदय से १५ पल में एक राशि का होता है। अतः ३ दंड में १२ राशि की पूर्त्ति हो जाती है और १ पल में २ अंश प्राणपद का होता है। इस नियम को ध्यान में रखकर इष्ट शुद्ध कर लेना चाहिए। उपर्युक्त शुद्ध किये हुए इष्टकाल द्वारा जन्माङ्ग का स्वरूप निम्नलिखित होगा।

संवत् २०१३ शके १८७८ श्रावणकृष्ण १३ शनिवासरे पुनर्वसुभे प्रथम-चरणे इष्टम् ३२।२८।३० भयातम् १०।३२ भभोगः ५५।३३ लग्नम् ९।१५।२२।३७ शुभम्।

स्पष्टग्रहाः

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.
३	२	१०	४	४	२	७	७
१८	२२	२२	५	१२	५	१	१३
२६	३०	३२	२२	५०	३	४८	२७
३४	४७	८	५९	५४	५	५२	२६

जन्माङ्गम्

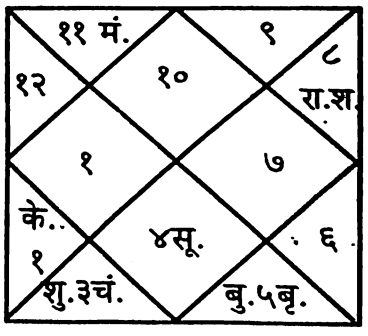

अथ निषेकलग्नानयनमाह—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुङ्गव।
जन्मलग्नं च संशोध्य निषेकं परिशोधयेत्।।१२।।

हे मुनिश्रेष्ठ मैत्रेय! अब मैं जन्मलग्न की शुद्धि के अनंतर निषेक (गर्भाधान) लग्न की शुद्धि को कहता हूँ, इसे धारण करो।।१२।।

तदहं सम्प्रवक्ष्यामि मैत्रेय त्वं विचारय।
जन्मलग्नात् परिज्ञानं निषेकं सर्वजन्तुषु।।१३।।

सभी जन्मलग्न के ज्ञान से सभी जन्तुओं के गर्भाधान लग्न का ज्ञान हो जाता है।।१३।।

यस्मिन् भावे स्थितो कोणस्तस्य मान्देर्यदन्तरम्।
लग्नभाग्यन्तरं योज्यं यच्च राश्यादि जायते।।१४।।

जिस भाव में शनि हो उस भाव और मान्दि (गुलिक) लग्न का अन्तर कर उसमें लग्न और भाग्य भाव के अन्तर को जोड़ देने से जो राश्यादि होती है।।१४।।

मासादिस्तन्मितं ज्ञेयं जन्मतः प्राक् निषेकजम्।
यदादृश्यदलेऽङ्गेशस्तदेन्दोर्भुक्तभागयुक्।।१५।।

जन्म से पूर्व के (निषेक काल के) मासादि का ज्ञान होता है। यदि लग्नेश अदृश्य चक्रार्ध (लग्न से सप्तम के बीच) में हो तो पूर्वोक्त मासादि में चन्द्रमा के भुक्त अंशादि को जोड़ने से मासादि होता है।।१५।।

तत्काले साधयेल्लग्नं शोधयेत्पूर्ववत्तनुम्।
तस्माल्लग्नात्फलं वाच्यं गर्भस्थस्य विशेषतः।।१६।।

इसे जानकर तात्कालिक लग्न को बनावे, वही गर्भाधान की लग्न होती है। उस लग्न से गर्भस्थ प्राणी के शुभ-अशुभ फल कहते हैं।।१६।।

शुभाशुभं वदेत् पित्रोर्जीवतं मरणं तथा।
एवं निषेकलग्नेन सम्यक् ज्ञेयं स्वकल्पनात्।।१७।।

माता-पिता के जीवन-मरण के शुभ-अशुभ फलों का विचार अपनी कल्पनावश करे।।१७।।

उदाहरण— जैसे पूर्वोक्त जन्माङ्ग में शनि कर्मभाव की सन्धि में है, अतः सन्धि ७।११।५८।३३ और गुलिक लग्न ४।९।२६।३५ का अन्तर ३।२।३१।५८ हुआ। इसमें लग्न ९।१५।३१।५ और भाग्य भाव ५।२४।४१।२५ का अन्तर ४।२०।५१।२६ जोड़ देने से ७।२३।२३।२४ अर्थात् जन्म से पूर्व ७ माह २३ दिन २३ घटी २४ पल पूर्व गर्भाधान हुआ था।

अथ भावलग्नानयनमाह—

सूर्योदयात्समारभ्य घटीपञ्च प्रमाणतः।
जन्मेष्टकालपर्यन्तं गणनीयं प्रयत्नतः।।१८।।

सूर्योदय से पाँच घटी के बराबर एक लग्न बीतती है। इसे भावलग्न

या घटीलग्न कहते हैं।।१८।।

ओजलग्ने यदा जन्म सूर्यराश्यनुसारतः।
समलग्ने जन्मलग्नात्यत्संख्या प्राप्यते द्विज।
भावलग्नं विजानीयात् होरालग्नं तदुच्यते।।१९।।

इसलिए इष्ट घटी पर्यन्त जितनी लग्न बीती हो उसमें यदि जन्मलग्न विषम राशि में हो तो सूर्य राशि से और यदि समराशि में हो तो जन्मलग्न से उक्त संख्या गिनने से जो लग्न हो वही भावलग्न होती है।।१९।।

उदाहरण—इष्ट घटी ३२।२८।३० सूर्य ३।१८।२६ है। इष्ट घटी में ५ से भाग देने से ६।२९।४२ लब्धि हुई। इसे सूर्य में जोडने से १०।२८।८ यह भावलग्न हुई।

विशेष—इष्टकाल और लग्न की प्रवृत्ति सूर्योदय से होने के कारण सूर्य में ही जोड़ना चाहिए। यह युक्तिसंगत मालूम होता है।

अथ होरालग्नानयनमाह—

सार्धद्विघटिका विप्र कालादिति विलग्नभात्।
प्रयान्ति लग्नं तन्नाम होरालग्नं द्विजोत्तम।।२०।।

जन्मलग्न से ढ़ाई घटी के तुल्य एक लग्न होती है, जिसे होरालग्न कहते हैं।।२०।।

यज्जन्म विषमर्क्षेषु सूर्यादि गणयेत्क्रमात्।
समलग्ने यदा जन्म गणयेज्जन्मभाद्द्विज।।२१।।

अतः इसके अनुसार इष्ट घटी पर्यन्त गिनने से जो संख्या हो उसमें यदि जन्म विषम लग्न में हो तो सूर्य की राशि से अन्यथा जन्मलग्न से गणना करने से जो राशि हो वही होरालग्न होती है।।२१।।

उदाहरण—इष्ट घटी ३२।२८।३० है, इसमें ढाई $\frac{५}{२}$ का भाग देने से लब्धि राश्यादि ०।२९।४२ हुई। इसमें सूर्य की राश्यादि जोड़ने से ४।१८।१८ यह राश्यादि होरालग्न हुआ।

घटीलग्नानयनमाह—

घटीलग्नं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।
सूर्योदयात्समारभ्य जन्मकालावधि क्रमात्।।२२।।

हे द्विजश्रेष्ठ! मैं घटीलग्न को कह रहा हूँ, उसे सुनो। सूर्योदय से आरम्भ कर जन्म समय पर्यन्त क्रम से।।२२।।

एकैकं घटिकामानाल्लग्नं राश्यादिकं च यत्।
तदेव घटिकालग्नं कथितं ऋषिभिः पुरा ।।२३।।

एक-एक घटी के तुल्य एक राशि के हिसाब से जो राशि हो वही घटीलग्न होती है, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है।।२३।!

राशीन् तत्र घटीतुल्या द्विभागाः पलसम्मिताः।
योज्यं सदा स्पष्टभानौ घटीलग्नं स्फुटं भवेत्।।२४।।
क्रमाल्लग्नादि भावाश्च संलिखेत् द्विजसत्तम।
सूर्यादि यत्र ऋक्षे च जन्मवत्संलिखेद्द्विज।।२५।।

इसमें इष्ट-घटी के तुल्य राशि होती है और एक पल में दो अंश होते हैं। इसके अनुसार जो राशि और अंश हो उसमें सदा सूर्य के राशि-अंश को जोड़ देने से स्पष्ट घटी-लग्न होती है। इसे लग्न मानकर द्वादशभाव चक्र लिखकर जन्मकालिक सूर्य आदि ग्रह जिन-जिन राशियों में हों, उन्हें उन्हीं-उन्हीं राशियों में देवें।।२४-२५।।

उदाहरण—इष्टकाल ३२।२८।३० हैं और सूर्य ३।१८।२६ है, उक्त प्रकार से ३२ राशि १४ अंश हुआ। इसमें सूर्य के राश्यादि को जोड़ने से ० राशि २ अंश यह घटीलग्न हुई।

अथ वर्णदलग्नानयनमाह—

जन्महोराख्यलग्नर्क्षसंख्या ग्राह्या पृथक् पृथक्।
ओजे लग्ने त्वेकयुग्मे चक्रशुद्धैकसंयुता।।२६।।

जन्मलग्न की राशि और होरालग्न की राशि संख्या विषम हों तो अथवा दोंनो सम हों तो, दोनों का योग करने से यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है। दोनों में एक विषम और दूसरी सम हो तो सम को १२ राशि में घटाकर शेष को पहले में घटाने से शेष वर्णद राशि होती है।।२६।।

युग्मौजसाम्ये संयोज्य वियोज्यान्योनमन्यथा।
मेषादितः क्रमादोजे मीनादेरुत्क्रमात्समे।।२७।।

विषम राशि में मेषादि क्रम से और सम राशि में मीनादि से उत्क्रम गणना से है।।२७।।

एवं यल्लग्नमायाति वर्णदं तत् प्रकीर्त्तितम्।
एवं द्वादशभावानां वर्णदं लग्नमानयेत्।।२८।।

जो लग्न हो वही वर्णद लग्न होती है। इस प्रकार सभी भावों की वर्णद लग्न बनानी चाहिए।।२८।।

विशेष—१. जन्मलग्न और होरालग्न दोनों विषम हों तो दोनों का योग यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है।

२. यदि दोनों सम हों तो दोनों को १२ राशि में घटाकर शेषों का योग करने से यदि विषम राशि हो तो वही वर्णद राशि होती है।

३. यदि जन्मलग्न होरालग्न दोनों में एक विषम और दूसरी सम हो तो सम राशि को १२ राशि में घटाकर दोनों का अन्तर करने से शेष विषम राशि हों तो वर्णद राशि होती है।

उपर्युक्त तीनों प्रकारों से यह स्पष्ट है कि योग वा अन्तर करने से सम राशि आवे तो उसे १२ राशि में पुनः घटा देने से वर्णद राशि होती है अर्थात् वर्णद राशि हमेशा विषम ही होती है।

उदाहरण—जन्मलग्न ९।१५।२२।३७ और होरालग्न ४।१८।१८ है। यहाँ जन्मलग्न सम और होरालग्न विषम है, अतः नियम तीन के अनुसार जन्मलग्न को १२ राशि में घटाने से शेष २।१४।३७।२३ हुआ। यही लग्न की वर्णद राशि है।

यदि द्वावोजराशौ वा समराशौ यदा द्विज।
द्वयं संयोजनीयं वै संज्ञे या वर्णदा भवेत्।।२९।।

यदि दोनों विषम वा समराशि हों तो दोनों का योग करने से वर्णद राशि होती है।।२९।।

एकस्थाने ओजराशावपरे समभे द्विज।
समं तु चक्रतः शोध्यं न्यूनसंख्यां विशोधयेत्।।३०।।

एक विषम राशि हो और दूसरी सम राशि हो तो सम राशि को १२ राशि में घटाने से जो न्यून हो उसे पुनः घटाने से वर्णद होती है।।३०।।

मेषादिकेन गणयेत्क्रममार्गेण वै द्विज।
यल्लब्धमन्तिमो राशिः स राशिर्वर्णदो भवेत्।।३१।।

मेष से क्रममार्ग से गणना करने से अंतिम राशि पर्यन्त जो राशि आवे वही वर्णद होती है।।३१।।

युग्मलग्नेषु यज्जन्म मीनादेरपसव्यतः।
क्रमेण लग्नहोरान्तं गणयेत् द्विजसत्तम।।३२।।

समलग्न में जन्म होने से मीनादि अपसव्य मार्ग से गिनने से लग्न पर्यन्त गणना करनी चाहिए।।३२।।

ओजराशौ द्वयं लब्धं तथा द्वौ समराशिगौ।
साजात्ये योजनं कार्यं जायते वर्णदा दशा।।३३।।

यदि दोनों विषम राशि में अथवा दोनों समराशि में हों तो दोनों के सजातीय होने से दोनों का योग करने से वर्णद दशा हेती है।।३३।।

वैजात्ये पूर्ववत्कार्याधिक्ये न्यूनं विशोधयेत्।
मेषादि सव्यमार्गेण गणनीयं प्रयत्नतः।।३४।।

दोनों विजातीय हों तो पूर्ववत् विषम में न्यून को घटाकर मेषादि से सव्यमार्ग से गणना करना चाहिए।।३४।।

यल्लब्धमन्तिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत्।
वर्षसंख्या विजानीयात् चरपर्याप्रमाणतः।।३५।।

जो लग्न से अंतिम राशि हो वही वर्णद राशि होती है। वही वर्णद संख्या चराति क्रम से होती है।।३५।।

होरालग्नभयोर्नेया दुर्बला वर्णदा दशा।
यत्संख्या वर्णदा लग्नात्तत्र संख्या क्रमेण तु।।३६।।

होरालग्न से आई हुई वर्णद दशा दुर्बल होती है, वहाँ पर जन्मलग्न से लाई हुई दशा की संख्या लेनी चाहिए।।३६।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यात् पुरुषस्त्रियोः।
वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात्।।३७।।

क्रम-उत्क्रम भेद से पुरुष और स्त्री की दशा होती है। और वर्णद राशि मेषादि और मीनादि से गिनना चाहिए।।३७।।

फलविचारमाह–

वर्णदात्स्यात् त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः।
पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम्।।३८।।

हे विप्र! वर्णद राशि से त्रिकोण में पापग्रह की युति हो अथवा पापग्रह की राशि हो, उसमें पापग्रह की युति हो तो उसके दशा पर्यन्त आयु होती है।।३८।।

रुद्रशूले यथैवायुर्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
तथैव वर्णदादप्यायुश्चिन्त्यं द्विजोत्तम।।३९।।

जिस प्रकार रुद्रशूल पर्यन्त आयु होती है उसी प्रकार वर्णद से भी आयु का विचार करना चाहिए।।३९।।

वर्णदात्सप्तमाद्राशेः कलत्रायुः विचिन्तयेत्।
पञ्चमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्यभावके।।४०।।

वर्णद से पाँचवीं राशि से पुत्र की, चौथी राशि से माता की।।४०।।

तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज।
पितुस्तु नवमाद् भावादायुर्ज्ञेयं विचक्षणैः।।४१।।

तीसरी राशि से भाई की और ग्यारहवीं राशि से ज्येष्ठ भाई की, नवीं राशि से पिता की आयु का विचार करना चाहिए।।४१।।

शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम्।
वर्णदाल्लग्नवच्चिन्त्यं फलं सर्वं विचक्षणैः।।४२।।

शूलराशि की दशा में उन लोगों को प्रबल अरिष्ट होता है। वर्णद लग्न से लग्नभाव के समान ही सभी बातों का विचार करना चाहिए।।४२।।

एवं तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा।
पूर्ववच्च फलं ज्ञेयं शुभाशुभं द्विजोत्तम।।४३।।

इसी प्रकार लग्न आदि सभी भावों की वर्णद राशि बनाना चाहिए। उस पर से प्रत्येक भावों के शुभ-अशुभ फलों का विचार पूर्ववत् करना चाहिए।।४३।।

ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा।
यल्लब्धं पूर्वमब्दानां भानुभागं च कारयेत्।।४४।।

ग्रहों की वर्णद राशि नहीं होती है। इस प्रकार वर्णद राशि के दशा का जो वर्ष मिले, उसमें १२ का भाग देकर।।४४।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन संलिखेद्वै दशान्तरम्।
चरस्थिरदशायां वै वर्णदायास्तथैव च।।४५।।

जैसे चर आदि दशा में क्रम-उत्क्रम से अन्तर्दशा लिखी जाती है उसी प्रकार यहाँ भी अन्तर्दशा लिखें।।४५।।

पूर्णायां कारकस्यैव केन्द्रस्थानां दशा भवेत्।
ततः पणफरस्थानामापोक्लिम दशां ततः।।४६।।

पहले केन्द्रस्थ की दशा, इसके बाद पणफरस्थ की और इसके बाद आपोक्लिमस्थ की दशा होती है।।४६।।

अथ षोडशवर्गप्रकरणम्

वर्गान् षोडश संख्याकान् ब्रह्मा प्रोक्तं पितामहः।
तानहं सम्प्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति।।१।।

हे मैत्रेय! लोकपितामह ब्रह्माजी ने जो सोलह वर्गों को कहा है, उसे मैं कहता हूँ।।१।।

क्षेत्रं होरां च द्रेष्काणश्चतुर्थांशः सप्तमांशकः।
नवांशो दशमांशश्च सूर्यांशः षोडशांशकः।।२।।

१ गृह, २ होरा, ३ द्रेष्काण, ४ चतुर्थांश, ५ सप्तमांश, ६ नवांश, ७ दशमांश, ८ द्वादशांश, ९ षोडशांश।।२।।

त्रिंशांशो वेदवाह्वंशो भांशास्त्रिंशांशकस्तथा।
खवेदांशोऽक्षवेदांशः षष्ठ्यंशश्च ततः परम्।।३।।

१० त्रिंशांश, ११ चतुर्विंशांश, १२ सप्तविंशांश, १३ त्रिंशदंशांश, १४ चत्वारिंशांश, १५ पञ्चचत्वारिंशांश, १६ षष्ठ्यंश ये १६ वर्ग हैं।।३।।

गृहहोराकथनम्—

तत्क्षेत्रं यस्य खेटस्य राशेर्यो यस्य नायकः।
सूर्येन्दोर्विषमे राशौ समे तद्विपरीतकम्।।४।।

जो ग्रह जिस राशि का स्वामी है वही उसका गृह है। विषम राशि में पहली होरा सूर्य की और दूसरी चन्द्रमा की होती है। सम राशि में पहली होरा चन्द्रमा की और दूसरी सूर्य की होती है।।४।।

पितरश्चन्द्रहोरेशा देव्यः सूर्यस्य कीर्त्तिताः।
राशेरर्द्धं भवेद्धोरा ताश्चतुर्विंशतिः स्मृताः।
मेषादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वयं भवेत्।।५।।

चन्द्रमा के होरा के स्वामी पितर और सूर्य के होरा के स्वामी देवियाँ होती हैं। एक राशि का आधा १५ अंश का एक होरा होता है अथात् १२ राशियों में २४ होरा होती है, इसलिये मेषादि राशियों की दो आवृत्ति होती है।।५।।

उदाहरण—जैसे लग्न ९।१५।२२।५७ है, लग्न सम राशि है और १५ अंश से अधिक है, अतः दूसरी होरा सूर्य की है।

स्पष्टार्थ चक्र—

हो.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
१	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	स्वामिनः
२	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	च.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	स्वामिनः

द्रेष्काणमाह—

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च षट्त्रिंशदीरिताः।
परिवृत्तित्रयं तेषां मेषादेः क्रमशो भवेत्।।६।।

एक राशि के तीसरे भाग का अर्थात् १० अंश का एक द्रेष्काण होता है, अर्थात् एक राशि में ३ द्रेष्काण होते हैं। १२ राशि में कुल ३६ द्रेष्काण होते हैं।।६।।

स्वपञ्चनवपानां च विषमेषु समेषु च।
नारदागस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्चरादिषु।।७।।

विषम एवं सम राशि में पहले द्रेष्काण का स्वामी उसी राशि का स्वामी, दूसरे का उस राशि से पाँचवी राशि का स्वामी और तीसरे का उस राशि से नवीं राशि का स्वामी होता है। और पहले द्रेष्काण के स्वामी नारद, दूसरे के अगस्त और तीसरे के दुर्वासा स्वामी होते हैं।।७।।

उदहारण—जैसे जन्मलग्न ९।१५।२२।३७ है, इसमें दूसरा द्रेष्काण है जिसके स्वामी शुक्र हैं और अधिपति अगस्त हैं।

द्रेष्काण चक्र—

स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
नारद	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	स्वामिनः
अगस्त	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	स्वामिनः
दुर्वासा	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	स्वामिनः

अथ चतुर्थांशमाह—

स्वर्क्षादि केन्द्रपतयस्तुर्यांशेशाः क्रियादयः।
सनकश्च सनन्दश्च कुमारश्च सनातनः।।८।।

एक राशि में ७ अंश ३० कला के चार चतुर्थांश होते हैं। प्रत्येक राशि में उस राशि से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम राशियों के स्वामी क्रम से चतुर्थांश के स्वामी होते हैं और सर्वदा क्रम से सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन ये स्वामी होते हैं।।८।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें ३रा चतुर्थांश कर्क राशि के स्वामी चन्द्रमा का और अधिपति सनत्कुमार का है।

चतुर्थांश चक्र—

स्वामिनः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	अंशाः
सनकः	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	७ ३०
सनन्दनः	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	१५
सनत्कुमारः	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ म.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	२२/३०
सनातनः	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	३०

अथ सप्तमांशमाह—

सप्तमांशास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः।
युग्मराशौ तु विज्ञेया सप्तमर्क्षादिनायकम्।।९।।

एक राशि में ४ अंश १७ कला के सात सप्तमांश होते हैं। विषम राशि में उसी राशि से और सम राशि में उससे सातवीं राशि से ७ सप्तमांश के स्वामी होते हैं।।९।।

क्षारक्षीरौ च दध्याज्यौ तथेक्षुरससम्भवः।
मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्धजलादिकाः।।१०।।

उसके क्षार, क्षीर,आज्य, इक्षुरस, मद्य और शुद्ध जल विषम राशि में और सम राशि में शुद्ध जल, मद्य, इक्षुरस, आज्य, दधि, क्षीर, क्षार, ये विशेष अधिकारी होते हैं।।१०।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें तीसरा सप्तमांश है, जिसके स्वामी बुध और विशेष अधिपति इक्षुरस है।

सप्तमांश चक्र—

पतयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क्षार	१ मं.	८ मं.	३ बु	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श	६ बु.
क्षीर	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.
दधि	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.
आज्य	४ चं.	११ शु.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.
इक्षु-रस	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ वु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.
मद्य	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.
शुद्ध जल	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ मं.	१० श.	५ सू.	७ शु.

नवमांशाधिपतिमाह—

नवांशेशाश्चरे तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः।
उभये तत्पञ्चमादेरिति चिन्त्यं विचक्षणैः।
देवानृराक्षसाश्चैव चरादिषु गृहेषु च।।११।।

एक राशि में ३ अंश २० कला के नव नवमांश होते हैं। चर राशि में उसी राशि से, स्थिर राशि में उससे नवम राशि से और द्विस्वभाव राशि में उससे पाँचवीं राशि से नव राशि तक प्रत्येक राशि ३ अंश २० कला के तुल्य होती हैं। क्रम से देवता, नर और राक्षस अंशेश होते हैं।।११।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ में ३ अंश २० कला के हिसाब से पाँचवाँ नवमांश वृष राशि का हुआ। इसके स्वामी शुक्र और नर अंशेश हुए।

नवमांशचक्रम्--

अंशाः	स्वामी	सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
३/२०	देवता	१	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.
६/४०	नर	२	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	मे. सू.	वृ. शु.	कुं श.	वृ. मं.	सिं. सू.
१०	राक्षस	३	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.
१३/२०	देवता	४	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	मं. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.
१६/४०	नर	५	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.
२०	राक्षस	६	कं. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मं बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.
२३/२०	देवता	७	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	मं. श.	तु. शु.	क. चं.	मे. मं.	म. श.
२६/४०	नर	८	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.	वृ. मं.	सिं. सू.	वृ. शु.	कुं. श.
३०	राक्षस	९	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध, बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.	ध. बृ.	क. बु.	मि. बु.	मी. बृ.

अथ दशमांशमाह—

दिगंशयाः ततश्चोजे युग्मे तन्नवमाद्भदेत्।
पूर्वादि दश दिक्पाला इन्द्राग्नियमराक्षसाः।।१२।।
वरुणो मारुतश्चैव कुबेरेशानपद्मजाः।
अनन्तश्चोक्तमोजे तु समे स्यात्व्युत्क्रमेण च।।१३।।

एक राशि में दश दशमांश प्रत्येक ३ अंश के होते हैं। यदि विषम राशि लग्न हो तो उसी राशि से और सम राशि हो तो उससे नवीं राशि से दश दशमांश होते हैं। विषम राशि में क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त इन पूर्वादि दिशाओं के दिक्पालों का होता है और सम राशि में उत्क्रम से अधिपति होते हैं।।१२-१३।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमें ३ अंश के अनुसार छठा ६ दशमांश हुआ। लग्न राशि के सम होने से उससे ९वीं राशि कन्या से गिनने से छठी राशि कुम्भ के स्वामी शनि का दशमांश हुआ। इसके मारुत स्वामी हैं।

दशमांशचक्रम्—

विषमे स्वामिनः		मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वामिनः
इन्द्रः	३	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	अनंत
अग्निः	६	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ शु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	६ बु.	ब्रह्मा
यमः	९	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	ईशान
राक्षस	१२	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१० श.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	कुबेर
वरुण	१५	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ वृ.	मारुत
मारुत	१८	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	वरुण
कुबेर	२१	७ शु.	४ चं.	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	राक्षस
ईशान	२४	८ मं.	५ सू.	१० श.	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	यम
ब्रह्मा	२७	९ बृ.	६ बु.	११ श.	८ मं.	१ मं.	१० श.	३ बु.	१२ बृ.	५ सू.	२ शु.	७ शु.	४ चं.	अग्नि
अनंत	३०	१०	७ शु.	१२ बृ.	९ बृ.	२ शु.	११ श.	४ चं.	१ मं.	६ बु.	३ बु.	८ मं.	५ सू.	इन्द्र

अथ द्वादशांशमाह—

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत्।
तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाश्विययमाहयः।।१४।।

एक राशि में १२ द्वादशांश २ अंश ३० कला के होते हैं। उनकी गणना उसी राशि से होती है। उनके स्वामी क्रम से गणेश, अश्विनीकुमार, यम और अहि (सर्प) होते हैं।।१४।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। यहाँ २'।३०' के अनुसार ७वाँ द्वादशांश मकर से गिनने से कर्क राशि के स्वामी चन्द्रमा का है। उसके स्वामी यम हैं।

अथ द्वादशांशचक्रम्—

स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	घ.	म.	कुं.	मी.	अंशाः
गणेश	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	२।३०
अश्वि	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	५।०
यम	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	७।३०
अहि	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	१०।०
गणेश	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	१२।३०
अश्वि	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	१५।०
यम	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	१७।३०
अहि	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	२०।०
गणेश	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	२२।३०
अश्वि	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	२५।७
यम	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	२७।३०
अहि	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	३०।०

अथ षोडशांशमाह—

अजसिंहाश्वितो ज्ञेया नृपांशाः क्रमशः सदा।
अजविष्णुहरः सूर्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम्।।१५।।

एक राशि में १अंश ५२ कला और ३० विकला का एक षोडशांश होता है। इस प्रकार एक राशि में १६ षोडशांश होता है। मेष आदि राशियों में क्रम से मेष, सिंह और धन से आरम्भ होता है। इनके अज, विष्णु, हर और सूर्य स्वामी होते हैं।।१५।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसमे उक्त नियम से नवाँ षोडशांश धन राशि के स्वामी गुरु का हुआ। इसके स्वामी ब्रह्मा हैं।

षोडशांशचक्रम्—

सू.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	घ.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं. क. वि.
१	ब्र.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	सू.	१।५२।३०
२	वि.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	ह.	३।४५।०
३	ह.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	वि.	१।३७।३०
४	सू.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	ब्र.	७।३०।०
५	ब्र.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	सू.	९।२२।३०
६	वि.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	ह.	११।१५।०
७	ह.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	वि.	१३।७।३०
८	सू.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	ब्र.	१५।०।०
९	ब्र.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	सू.	१६।५२।३०
१०	वि.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	ह.	१८।४५।०
११	ह.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	वि.	२०।३७।३०
१२	सू.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	ब्र.	२२।३०।०
१३	ब्र.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	१ मं.	५ सू.	९ बृ.	सू.	२४।२२।३०
१४	वि.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	२ शु.	६ बु.	१० श.	ह.	२६।१५।०
१५	ह.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	३ बु.	७ शु.	११ श.	वि.	२८।७।३०
१६	सू.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	४ चं.	८ मं.	१२ बृ.	ब्र.	३०।०।०

अथ विंशांशमाह—

अथ विंशतिभागानामधिपा ब्रह्मणोदिताः।
क्रियाच्चरे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्द्विस्वभावके।।१६।।

एक राशि में २० विंशांश १अंश ३० कला के होते हैं। चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में धन से और द्विस्वभाव राशि में सिंह से आरम्भ होकर २० राशि तक होता है।।१६।।

काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला सती।
तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी।।१७।।

इनके स्वामी विषम राशि में क्रम से काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला, सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी है।।१७।।

प्रत्यङ्गिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया।
त्रिपुरा सुमुखी चेति विषमे परिचिन्तयेत्।।१८।।

प्रत्यंगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा, जया, त्रिपुरा, सुमुखी है।।१८।।

समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी।
धूमावती च मातङ्गी बाला भद्राऽरुणाऽनला।।१९।।

सम राशि में दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाचिनी, धूमावती, बाला, भद्रा, अरुणा और अनला है।।१९।।

पिङ्गला छुच्छुका घोरा वाराही वैष्णवी सिता।
भुवनेशी भैरवी च मङ्गला ह्यपराजिता।।२०।।

पिंगला, छुच्छुका, घोरा, वाराही, वैष्णवी, सिता, भुवनेशी, भैरवी, मंगला और अपराजिता ये स्वामी होते हैं।।२०।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है, अतः ११वाँ त्रिंशांश कुम्भ राशि के अधिपति शनि का हुआ और इसके स्वामी पिंगला देवी हुई।

विंशांशचक्रम्—

सां.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अ. क.
१	काली	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	दया	१।३०
२	गौरी	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	मेधा	३।०
३	जया	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	छिन्नशी.	४।३०

इस चक्र का शेष भाग आगे पृष्ठ में देखें।

सां	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
४	लक्ष्मी	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	पिशाचि.	६ ।०
५	विजया	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	धूमावती	७ ।३०
६	विमला	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	मातंगी	९ ।०
७	सती	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	काला	१० ।३
८	तारा	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	भद्रा	१२ ।०
९	ज्वालामु.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	अरुणा	१३ ।३
१०	श्वेता	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	अनला	१५ ।०
११	ललिता	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	पिंगला	१६ ।३
१२	बंगला	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	छुच्छुका	१८ ।०
१३	प्रत्यंगिरा	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	घोरा	१९ ।३
१४	शची	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	वाराही	२१ ।०
१५	रौद्री	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	वैष्णवी	२२ ।३
१६	भवानी	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	सिता	२४ ।०
१७	वरादा	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	भुवनेश्व.	२५ ।३
१८	जया	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	भैरवी	२७ ।०
१९	त्रिपुरा	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	मंगला	२८ ।३
२०	सुमुखी	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	अपराजि.	३० ।०

सिद्धांशकमाह—

सिद्धांशकानामधिपाः सिंहादोजभके गृहे।

कर्काद्युग्मभके खेटे स्कन्दः पशुधरोऽनलः।।२१।।
विश्वकर्मा भगो मित्रो भगोऽन्तकवृषध्वजाः।
गोविन्दो मदनो भीमः सिंहादौ विषमे क्रमात्।
कर्कादौ समभे भीमाद्विलोमेन विचिन्तयेत्।।२२।।

एक राशि में १ अंश १५ कला के २४ चतुर्विंशांश होते हैं। विषम राशि लग्न हो तो सिंह से और सम राशि में कर्क से गणना कर २४ राशियों का चतुर्विंशांश होता है। विषम राशि में क्रम से स्कंद, पशुधर, अनल, विश्वकर्मा, भग, मित्र, भग, अंतक, वृषध्वज, गोविंद, मदन, भीम, फिर स्कंद से भीम पर्यन्त एवं सम राशि में भीम से उत्कय रीति से गिनने से स्वामी होते हैं।। २१-२२ ।।

उदाहरण– लग्न ९।१५।२२।३७ सम राशि में कर्क से गिनने से १३वाँ कर्क राशि यानि चन्द्र का चतुर्विंशांश हुआ और उसके भीम स्वामी हुए।

चतुर्विंशांश चक्रम्—

सं.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
१	स्कन्दः	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१।१५	भीमः
२	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	२।३०	मदनः
३	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	३।४५	गोविन्दः
४	विश्वकः	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	५।०	वृषध्वजः
५	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	६।१५	अंतकः
६	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	७।३०	यमः
७	यमः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	८।४५	मित्रः
८	अंतकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१०।०	भगः
९	वृषध्वजः	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	११।१५	विश्वक.
१०	गोविन्दः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	१२।३०	अनलः
११	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	१३।४५	पशुधरः
१२	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	१५।०	स्कंदः
१३	सकन्दः	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१६।१५	भीमः
१४	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	१७।३०	मदनः
१५	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	१८।४५	गोविन्दः
१६	विश्वक.	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	२०।०	वृषध्वजः
१७	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	२१।१५	अंतकः

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	विषमे स्वा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	समे स्वा.	अं.क.
१८	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	२२।३०	यमः
१९	यमः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	२३।४५	मित्रः
२०	अंतकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	२५।०	यमः
२१	वृषध्वजः	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	२६।१५	विश्वकर्मा
२२	गोविन्दः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२७।३०	अनलः
२३	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	२८।४५	पशुधरः
२४	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	३०।०	स्कन्दः

मांशमाह—

नक्षत्रेशाः क्रमाद्धस्त्रयमवह्निपितामहाः।
चन्द्रेशादितिजीवाहि पितरो भगसंज्ञिताः।।२३।।
अर्यमार्कस्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रवासवाः।
निरृत्युदकविश्वेऽज गोविन्दो वसवोऽम्बुपः।।२४।।
ततोऽजयादहिर्बुध्यः पूषा चैव प्रकीर्त्तिताः।
नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांशसंख्यः चरात्क्रमात्।।२५।।

एक राशि में २७ अंश १ अंश ६ कला और ४० विकला के होते हैं। प्रत्येक राशियों में क्रम से चर राशि से आरम्भ होता है और उनके स्वामी नक्षत्रेश होते हैं। शेष चक्र में देखिए।। २३-२५ ।।

उदाहरण— लग्न ९/१५/२२/३७ है। इसमें सिंह राशि यानि सूर्य भांशपति हुआ और नक्षत्रेश त्वष्टा हुए।

भांशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अ.क.वि.
१	अश्वि.कु.मी.	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१।६।४०
२	यम	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२।१३।२०
३	अग्नि	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३।२०।०
४	ब्रह्मा	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४।२६।४०
५	चन्द्र	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	५।३३।२०
६	शंकर	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	६।४०।०
७	अदिति	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	७।४६।४०
८	जीव	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	८।५३।२०
९	अहि	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	१०।०।०

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अ.क.वि.
१०	पितर	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	११।६।४०
११	यम	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	१२।१३।२०
१२	अर्यमा	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	१३।२०।०
१३	अर्क	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१४।२६।४०
१४	त्वष्टा	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	१५।३३।२०
१५	वायु	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१६।४०।०
१६	शक्राग्नि	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१७।४६।२०
१७	मित्र	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	१८।५३।२०
१८	वासव	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	२०।०।०
१९	निर्ऋति	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	२१।६।४०
२०	उदक	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	२२।१३।२०
२१	विश्वेदे	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	२३।२०।०
२२	गोविंद	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	२४।२६।४०
२३	वसु	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	२५।३३।२०
२४	वरुण	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	२६।४०।०
२५	अजपात्	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	२७।४६।४०
२६	अहिर्बुध्न्य	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	२८।५३।२०
२७	पूषा	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	३०।०।०

अथ त्रिंशांशमाह—

त्रिंशांशेशाश्च विषमे कुजार्कीज्यज्ञभार्गवाः।
पञ्चपञ्चाष्टसप्ताक्षभागा व्यत्ययतः समे।।२६।।
वह्निः समीरशक्रौ च धनदो जलदस्तथा।
विषमेषु क्रमाज्ज्ञेया समराशौ विपर्ययम्।।२७।।

विषम राशि में भौम, शनि, गुरु, बुध और शुक्र का क्रम से ५,५,८,७,५ अंश और सम राशि में शुक्र, बुध, गुरु, शनि और भौम का क्रम से ५,७,८,५,५ अंश त्रिंशांश होता है। विषम राशि में क्रम से वह्नि, वायु, इन्द्र, धनद और जलद तथा सम राशि में जलद, धनद, इन्द्र, वायु और अग्नि अधिपति होते हैं।। २६-२७ ।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। लग्न सम है अतः गुरु का त्रिंशांश हुआ और इन्द्र स्वामी हुए।

विषमे त्रिंशांशचक्रम्— समराशौ त्रिंशांशचक्रम्—

अं.	स्वामी	मे.	मि.	सिं.	तु.	ध.	कुं.		वृ.	क.	क.	वृ.	म.	मी.	स्वामी
५	वह्नि	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	५	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	जलद
१०	वायु	श.	श.	श.	श.	श.	श.	१२	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	धनद
१८	इन्द्र	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	२०	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	इन्द्र
२५	धनद	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	२५	श.	श.	श.	श.	श.	श.	वायु
३०	जलद	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	३०	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	वह्नि

अथ खवेदांशमाह—

चत्वारिंशतिभागानामधिपा विषमे क्रियात्।
विष्णुश्चन्द्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रविः।।२८।।
यमो यक्षेशगन्धर्वः कालो वरुण एव च।
समभे तुलतो ज्ञेयाः स्वस्वाधिपसमन्विताः।।२९।।

विषम राशि में मेष से और सम राशि में तुला राशि से ४०वाँ अंश आरम्भ होता है। क्रम से विष्णु, चन्द्र, मरीचि, त्वष्टा, धाता, शिव, रवि, यम, यक्षेश, गंधर्व, काल, वरुण यही स्वामी होते हैं।। २८-२९ ।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। एक चालीसवाँ अंश ४५ कला का होता है। इस हिसाब से २१वाँ भाग मिथुन राशि बुध का अंश और यक्षेश स्वामी हुए।

खवेदांशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.क.
१	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	०।४५
२	चन्द्रः	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१।३०
३	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२।१५
४	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३।०
५	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	३।४५
६	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	४।३०
७	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	५।१५
८	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	६।०
९	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	६।४५
१०	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	७।३०
११	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	८।१५
१२	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	९।०
१३	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	९।४५

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं. क.
१४	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१० ।३०
१५	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	११ ।१५
१६	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	१२ ।०
१७	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	१२ ।४५
१८	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	१३ ।३०
१९	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	१४ ।१५
२०	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	१५ ।०
२१	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	१५ ।४५
२२	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१६ ।३०
२३	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	१७ ।१५
२४	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१८ ।०
२५	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१८ ।४५
२६	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१९ ।३०
२७	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२० ।१५
२८	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	२१ ।०
२९	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	२१ ।४५
३०	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	२२ ।३०
३१	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	२३ ।१५
३२	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	२४ ।०
३३	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	२४ ।४५
३४	गंधर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	२५ ।३०
३५	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	२६ ।१५
३६	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	२७ ।०
३७	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	२७ ।४५
३८	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२८ ।३०
३९	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२९ ।१५
४०	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३० ।०

अथाक्षवेदांशमाह—

तथाक्षवेदभागानामधिपाश्चलभे क्रियात्।
स्थिरे सिंहाद्द्विस्वभावे चापाद्ब्रह्मेशकेशवाः।
ईशाच्युतसुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्चराधिषु।।३०।।

चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में सिंह से और द्विस्वभाव राशि में धन राशि से गणना करने से अक्षवेदांश के स्वामी होते हैं और चर, स्थिर,

द्विस्वभाव के क्रम से ब्रह्मा, शंकर, विष्णु; शंकर, विष्णु, ब्रह्मा; विष्णु, ब्रह्मा, शंकर ये स्वामी होते हैं।।३०।।

उदाहरण— लग्न ९।१५।२२।३७ है। ४० कला का एक भाग होता है, अतः २४वाँ मीन राशि अर्थात् गुरु का अक्षवेदांश हुआ और विष्णु स्वामी हुए।

अक्षवेदांशचक्रम्—

	ब्रह्मा	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	विष्णु	
	शंकर	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्रह्मा	
	विष्णु	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शंकर	
सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	घ.	म.	कुं.	मी.	अं.।क.
१	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	०।४०
२	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१।२०
३	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२।०
४	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२।४०
५	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	३।२०
६	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	४।०
७	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	४।४०
८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	५।२०
९	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	६।०
१०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	६।४०
११	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	७।२०
१२	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	८।०
१३	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	८।४०
१४	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	९।२०
१५	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१०।०
१६	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१०।४०
१७	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	११।२०
१८	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	१२।०
१९	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	१२।४०
२०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	१३।२०
२१	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	१४।०
२२	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१४।४०
२३	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	१५।२०
२४	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१६।०
२५	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१६।४०

इस चक्र का शेष आगे पृष्ठ में देखें।

	ब्रह्मा	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	विष्णु	
	शंकर	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्रह्मा	
	विष्णु	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शं.	वि.	ब्र.	शंकर	
सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.।क.
२६	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१७।२०
२७	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१८।०
२८	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१८।४०
२९	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	१९।२०
३०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२०।०
३१	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२०।४०
३२	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२१।२०
३३	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	२२।०
३४	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	२२।४०
३५	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	२३।२०
३६	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	२४।०
३७	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	२४।४०
३८	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२५।२०
३९	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२६।०
४०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२६।४०
४१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	२७।२०
४२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२८।०
४३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२८।४०
४४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२९।२०
४५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	३०।०

अथ षष्ठ्यंशमाह—

घोरश्च राक्षसो देवः कुबेरो यक्षकिन्नरौ।
भ्रष्टः कुलघ्नो गरलो वह्निर्माया पुरीषकः।।३१।।

विषम राशि में १ घोर, २ राक्षस, ३ देव, ४ कुबेर, ५ यक्ष, ६ किन्नर, ७ भ्रष्ट, ८ कुलघ्न, ९ गरल, १० अग्नि, ११ माया, १२ यम(पुरीष)।।३१।।

अपाम्पतिर्मरुत्वांश्च कालः सर्पामृतेन्दुकाः।
मृदुः कोमलहेरम्बब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।।३२।।

१३ वरुण, १४ इन्द्र, १५ काल, १६ सर्प, १७ अमृत, १८ चन्द्रमा, १९ मृदु, २० कोयल, २१ हेरम्ब, २२ ब्रह्मा, २३ विष्णु, २४ शिव।।३२।।

देवार्द्रौ कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरौ।

गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसंज्ञकः।।३३।।

२५ देव, २६ आर्द्र, २७ कलिनाश, २८ क्षितीश, २९ कमलाकर, ३० गुलिक, ३१ मृत्यु, ३२ काल, ३३ दावाग्नि, ३४ घोर।।३३।।

यमश्च कण्टकसुधाऽमृतौ पूर्णनिशाकरः।
विषदग्धकुलान्तश्च मुख्यो वंशक्षयस्तथा।।३४।।

३५ यम, ३६ कंटक, ३७ सुधा, ३८ अमृत, ३९ पूर्णचन्द्र, ४० विषदग्ध, ४१ कुलनाश, ४२ मुख्य, ४३ वंशक्षय।।३४।।

उत्पातकालसौम्याख्याः कोमलः शीतलाभिधः।
करालदंष्ट्रचन्द्रास्यौ प्रवीणः कालपावकः।।३५।।

४४ उत्पात, ४५ काल, ४६ सौम्य, ४७ कोमल, ४८ शीतल, ४९ करालदंष्ट्र, ५० इन्दुमुख, ५१ प्रवीण, ५२ कालाग्नि।।३५।।

दण्डभृन्निर्मलः सौम्यः क्रूरोऽतिशीतलोऽमृतः।
पयोधि भ्रमणाख्यौ च चन्द्ररेखात्वयुग्मपौ।।३६।।

५३ दंडभृत्, ५४ निर्मल, ५५ सौम्य, ५६ क्रूर, ५७ अतिशीतल, ५८ अमृत, ५९ भ्रमण और ६० इन्दुरेखा।।३६।।

समे भे व्यत्ययाज्ज्ञेयाः षष्ठ्यंशाश्च प्रकीर्तिताः।
षष्ठ्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाद् व्यत्ययतः समे।।३७।।

विषम राशि में घोर आदि और सम राशि में चन्द्ररेखा आदि क्रम से षष्ठ्यंश के अधिपति होते हैं।।३७।।

शुभषष्ठ्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः।
क्रूरषष्ठ्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः।।३८।।

शुभग्रह के षष्ठ्यंश में ग्रह हो तो शुभफल देता है और क्रूर ग्रह के षष्ठ्यंश में हो तो नाश करता है।।३८।।

राशीन् विहाय खेटस्य द्विघ्नमंशाद्यमर्कहृत्।
शेषं सैकं च तद्राशिनाथ षष्ठ्यंशपाः स्मृताः।।३९।।

जिस ग्रह का षष्ठ्यंश देखना हो उसकी राशि को छोड़कर अंश, कला, विकला आदि को २ से गुणा कर गुणनफल में १२ से भाग देने पर जो शेष बचे उसमें १ जोड़कर जो संख्या हो उतनी ही संख्या वाली ग्रह की राशि से जो राशि हो उसके स्वामी षष्ठ्यंश के स्वामी होते हैं।।३९।।

उदाहरण– लग्न ९।१५।२२।३७ है। इसकी राशि को छोड़कर अंशादि को २ से गुणा करने से ३०।४५।१४ हुआ। इसमें १२ से भाग

देने पर शेष ६ बचा। इसमें १ और जोड़ देने से ७वाँ षष्ठ्यंश हुआ। मकर से ७वीं राशि कर्क के स्वामी चन्द्रमा षष्ठ्यंश के स्वामी हुए। दूना किये हुए अंश ३० में १ जोड़ देने से ३१वाँ सम राशि में कुलिक षष्ठ्यंश का अधिपति हुआ।

अथ षष्ठ्यंशचक्रम्—

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी	अं.क.
१	घोर	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	इन्दुरेखा	० ।३०
२	राक्षस	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	भ्रमण	१ ।०
३	देव	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	पयोधीश	१ ।३०
४	कुबेर	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सुधा	२ ।०
५	यम	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	अ.शीतल	२ ।३०
६	किन्नर	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	क्रूर	३ ।०
७	भ्रष्ट	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	सौम्य	३ ।३०
८	कुलघ्न	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	निर्मल	४ ।०
९	गरल	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	दण्डायुध	४ ।३०
१०	अग्नि	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कालाग्नि	५ ।०
११	माया	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	प्रवीण	५ ।४०
१२	पुरीष	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	इन्दुमुखी	६ ।०
१३	अपांपति	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	दंष्ट्राकराल	६ ।३०
१४	मरुत्वान्	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शीतल	७ ।०
१५	काल	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कोमल	७ ।३०
१६	अहि	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सौम्य	८ ।०
१७	अमृत	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कालरूप	८ ।३०
१८	चन्द्र	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	उत्पात	९ ।०
१९	मृदु	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	वंशक्षय	९ ।३०
२०	कोमल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कुलनाश	१० ।०
२१	हेरम्ब	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	विषदग्ध	१० ।३०
२२	ब्रह्म	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	पूर्णचंद्र	११ ।०
२३	विष्णु	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	अमृत	११ ।३०
२४	महेश्वर	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सुधा	१२ ।०
२५	देव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	कंटक	१२ ।३०
२६	आर्द्र	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	यम	१३ ।०
२७	कलिनाश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	घोर	१३ ।३०

इस चक्र का शेष आगे पेज पर देखें।

सं.	स्वामी	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	स्वामी	अं.क.
२८	क्षितीश्वर	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	दावाग्नि	१४।०
२९	कमलाकर	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	काल	१४।३०
३०	गुलिक	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	मृत्यु	१५।०
३१	मृत्यु	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	कुलिक	१५।३०
३२	काल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कमलाकर	१६।०
३३	दावाग्नि	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	क्षितीश्वर	१६।३०
३४	घोर	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कलिनाश	१७।०
३५	यम	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	आर्द्र	१७।३०
३६	कण्टक	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	देव	१८।०
३७	सुधा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	महेश्वर	१८।३०
३८	अमृत	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	विष्णु	१९।०
३९	पूर्णचन्द्र	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	ब्रह्मा	१९।३०
४०	निर्मदग्ध	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	हेरम्ब	२०।०
४१	कुलनाश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कोमल	२०।३०
४२	वंशक्षय	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	मृदु	२१।०
४३	उत्पात	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	चन्द्र	२१।३०
४४	काल	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	अमृत	२२।०
४५	सौम्य	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	अहिभाग	२२।३०
४६	कोमल	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	काल	२३।०
४७	शीतल	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मरूत्वान्	२३।३०
४८	दंष्टाकरा	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अपांपति	२४।०
४९	इन्दुमुख	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पुरीष	२४।३०
५०	प्रवीण	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	माया	२५।०
५१	कालाग्नि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अग्नि	२५।३०
५२	दण्डायुध	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	गरल	२६।०
५३	निर्मल	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कुलघ्न	२६।३०
५४	सौम्य	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भ्रष्ट	२७।०
५५	क्रूर	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	किन्नर	२७।३०
५६	अतिशी	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	यक्ष	२८।०
५७	सुधा	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कुबेर	२८।३०
५८	पयोनिधीश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	देव	२९।०
५९	भ्रमण	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	राक्षस	२९।३०
६०	इन्दुरेखा	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	घोर	३०।०

अथ वर्गभेदानाह–

वर्गभेदानहं वक्ष्ये मैत्रेय त्वं विधारय।
षड्वर्गाः सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गगाः।।४०।।

हे मैत्रेय! मैं वर्गभेद को कहता हूँ, उसे तुम सुनो॥ षड्वर्गी, साप्तावर्गी, दशवर्ग और षोडश वर्ग होते हैं।।४०।।

भवन्ति वर्गसंयागे षड्वर्गे किंशुकादयः।
द्वाभ्यां किंशुकनामा च त्रिभिर्व्यञ्जनमुच्यते।।४१।।

षड्वर्ग में दो-तीन आदि वर्गों के संयोग से किंशुक आदि संज्ञायें होती हैं। यथा दो वर्ग में ग्रह हो तो किंशुक, तीन के संयोग से व्यंजना॥४१॥

चतुर्भिश्चामराख्यं च छत्रं पञ्चभिरेव च।
षड्भिः कुण्डलयोगः स्यान्मुकुटाख्यं च सप्तभिः।।४२।।

चार के संयोग से चामर, पाँच के संयोग से छत्र और छः वर्गो के संयोग से कुंडल नाम होता है। सप्तवर्ग में छः वर्ग तक तो पूर्वोक्त ही होते हैं, किन्तु सात वर्ग के संयोग से मुकुट होता है॥४२॥

सप्तवर्गेऽथ दिग्वर्गे पारिजातादिसंज्ञकाः।
पारिजातं भवेद्द्वाभ्यामुत्तमं त्रिभिरुच्यते।।४३।।

दशवर्ग में दो वर्ग के संयोग से पारिजात, तीन वर्गो के संयोग से उत्तम।।४३।।

चतुर्भिर्गोपुराख्यं स्याच्छरैः सिंहासनं तथा।
पारावतं भवेत्षड्भिर्देवलोकं तु सप्तभिः।।४४।।

चार वर्ग के संयोग से गोपुर, पाँच वर्ग के संयोग से सिंहासना, छः वर्गो के संयोग से पारावत, सात वर्ग के संयोग से देवलोक॥४४॥

वसुभिर्ब्रह्मलोकाख्यं नवभिः शक्रवाहनम्।
दिग्भिः श्रीधामयोगं स्यादथ षोडश वर्गके।।४५।।

आठ वर्ग के संयोग से ब्रह्मलोक, ९ वर्ग के संयोग से शक्रवाहना और १० वर्ग के संयोग से श्रीधाम योग होता है॥४५॥

भेदकं तु भवेद्द्वाभ्यां त्रिभिः स्यात्कुसुमाख्यकम्।
चतुर्भिर्नाकपुष्पं स्यात्पञ्चभिः कन्दुकाह्वयम्।।४६।।

षोडश वर्ग में २ वर्ग संयोग से भेदक, ३ वर्ग के संयोग से कुसुम, चार वर्ग के संयोग से नागपुष्प, पाँच वर्ग के संयोग से कंदुक।।४६।।

केरलाख्यं भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम्।
अष्टभिश्चन्दनवनं नवभिः पूर्णचन्द्रकम्।।४७।।

६ वर्ग के संयोग से केरल, ७ वर्ग के संयोग से कल्पवृक्ष, आठ वर्ग के संयोग से चन्द्रवन, ९ वर्ग के संयोग से पूर्णचन्द्र।।४७।।

दिग्भिरुच्चैःश्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत्।
सूर्यकान्तं भवेत्सूर्यैर्विश्वैः स्याद्विद्रुमाह्वयम्।।४८।।

दश वर्ग के संयोग से उच्चैःश्रवा, ग्यारह वर्ग के संयोग से धन्वन्तरि, बारह वर्ग के संयोग से सूर्यकान्त, तेरह वर्ग के संयोग से विद्रुम।।४८।।

शक्रसिंहासनं शक्रैर्गोलोकं तिथिभिर्भवेत्।
भूपैः श्रीवल्लभाख्यं स्याद्वर्गभेदैरुदाहृता।।४९।।

चौदह वर्ग के संयोग से सिंहासन, पंद्रह वर्ग के संयोग से गोलोक और सोलह वर्ग के संयोग से श्रीवल्लभ नाम होता है।।४९।।

स्वोच्चमूलत्रिकोणस्वभवनाधिपतेः तथा।
स्वारूढात्केन्द्रनाथानां वर्गा ग्राह्या सुधीमता।।५०।।

जो ग्रह अपने उच्चराशि में, अपने मूलत्रिकोण राशि में, अपने राशि में और आरूढ़ लग्न से केन्द्रपतियों का वर्ग लेना चाहिये।।५०।।

अस्तंगता ग्रहजिता नीचगा दुर्बलास्तथा।
शयनादिगतादुस्था उत्पन्ना योगनाशकाः।।५१।।

जो अस्त हों, यद्ध में पराजित हों, अपने नीचराशि में हों, दुर्बल हों, शयनादि दुष्ट अवस्था में हों तो उनका वर्ग अशुभ होता है।।५१।।

विशेष– गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांशक को षड्वर्ग कहते हैं। इनके साथ सप्तमांश को मिला देने से सप्तवर्ग होता है और इसमें दशमांश, षोडशांश, षष्ठांश को ले लेने से दशवर्ग होता है, शेष षोडशवर्ग होते हैं।

किंशुकादि सप्तवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्—

२	३	४	५	६	७
किंशुक	व्यंजन	चामर	छत्र	कुंडल	मुकुट

पारिजातादि दशवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्—

२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पारिजात	उत्तम्	गोपुरम्	सिंहासनम्	पारावतम्	देवलोक	ब्रह्मलोक	शक्रवाहनम्	श्रीधाम

षोडशवर्गजसंज्ञाबोधकचक्रम्।

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१२	१३	१४	१५
भेदकम्	कुसुमाख्यम्	नागपुष्पम्	कंदुकाख्यम्	केरलाख्यम्	कल्पवृक्षम्	चंदनवनम्	पूर्णचक्रकम्	उच्चैःश्रवा	धन्वन्तरिः	सूर्यकांतम्	विद्रुमाख्यम्	शक्रसिंहासनम्	गोलोकम्	श्रीवत्समाख्यम्

उदाहरण— पूर्वोक्त उदाहरणों में लग्न सप्तवर्गों में २ वर्ग में है, अतः किंशुक संज्ञा हुई। दशवर्ग के अनुसार २ वर्ग में है, अतः पारिजात संज्ञा में है और षोडशवर्ग के अनुसार ४ वर्ग में है, अतः नागपुष्प संज्ञा हुई। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रहों की संज्ञायें बनानी चाहिए।

इति पाराशरहोरायां सुबोधिन्यां पञ्चमः।

अथ षोडशवर्गविवेकाध्यायः

अथ षोडशवर्गेषु चिन्ता लग्नं वदाम्यहम्।
लग्नं देहस्य विज्ञानं होरायां सम्पदादिकम्।।१।।

अब मैं षोडश वर्गों से विचारणीय विषयों को कह रहा हूँ। लग्न से शरीर सम्बंधी शुभ-अशुभ का विचार करना चाहिए, होरा से द्रव्य का।।१।।

द्रेष्काणे भ्रातृजं सौख्यं तुर्यांशे भाग्यचिन्तनम्।
पुत्रपौत्रादिकानां वै चिन्तनं सप्तमांशके।।२।।

द्रेष्काण से भाई का, चतुर्थांश से भाग्य का, सप्तमांश से पुत्र-पौत्रादि का।।२।।

नवमांशे कलत्राणां दशमांशे महत्फलम्।
द्वादशांशे तथा पित्रोश्चिन्तनं षोडशांशके।।३।।

नवमांश से स्त्री का, दशमांश से बड़े कार्यों का (राजसम्बंधी), द्वादशांश से माता पिता का, षोडशांश से वाहन के सुख-दुःख का।।३।।

सुखासुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च।
उपासनाया विज्ञानं साध्यं विंशतिभागके।।४।।

विंशांश से उपासना के विज्ञान का विचार करना चाहिए।।४।।

विद्याया वेदवाह्वंशे भांशे चैव बलाऽबलम्।
विंशाशके रिष्टफलं खवेदांशे शुभाशुभम्।।५।।

चतुर्विंशांश से विद्या का, सप्तविंशांश से बलाबल का, त्रिंशांश से अरिष्ट का, खवेदांश से शुभ-अशुभ का।।५।।

अक्षवेदांशभागे च षष्ठ्यंशेऽखिलमीक्षयेत्।
यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः क्रूरषष्ठ्यंशकाधिपः।।६।।

अक्षवेदांश और षष्ठ्यंश से सभी वस्तुओं का विचार करना चाहिए। जहाँ पर (जिस भाव में) क्रूरग्रह षष्ठ्यंशपति होता है।।६।।

तत्र नाशो न सन्देहो प्राचीनानां वचो यथा।
यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः कालांशाधिपतिः शुभः।।७।।
तत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च प्राचीनानां वचो यथा।
इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिताः।।८।।

उस भाव के फलों की हानि होती है। जिस किसी भाव में शुभग्रह षष्ठ्यंशपति होता है वहाँ उस भाव संबंधी फलों की वृद्धि होती है। इस प्रकार सोलह ग्रहों के भेद को मैंने कहा।।७-८।।

अथ विंशोपकबलमाह—

उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा।
वर्गविश्वाबलं वीक्ष्य ब्रूयात्तेषां शुभाशुभम्।।९।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वर्गविश्वाबलं द्विज।
यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टिगोचरम्।।१०।।

लग्न आदि भावों का और ग्रहों के राश्यादि से वर्गविश्वाबल को देखकर उनके शुभ-अशुभ फलों को कहना चाहिए। अब मैं वर्ग विश्वाबल कह रहा हूँ, जिसके ज्ञानमात्र से फल साक्षात् दिखाई देता है।।९-१०।।

गृहं विंशोपकं वीक्ष्य सूर्यादीनां खचारिणाम्।
स्वगृहोच्चे बलं पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते।।११।।

भावों की राशियों का और सूर्य आदि ग्रहों के विंशोपक बल को देखना चाहिए। अपने गृह उच्च में पूर्ण बल तथा नीच में शून्य बल तथा मध्य में अनुपात से बल ले आना चाहिए।।११।।

ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्याधिपतिस्तथा।
मध्येऽनुपाततो ज्ञेया ओजयुग्मर्क्षभेदतः।।१२।।

ग्रहों की स्थितिवश, दो राशियों के अधिपति तथा विषम समराशि के स्थितिवश से बल ले आना चाहिए।।१२।।

सूर्यः होराफलं दद्युर्जीवार्कवसुधात्मजाः।
चन्द्रास्फुजिदर्कपुत्राश्चन्द्रहोराफलप्रदाः।।१३।।

होरावर्ग केवल रवि-चन्द्रमा का ही होता है, अतः शेष ग्रहों के फल विचार के लिए विशेष कह रहे हैं। गुरु, सूर्य, भौम ये सूर्य के होराफल और चन्द्रमा, शुक्र, शनि ये चन्द्र के होरा का फल देते हैं।।१३।।

फलद्वयं बुधो दद्यात्समे चान्द्रं तदन्यके।
रवेः फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके।।१४।।

बुध दोनों के होरा का फल देता है। समराशि में चन्द्र के होरा का फल और विषम राशि में सूर्य के होरा का फल होता है। रवि के होरा आदि में पूर्ण फल, अन्त में शून्य फल होता है।।१४।।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत्।
गृहवत्तुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वयम्।।१५।।

मध्य में सर्वत्र अनुपात से फल लाना चाहिए। इसी प्रकार द्रेष्काण आदि से भी फल लाना चाहिए। गृह के ही समान चतुर्थांश में तथा नवांश आदि में भी फल समझना चाहिए।।१५।।

सूर्यः कुजफलं धत्ते भार्गवस्य निशापतिः।
त्रिंशांशके विचिन्त्येवमत्रापि गृहवत्स्मृतम्।।१६।।

त्रिंशांश में सूर्य भौम का और चन्द्रमा शुक्र का फल देता है। इसमें गृह के समान ही फल होता है।।१६।।

अथ षट्-सप्त-वर्गाणां विंशोपकमाह—

लग्नहोरादृकाणाङ्कभागाः सूर्यांशका इति।
त्रिंशांशकाश्च षड्वर्गास्तेषां विंशोपकाः क्रमात्।।१७।।

लग्न (गृह), होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांश ये ही षड्वर्ग कहे जाते हैं।।१७।।

रसनेत्राब्धिपञ्चाश्विभूमयः सप्तवर्गके।
स्थूलं फलं च संस्थाप्य तत्सूक्ष्मं च ततस्ततः।।१८।।

इनका विंशोपक बल क्रम से ६, २, ४, ५, २, १ है। यह स्थूल है, सूक्ष्म के लिए अनुपात करना चाहिए।।१८।।

स सप्तमांशकं तत्र विश्वङ्का पञ्चलोचनम्।
त्रयं सार्धद्वयं सार्धवेदं द्वौराशिनायकाः।।१९।।

ये ही सप्तमांश के साथ मिलकर सप्तवर्ग कहे जाते हैं। इसका विंशोपक बल क्रम से ५, २, ३, २$\frac{१}{२}$, ४$\frac{१}{२}$, २, २, १ है।।१९।।

अथ दशवर्गाणां विंशोपकमाह—

दशवर्गादिगंशाख्या कलांशाः षष्ठिनायकाः।
त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेया पञ्च षष्ठ्यंशकस्य च।।२०।।

पूर्वोक्त सप्तवर्ग में दशमांश, षोडशांश, षष्ठ्यंश को मिला देने से दशवर्ग होता है। इसमें गृह का ३, षष्ठ्यंशका ५ और शेष वर्गों का डेढ़ (१$\frac{१}{२}$) विंशोपक बल होता है।।२०।।

अथ षोडशवर्गाणां विंशोपकमाह—

सार्धैकभागाः शेषाणां विश्वङ्काः परिकीर्त्तिताः।
अथ वक्ष्ये विशेषेण विश्वङ्का मम सम्मतम्।।२१।।

अब मैं षोडश वर्गों का विशेषतः विश्वाबल को कह रहा हूँ।।२१।।

क्रमात् षोडश वर्गाणां क्षेत्रादीनां पृथक् पृथक्।
होरांशभागदृक्काणकुचन्द्रशशिनः क्रमात्।।२२।।

होरा का १, अंशभाग (त्रिंशांश) का १, द्रेष्काण का १।।२२।।

कलांशस्य द्वयं ज्ञेयं त्रयं नन्दांशकस्य च।
क्षेत्रे सार्धं च त्रितयं चतुः षष्ठ्यंशकस्य हि।।२३।।

षोडशांश का २, नवमांश का ३, गृह का १$\frac{१}{२}$, षष्ठ्यंश का ४।।२३।।

अर्धमर्धं तु शेषाणां ह्येतत् स्वीयमुदाहृतम्।
पूर्णं विश्वाबलं विंशो धृतिः स्यादधिमित्रके।।२४।।

और शेष वर्गों का आधा आधा ($\frac{१}{२}$) विंशोपक बल होता है। यह विंशोपक बल अपने वर्ग में पूर्ण २० होता है। अधिमित्र के वर्ग में १८।।२४।।

मित्रे पञ्चदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्त्तितम्।
शत्रौ सप्ताधिशत्रौ च पञ्च विश्वाबलं भवेत्।।२५।।

मित्र के वर्ग में १५, सम के वर्ग में १०, शत्रु के वर्ग में ७ और अधिशत्रु के वर्ग में ५ विंशोपक बल होता है।।२५।।

अथ विंशोपकबलस्य स्पष्टीकरणम्—

वर्गविश्वास्वविश्वघ्नाः पुनर्विंशतिभाजिताः।
विश्वफलोपयोग्यं तत्पञ्चोनं फलदो न हि।।२६।।

वर्ग के विश्वा को उसी में गुणा कर उसमें २० का भाग देने से स्पष्ट विंशोपक फल कहने योग्य होता है। वह ५ से कम हो तो फल कहने योग्य नहीं होता है।।२६।।

तदूर्ध्वं स्वल्पफलदं दशोर्ध्वं मध्यमं स्मृतम्।
तिथ्यूर्ध्वं पूर्णफलदं बोध्यं सर्वं खचारिणाम्।।२७।।

इसके ऊपर १० तक अल्प फल देने वाला, दश के ऊपर १५ तक मध्यम फल, इसके ऊपर २० तक पूर्ण फल देने वाला होता है। ऐसा सभी ग्रहों का समझना चाहिए ।।२७।।

अथ फलकथने विशेषः—

अथान्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय! त्वं विधारय।
खेटाः पूर्णफलं दद्युः सूर्यात्सप्तमके स्थिताः।।२८।।

हे मैत्रेय! और भी प्रकारों को कहता हूँ, तुम सुनो! सूर्य से सातवें भाव में ग्रह हो तो पूर्ण फल देता है।।२८।।

फलाभावं विजानीयात्समे सूर्यनभश्चरे।
मध्येऽनुपातात्सर्वत्र ह्युदयास्तविंशोपकाः।।२९।।

सूर्य के समान ही राशि-अंशादि हो तो शून्य फल देता है और इसके मध्य में हो तो अनुपात से फल समझना चाहिए। ग्रहों के उदय-अस्त का भी विचार कर लेना चाहिए।।२९।।

वर्गविश्वसमं ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षभ।
यत्र यत्र फलं बद्ध्वा तत्फलं परिकीर्त्तितम्।।३०।।

हे द्विजश्रेष्ठ! वर्गविंशोपक के अनुसार जो ग्रह जैसा फल देता हो उसके अनुसार ही उसके फल की कल्पना करें।।३०।।

वर्गविश्वाफलं चादावुदयास्तमः परम्।
पूर्णं पूर्णेति पूर्वं स्यात् सर्वं दैवं विचिन्तयेत्।।३१।।

पूर्ण, मध्यम हीन और अल्प में दो-दो भेद हैं। श्लोक २६-२७ के अनुसार प्रत्येक पूर्ण आदि फलों में ५ का भेद है। अतः १५ से १७।। तक पूर्ण १७।। से २० तक अतिपूर्ण, १० से १२ तक मध्यम, १२।। से १५ तक अति मध्यम।।३१।।

हीनं हीनेऽतिहीनं स्यात्स्वल्पाल्पेऽत्यल्पकं स्मृतम्।
मध्यं मध्येऽतिमध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः।।३२।।

३।। से ५ तक हीन, ० से २।। तक अतिहीन, ७।। से १० तक स्वल्प और ५ से ७।। तक अतिस्वल्प होता है। इस प्रकार विंशोपक बल के अनुसार ग्रहों की दशा का फल समझना चाहिए।।३२।।

अथ भावानां केन्द्रादिसंज्ञामाह—

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय! शृणु सुव्रत!
लग्नतुर्यास्तवियतां केन्द्रसंज्ञा विशेषतः।।३३।।

हे मैत्रेय! सुव्रत! लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावों की केन्द्र संज्ञा है।।३३।।

द्विपञ्चरन्ध्रलाभाख्यं ज्ञेयं पणफराभिधम्।
त्रिषड्भाग्यव्ययादीनामापोक्लिममिति द्विज।।३४।।

दूसरे, पाँचवें, आठवें और ग्यारहवें भाव की पणफर संज्ञा है। तीसरे, छठें, नवें और बारहवें भाव की आपोक्लिम संज्ञा है।।३४।।

लग्नात्पञ्चमभाग्यस्य कोणसंज्ञा विधीयते।
षष्ठाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः।।३५।।

लग्न, पंचम और नवम भाव को कोण कहते हैं। छठें, आठवें और बारहवें भाव को दुष्ट स्थान और त्रिक कहते हैं।।३५।।

चतुरस्रं तुर्यरन्ध्रं कथयन्ति द्विजोत्तम।
स्वस्थादुपचयर्क्षाणि त्रिषडायां वराणि हि।।३६।।

चौथे और आठवें को चतुरस्र कहते हैं। अपने स्थान से तीसरे, छठें, ग्यारहवें और दशम भाव को उपचय कहते हैं।।३६।।

अथ तन्वादिभावानां संज्ञामाह–

तनुर्धनं च सहजो बन्धुपुत्रालयस्तथा।
युवती रन्ध्रधर्माख्यं कर्मलाभव्ययाः क्रमात्।।३७।।

तनु, धन, सहज, बन्धु, पुत्र, अरि, युवती (जाया), रंध्र, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये क्रम से बारह भावों के नाम हैं।।३७।।

सङ्क्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुध्यानुसारतः।
किञ्चिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम्।।३८।।

यह संक्षेप से कहा है, अन्य बुद्धि के अनुसार जानना। जैसा मैंने ब्रह्माजी के मुख से सुना है उन विशेषों को कह रहा हूँ।।३८।।

नवमे च पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमेऽथवा।
यत्किञ्चिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्दशमे शिवे।।३९।।

लग्न से नवम स्थान में पिता का विचार किया जाता है। उसे सूर्य से नवम में भी करना चाहिए। इसी प्रकार लग्न से १०वें और ग्यारहवें में जो विचार किया जाता हे वही सूर्य से १०।११ भावों में भी करना चाहिए।।३९।।

तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिन्तनं च तत्।
चन्द्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिन्तयेद्ध्रुवम्।।४०।।

लग्न से चौथे, दूसरे, ग्यारहवें और भाग्य में जो फल विचार किये जाते हैं वही चन्द्रमा से भी उन्हीं चौथे, दूसरे, ग्यारहवें और भाग्य भावों में करने चाहिए।।४०।।

लग्नाद्दुश्चिक्यभवने तत्कुजाद्विक्रमे स्थितात्।
विचार्यं षष्ठभावस्य बुधात्षष्ठे विचिन्तयेत्।।४१।।

लग्न से तीसरे भाव में जो विचार होता है उसे भौम से तीसरे भाव में भी विचारना चाहिए। लग्न से छठें भाव में जो विचार होता है वही बुध से छठें भाव में भी होता है।।४१।।

पञ्चमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः।
अष्टमस्य व्ययस्यापि मन्दान्मृत्यौ व्यये तथा।।४२।।

गुरु से पाँचवें भाव में पुत्र का और शुक्र से सातवें भाव में स्त्री का, शनि से आठवें और बारहवें भाव में उन भावों का विचार करना चाहिए।।४२।।

यद्भावाद्यत्फलं चिन्त्यं तदीशात्तत्फलं विदुः।
ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्तच्चिन्त्यं शुभाशुभम्।।४३।।

जिन-जिन भावों का विचार करना हो वह उन-उन भावों के स्वामियों से भी करना चाहिए।।४३।।

इति बृहत्पाराशरहोरायाः पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां राशिस्वभावषोडश-वर्गादिकथनं तृतीयोऽध्यायः।।३।।

अथ राशिदृष्टिभेदाध्यायः

मेषादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक् पृथक्।
दृष्टिभेदं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।।१।।

हे द्विजसत्तम! मैं मेषादि १२ राशियों के दृष्टिभेद को पृथक्-पृथक् कह रहा हूँ उसे सुनो।।१।।

चरः स्थिरान्पश्यतिस्म स्थिरः पश्यति वै चरान्।
उभयानुभयं विप्र पश्यतीत्ययमागमः।।२।।

चर राशियाँ स्थिर राशियों को, स्थिर राशियाँ चर राशियों को और द्विस्वभाव राशियों को देखती हैं, यह आगम है।।२।।

समीपराशिं सन्त्यक्त्वा राशींस्त्रीननुपश्यति।
सर्वोदाहरणं वक्ष्ये शृणु त्वं द्विजसप्तम।।३।।

इनमें विशेषता यह है कि समीप की राशियों को छोड़कर तीन-तीन राशियों को सभी राशियाँ देखती हैं। इनका उदाहरण मैं कह रहा हूँ।।३।।

मेषो वृषं परित्यज्य सिंहालिघटकं तथा।
अनयैव क्रमेणैव पश्यतिस्म द्विजोत्तम।।४।।

मेष राशि वृष राशि को छोड़कर सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशि को देखती है। इसी प्रकार क्रम से आगे की राशियाँ भी देखती हैं।।४।।

कर्कः सिंहं परित्यज्य वृश्चिकं च घटं वृषम्।
तुलापि वृश्चिकं त्यक्त्वा कुम्भं सिंहं तथा वृषम्।।५।।

कर्क राशि सिंह को छोड़कर वृश्चिक, कुंभ और वृष को; तुला राशि वृश्चिक को छोड़कर कुंभ, सिंह और वृष को।।५।।

नक्रो घटं परित्यज्य मेषं कर्कं तुलां द्विज।
सिंहः कर्कं परित्यज्य नक्रं मेषं तुलां द्विज।।६।।

कर्क राशि सिंह को छोड़कर वृश्चिक, कुंभ, वृष को, मकर राशि कुंभ राशि को छोड़कर मेष, कर्क, तुला को।।६।।

वृश्चिकस्तु तुलां त्यक्त्वा कर्कं मेषं मृगं तथा।
कुम्भश्च मकरं त्यक्त्वा मेषं कर्कं तुलां द्विज।।७।।

सिंह राशि कर्क राशि को छोड़कर मकर, मेष, तुला को; वृश्चिक राशि तुला को छोड़कर कर्क, मेष, मकर को; कुंभ राशि मकर राशि को छोड़कर मेष, कर्क, तुला को।।७।।

युग्मः कन्याधनुर्मीनान् पश्यतीति द्विजोत्तम।
कन्या धनुर्मीनयुग्मं पश्यत्येवं न संशयः।।८।।

मिथुन राशि कन्या, धन, मीन को; कन्या राशि धन, मीन, मिथुन को।।८।।

धनुर्झषयुग्मकन्याः पश्यति द्विजसत्तम।
मीनो युग्माङ्गको दण्डान् पश्यति सुमते द्विज।।९।।

धन राशि मीन, मिथुन, कन्या को और मीन राशि मिथुन, कन्या और धन राशि को देखती है।।९।।

सूर्यादयः क्रमेणैव पश्यन्ति च परस्परम्।
राशित्रयं त्रयं विप्र सर्वराशिगता ग्रहाः।।१०।।

हे विप्र! इसी प्रकार सूर्य आदि ग्रह भी तीन-तीन राशियों के क्रम से सभी राशियों को देखते हैं।।१०।।

चरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यन्ति चरसंस्थितान्।
स्थिरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यन्ति चरसंस्थितान्।।११।।

चरस्थस्तु भान्वादिः पश्यन्त्युभयसंस्थितान्।
निकटस्थं विना खेटा निरीक्ष्यन्ते द्विजोत्तम।।१२।।

चर राशि पर बैठा हुआ ग्रह स्थिर राशि पर बैठे हुए ग्रह को, स्थिर राशि पर बैठा हुआ ग्रह चर राशि पर बैठे हुए ग्रह को और द्विस्वभाव राशि पर बैठा हुआ ग्रह द्विस्वभाव राशि पर बैठे हुए ग्रह को देखता है, किन्तु निकटस्थ राशि को छोड़कर।।११-१२।।

दृष्टिचक्रमाह—

चक्रन्यासमहं वक्ष्ये यथावद्ब्रह्मणोदितम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण दृष्टिभेदः प्रकाश्यते।।१३।।

जैसा ब्रह्माजी ने कहा है वैसा ही मैं दृष्टिचक्र को कह रहा हूँ, जिसके जान लेने से दृष्टिभेद समझ में आ जाता है।।१३।।

पूर्वे मेषवृषौ लेख्यौ कर्कसिंहौ च दक्षिणे।
तुलालिवारुणे विप्र नक्रकुम्भे तथोत्तरे।।१४।।

एक वर्गाकार चक्र बनाकर पूर्व आदि दिशाओं की कल्पना कर पूर्व दिशा में मेष-वृष, दक्षिण में कर्क-सिंह को, तुला-वृश्चिक को पश्चिम में, मकर-कुंभ को उत्तर में।।१४।।

अग्निकोणे तु मिथुनं नैर्ऋत्यामङ्गनां द्विज।
वायव्यां धनुषं लेख्यमीशान्यां च झषं लिखेद्।।१५।।

मिथुन को अग्निकोण में, कन्या को नैर्ऋत्य कोण में, वायव्य कोण में धनु को और ईशान्य कोण में मीन को लिखे।।१५।।

चतुरस्रं च विन्यासं ज्ञायते द्विजसत्तम।
वृत्ताकारं विशेषेण ब्रह्मणा चोदितं पुरा।।१६।।

ब्रह्माजी ने विशेष कर इस चक्र को वृत्ताकार ही कहा है।।१६।।

विशेष— १६वें श्लोक के अनुसार स्पष्ट है कि राशियों की सव्यगणना ही ब्रह्मोदिता है तथापि व्यवहार में ऐसा नहीं है, अतः व्यवहार के अनुकूल मीनान्त से अपसव्य गणना ही चक्र में लिखा गया है। ऊपर के १४-१५ श्लोक सव्य गणना के अनुसार ही है। शेष चक्र से स्पष्ट है।

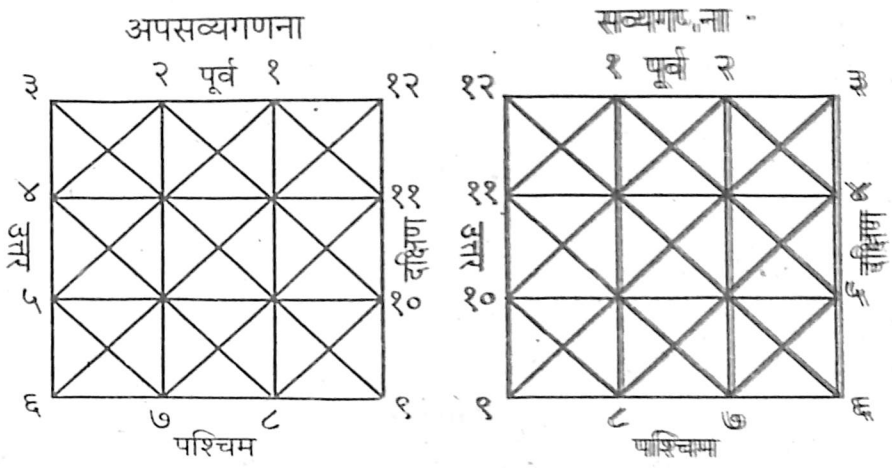

इति राशिदृष्टिभेदम्।

अथ ग्रहाणां दृष्टिचक्रमाह—

होराशास्त्रे मित्रदृष्टिः खेटानां च परस्परम्।
त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्त्रे च सप्तमे।।१७।।

होराशास्त्र में ग्रहों की भिन्न-भिन्न दृष्टियाँ कही गई है, वो इस प्राकार हैं॥ ग्रह अपने स्थान से ३।१०, ९।५, ४।८।७ स्थाना को देखता है॥।१७॥

शनिर्देवगुरुर्भौमः परे च वीक्षणेऽधिकाः।
पदार्धं त्रिपदं पूर्णं वदन्ति गणकोत्तमाः।।१८।।
शनिपादं त्रिकोणेषु चतुरस्त्रे द्विपादकम्।
त्रिपादं सप्तमे विप्र त्रिदशे पूर्णमेव हि।।१९।।

किन्तु शनि ९।५ स्थान को १ चरण से, ४।८ स्थाना को २ चरण से, सातवें को ३ चरण से और ३।१० स्थाना को पूर्णादृष्टि से देखाता है।।१८-१९।।

चतुरस्त्रे गुरुः पादं सप्तमे च द्विपादकम्।
त्रिपादं त्रिदशे विप्र पूर्णं पश्यति कोणभे।।२०।।

गुरु अपने स्थान से ४।८ भाव को १ चरण से, ७ स्थाना को २ चरण से, ३।१० को ३ चरण से और ९।५ स्थान को पूर्णादृष्टि से देखाता है॥।२०॥

सप्तमे पादमेकं च द्विपादं त्रिदशे द्विज।
त्रिपादं च त्रिकोणेषु भौमः पूर्णं चतुरस्त्रगे।।२१।।

भौम अपने स्थान से सातवें स्थान को १ चरण से, ३।१० स्थान को २ चरण से, ९।५ स्थान को ३ चरण से और ४।८ स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है।।२१।।

अन्येषां त्रिदशे पादं द्विपादं च त्रिकोणगे।
चतुरस्त्रे त्रिपादं च पूर्णं पश्यति सप्तमे।।२२।।

शेष ग्रह ३।१० स्थान को १ चरण से, ९।५ को १ चरण से, ९।४ को २ चरण से, ४।८ स्थान को ३ चरण से और सातवें स्थान को पूर्णदृष्टि से देखते हैं।।२२।।

ग्रहदृष्टिचक्रम्—

..	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहः
१	३।१३	३।१०	७	३।१०	४।८	३।१०	९।५	स्थान
२	९।५	९।५	३।१०	९।५	७	९।५	४।८	स्थान
३	४।८	४।८	९।५	४।८	३।१०	४।८	७	स्थान
४	७	७	४।८	७	९।५	७	३।१०	स्थान

इति दृष्टिभेदाध्यायः।

इति पाराशरहोरायाः पूर्वखण्डे सुबोधिन्या दृष्टिभेदकं नाम चतुर्थोऽध्यायः।

अथाऽरिष्टाध्यायः

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छन्ति जन्मतः।
जन्मारिष्टं तु तावत्स्यादायुर्दायं न चिन्तयेत्।।१।।

जन्म से २४ वर्ष की अवस्था तक बालारिष्ट होता है, अतः उक्त अवस्था तक बालकों के आयु की गणना नहीं करनी चाहिए।।१।।

षष्ठाष्टरिष्फगश्चन्द्रः क्रूरैश्च सह वीक्षितः।
जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षैः शुभेक्षितः।।२।।

इसलिए बालारिष्ट को कह रहा हूँ— जन्मलग्न से ६।८।१२ भाव में चन्द्रमा हो और क्रूरग्रही से देखा जाता हो तो बालक की शीघ्र ही मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा को शुभग्रह देखता हो तो ८वें वर्ष में अरिष्ट होता है।।२।।

शशिवन्मृत्युदः सौम्याश्चेद्वक्राः क्रूरवीक्षिताः।
शिशोर्जातस्य मासेन लग्ने सौम्यविवर्जिते।।३।।

यदि वक्री शुभग्रह ६।८।१२ भाव में हों और क्रूरग्रहों से देखे जाते हों और शुभग्रह जन्म लग्न में न हों तो बालक की एक मास में मृत्यु हो जाती है।।३।।

यस्य जन्मनिधीस्थाः स्युः सूर्यार्केन्दुकुजाभिधाः।
तस्य त्वाशु जनित्री च भ्राता च निधनं लभेत्।।४।।

जिसके जन्मांग में ५वें स्थान में सूर्य, शनि, चन्द्रमा और मंगल हों तो उस बालक के माता और भाई की मृत्यु होती है।।४।।

पापेक्षिते युतो भौमो लग्नगो न शुभेक्षितः।
मृत्युदस्त्वष्टमस्थोऽपि सौरेणार्केण वा पुनः।।५।।

यदि पापग्रह से युत और पापग्रह से देखा जाता हुआ भौम जन्मलग्न में हो और शुभग्रह से न देखा जाता हो तो मृत्युकारक होता है और आठवें भाव में शनि या रवि हों तो भी मृत्युकारक होते हैं।।५।।

चन्द्रसूर्यग्रहे राहुश्चन्द्रसूर्ययुतो यदि।
शनिभौमेक्षितं लग्नं पक्षमेकं स जीवति।।६।।

चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण के समय का जन्म हो, लग्न में राहु, चन्द्रमा, सूर्य हों और शनि को भौम देखता हो तो बालक एक पक्ष (१५ दिन) तक जीता है।।६।।

कर्मस्थाने स्थितः सौरिः शत्रुस्थाने कलानिधिः।
क्षितिजो सप्तमस्थाने समात्रा म्रियते शिशुः।।७।।

लग्न से दशम भाव में शनि हो, छठे भाव में चन्द्रमा हो, सातवें भाव में भौम हो तो माता के साथ ही बालक की मृत्यु होती है।।७।।

लग्ने भास्करपुत्रश्च निधने चन्द्रमा यदि।
तृतीयस्थो यदा जीवः स याति यममन्दिरम्।।८।।

लग्न में शनि हो, आठवें भाव में चन्द्रमा हो और तीसरे भाव में गुरु हो तो बालक की मृत्यु होती है।।८।।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्थः शनैश्चरः।
एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेकं स जीवति।।९।।

अपने होरा में सूर्य नवम भाव में हो, सातवें भाव में शनि हो और ग्यारहवें भाव में गुरु-शुक्र हों तो १ मास में बालक की मृत्यु होती है।।९।।

व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टा सूर्यशुक्रेन्दुराहवः।
विशेषान्नाशकर्त्तारो दृष्ट्या वा भङ्गकारिणः।।१०।।

१२वें भाव में सभी ग्रह अशुभ होते हैं, विशेषकर सूर्य, शुक्र, चन्द्रमा और राहु। इनकी दृष्टि भी हानिकर होती है।।१०।।

पापान्वितः शशी धर्मे द्यूनलग्नगतो यदि।
शुभैरवीक्षितयुतस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः।।११।।

पापग्रह से युत चन्द्रमा ९वें या ७वें भाव में हो और शुभग्रह से दृष्ट-युत न हो तो बालक की मृत्यु होती है।।११।।

सन्ध्यायां चन्द्रहोरायां गण्डान्ते निधनाय वै।
प्रत्येकं चन्द्रपापैश्च केन्द्रगैः स्याद्विनाशनम्।।१२।।

प्रातः संध्या या सायं संध्या में चन्द्रमा की होरा में जन्म हो और गंडात हो तो बालक की मृत्यु होती है। प्रत्येक केन्द्रों में पापग्रह चन्द्रमा से युत हो तो भी मृत्यु होती है।।१२।।

रवेस्तु मण्डलार्द्धास्तात्सायं सन्ध्या त्रिनाडिका।
तथैवार्द्धोदयात्पूर्वं प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका।।१३।।

सूर्यबिंब के आधा अस्त हो जाने के बाद ३ दंड सायं संध्या और सूर्यबिंब के आधा उदय होने के पश्चात् ३ घटी प्रातः संध्या होती है।।१३।।

चक्रपूर्वापरार्धेषु क्रूरसौम्येषु कीटभे।
लग्नगे निधनं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।।१४।।

यदि पापग्रह चक्र के पूर्वार्ध में हों और परार्ध में शुभग्रह हों और कीटलग्न (कर्कराशि) जन्मलग्न हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१४।।

व्ययशत्रुगतैः क्रूरैर्मृत्युद्रव्यगतैरपि।
पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत्।।१५।।

यदि १२वें, छठे, ८वें और दूसरे भाव में पापग्रह हों, जन्मलग्न पापग्रह के मध्य में हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१५।।

लग्नसप्तमगौ पापौ चन्द्रोऽपि क्रूरसंयुतः।
यदा त्ववीक्षितः सौम्यैः शीघ्रान्मृत्युर्भवेत्तदा।।१६।।

यदि लग्न और सातवें भाव में पापग्रह हों और चन्द्रमा भी क्रूरग्रह से युक्त हो और शुभ ग्रहों से न देखा जाता हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।१६।।

क्षीणे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः।
यो जातो मृत्युमाप्नोति स विप्रेश न संशयः।।१७।।

क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, केन्द्र और आठवें भाव में पापग्रह हों तो बालक की मृत्यु होती है।।१७।।

पापयोर्मध्यगश्चन्द्रो लग्नरन्ध्रान्त्यसप्तगः।
अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातः स शिशुस्तथा।।१८।।

दो पापग्रहों के मध्य में होकर चन्द्रमा लग्न, आठवें या बारहवें या सातवें भाव में हो तो बालक की मृत्यु होती है।।१८।।

पापद्वयमध्यगे चन्द्रे लग्ने समवस्थिते।
सप्तमष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः।।१९।।

दो पापग्रहों के मध्य में चन्द्रमा लग्न में हो, सातवें, आठवें भाव में पापग्रह हों तो माता के साथ बालक की मृत्यु होती है।।१९।।

शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्फधर्माष्टमेषु च।
शुभैरवीक्षमाणेषु यो जातो निधनं गतः।।२०।।

शनि, सूर्य, भौम क्रम से १२, ९, ८ वें भाव में हों और शुभग्रहों से न देखे जाते हों तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।२०।।

यद्द्रेष्काणे च यामित्रे यस्य स्याद्दारुणो ग्रहः।
क्षीणचन्द्रो विलग्नस्थो सद्यो हरति जीवितम्।।२१।।

जिसके लग्न के द्रेष्काण और सातवें भाव में पापग्रह हों और क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।२१।।

आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहाः बलविवर्जिताः।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम्।।२२।।

सभी ग्रह निर्बल होकर आपोक्लिम (३।६।९।१२) भाव में हों तो ६ मास या दो मास की आयु होती है।।२२।।

अथ मातृकष्टम्—

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितयेन प्रदृश्यते।
मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं भवेत्।।२३।।

यदि जन्म समय चंन्द्रमा को तीन पापग्रह देखते हों तो माता की मृत्यु होती है। शुभग्रह देखते हों तो शुभ होता है।।२३।।

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यथास्थितः।
यस्य मातुः भवेन्मृत्युर्मृते पितरि जायते।।२४।।

धन भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि और सूर्य हों तो उसके पिता के मरने के बाद माता की मृत्यु होती है।।२४।।

पापात्सप्तमरन्ध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते।
बलिभिः पापकैर्दृष्टे जातो भवति मातृहा।।२५।।

पापग्रह से सातवें, आठवें भाव में पापग्रह से युत चन्द्रमा हो, बलवान् पापग्रहों से देखा जाता हो तो उसकी माता की मृत्यु होती है।।२५।।

उच्चस्थो वाथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः।
मातृहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरेण जीवति।।२६।।

जिसके जन्म समय में लग्न में सातवें भाव में उच्चराशि में या नीच राशि में सूर्य हो तो उसके माता की मृत्यु होती है और वह बालक बकरी के दूध से जीता है।।२६।।

चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत्।
तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत्।।२७।।

यदि अपने शत्रु की राशि का पापग्रह चन्द्रमा से चौथे हो और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है।।२७।।

द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत्।
तदा मातुर्वधं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः।।२८।।

जन्मलग्न से १२ वें, छठे स्थान में पापग्रह हों तो माता का विनाश होता है। चौथे, दशवें स्थान में पापग्रह हो तो पिता की हानि होती है।।२८।।

लाभे क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च।
सप्तमे भवने क्रूरः परिवारक्षयङ्करः।।२९।।

लग्न और बारहवें भाव में पापग्रह हों, दूसरे भाव में शुभग्रह हों तथा सातवें भाव में क्रूरग्रह हों तो परिवार का नाश करने वाला होता है।।२९।।

लग्नस्थे च गुरौ सौरी धने राहौ तृतीयगे।
इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति।।३०।।

लग्न में गुरु और शनि हों तथा दूसरे या तीसरे भाव में राहु हो तो माता नहीं जीती है।।३०।।

क्षीणचन्द्रात् त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
माता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः।।३१।।

क्षीण चन्द्रमा से त्रिकोण (९।५) में पापग्रह हों, शुभग्रह न हों तो ६ मास के अन्दर ही माता बालक को त्याग देती है।।३१।।

एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा।
शशिकेन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां च जीवति।।३२।।

एक ही नवमांश में शनि और भौम हों और कहीं बैठे हों अथवा चन्द्रमा से केन्द्र में हो तो बालक दो माताओं से जीता है।।३२।।

अथ पितृकष्टम्—

लग्ने सौरिर्मदे भौमः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।
इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति।।३३।।

यदि जन्मलग्न में शनि, सातवें स्थान में भौम और छठे स्थान में चन्द्रमा हों तो उसका पिता नहीं जीता है।।३३।।

लग्ने जीवो धने मन्दरविभौमबुधस्तथा।
विवाहसमये तस्य जातस्य म्रियते पिता।।३४।।

लग्न में गुरु हो, दूसरे स्थान में शनि, रवि, भौम, बुध हों तो उसके विवाह के समय में पिता की मृत्यु होती है।।३४।।

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधं भवेत्।।३५।।

सूर्य पापग्रह के साथ हो अथवा पापग्रहों के मध्य में हो और सूर्य से सातवें भाव में पापग्रह हो तो पिता की मृत्यु होती है।।३५।।

सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनन्दनः।
राहुर्व्यये च यस्यैव पिता कष्टेन जीवति।।३६।।

सातवें स्थान में सूर्य हो, दशम स्थान में भौम और बारहवें स्थान में राहु हों तो पिता कष्ट से जीता है।।३६।।

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रसमन्वितः।
म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न संशयः।।३७।।

यदि दशम स्थान में शत्रु की राशि में भौम हो तो पिता की शीघ्र ही मृत्यु होती है।।३७।।

रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः।
कुजश्च सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति।।३८।।

यदि छठें स्थान में चन्द्रमा, लग्न में शनि और सातवें में भौम हो तो पिता नहीं जीता है।।३८।।

भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते।।३९।।
प्राज्जन्मतो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वापि शिशोः पितुः।।३९।।

भौम के नवांश में सूर्य हो और शनि से देखा जाता हो तो पिता नहीं जीता है।।३९।।

पाताले चाम्बरे पापा द्वादशे च यदा स्थितौ।
पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशान्तरं व्रजेत्।।४०।।

चतुर्थ, दशम और बारहवें स्थान में पापग्रह हों तो माता-पिता दोनों की मृत्यु होती है।।४०।।

राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थके।
त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न पश्यति।।४१।।

राहु, गुरु छठे, लग्न या चौथे भाव में हों तो २३वें वर्ष में पुत्र पिता को नहीं देखता है।।४१।।*

भानुः पिता च जन्तूनां चन्द्रो माता तथैव च।
पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा।
पित्रारिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम्।।४२।।

यदि सूर्य पापग्रह से दृष्ट-युत होकर पापग्रह के मध्य में हो तो बालक के पिता का नाश होता है।।४२।।

भानोः षष्ठाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
चतुरस्रगतैर्वापि पित्रारिष्टं विनिर्दिशेत्।।४३।।

*जीव के पिताकारक सूर्य और मातृकारक चन्द्रमा होता है।

सूर्य से छठे, आठवें भाव में पापग्रह हों तो पिता की मृत्यु होती है। सूर्य से छठे, आठवें भाव में पापग्रह हों, शुभग्रह न हों या चौथे, आठवें भाव में पापग्रह हों तो पिता को अरिष्ट होता है।।४३।।

इत्यरिष्टाध्यायः।

अथारिष्टभङ्गाध्यायः

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात्केन्द्रगतो यदि।
अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा।।४४।।

यदि बुध, गुरु, शुक्र में से एक लग्न भी केन्द्र में हो तो संपूर्ण अरिष्ट का नाश हो जाता है; जैसे सूर्य के उदय से अंधकार का नाश हो जाता है।।४४।।

एक एव बली जीवो लग्नस्थो रिष्टसञ्चयः।
हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः।।४५।।

यदि केवल गुरु ही बली होकर लग्न में हो तो अरिष्ट-समूह का नाश हो जाता है, जैसे भक्तिपूर्वक शंकर को प्रणाम करने से पापसमूह नष्ट हो जाते हैं।।४५।।

एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः।
अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा।।४६।।

एक लग्नेश ही बली होकर केन्द्र में हो तो अरिष्ट का नाश होता है, जैसे शंकरजी ने त्रिपुर राक्षस का नाश किया था।।४६।।

शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते।
विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम्।।४७।।

शुक्लपक्ष से रात्रि में जन्म हो और लग्न को शुभ ग्रह देखता हो तथा कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो और लग्न को शुभ ग्रह देखता हो तो अरिष्ट का नाश होता है।।४७।।

व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुला लग्ने तु जायते।
जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत्।।४८।।

यदि तुला लग्न में जन्म हो और बारहवें स्थान में सूर्य हों तो बालक १०० वर्ष तक जीता है।।४८।।

गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथवा कुजः।
हत्वारिष्टमशेषं च जनन्याः शुभकृद्भवेत्।।४९।।

गुरु-भौम एक भाव में हों अथवा गुरु से भौम देखा जाता हो तो अरिष्टों का नाश होता है और माता को सुख होता है।।४९।।

चतुर्थदशमे पापः सौम्यमध्ये यदा भवेत्।
पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।।५०।।

शुभग्रह के मध्य में चौथे, दशम भाव में पापग्रह हों, केन्द्रत्रिकोण में शुभग्रह हों तो पिता को सुख होता है।।५०।।

लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेटः केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमन्त्री।
कुलद्वयानन्दकरो प्रसूतः दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च।।५१।।

लग्न से चौथे स्थान में पापग्रह हों, केन्द्र व त्रिकोण में गुरु हों तो बालक दोनों कुलों (माता-पिता) को सुखदायक होता है।।५१।।

सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।
सद्यो नाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत्।।५२।।

शुभग्रह के मध्य में पापग्रह हों और शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण में हो तो अरिष्ट का नाश होता है और उस भाव के फलों की वृद्धि होती है।।५२।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यामरिष्टभङ्गाध्यायः पञ्चमः।

इत्यरिष्टभङ्गाध्यायः।

अथाऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः

तत्रादौ धूमग्रहफलम्—

शूरो विमलनेत्रांशः सुस्तब्धो निर्घृणः खलः।
मूर्त्तिस्थे धूमसम्प्राप्ते गाढशेषो नरः सदा।।१।।

यदि धूमग्रह प्रथम भाव में हो तो जातक शूरवीर, सुन्दर नेत्र और कंधे वाला, मूर्ख, निर्लज्ज, दुष्ट तथा बड़ा क्रोधी होता है।।१।।

रोगी धनी तु हीनाङ्गो राज्यापहृतमानसः।
द्वितीये धूमसम्प्राप्ते मन्दप्राज्ञो नपुंसकः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो रोगी, धनी, विकलांग, राजा से अपहृत चित्तवाला, मंदबुद्धि और नपुंसक होता है।।२।।

मतिमान् शौर्यसङ्ग्रामे इष्टचित्तः प्रियंवदः।
धूमे सहजभावस्थे धनाढ्यो धनवान् भवेत्।।३।।

तीसरे भाव में हो तो बुद्धिमान्, पराक्रमी, शुद्धचित्त, मीठा बोलने वाला, धनसंयुक्त धनी होता है।।३।।

कलत्राङ्गपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः।
चतुर्थे धूमसम्प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचिन्तकः।।४।।

चौथे भाव में हो तो स्त्री से त्यागा हुआ नित्य दुःखी, सभी शास्त्रों का विचार करने वाला होता है।।४।।

स्वल्पापत्यो धनैर्हीनो धूमे पञ्चमसंस्थिते।
गुरुतः सर्वभक्षं च सुहृन्मन्त्रविवर्जितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो थोड़े संतानवाला, निर्धन, गौरव से युक्त, सर्वभक्षी, अच्छे मित्रों से रहित होता है।।५।।

बलवाञ्छत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे।
बहुतेजोयुतः ख्यातः सदा रोगविवर्जितः।।६।।

छठे भाव में हो तो बलवान्, शत्रु को मारने वाला, तेजस्वी, प्रसिद्ध और रोगहीन होता है।।६।।

निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः।
धूमे सप्तमभे प्राप्ते निस्तेजः सर्वदा भवेत्।।७।।

सातवें भाव में धूम हो तो निर्धन, निरंतर कामी, परस्त्रीगामी और तेजहीन होता है।।७।।

विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसङ्गरः।
अप्रियो निष्ठुरः स्वामी धूमे मृत्युगते सति।।८।।

आठवें भाव में हो तो पराक्रम से त्यागी, उत्साही सत्संकल्पवाला, अप्रिय, निष्ठुर स्वामी होता है।।८।।

सुतसौभाग्यसम्पन्नो धनी मानी दयान्वितः।
धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनवान्बन्धुवत्सलः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्र, भाग्य संयुक्त, धनी, मानी, दयालु, धनी और बंधुप्रिय होता है।।९।।

सुतसौभाग्यसंयुक्तः सन्तोषी मतिमान् सुखी।
कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः।।१०।।

दशम भाव में हो तो पुत्र तथा सौभाग्य संयुक्त, संतोषी, बुद्धिमान् और सुखी होता है।।१०।।

धनधान्यहिरण्याढ्यो रूपवांश्च कलान्वितः।
धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः।।११।।

ग्यारहवें भाव में हो तो धन, धान्य और सुवर्ण से युक्त, रूपवान् तथा कला को जानने वाला होता है।।११।।

पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसङ्गते।
परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्घृणः शठी।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो पतित, पाप करने वाला परस्त्रीगामी, व्यसनी और निर्लज्ज होता है।।१२।।

इति धूमफलम्।

अथ पातफलम्

मूर्तौ च पाते सम्प्राप्ते दुःखेनाङ्गप्रपीडितः।
क्रूरो घातकरो मूर्खो द्वेष्यो बन्धुजनेन च।।१।।

यदि लग्न में पात हो तो दुःखी, अंग से पीडित, क्रूर प्रकृति, मूर्ख, भाइयो से द्वेष करने वाला होता है।।१।।

जिह्मोऽतिपित्तवान् भोगी धनस्थे पातसंज्ञके।
निर्घृणश्च कृतघ्नश्च दुष्टात्मा पापकृत्तथा।।२।।

दूसरे भाव में हो तो कुटिल, अत्यंत पित्तप्रकृति, भोगी, निर्लज्ज, कृतघ्न, दुष्टात्मा और पापी होता है।।२।।

स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढ्यो राजवल्लभः।
सहजे पापसम्प्राप्ते सेनाधीशो भवेन्नरः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो सेनापति, स्थिरबुद्धि, संगति करने वाला, दाता, धनी, राजा का प्रियपात्र होता है।।३।।

बन्धव्याधिसमायुक्तः सुतसौभाग्यवर्जितः।
चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजश्च सः।।४।।

चौथे भाव में हो तो बंधन और व्याधि संयुक्त, पुत्र और भाग्य से हीन मनुष्य होता है।।४।।

दरिद्रो रूपसंयुक्तः पातो पञ्चमगो यदि।
कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रपः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो मनुष्य दरिद्र, रूपवान्, कफ, पित्त और वायु प्रकृति से संयुक्त, क्रूर और निर्लज्ज होता है।।५।।

शत्रुहन्ता सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः।
कलासु निपुणः शान्तः पाते शत्रुगते सति।।६।।

छठे भाव में हो तो जातक शत्रु का नाशक, शरीर से पुष्ट, सभी अस्त्रों को धारण करने वाला, कला में निपुण और शान्त होता है।।६।।

धनदारसुतैस्त्यक्तः स्त्रीजितः कष्टजीविकः।
पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः।।७।।

सातवें भाव में पात हो तो धन, स्त्री, पुत्र से हीन, स्त्री से जीता हुआ, कष्ट से जीविका प्राप्त करने वाला, कामी और शत्रुओं से मित्रता करने वाला होता है।।७।।

विकलाङ्गो विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिन्दकः।
मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडापरिप्लुतः।।८।।

आठवें भाव में पात हो तो अंगहीन, कुरूप, दरिद्र, ब्राह्मणनिंदक और रक्तपीड़ा से युक्त होता है।।८।।

बहुव्यापारको नित्यं बहुमित्रो बहुश्रुतः।
धर्मभे पातसम्प्राप्तो स्त्रीप्रियज्ञः प्रियंवदः।।९।।

नवम भाव में पात हो तो अनेक व्यापार को करने वाला, अनेक मित्रों वाला, अनेक शास्त्रों को जानने वाला, स्त्री को प्रिय और प्रिय बोलने वाला होता है।।९।।

सश्रीको धर्मकृच्छ्रान्तो धर्मकार्येषु कोविदः।
कर्मस्थे पातसम्प्राप्ते महाप्राज्ञो विचक्षणः।।१०।।

दशम भाव में पात हो तो लक्ष्मी से युक्त, धार्मिक, शान्त, धर्मकार्य में पंडित होता है।।१०।।

प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः।
अश्वाढ्यो गीतसंसक्तः पाते लाभगते सति।।११।।

एकादश भाव में हो तो बहुत बड़ा धनी, मानी, सत्य बोलने वाला, दृढ़-प्रतिज्ञ,. घोड़ा रखने वाला, गीत को जानने वाला होता है।।११।।

क्रोधी च बहुकर्माढ्यो व्यङ्गो धर्मस्य द्वेषकः।
व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबन्धुभिः।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो क्रोधी, अनेक कार्यों में संलग्न, अंगहीन, धर्मनिंदक और अपने बंधुओं से विद्वेष करने वाला होता है।।१२।।

इति पातफलम्।

अथ परिधिफलम्

विद्वान् सत्यरतः शान्तो धनवान्पुत्रवाञ्छुचिः।
दाता च परिधौ मूर्तौ जायते गुरुवत्सलः।।१।।

यदि परिधि लग्न में हो तो जातक विद्वान्, सत्य बोलने वाला, शान्तचित्त, धनवान्, पुत्रवान्, पवित्र, दाता और गुरुभक्त होता है।।१।।

ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः।
धनस्थे परिधौ प्राप्ते प्रभुर्भवति मानवः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो समर्थ, रूपवान्, भोगी, सुखी, धर्मपरायण और समर्थ होता है।।२।।

स्त्रीवल्लभः सुरूपाङ्गो देवस्वजनसङ्गतः।
तृतीये परिधौ भृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो स्त्रीप्रिय, सुन्दर रूप, धन से पूर्ण, देवता और आपस के लोगों के अनुकूल, नौकर और गुरुभक्त होता है।।३।।

परिधौ सुखभावस्थे विस्मितं त्वरिमङ्गलम्।
अक्रूरं त्वथ सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः।।४।।

चौथे भाव में हो तो विस्मयालु, शत्रु का मंगल करने वाला, सरल और गीतज्ञ होता है।।४।।

लक्ष्मीवान् शीलवान् कान्तः प्रियवान् धर्मवत्सलः।।५।।
पञ्चमे परिधौ जाते स्त्रीणां भवति वल्लभः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो लक्ष्मीवान्, शीलवान्, सुन्दर, धार्मिक और स्त्रियों का प्रिय होता है।।५।।

व्यक्तोऽर्थपुत्रवान् भोगी सर्वसत्त्वहिते रतः।
परिधौ रिपुभावस्थे शत्रुहा जायते नरः।।६।।

छठे भाव में हो तो प्रसिद्ध धनी, पुत्रवान्, भोगी, सभी का हित करने वाला, शत्रुयुक्त किन्तु शत्रु का नाश करने वाला होता है।।६।।

स्वल्पापत्यसुखैर्हीनो मन्दप्रज्ञः सुनिष्ठुरः।
परिधौ द्यूनभावस्थे स्त्रीणां व्याधिश्च जायते।।७।।

यदि परिधि सातवें भाव में हो तो थोड़े संतान सुख से हीन, मंदबुद्धि एवं निष्ठुर और उसकी स्त्री रोगी होती है।।७।।

अध्यात्मचिन्तकः शान्तो दृढकार्यो दृढव्रतः।
धर्मवांश्च ससत्यश्च परिधौ रन्ध्रसंस्थिते।।८।।

आठवें भाव में हो तो अध्यात्म (वेदान्त) को जानने वाला, शांत, दृढ़ कार्य करने वाला, दृढ़निश्चयी, धार्मिक और बली होता है।।८।।

पुत्रान्वितः सुखी कान्तो धनाढ्यो लोलवर्जितः।
परिधौ धर्मगे मानी अल्पसन्तुष्टमानसः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्रयुक्त, सुखी, सुन्दर, धनी, स्थिर, अभिमानी और थोड़े में संतुष्ट होने वाला होता है।।९।।

क्वचिदज्ञस्तथा भोगी दृढकायो ह्यमत्सरः।
परिधौ दशमे प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थपारगः।।१०।।

दशम भाव में परिधि हो तो कोई मूर्ख होता है, भोगी, बली और सभी शास्त्र का विशारद होता है।।१०।।

स्त्रीभोगी गुणवांश्चैव मतिमान् स्वजनप्रियः।
लाभे च परिधौ जाते मन्दाग्निः संसुपद्यते।।११।।

एकादश भाव में हो तो स्त्रीभोगी, गुणी, बुद्धिमान्, बंधुप्रिय और मंदाग्नि रोग से पीडित होता है।।११।।

व्ययस्थे परिधौ जाते गुरुनिन्दापरायणः।
दुःखी क्रोधाधिकश्चैव व्ययाधिक्यं च जायते।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो गुरु की निंदा करने वाला, दुःखी, अत्यंत क्रोधी और अधिक व्यय करने वाला होता है।।१२।।

इति परिधिफलम्।

अथ चापफलम्

धनधान्यहिरण्याढ्यो कृतज्ञः सम्मतः सताम्।
सर्वदोषपरित्यक्तश्चापे तनुगते नरः।।१।।

यदि चापलग्न में हो तो जातक धन-धान्य से पूर्ण, सज्जनों के अनुकूल, कृतज्ञ, सभी दोषों से रहित होता है।।१।।

प्रियंवदः प्रगल्भाढ्यो विनीतो विद्ययाधिकः।
धनस्थे चापसम्प्राप्ते रूपवान् धर्मतत्परः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो प्रिय बोलने वाला, प्रगल्भ, धनी, विनीत विद्वान्, सुन्दर और धार्मिक होता है।।२।।

कृपणोऽतिकलाभिज्ञश्चौर्यकर्मरतः सदा।
सहजे धनुषि प्राप्ते हीनाङ्गो मत्तसौहृदः।।३।।
सुखी गोधनधान्यादिराजसन्मानपूजितः।
धनुषि सुखसंस्थे तु नीरोगो न तु जायते।।४।।

तीसरे भाव में हो तो कृपण, कला को जानने वाला, हमेशा चोरी करने में आसक्त, अंग से हीन और मतवाले साथियों से युक्त होता है।।३।। चौथे भाव में हो तो सुखी, गौ, धन-धान्य से पूर्ण, राजसम्मानयुक्त और नीरोग होता है।।४।।

रुचिमान् दीर्घदर्शी च देवभक्तः प्रियंवदः।
चापे पञ्चमभे जातो विवृद्धः सर्वकर्मसु।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो कांतिमान्, दीर्घदर्शी, देवभक्त, प्रिय बोलने वाला और सभी कामों में वृद्धि करने वाला होता है।।५।।

शत्रुहन्ताऽतिधूर्त्तश्च सुखी प्रतिरुचिः शुचिः।
अरिस्थलगते चापे सर्वकर्मसमृद्धिभाक्।।६।।

छठे भाव में हो तो शत्रु का नाश करने वाला, अत्यंत मूर्ख, प्रेम करने वाला, सुखी, पवित्र और सभी कामों में समृद्धि को प्राप्त करने वाला होता है।।६।।

ईश्वरो गुणसम्पूर्णः शास्त्रविद्धार्मिकः प्रियः।
चापे सप्तमभावस्थे भवतीति न संशयः।।७।।

यदि चाप सातवें भाव में हो तो जातक ईश्वर-सदृश गुणों से पूर्ण, शास्त्र को जानने वाला, धार्मिक और प्रियभाषी होता है।।७।।

परकर्मरतः क्रूरः परदारपरायणः।
अष्टमस्थानगे चापे करोति विफलान्तिकः।।८।।

आठवें भाव में हो तो परकर्म में आसक्त, क्रूर, परस्त्रीगामी और अंतिम समय में अधिक कष्ट भोगने वाला होता है।।८।।

तपस्वी व्रतचर्यासु निरतो विद्ययाधिकः।
धर्मस्थे यदि चापे च मानज्ञो लोकविश्रुतः।।९।।

नवें भाव में हो तो मानी, लोक में प्रसिद्ध, तपस्वी, व्रतादि करने में आसक्त, विद्वान् होता है।।९।।

बहुपुत्रधनैश्वर्यो गोमहिष्यादिभाक् भवेत्।
कर्मस्थे चापसंयुक्ते जायते लोकविश्रुतः।।१०।।

दशम भाव में हो तो बहुपुत्र, धन, ऐश्वर्य, गौ, भैंस से युक्त और लोक-प्रसिद्ध होता है।।१०।।

लाभगे चापसम्प्राप्ते लाभयुक्तो भवेन्नरः।
नीरोगो दृढकर्माग्निर्मन्त्रस्त्रीपरमार्थवित्।।११।।

ग्यारहवें भाव में हो तो लाभ से युक्त, नीरोग, क्रोधी, मंत्र, स्त्री और परमास्त्र को जानने वाला होता है।।११।।

खलोऽतिमानी दुर्बुद्धिर्निर्ल्लज्जो व्ययसंस्थितः।
चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो दुष्ट, अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्री युक्त और निर्धन होता है।।१२।।

इति चापफलम्।

अथ शिखिफलम्

कुशलः सर्वविद्यासु सुखी वाङ्निपुणः पुमान्।
मूर्त्तिस्थे शिखिसम्प्राप्ते सर्वकामान्वितो भवेत्।।१।।

यदि लग्न में शिखि (केतु) हो तो सभी विद्याओं में निपुण, सुखी, वाक्चातुर्य, प्रवीण और सभी कार्यों में चतुर होता है।।१।।

वक्ता प्रियंवदः कान्तो धनस्थानगते शिखी।
काव्यकृत्पण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो वक्ता, प्रिय बोलने वाला, सुन्दर, कविता करने वाला, मानी, नम्र और वाहन युक्त होता है।।२।।

कदर्यः क्रूरकर्मा च कुशाङ्गो धनवर्जितः।
शिखिनि सहजस्थे तु तीव्ररोगी प्रजायते।।३।।

तीसरे भाव में हो तो कृपण, क्रूर कर्म करने वाला, कृश शरीर वाला, धनहीन और कठिन रोगवाला होता है।।३।।

रूपवान् गुणसम्पन्नः सात्त्विको विश्रुतिप्रियः।
सुखस्थे तु शिखीजाते सदा भवति सौख्यभाक्।।४।।

चौथे भाव में हो तो रूपवान्, गुण से युक्त, सात्त्विक, वेद को जानने वाला और सदा सुखी होता है।।४।।

सुखी भोगी कलाविच्च पञ्चमस्थानगः शिखी।
युक्तिज्ञो मतिमान् वाग्मी गुरुभक्तिसमन्वितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो युक्ति को जानने वाला, वक्ता, चतुर, गुरुभक्ति युक्त, सुखी, भोगी और कला को जानने वाला होता है।।५।।

मातृपक्षक्षयकरः रिपुहा बहुबान्धवः।
रिपुस्थाने शिखिप्राप्ते शूरः कान्तो विचक्षणः।।६।।

छठे भाव में हो तो मातृपक्ष (माया आदि) को नाश करने वाला, शत्रु को नाश करने वाला, बहु बांधवों वाला, शूरवीर, सुन्दर और विचक्षण होता है।।६।।

रक्तपीडाभिरतः कामी भोगसमन्वितः।
शिखी तु सप्तमस्थाने वेश्यास्तु कृतसौहृदः।।७।।

यदि शिखी सातवें भाव में हो तो रक्तपीडा से युक्त, कामी, भोगयुक्त, वेश्या से मित्रता करने वाला होता है।।७।।

नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निन्दकः सदा।
मृत्युस्थाने शिखिप्राप्ते गतस्त्र्यपरपक्षकः।।८।।

आठवें भाव में हो तो नीचकर्म में आसक्त, पापी, निर्लज्ज, निंदा करने वाला, स्त्रीहीन, शत्रुपक्ष से युक्त होता है।।८।।

लिङ्गधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः।
धर्मभे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः।।९।।

नवम भाव में हो तो चिह्नधारी (तिलक-विशेष), प्रसन्न आत्मा, सभी प्राणियों के हित करने में आसक्त, धार्मिक कार्यों में पटु होता है।।९।।

सुखसौभाग्यसम्पन्नः कामिनीनां च वल्लभः।
दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनी भवेत्।।१०।।

दशम स्थान में हो तो सुख-सौभाग्य से संपन्न, स्त्रियों का प्यारा, दाता, ब्राह्मणों से आवृत होता है।।१०।।

नित्यलाभः सुधर्मी च लाभे शिखिनि पूज्यते।
धनाढ्यः सुभगः शूरः सुयज्ञश्चातिकोविदः॥११॥

एकादश भाव में हो तो नित्य लाभ से युक्त, धर्मात्मा, धनी, सुन्दर, शूरवीर, यशस्वी और पंडित होता है॥११॥

पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽघृणो नरः।
परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययगे सति॥१२॥

बारहवें भाव में हो तो पापकर्म में आसक्त, शूर, श्रद्धाहीन, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी और भयंकर होता है॥१२॥

इति शिखिफलम्।

अथ गुलिकफलम्

रोगार्त्तः सततं कामी पापात्माधिगतः शठः।
मूर्त्तिस्थे गुलिके मन्दः खलभावोऽतिदुःखितः॥१॥

यदि गुलिक लग्न में हो तो जातक निरंतर रोग से पीड़ित, कामी, पापात्मा, मूर्ख, दुष्ट स्वभाव और अत्यंत दुःखी होता है॥१॥

विकृतो दुःखितः क्षुद्रो व्यसनी च गतत्रपः।
धनस्थे गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः॥२॥

दूसरे भाव में हो तो विकृत, दुःखी, क्षुद्र, दुर्व्यसनी, निर्लज्ज और निर्धन होता है॥२॥

चार्वङ्गो ग्रामपः पुण्यसंयुक्तः सज्जनप्रियः।
गुलिके तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः॥३॥

तीसरे भाव में हो तो सुन्दर शरीर, ग्रामपति, पुण्यवान्, सज्जनों का प्रिय और राजपूजित होता है॥३॥

रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत्।
यमात्मजे सुखस्थे तु वातपित्ताधिको भवेत्॥४॥

चौथे भाव में हो तो रोगी, सुख से हीन, सदा पाप करने वाला और अधिक वायु-पित्त वाला होता है॥४॥

विस्तुतिर्विधनोऽल्पायुर्द्वेषी क्षुद्रो नपुंसकः।
सुते सगुलिको जातो स्त्रीजितो नास्तिको भवेत्॥५॥

पाँचवें भाव में हो तो निन्दा करने वाला, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, क्षुद्र, नपुंसक, स्त्री से जीता हुआ और नपुंसक होता है॥५॥

वीतशत्रुः सुपुष्टांङ्गो रिपुस्थाने यमात्मजे।
सुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः सुदृढो हितः।।६।।

छठे भाव में हो तो शत्रु से रहित, पुष्ट शरीर, तेजस्वी, स्त्रीप्रिय, उत्साही और दृढ़ विचार का हितकारी होता है।।६।।

स्त्रीजितः पापकृज्जारः कृशाङ्गो गतसौहृदः।
जीवितः स्त्रीधनेनैव सप्तमस्थे रवेः सुते।।६।।

यदि गुलिक सातवें भाव में हो तो जातक स्त्री से पराजित, पाप करने वाला, दुर्बल शरीर वाला, मित्रहीन, स्त्रीधन से जीविका वाला होता है।।७।।

क्षुधालुर्दुःखितः क्रूरस्तीक्ष्णशेषोऽतिनिर्घृणः।
रन्ध्रे प्राणहरो निःस्वो जायते गुणवर्जितः।।८।।

आठवें भाव में हो तो भूख से पीड़ित, दुःखी, क्रूर, अधिक क्रोधी, अत्यंत निर्लज्ज, दरिद्र और गुण से हीन होता है।।८।।

बहुक्लेशी कृशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः।
मन्दे धर्मस्थिते मन्दः पिशुनो बहिरकृतिः।।९।।

नवम भाव में हो तो अत्यंत दुःखी, दुर्बल शरीर, दुष्टकर्म को करने वाला, अत्यंत निर्लज्ज, मंदप्रकृति, कृपण और चुगलखोर होता है।।९।।

पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवाग्न्यर्चनवत्सलः।
दशमे गुलिके जातो योगधर्माश्रितः सुखी।।१०।।

दशम भाव में हो तो पुत्र से युक्त, सुखी, सुख भोगने वाला, देवता एवं अग्नि का उपासक, योगसाधन में संलग्न होता है।।१०।।

सुखी भोगी प्रजाध्यक्षो बन्धूनां च हिते रतः।
लाभे यमानुजो जातो नीचांशः सार्वभौमकः।।११।।

एकादश भाव में हो तो सुखी, भोगी, प्रजा का अध्यक्ष, बंधुओं के हित में आसक्त, नीचे अंगों वाला और सार्वभोम के समान रहने वाला होता है।।११।।

नीचकर्माश्रितः पापो हीनाङ्गो दुर्भगोऽलसः।
व्ययभे गुलिके जातो नीचेषु कुरुते रतिम्।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो नीच कर्म में आसक्त, पापी, अंग से हीन, दरिद्र, आलसी और नीचों से प्रेम करने वाला होता है।।१२।।

इति गुलिकफलम्।

अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जडाङ्गस्तु हीनाङ्गो दुःखितः कृशः।
लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः।।१।।

यदि प्राणपद लग्न में हो तो गूँगा, उन्मत्त, स्तब्ध, अंगहीन, दुःखी, कृश, रोगी और दुर्बल शरीर का होता है।।१।।

बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रजः।
धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः।।२।।

दूसरे भाव में हो तो धन-धान्य से पूर्ण, अनेक भृत्य एवं अनेक संतति वाला और भाग्यशाली पुरुष होता है।।२।।

हिंस्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचे।
तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः।।३।।

तीसरे भाव में हो तो हिंसा करने वाला, गर्व से युक्त, निष्ठुर, अत्यंत मलिन और गुरुभक्तिहीन होता है।।३।।

सुखस्थे तु सुखी कान्तः सुहृद्रामासु वल्लभः।
गुरौ परायणः शीलः प्राणे वै सत्यतत्परः।।४।।

चौथे भाव में हो तो सुखी, सुन्दर, मित्र एवं स्त्री का प्रिय, गुरुभक्त, सुशील और सत्यवक्ता होता है।।४।।

सुखभाक् च क्रियोपेतस्त्वषचारदयान्वितः।
पञ्चमस्थे प्राणपदे सर्वकर्मसमन्वितः।।५।।

पाँचवें भाव में हो तो सुख भोगने वाला, क्रिया से युक्त, दयायुक्त और सभी कामों में अनुरक्त होता है।।५।।

बन्धुशत्रुवशस्तीक्ष्णो मन्दाग्निर्निर्दयः खलः।
षष्ठे प्राणोऽल्परोगश्च वित्तपोऽल्पायुरेव च।।६।।

छठे भाव में हो तो बन्धु एवं शत्रु के वश में रहने वाला, तीक्ष्ण स्वभाव, मंदाग्नि से युक्त, निर्दयी, दुष्ट, धनी और अल्पायु होता है।।६।।

ईर्ष्यालुः सततं कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः।
सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान्।।७।।

यदि सातवें भाव में प्राणपद हो तो ईर्ष्यालु, कामी, भयानक शरीर, दुष्ट स्वभाव और मूर्ख होता है।।७।।

रोगसन्तापिताङ्गश्च प्राणपदेऽष्टमे सति।
पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबन्धुसुतोद्भवैः।।८।।

आठवें भाव में हो तो रोग से पीडित, राजा, रोग, बन्धु, पुत्र और शत्रु से पीड़ित होता है।।८।।

पुत्रवान् धनसम्पन्नः सुभगः प्रियदर्शनः।
प्राणे धर्मस्थिते भृत्यः सदाऽदुष्टो विचक्षणः।।९।।

नवम भाव में हो तो पुत्रवान्, धनी, भाग्यवान्, दर्शनीय, नौकर से युक्त, पंडित होता है।।९।।

वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः।
दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः।।१०।।

दशम भाव में हो तो बलवान्, बुद्धिमान्, राजकार्य में चतुर, पंडित, देवपूजन में संलग्न होता है।।१०।।

विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः।
लाभस्थानस्थिते प्राणे गौराङ्गो मानवत्सलः।।११।।

एकादश भाव में हो तो प्रसिद्ध, गुणी, बुद्धिमान्, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है।।११।।

क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनाङ्गो विद्वेषी द्विजबन्धुषु।
व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः।।१२।।

बारहवें भाव में हो तो क्षुद्र, दुष्ट, हीनांग, ब्राह्मण-बंधुओं का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है।।१२।।

इति प्राणपदफलम्।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डेऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः षष्ठः।।६।।

अथाऽर्गलाध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि अर्गलार्गलमुत्तमम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणां च फलं वदेत्।।१।।

अब मैं अर्गला योग के लक्षण और फल को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान से ग्रहों के फलों का ज्ञान होता है।।१।।

चतुर्थे च धने लाभे विद्यमानग्रहार्गला।
तस्य दृष्ट्यादिकं ज्ञेयं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२।।

चौथे, दूसरे और एकादश भाव में ग्रहों के होने से अर्गला योग होता है और उसकी दृष्टि आदि पूर्वोक्त प्रकार से ही होती है।।२।।

एकग्रहार्गलाल्पं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत्।
त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते।।३।।

वह भी एक ग्रह के होने से अल्प, दो ग्रह के होने से मध्यम और तीन ग्रह के होने से पूर्ण अर्गला होती है।।३।।

राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः।
तुर्यवित्तैकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत्।।४।।

इसी प्रकार किसी राशि से उक्त स्थानों में राशि की अर्गला होती है। चौथे, दूसरे और एकादश भाव की अर्गला जिस किसी की होती है।।४।।

द्विविधा सार्गला विप्र ब्रह्मणा चोदितं पुरा।
शुभकृत् पापकृच्चैव तन्वादीनां विचिन्तयेत्।।५।।

वह दो प्रकार की होती है। शुभग्रह और पापग्रह कृत होती है।।५।।

भिन्नार्गलां पुनर्वक्ष्ये चतुर्थार्गलपापयुक्।
तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते सति।।६।।

एक भिन्न अर्गला होती है जो कि चौथी होती है। वह तीसरे भाव में अधिक पापग्रहों के होने से होती है।।६।।

बहुपापा तृतीयस्था पापषड्वर्गयोगतः।
पापार्जितः पापदृष्ट्या संयुक्तार्गलकारकः।।७।।
तृतीये शुभसम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभान्विते।
शुभवर्गे च षड्वर्गे विज्ञेयं तुर्यमर्गला।।८।।

तीसरे भाव में शुभग्रह का संबन्ध हो, शुभग्रह की राशि हो, शुभग्रह देखता हो, शुभग्रह का षड्वर्ग हो तो चौथा अर्गला योग होता है।।७-८।।

तुर्यवित्तैकादशे च पापयुग्वा शुभोऽपि वा।
उभयक्षेत्रसम्बन्धे अर्गलां कारयेद्द्विज।।९।।

चौथे, दूसरे, एकादश भाव में पापग्रह युत हो वा शुभग्रह हो, दोनों के संबंध से अर्गला योग होता है।।९।।

तृतीये बहुपापस्थे बहुयुक्तार्गला भवेत्।
निर्बाधिका तु सा ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१०।।

तीसरे भाव में बहुत से पापग्रह हों तो बहुयुक्त अर्गला होती है और इसे निर्बाध अर्गला कहते हैं।।१०।।

एकेन द्वितयेनापि अर्गला या भवेद्द्विज।
सार्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना।।११।।

एक ग्रह या दो ग्रह से जो अर्गला होती है वह फलद नहीं होती है।।११।।

चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला।
तस्यापि बाधकाः खेटा व्योमारिष्फतृतीयगाः।।१२।।

चौथे, दूसरे, एकादश में शुभग्रह एवं पापग्रह से अर्गला योग होता है, किन्तु दशम, द्वादश और तीसरा स्थान उसका बाधक होता है।।१२।।

क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थं व्योमबाधकम्।
धने च व्ययभावं च भवेज्ज्ञेयं तृतीयकम्।।१३।।

चौथे का दशम, दूसरे का द्वादश और एकादश का तीसरा स्थान बाधक होता है।।१३।।

निर्बाधका च फलदा न दातव्या सबाधका।
चिन्तनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव।।१४।।

अर्थात् बाधक स्थानों में ग्रहों के होने से अर्गला योग नहीं होता है। निर्बाध अर्गला फलदायक और सबाधक अर्गला निष्फल होती है।।१४।।

अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कथयेऽधुना।
नूनं सा निर्बला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा।।१५।।

अर्गला योग से बाधक ग्रहों के बाधकों को मैं कह रहा हूँ, निश्चय ही वह निर्बल ग्रह होता है।।१५।।

वित्तलाभचतुर्थानां यः पश्यति शुभार्गलाम्।
व्ययभ्रातृनभस्थाश्चेद्विपरीतार्गला द्विज।।१६।।

दूसरे, ग्यारहवें और चौथे भाव को देखता हो तो शुभ अर्गला होती है। किन्तु १२वें, ३रे और १०वें स्थान में स्थित ग्रह देखते हों तो विपरीत अर्गला होती है।।१६।।

पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्ववद्द्विज।
पञ्चमे चार्गलास्थानं नवमस्तद्विरोधकः।।१७।।

इसी प्रकार त्रिकोण (५।९) अर्गला योग होता है। ५वें भाव में ग्रह हो तो अर्गला होता है, किन्तु नवम भाव में कोई ग्रह हो तो अर्गला नहीं होता है।।१७।।

विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारकः।
पञ्चमस्थस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज।।१८।।

केतुग्रह विपरीत यानि ९वें भाव में अर्गला योगकारक और पाँचवें भाव में वाचक होता है।।१८।।

क्रमेण केतुः प्रकरोत्यर्गलां द्विज।
नवमस्थस्तद्विरोधो लग्नार्गलमिदं विदुः।।१९।।

हे द्विज! केतु ग्रह भी क्रम से अर्गला योग करता है। किन्तु नवमस्थ ग्रह उसका विरोधी होता है, इसे लग्नार्गल कहते हैं।।१९।।

राश्यर्गलं च खेटानां चिन्तयेद्विविधार्गलम्।
यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत्।।२०।।

इसी प्रकार राशियों का भी अर्गला योग विचार करना चाहिए।।२०।।

यत्र राशिस्थितः खेटस्तस्य पाकान्तरे भवेत्।
तत्काले च फलं वाच्यं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२१।।

जो-जो अर्गलायोगकारक ग्रह हों उनके दशा अन्तर में अर्गला योग का फल होता है।।२१।।

सारांश यह है कि जिस किसी भाव या ग्रह का विचार किया जाय तो यह देखना चाहिए कि उस भाव या ग्रह से चौथे, दूसरे और ग्यारहवें भाव में कोई ग्रह हो तो उस भाव या ग्रह का अर्गला योग होता है। किन्तु उक्त अर्गला योग का भंग भी होता है अर्थात् राशि का ग्रह से चौथे भाव में ग्रह के होने से अर्गला होता है, यदि राशि का ग्रह से दशमस्थ कोई ग्रह न हो। इसी दूसरे भाव में योग होता है, किन्तु १२वें कोई ग्रह न हो तथा ग्यारहवें भाव में योग होता है, यदि तीसरे भाव में कोई ग्रह न हो। यदि योगकारक ग्रह से बाधक ग्रह निर्बल या संख्या में कम हों तो अर्गला का प्रतिबंध नहीं होता है। इसी प्रकार राशि या ग्रह से तीसरे भाव में तीन से अधिक फल ग्रह हों तो निर्विरोधी अर्गला योग होता है। इसी प्रकार ५वें भाव में भी अर्गला योग होता है, यदि नवम में कोई ग्रह न हो तो। केतुग्रह का विपरीत अर्गला योग होता है अर्थात् बाधक स्थान में अर्गला और योगस्थान में प्रतिबंधक होता है।

अथाऽर्गलाफलम्—

पदे लग्ने सप्तमे वा निराभासार्गला द्विज।
निर्बन्धा चार्गला तत्र दृष्ट्या भाग्यं भवेन्नरः।।२२।।

पद या लग्न से सातवें भाव में निराभासा (निर्बाध) अर्गला होता है। यदि यह अर्गला हो तो भाग्यवान् मनुष्य होता है।।२२।।

अर्गलां प्रतिबन्धं च प्रथमाङ्घ्रेर्विचिन्तयेत्।
धनधान्यपुत्रपशुदाराबन्धुकुलैर्युतः।।२३।।
शरीरारोग्यमैश्वर्यभृत्यवाहनसंयुतः ।
हरभक्तः सुधर्मज्ञो दृष्ट्या भाग्यस्य लक्षणम्।।२४।।

अर्गला का प्रतिबंध एक स्थान में स्थित ग्रह से प्रथम चरण और दूसरे के चौथे चरण से, तीसरे और दूसरे चरण से देखना चाहिए। ऊपर कहे हुए प्रथम श्लोक के अनुसार अर्गला हो तो मनुष्य धन, धान्य, पुत्र, पशु, स्त्री और बन्धु-बान्धवों से युक्त, नीरोग शरीर, ऐश्वर्य, नौकर, वाहन और ऐश्वर्य से युक्त होता है।।२३-२४।।

शुभग्रहार्गला विप्र बहुद्रव्यप्रदायका।
पापेन स्वल्पवित्तः स्यान्त्रिविंशङ्कं द्विजोत्तम।।२५।।

शुभग्रह की अर्गला बहुत द्रव्य को देने वाली होती है और पापग्रह की अर्गला अल्प धन को देने वाली होती है।।२५।।

उभयार्गला भवेत्तत्र कदाचिद्धनवान् भवेत्।
कदाचिद्वित्तचिन्तार्तिर्जायते द्विजसत्तम।।२६।।

यदि दोनों (शुभ-पाप) से मिश्रित अर्गला हो तो कदाचित् धनी होता है। कदाचित् धन संबंधी चिंता से कष्ट होता है।।२६।।

यत्र जन्मनि सोऽपि स्याच्छुभदृष्टे शुभार्गला।
तेन दृष्टेक्षिते लग्ने प्रबल्यायोपकल्प्यते।।२७।।

यदि जन्मकाल में शुभग्रह से दृष्ट शुभ अर्गला हो और उसी शुभग्रह से लग्न युत वा दृष्ट हो तो लग्न प्रबल होती है।।२७।।

यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलसंस्थितः।
प्रथमां तुं विजानीयाद्विपरीतार्गलां द्विज।।२८।।

यदि अर्गला के प्रतिबंधकस्थानीय ग्रह यानि विपरीत अर्गलायोग कारक ग्रह देखते हों तो विपरीत फल होता है।।२८।।

लग्नसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिन्तयेत्।
भाग्यप्रबलता ज्ञेया लग्नसप्तशुभार्गला।।२९।।

लग्न और सप्तम के योग से भाग्ययोग की चिंता करनी चाहिए। लग्न सप्तम में शुभ कृत अर्गला हो तो भाग्य की प्रबलता जाननी चाहिए।।२९।।

शुभार्गले स्ववृद्धिः स्यात्पापे स्वल्पधनं वदेत्।
उभयार्गले तु तत्रैव क्वचिद्वृद्धिः क्वचित् क्षयम्।।३०।।

शुभग्रह की अर्गला में धन की वृद्धि और पापग्रह की अर्गला में अल्पधन की हानि होती है।।३०।।

तत्तद्राशिदशायां तु अर्गलाफलसिद्धये।
शुभो वाऽप्यशुभो वापि ह्यर्गला फलदायकः।।३१।।

उन-उन राशियों के अर्गला फल को देने वाले शुभग्रह शुभफल और पापग्रह अशुभ फल को देने वाले होते हैं।।३१।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां अर्गलाफलकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः।

अथ कारकाध्यायः

अथाग्रे सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहाणां कारकान् द्विज।
आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते।।१।।

हे द्विज! अब मैं ग्रहों के आत्मा आदि सात कारकों को कहूँगा।।१।।

रव्यादिशनिपर्यन्ता भवन्ति सप्तकारकाः।
अंशैः समौ ग्रहौ द्वौ च राह्वन्तान् गणयेद्द्विज।।२।।

रवि आदि ग्रह सात किसी-किसी के मत से राहु पर्यन्त आठ कारक होते हैं। यदि दो ग्रहों में अंश साम्य हो तो राहु पर्यंत ८ ग्रहों में कारक का विचार करना चाहिए।।२।।

रव्यादिपङ्गुपर्यन्तमंशाधिकग्रहो द्विज।
कारकेन्द्रोऽथ स ज्ञेयो आत्माकारक उच्यते।।३।।

रवि से राहु पर्यंत ग्रहों में भी जो ग्रह अंश से अधिक हो वह आत्मकारक ग्रहों का राजा होता है।।३।।

अंशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्यं च पश्यति।
कलासाम्ये पलाधिक्यमात्माकारक ईर्यते।।४।।

जहाँ ग्रहों के अंश तुल्य हो वहाँ कला से अधिकता लेना चाहिए और कला समान हो तो विकला से जो अधिक हो वही आत्मकारक होता है।।४।।

तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्यः प्रधानकः।
अंशाधिक्ये कारकः स्यादल्पभागोऽन्तकारकः।।५।।

राशि और कला से अधिक हो तो वह आत्मकारक नहीं होता है। जिसका अंश अधिक हो वही आत्मकारक होता है, अल्प अंश वाला अंतिमकारक होता है।।५।।

मध्यांशो मध्यखेटः स्यादुपखेटः स एव हि।
अधोऽधः कारका ज्ञेयाश्चराणि सप्तकारकाः।।६।।

दोनों के मध्य अंश वाले अन्य कारक होते हैं। क्रम से कारक होते हैं उसी को उपकारक कहते हैं।।६।।

तेषां मध्ये प्रधानं तु आत्मकारक उच्यते।
जातकराट् स विज्ञेयः सर्वेषां मुख्यकारकः।।७।।

इन सभी में आत्मकारक प्रधान जातक का स्वामी होता है, इसी को मुख्यकारक कहते हैं।।७।।

यथा भूमौ प्रसिद्धोऽस्ति नराणां क्षितिपालकः।
सर्ववार्ताधिकारी च बन्धकृन्मोक्षकृत्तथा।।८।।

जिस प्रकार पृथ्वी पर मनुष्यों में राजा बंधन, मोक्ष आदि सभी बातों का अधिकारी होता है।।८।।

पुत्रामात्यप्रजानां तु तत्तद्दोषगुणैस्तथा।
बन्धकृन्मोक्षकृद्विप्र तथा सम्मानकारकः।।९।।

वही पुत्र, मंत्री और प्रजा का उनके गुण-दोष के अनुसार बंधन, मोक्ष तथा सम्मान आदि करने वाला होता है। उसी प्रकार कारकराज के वश से अन्य कारक फल देने वाले होते हैं।।९।।

तथैव कारको राजा ग्रहाणामात्मकारकः।
आत्मेत्यादि फलं दत्ते चान्यथा स्थापयेद्द्विज।।१०।।

जिस प्रकार राजा के क्रोधित होने से सभी मंत्री आदि अपने मन का कार्य करने में असमर्थ होते हैं।।१०।।

यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च।
समर्था लोककार्येषु तथैवान्योन्यकारकः।।११।।
कारकराजवश्येन फलदातान्यकारकः।
यथा राजनि क्रुद्धे च सर्वेऽमात्यादयो द्विज।।१२।।
स्वजनानां कार्यकर्त्तुमसमर्था भवन्ति हि।
स्निग्धे भूपे ह्यमात्यादिः स्वशत्रूणां द्विजोत्तम।।१३।।
अकार्यं कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योपकारकः।
आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादि फलं ददुः।।१४।।

यदि राजा प्रसन्न होते हैं तो मंत्री आदि अपने शत्रु का भी अहित नहीं करते हैं, उसी प्रकार अन्य कारक भी आत्मकारक के वश में होते हैं।।१४।।

आत्मकारकखेटेन न्यूनभागो हि यद्ग्रहः।
अमात्यसंज्ञा तस्यैव ज्ञायते द्विजसत्तम।।१५।।

आत्मकारक ग्रह से न्यून अंशवाला ग्रह अमात्यकारक होता है।।१५।।

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम्।
मातृकारकखेटेन न्यूनभागो हि यो ग्रहः।।१६।।

इससे न्यून अंश वाला ग्रह भ्रातृकारक, इससे न्यून अंश वाला मातृकारक, इससे न्यून पुत्रकारक।।१६।।

सपुत्रकारको ज्ञेयस्तद्धीनो ज्ञातिकारकः।
ज्ञातिकारकखेटेन हीनभागो हि यो ग्रहः।।१७।।

इससे न्यून अंश वाला ग्रह शांति (जाति) कारक, इससे न्यून अंश वाला ग्रह।।१७।।

दारकारकविज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
चराश्च कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदितः पुरा।।१८।।

स्त्रीकारक होता है। यही सात चरकारक होते हैं।।१८।।

अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि।
स्वकारकं विना विप्र लुप्यति चात्मकारकः।।१९।।

यदि ग्रहों के अंश तुल्य हों तो दोनों ही एक कारक होते हैं।।१९।।

तत्कारको लुप्यति चेदन्यत्रैवास्ति कारकम्।
कारकाणां स्थिराणां च मध्ये सञ्चितयेद्द्विज।।२०।।

वहाँ दोनों का नाश हो जाता है, फिर स्थिरकारक से ही फल को देखना चाहिए।।२०।।

अथ योगकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि खेटान् कारकसंज्ञकान्।
यस्य जन्मनि भावानां यथास्थाने च वै द्विज।।२१।।

अब मैं योग करने वाले कारक ग्रहों को कह रहा हूँ।।२१।।

स्वर्क्षे तुङ्गे च मित्रर्क्षे कण्टके संस्थिता ग्रहाः।
अन्योन्यकारका विप्र कर्मगास्तु विशेषतः।।२२।।

जन्म समय ग्रह अपनी उच्चराशि, अपनी राशि वा अपने मित्र की राशि में होकर परस्पर केन्द्र में हों तो परस्पर कारक (भाग्योदय) करने वाले होते हैं। इसमें भी दशम स्थान में विशेष योगकारक होते हैं।।२२।।

लग्ने सुखे तथा कामे ग्रहभाववशेन च।
भवन्ति कारका विप्र विशेषेण च खेगताः।।२३।।

लग्न चतुर्थ, सप्तम, दशम में कारक होते हैं, विशेषतः दशम में कारक होता है।।२३।।

स्वमित्रर्क्षोच्चगो हेतुरन्योन्यं यदि केन्द्रगः।
ससुहृद्गणसम्पन्नः सोऽपि कारक एव वै।।२४।।

यदि ग्रह अपने मित्र, राशि, उच्च में होकर परस्पर केन्द्र में हों तो वे भी परस्पर कारक होते हैं।।२४।।

नीचान्वये यस्य जन्म बभूव द्विजसत्तम।
पतन्ति कारका लग्ने प्रधानत्वं च स आप्नुयात्।।२५।।

नीच वंश में उत्पन्न हो और योगकारक ग्रहों से योग होता हो तो वह अपने कुल में प्रधान होता है।।२५।।

राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम्।
एवं कुलानुसारेण कारकाणां फलं भवेत्।।२६।।

और राजकुल में उत्पन्न हो और योग होता हो तो अवश्य राजा होता है। इस प्रकार कुल के अनुसार कारकों का फल होता है॥२६॥

अथ स्थिरकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च।
सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत्।।२७।।

अब मैं स्थिर कारकों को कह रहा हूँ। सूर्य आदि ग्रहों के बलाबल के अनुसार ये कारक होते हैं।।२७।।

बलवान् जायते विप्र जन्मनि रविशुक्रयोः।
स पितृकारको ज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२८।।

जन्मकाल में रवि और शुक्र में जो बलवान् हो वह पितृकारक होता है।।२८।।

चन्द्रारयोश्च बलवान् मातृकारक उच्यते।
भौमतस्तु विशेषेण भगिनीदारभ्रातृकौ।।२९।।

चंद्रमा और भौम में जो बलवान् हो वह भावकारक होता है॥ विशेषतः भौम से बहिन और साला (स्त्री के भाई) का विचार होता है॥२९॥

बुधान्मातुलमाख्यातो मातृतुल्यानपि द्विज।
गुरुणा चात्र विज्ञेया पुत्रस्वामिपितामहाः।।३०।।

बुध से मामा और मातृसदृश (मौसी) आदि का विचार होता है॥ गुरु से पुत्र और पितामह आदि का विचार होता है।।३०।।

स्वभार्यामातृपितरौ तथा मातामही द्विज।
भृगुद्वारा विजानीयादेतेषां शुक्रकारकाः।।३१।।

सास-ससुर और नानी का विचार शुक्र से होता है॥ यही उनका कारक होता है।।३१।।

सूर्याच्च पुण्यभे तात इन्दोर्माता चतुर्यतः।
कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात्।।३२।।

सूर्य से ९वें स्थान में पिता का, चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान पर माता का, भौम से तीसरे भाई का, बुध से छठे मामा का॥३२॥

देवेज्यात्पञ्चमे पुत्रो दैत्येज्याद्यूनभे स्त्रियः।
मन्दादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां विचिन्तयेत्।।३३।।

गुरु से पाँचवें पुत्र का, शुक्र से सातवें स्त्री का और शनि से आठवें भाव में आयु का विचार करना चाहिए।।३३।।

अथ भावकारकमाह—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि विशेषं भावकारकम्।
जनुर्लग्नं च विद्याद्वै आत्मकारकमेव च।।३४।।

अब विशेषकर भावकारक को कह रहा हूँ। जन्मलग्न आत्मकारक।।३४।।

धनभावं विजानीयाद्दारकारकमेव च।
एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकाः।।३५।।

धनभाव स्वीकारक, ग्यारहवाँ ज्येष्ठ भाई का और तीसरा कनिष्ठ।।३५।।

सुते सुतं विजानीयाद्दारा सप्तमभावतः।
सुतस्थाने ग्रहस्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते।।३६।।

पंचम भाव पुत्र का और सातवाँ स्त्री का कारक होता है। पाँचवें भाव में यदि कोई ग्रह हो तो वह भी उस भाव का कारक होता है।।३६।।

सूर्यो गुरुः कुजः सोमो गुरुर्भौमः सितः शनिः।।३७।।
गुरुश्चन्द्रसुतो जीवो मन्दश्च भावकारकः।।३७।।

क्रम से सूर्य, गुरु, भौम, बुध, गुरु, भौम, शुक्र, शनि, गुरु, बुध, गुरु और शनि ये लग्नादि भावों के कारक होते हैं।।३७।।

पुनस्तन्वादयो भावाः स्थाप्यास्तेषां शुभाऽशुभम्।
लाभं तृतीयं रन्ध्रं च शत्रुभावव्ययं तथा।
एषां योगेन यो भावस्तत्राशं प्राप्नुयाद्ध्रुवम्।।३८।।

फिर भी लक्ष आदि भावों के शुभ-अशुभ को लिखकर उनके शुभाशुभ का निर्णय करना चाहिए। एकादश, तृतीय, आठवाँ, छठवाँ और बारहवाँ भाव— इनके साथ जिस भाव का सम्बन्ध होता है उस भाव के फल का नाश हो जाता है अर्थात् इन भावों के स्पष्ट दृश्यादि का योग करने से जो भाव बने वह नष्ट हो जाता है।।३८।।

चत्वारो राशयो भद्राः केन्द्रकोणशुभावहाः।
तेषां संयोगमात्रेण अशुभोऽपि शुभो भवेत्।।३९।।

केन्द्र और कोण ये चार भाव शुभद है। इनके संयोग से जो भाव हो नष्ट भी शुभद होता है।।३९।।

अथ सूर्यादिग्रहाणां कारकत्वमाह

राज्यविद्रुमरक्तवस्त्रमाणिक्यराजवन-
पर्वतक्षेत्रपितृकारको रविः।।१।।

राज्य, मूँगा, रक्तवस्त्र, मानिक, राज, वन, पर्वत, क्षेत्र और पिता का कारक सूर्य होता है।।१।।

मातृमनःपुष्टिगन्धरसेक्षुगोधूमक्षारक-
द्विजशक्तिकार्यसस्यरजतादिकारकश्चन्द्रः।।२।।

माता, मन, शरीरपुष्टि, गंधद्रव्य, रस, ऊख, गेहूँ, क्षारपदार्थ, ब्राह्मण, शक्तिकार्य, धान्य और चाँदी आदि का कारक चन्द्रमा है।।२।।

सत्त्वसद्मभूमिपुत्रशीलचौर्यरोगब्रह्मभ्रातृ-
पराक्रमाग्निसाहसराजशत्रुकारकः कुजः।।३।।

ओज, भूमि, पुत्र, शील, चोर, रोग, ब्रह्म,भाई, पराक्रम, अग्नि, साहस और राजशत्रु के कारक भौम हैं।।३।।

ज्योतिर्विद्यामातुलगणितकार्यनर्तनवैद्य-
हास्यभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुधः।।४।।

ज्योतिष विद्या, मामा, गणित विद्या, नृत्य, वैद्यक, हास्य, भय, लक्ष्मी, शिल्पविद्या का कारक बुध है।।४।।

स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकाञ्चन-
वस्त्रपुत्रमित्रान्दोलनादिकारको गुरुः।।५।।

अपने कार्य, यज्ञ, देवता, ब्राह्मण, धन, गृह, सुवर्ण, वस्त्र, पुत्र, मित्र, आंदोलन आदि के कारक गुरु हैं।।५।।

कलत्रकार्मुकसुखगीतशास्त्र-
काव्यपुष्पसुकुमारयौवनाभरणरजत-
यानस्वर्गलोकमौक्तिक-
विभवकवितारसादिकारको भृगुः।।६।।

स्त्री, धनुष, सुख, गीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, पुष्प, यौवन, आभूषण, चाँदी, सवारी, स्वर्गलोक, मोती, वैभव, कविता, रस आदि के कारक शुक्र हैं।।६।।

महिषहयगजतैलवस्त्रशृङ्गार-
प्रयाणसर्वराज्यसर्वायुधगृहयुद्ध-
सञ्चारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्य-
शूलरोगदासदासीजनायुष्यकारकः शनिः।।७।।

भैंस, घोड़ा, हाथी, तेल, वस्त्र, शृंगार, यात्रा, सभी प्रकार के राज्य, सभी प्रकार के आयुध, गृह, युद्ध संचार, शूद्र, नीलममणि, विघ्न, केश, हड्डी, शूलरोग, नौकर, नौकरानी, आयुष्य के कारक शनि है।।७।।

प्रयाणसम्यक्सर्परात्रिसकलसुप्तार्थद्यूतकारको राहुः।।८।।

यात्राकाल, सर्प, रात्रि, सम्पूर्ण खोये हुए द्रव्य, जूआ का कारक राहु है।।८।।

व्रणरोगचर्मातिशूलस्फुटक्षुधार्तिकारकः केतुः।।९।।

फोड़ा आदि रोग, चर्मरोग, अत्यंत शूल, भूख से कष्ट आदि का कारक केतु है।।९।।

इतिं कारकाध्यायः।

अथ कारकांशफलमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकांशाधिकान् ग्रहान्।
योगसम्बन्धमात्रेण यथावत् फलदा ग्रहाः।।१।।

अब मैं कारकांश के स्वामी ग्रहों के फल को कह रहा हूँ, जिसके संबंध मात्र से योग का फल प्राप्त होता है।।१।।

स्वांशकारककुण्डल्यां नवमांशाधिपोऽथवा।
यस्मिन् राशौ स्थिंता विप्र तद्राशिफलमुच्यते।।२।।

आत्मकारकांश कुंडली में नवांश के अधिपति जिस राशि में हों उसके अनुसार फल होता है।।२।।

मेषादिमीनपर्यन्तं सर्वेषां फलमादिशेत्।
यथावद्भाषितं पूर्वं शूलिना रुद्रयामले।।३।।

मेष से मीन पर्यन्त सभी राशियों का फल इस प्रकार है।।३।।

अर्कांशकारकांशेषु तिष्ठन्ति च यदा ग्रहाः।
तदा मूषकमार्जारौ दुःखदौ भयकारकौ।।४।।

यदि आत्मकारक मेष राशि के नवांश में हो तो मूसा, बिलार दुःख देते हैं।।४।।

सुयोगे च यदा विप्र मार्जारादि सुखप्रदौ।
वृषे च कारकांशे तु भयार्ती च चतुष्पदात्।।५।।

शुभग्रह के योग से मूसा, बिलार आदि सुख देते हैं। वृष का नवांश हो तो चौपाये जानवरों से भय होता है।।५।।

शुभे चतुष्पदात्सिद्धिरिति तत्त्वं द्विजोत्तम।
मिथुने कारकांशे च कण्ड्वादिरोगसम्भवः।।६।।

शुभग्रह का योग हो तो चौपायों से सुख होता है। मिथुन के नवांश में कारक हो तो खुजली आदि रोगों की संभावना होती है।।६।।

कर्कांशे च जलाद्दुःखं जलभीतिर्न संशयः।
कुष्ठादिरोगसम्भूतिः शुभे फलविपर्ययः।।७।।

कर्क के नवांश में कारक हो तो जल से कष्ट वा जल का भय और कुष्ठ आदि रोग की संभावना होती है।।७।।

सिंहांशे कारके खेटे तिष्ठत्येवं द्विजोत्तम।
शुनकादि भयं दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः।।८।।

सिंह के नवांश में हो तो खाज आदि से भय होता है। शुभग्रह का योग हो तो शुभ फल होता है।।८।।

उदाहरण— पृष्ठ २५ के दिये हुए स्पष्ट ग्रहों के अनुसार चरकारक इस प्रकार है —

चरकारकाः

आत्म-कारक	अनात्म-कारक	भ्रातृ-कारक	मातृ-कारक	पुत्र-कारक	जाति-कारक	दारा-कारक
भौम	चंद्रमा	सूर्य	गुरु	बुध	शुक्र	शनि

कारकांशचक्रम्

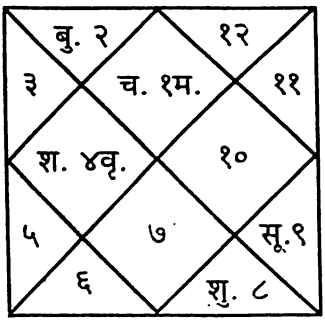

कन्यायां कारकांशे चेत्तिष्ठत्येवं फलं भवेत्।
युग्मवत्कण्डुरोगार्त्तिर्वह्निदोषेण दुःखभाक्।।९।।

कन्यांश में आत्मकारक हो तो मिथुनांश के समान ही कंडू (खुजली) आदि रोग से कष्ट होता है।।९।।

तुलाख्यं कारकांशे च व्यापारेषु रतोऽधिकः।
क्रयविक्रयकर्त्ता च यदि जातो नृपालये।।१०।।

तुला कारकांश हो तो वह व्यापार में अधिक संलग्न, खरीद-बिक्री करने में पटु होता है।।१०।।

वृश्चिके कारकांशे च सर्पादिभयकारकः।
मातुः पयोधरे पीडा जायते द्विजसत्तम।।११।।

वृश्चिकांश में कारक हो तो सर्प आदि से भय और माता के स्तन में पीड़ा होती है।।११।।

चापस्थे कारकांशे च वाहनाद्भयमादिशेत्।
उच्चात्प्रपतनं वापि कोपी वस्तुसमन्वितः।।१२।।
नक्रकारकांशे विप्र सिद्धिर्जलचरादयः।
शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्स्यखेचरदेवताः।।१३।।

धन कारकांश हो तो वाहन से गिरने का भय वा ऊँचे से गिरने का भय, कोपी और वस्तुसंग्रही होता है।।१२।। मकर के अंश में कारक के होने से मूँगा आदि, मछली एवं पक्षियों से लाभ होता है।।१३।।

कुम्भाख्यकारकांशे च तडागादीनि कारयेत्।
कीर्त्तिमान्धर्मवान्सोऽपि जायते द्विजसत्तम।।१४।।

कुम्भांश में कारक हो तो तालाब आदि का रचयिता, यशस्वी और धार्मिक होता है।।१४।।

मीने च कारकांशे वै सायुज्यमुक्तिभाग्भवेत्।
शुभयोगे शुभं ब्रूयान्नशुभं विपरीतके।।१५।।

मीनांश में कारक हो तो साक्षात् मोक्ष पाता है। शुभग्रह के योग से शुभ फल और पापग्रह के योग से अशुभ फल होता है।।१५।।

शुभांशे शुभराशौ वा कारके धनवान् भवेत्।
लग्नांशे चेच्छुभो वा स्याद्राजा भवति निश्चितम्।।१६।।

यदि आत्मकारक शुभग्रह के अंश में वा शुभग्रह की राशि में हो तो जातक धनी होता है। एवं आत्मकारकांश में अथवा लग्नांश में शुभग्रह हो तो निश्चय ही राजा होता है।।१६।।

उपग्रहे शुभांशे चेत्स्वोच्चस्वर्क्षे शुभर्क्षभे।
पापदृग्योगरहिते चान्त्ये कैवल्यं विनिर्दिशेत्।।१७।।

यदि उपग्रह शुभग्रह के अंश में हो अथवा अपनी उच्चराशि या अपनी राशि के शुभग्रह की राशि में हो, पापग्रह के दृष्टि और योग से रहित हो तो अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है।।१७।।

चन्द्रभृग्वारवर्गस्थे कारके पारदारिकः।
मिश्रे मिश्रं विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम्।।१८।।

यदि आत्मकारक चन्द्र, शुक्र या भौम के षड्वर्ग में हो तो परस्त्री का सुख भोगने वाला होता है। उपर्युक्त फलों में मिश्रित ग्रह (शुभ और पाप दोनों) का संबंध हो तो मिश्रित फल और विपरीत हो तो विपरीत फल कहना चाहिए।।१८।।

कारकांशस्थितग्रहाणां फलम्—

अथैकः कारकांशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रहः।
तेषां फलं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम।।१९।।

अब सूर्यादि ग्रहों का फल आत्मकारकांश के अनुसार कह रहा हूँ।।१९।।

कारकांशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विजवीर्ययुक्।
आदावन्ते पुमान् सोऽपि राजकार्येषु तत्परः।।२०।।

यदि आत्मकारकांश में बलवान् सूर्य हो तो जातक अवस्था के आदि और अंत मे राजकर्मचारी होता है।।२०।।

कारकांशे तु पूर्णेन्दुर्दैत्याचार्येण वीक्षितः।
शतभोगी भवेत्सोऽथ विद्याजीवी च जायते।।२१।।

यदि कारकांश में पूर्णचन्द्रमा हो और शुक्र से देखा जाता हो तो १०० वर्ष की आयु होती है और विद्या द्वारा जीविका होती है।।२१।।

कारकांशे यदा भौमे बलाढ्येन युतेक्षिते।
रसवादी कुन्तधारी वह्निकृज्जीवनं भवेत्।।२२।।

यदि कारकांश में भौम हो और किसी बली ग्रह से युत वा दृष्ट हो तो रस बनाने वाला, कुँत (माला) धारण करने वाला और अग्नि द्वारा जीविका प्राप्त करने वाला होता है।।२२।।

कारकांशे यदा सौम्यः तिष्ठत्येव बलाढ्यकः।
शिल्पको व्यवहारी च वणिक्कृत्यकरो द्विज।।२३।।

यदि कारकांश में बुध ही तो और बली हो तो शिल्पी, व्यवहारी और बनिए का कार्य करने वाला होता है।।२३।।

कारकांशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत्।
सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यातः क्षितिमण्डले।।२४।।

यदि कारकांश में गुरु हो तो कर्म करने वाला, सभी शास्त्रों का अधिकारी और पृथ्वी पर प्रसिद्ध होता है।।२४।।

कारकांशे यदा शुक्रो राजमान्यः सदा भवेत्।
सदिन्द्रियः शतायुश्च कथनीयं द्विजोत्तम।।२५।।

यदि कारकांश में शुक्र हो तो राजा से सम्मान प्राप्त करता है, सुन्दर और १०० वर्ष की आयु वाला होता है।।२५।।

कारकांशे यदा सौरिर्मृत्युलोके प्रसिद्धियुक्।
महतां कर्मणां वृत्तिः क्षितिपालेन पूजितः।।२६।।

कारकांश में शनि हो तो संसार में प्रसिद्ध, बड़े कार्यों को करने वाला और राजा से पूजित होता है।।२६।।

कारकांशे यदा राहुर्धनुर्धारी प्रजायते।
जाङ्गल्यलौहयन्त्रादिकारकश्चौरसङ्गमी।।२७।।

कारकांश में राहु हो तो धनुष धारण करने वाला, जंगली, लोह के यंत्रों को बनाने वाला, चोर और संयमी होता है।।२७।।

कारकांशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम।
व्यवहारी गजादीनामुशन्ति परद्रव्यके।।२८।।

कारकांश में केतु हो तो हाथी आदि का व्यवहार दूसरे के द्रव्य से करने वाला होता है।।२८।।

कारकांशे यदा विप्र संस्थितौ रविसैंहिकौ।
सर्पाद्भीतिर्भवेन्मृत्युः शुभदृष्ट्या निवर्तते।।२९।।

यदि कारकांश में सूर्य और राहु हों तो सर्प से भय या मृत्यु होती है, शुभग्रह की दृष्टि हो तो निवृत्ति हो जाती है।।२९।।

कारकांशे भानुतमौ शुभषड्वर्गसंयुतौ।
विषवैद्यौ भवेन्नूनं विषहर्ता विचक्षण।।३०।।

कारकांश में सूर्य और राहु हों और शुभ ग्रह के षड्वर्ग में हों तो विषवैद्य या विष का हरण करने वाला होता है।।३०।।

भौमेक्षिते कारकांशे भानुस्वर्भानुसंयुते।
अन्यग्रहा न पश्यन्ति स्ववेश्मपरदाहकः।।३१।।

कारकांश में सूर्य और राहु हों, उसे भौम देखता हो शेष ग्रह न देखते हो तो अपना और दूसरे का घर जलाने वाला होता है।।३१।।

सगुलिके कारकांशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज।
सति चौरैर्नीतधनः स्वयं चौरोऽथवा भवेत्।।३२।।

कारकांश में गुलिक हो और पूर्ण चन्द्र से देखा जाता हो तो चोरों से धन अपहृत होता है अथवा स्वयं चोर होता है।।३२।।

सगुलिके कारकांशे अन्यग्रहयुतेक्षिते।
बुधदृष्टियुते वापि अण्डवृद्धिः प्रजायते।।३३।।

कारकांश में गुलिक हो और अन्य ग्रहों से देखा जाता हो अथवा बुध से दृष्ट वा युत हो तो अंडवृद्धि होती है।।३३।।

कारकांशे केतुयुक्ते पापग्रहनिरीक्षिते।
श्रोत्रच्छेदं भवेन्नूनं कर्णरोगार्तिना द्विज।।३४।।

कारकांश में केतु हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो कर्णरोग से पीडित होने से कान काटा जाता है।।३४।

कारकांशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते।
युते वा जायते विप्र क्रियाकर्मसमन्वितः।।३५।।

कारकांश में केतु हो और शुक्र से दृष्ट वा युत हो तो क्रिया-कर्म से युक्त होता है।।३५।।

कारकांशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरीक्षिते।
बलवीर्येण रहितो जायते सोऽपि मानवः।।३६।।

कारकांश में केतु हो, शनि-बुध से देखा जाता हो तो मनुष्य बलवीर्य से हीन होता है।।३६।।

सकेतौ कारकांशे च बुधशुक्रनिरीक्षिते।
जायते पौनःपुनिको दासीपुत्रोऽथवा भवेत्।।३७।।

कारकांश में केतु हो और बुध-शुक्र से देखा जाता हो तो रुक-रुक कर बोलने वाला या दासीपुत्र होता है।।३७।।

सकेतौ कारकांशे च अन्यग्रहनिरीक्षिते।
शनिदृष्टिविहीने च सत्याच्च रहितो भवेत्।।३८।।

कारकांश में केतु हो, शनि को छोड़कर शेष ग्रह देखते हों तो असत्य बोलने वाला होता है।।३८।।

कारकांशे यदा विप्र भृगुभास्करवीक्षिते।
राजप्रेष्यो भवेद्बालो जायते नात्र संशयः।।३९।।

यदि कारकांश को शुक्र-सूर्य देखते हों तो जातक राजा का नौकर होता है।।३९।।

कारकांशाद्धनभावफलम्—

अंशात्कुटुम्बे भृग्वारवर्गे स्यात्पारदारिकः।
तयोर्दृग्योगकाभ्यां च भवेदामरणं किल।।४०।।

कारकांश से धन भाव में शुक्र-भौम का षड्वर्ग हो तो परस्त्रीगामी होता है। यदि शुक्र-भौम देखते हों तो आमरण परस्त्रीगामी होता है।।४०।।

केतुना प्रतिबन्धः स्याद्गुरुणा स्त्रैण एव च।
राहुणा चार्थनिवृत्तिः स्याद्धने एवं फलं भवेत्।।४१।।

केतु देखता हो तो नहीं होता है, गुरु देखता हो तो स्त्री के वश में होता है, राहु देखता हो तो परस्त्री के लिए द्रव्य खर्च करता है।।४१।।

कारकांशात्तृतीये च पापखेटयुतेक्षिते।
सशूरो जायते बालो वीर्यवान्बहुविक्रमी।।४२।।

कारकांश से तीसरे भाव में पापग्रह युत हो वा देखते हों तो बालक शूरवीर एवं पराक्रमी होता है।।४२।।

कारकांशात्तृतीये च शुभखेटयुतेक्षिते।
जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः।।४३।।

कारकांश से तीसरे भाव में शुभग्रह हों वा देखते हों तो बालक शुद्ध हृदय का और विशेषकर कातर होता है।।४३।।

कारकांशात्तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते।
कृषिकर्मरतो नित्यं जायते नात्र संशयः।।४४।।

कारकांश से तीसरे व छठे भाव में पापग्रह हों या देखते हों तो बालक कृषिकर्म को करने वाला होता है।।४४।।

कारकांशाच्चतुर्थभावफलम्—

पाताले कारकांशाच्च शशिशुक्रयुतेक्षिते।
प्रासादवान् भवेद्बालो विचित्रगृहवान्भवेत्।।४५।।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा, शुक्र युत हों वा देखते हों तो विचित्र प्रासाद (किला) या गृह वाला होता है।।४५।।

कारकांशाच्च पाताले तुङ्गर्क्षे कोऽपि खेचरः।
हर्म्यमन्दिरसंयुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान्।।४६।।

चौथे में यदि कोई ग्रह अपनी उच्चराशि का हो तो बहुत ऊँचा, खूबसूरत एवं प्रकाशमान् गृह होता है।।४६।।

कारकांशाच्च पाताले शनिराहुयुतेक्षिते।
विप्रेच्छाटनपट्टीयुग्जायते मन्दिरं द्विज।।४७।।

कारकांश से चौथे भाव में शनि-राहु हों या देखते हों तो पत्थर का गृह होता है।।४७।।

कारकांशाच्च पाताले कुजकेतुशनीक्षिते।
ऐष्टिकं मन्दिरं तस्य जायते नात्र संशयः।।४८।।

कारकांश से चौथे भाव में भौम, केतु एवं शनि हों वा देखते हों तो ईंटे का मकान होता है।।४८।।

कारकांशाच्च पाताले गुरुयुक्तनिरीक्षिते।
दारवं मन्दिरं तस्य जायते नात्र संशयः।।४९।।

कारकांश से चौथे भाव में गुरु युक्त हो वा देखता हो तो लकड़ी का गृह होता है।।४९।।

कारकांशाच्च पाताले रवियुक्तनिरीक्षिते।
तृणावेष्टितगृहं तस्य जायते नात्र संशयः।।५०।।

कारकांश से चौथे भाव में सूर्य युत हो वा देखता हो तो फूस का गृह होता है।।५०।।

कारकांशात्पञ्चमभावफलम्—

स्वांशे तत्सुते वापि गुरुचन्द्राभ्यां च ग्रन्थकृत्।
भृगुणा किञ्चिदूनोऽसौ तस्मान्यूनो बुधेन च।।५१।।

आत्मकारकांश में अथवा उससे पाँचवें स्थान में चन्द्रमा-गुरु हों तो ग्रंथ बनाने वाला होता है।

यदि शुक्र हों तो कुछ न्यून होता है और बुध हो तो और भी न्यून होता है।।५१।।

सुराचार्येण सर्वज्ञः ग्रन्थकर्त्ता तथैव च।
वेदवेदान्तविच्चापि न वाग्मी शाब्दिकेऽपि च।।५२।।

केवल गुरु हो तो सर्वज्ञ और ग्रन्थकर्त्ता होता है तथा वेद-वेदान्त को जानने वाला वैयाकरणी होते हुए भी वाग्मी नहीं होता है।।५२।।

न्यायज्ञः धरणीजेन बुधे मीमांसकस्तथा।
सभामूकस्तु शनिना गीतज्ञो रविणा तथा।।५३।।

यदि भौम हो तो नैयायिक, बुध हो तो मीमांसक, शनि हो तो सभा में मूक रहने हाला और सूर्य हो तो गानविद्या में पंडित।।५३।।

शशिना सांख्ययोगज्ञः काव्यज्ञश्च तथा द्विज।
केतुना गणितज्ञश्च जायते नात्र संशयः।।५४।।

चन्द्रमा हो तो सांख्यशास्त्र और काव्य का पंडित और केतु हो तो गणित का पंडित होता है।।५४।।

उक्तफलानां साफल्यं गुरुसम्बन्धमात्रतः।
कारकांशाद्धने केचित्फलमेवं ब्रुवन्ति हि।।५५।।

जो योग ऊपर कहे गये हैं सभी में गुरु का योग और दृष्टि हो तो योग का फल अवश्य होता है। किसी-किसी का मत है कि कारकांश से दूसरे स्थान में भी इसी प्रकार विचार करना चाहिए।।५५।।

कारकांशात्षष्ठभावफलम्—

स्वांशात्तृतीये षष्ठे च पापस्तिष्ठेच्चे द् द्विज।
कर्षको जायते बालः नात्र कार्या विचारणा।।५६।।

आत्मकारक से तीसरे, छठे स्थान में पापग्रह हों तो जातक किसान होता है।।५६।।

कारकांशात्सप्तमभावफलम्—

कारकांशाच्च द्यूने चेद्गुरुचन्द्रयुते द्विज।
सुन्दरी गृहिणी तस्य पतिभक्तिपरायणा।।५७।।

आत्मकारक से सातवें भाव में गुरु-चन्द्रमा हों तो जातक की स्त्री सुन्दरी और पतिव्रता होती है।।५७।।

राहुणा विधवा भार्या जायते नात्र संशयः।
शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी।।५८।।

यदि सातवें राहु हो तो विधवा स्त्री का संयोग होता है। यदि शनि हो तो अवस्था में अधिक, रोगिणी या तपस्विनी होती है।।५८।।

भौमेन विकलाङ्गी च तथा कान्ताद्यलक्षणा।
रविणा स्वकुले गुप्ता आसक्ता परवेश्मनी।।५९।।

भौम हो तो अंग से हीन, सूर्य हो तो अपने कुल में गुप्तरीति से रहती हुई दूसरे के वश में रहती है।।५९।।

बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते।
शुक्रेण तद्विज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।६०।।

बुध हो तो कला को जानने वाली स्वयं कलाविद् होती है। इसी प्रकार शुक्र से भी जानना चाहिए।।६०।।

कारकांशादष्टमभावफलम्—

कारकांशाल्लये चन्द्रे कुजराहुनिरीक्षिते।
क्षयरोगो भवेत्तस्य श्वासकासादिरोगयुक्।।६१।।

कारकांश से आठवें भाव में चन्द्रमा हो और भौम-राहु से देखा जाता हो तो जातक क्षयरोग और श्वास-कास रोग से युक्त होता है।।६१।।

कारकांशन्नवमभावफलम्—

कारकांशाच्च नवमे शुभखेटयुतेक्षिते।
सत्यवादी गुरोर्भक्तः स्वधर्मनिरतो भवेत्।।६२।।

कारकांश से नवम स्थान शुभग्रह से युत-दृष्ट हो तो जातक सत्यवादी, गुरुभक्त, अपने धर्म में आसक्त होता है।।६२।।

कारकांशाच्च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते।
स्वधर्मनिरतो बालो मिथ्यावादी भवेद्द्विज।।६३।।

कारकांश से नवम स्थान पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो अपने धर्म से रहित और असत्यवादी होता है।।६३।।

कारकांशाच्च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते।
गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नरः।।६४।।

कारकांश से नवम भाव शनि-राहु से दृष्ट-युत हों तो गुरु से द्रोह करने वाला और मूर्ख होता है।।६४।।

कारकांशाच्च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते।
तदापि गुरुद्रोही स्याद्गुरुवाक्यं न मन्यते।।६५।।

कारकांश से नवम भाव गुरु-सूर्य से युत-दृष्ट हों तो भी गुरुद्रोही और गुरु के वचन को न माननेवाला होता है।।६५।।

कारकांशाच्च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते।
षड्वर्गाधिकयोगे च मरणं पारदारिकः।।६६।।

कारकांश से नवम भाव शुक्र-भौम से युत-दृष्ट हों तो और इन्हीं का षड्वर्ग अधिक हो तो परस्त्री के द्वारा मरण होता है।।६६।।

कारकांशाच्च नवमे बुधयुक्तेक्षिते द्विज।
परस्त्रीसङ्गमाद्बालो बन्धको जायते ध्रुवम्।।६७।।

कारकांश से नवम भाव बुध से युत-दृष्ट हो तो परस्त्रीसंगम से दुष्ट प्रकृति का होता है।।६७।।

कारकांशाच्च नवमे गुरुयुक्तेक्षिते यदा।
स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी नैव जायते।।६८।।

कारकांश से नवम भाव गुरु से युत-दृष्ट हो तो स्त्रीलोलुप होता है, किन्तु विषयी नहीं होता है।।६८।।

कारकांशाद्दशमभावफलम्—

दशमे कारकांशाच्च बुधेन समवीक्षिते।
व्यापारे बहुलाभश्च महत्कर्मविचक्षणः।।६९।।

कारकांश से दशम भाव बुध से देखा जाता हो तो व्यापार में बहुत लाभ और बड़े-बड़े काम होते हैं।।६९।।

कारकांशाच्च दशमे रविणा संयुतो यदि।
गुरुदृष्टे तदा विप्र जायते योगकारकः।।७०।।

कारकांश से दशम में रवि हो और गुरु से देखा जाता हो तो राजयोग होता है।।७०।।

कारकांशाच्च दशमे शुभखेटनिरीक्षिते।
स्थिरचित्तो भवेद्बालो गम्भीरो बहुवीर्यवान्।।७१।।

कारकांश से दशम भाव को शुभग्रह देखता हो तो बालक स्थिरचित्त, गंभीर और बलवान् होता है।।७१।।

कारकांशाद्व्ययभावफलम्—

कारकांशाद्व्ययस्थाने उच्चस्थे च शुभग्रहे।
सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात्।।७२।।

कारकांश से बारहवें भाव में अपनी उच्चराशि में कोई शुभग्रह हो तो उस जातक को सद्गति और शुभ लोक की प्राप्ति होती है।।७२।।

कारकांशाद्व्यये केतौ शुभखेटैर्युतेक्षिते।
तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात्।।७३।।

कारकांश से बारहवें भाव में केतु हो, शुभग्रह से देखा जाता हो वा दृष्ट हो तो भी मुक्ति होती है और स्वर्ग की प्राप्ति होती है।।७३।।

मेषेऽथ वापि कोदण्डे कारकांशात् व्यये शिखी।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात्।।७४।।

कारकांश से बारहवें भाव में मेष वा धन राशि में केतु हो, शुभग्रह से दृष्ट हो तो मोक्षपद की प्राप्ति होती है।।७४।।

केवलेऽपि व्यये केतुः पापग्रहयुतेक्षिते।
न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोकं न पश्यति।।७५।।

रविणा संयुते केतौ कारकांशाद्व्ययस्थिते।
गौर्यां भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः।।७६।।

केवल बारहवें भाव में केतु हो और पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो उसकी मुक्ति नहीं होती है और मोक्ष भी नहीं होता है। कारकांश से बारहवें भाव में केतु सूर्य से युत हो तो पार्वती की भक्ति करने वाला शाक्त होता है।।७५-७६।।

रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
चन्द्रेण संयुते केतौ कारकांशात् व्ययस्थिते।।७७।।

कारकांश से बारहवें केतु चन्द्रमा से युत हो तो सूर्य का उपासक होता है।।७७।।

शुक्रेण संयुते केतौ कारकांशात् व्ययस्थिते।
समुद्रतनयाभक्तिर्जायतेऽसौ समृद्धिमान्।।७८।।

कारकांश से बारहवें केतु शुक्र से युत हो तो लक्ष्मी का उपासक और धनी होता है।।७८।।

कुजेन स्कन्दभक्तो वा जायते द्विजसत्तम।
वैष्णवो बुधसौरिभ्यां गुरुणा शिवभक्तिमान्।।७९।।

भौम से युत हो तो स्कंद (स्वामिकार्तिक) की भक्ति, बुध-शनि से युत हो तो विष्णु का उपासक, गुरु से युत हो तो शिव का उपासक।।७९।।

राहुणा तामसीं दुर्गां भूतप्रेतादिसेवकृत्।
हेरम्बभक्तः शिखिना स्कन्दभक्तोऽथ वा भवेत्।।८०।।

राहु हो तो तामसी दुर्गा का और भूतप्रेतादि का सेवक होता है। केतु हो तो गणेश वा स्कंद का उपासक।।८०।।

कारकांशात् व्यये शौरिः पापराशौ यदा भवेत्।
तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः।।८१।।

कारकांश से बारहवें शनि पापग्रह की राशि में हो तो क्षुद्रदेवता का उपासक।।८१।।

पापर्क्षेऽपि व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः।
कारकान्न्यूनभागो हि अमात्यो जायते ग्रहः।।८२।।

बारहवें भाव में पापग्रह की राशि में शुक्र हो तो भी क्षुद्रदेवता का सेवक

होता है। आत्मकारक से न्यून अंशवाला अमात्यकारक होता है।।८२।।

अमात्यात् द्वादशे राशौ पापर्क्षे पापसंयुते।
तदापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम्।।८३।।

अमात्य से बारहवें भाव में पापग्रह की राशि पापयुत हो तो भी क्षुद्रदेवता का उपासक होता है।।८३।।

विशेषफलमाह—

अंशात्त्रिकोणे पापे द्वे तान्त्रिको जायते नरः।
पापदृष्टे क्षुद्रदेवः शुभेन शुभसेवकः।।८४।।

आत्मकारक से ९वें, ५वें भाव में दो पापग्रह हों तो जातक तांत्रिक होता है। पापग्रह देखता हो तो क्षुद्रदेवता का और शुभग्रह देखता हो तो शुभ देवता का उपासक होता है।।८४।।

पापैर्निरीक्षिते तत्र तन्त्रविग्राहको भवेत्।
शुभैर्निरीक्षिते वापि तन्त्रानुग्रहकारकः।।८५।।

यदि पापग्रह देखते हों तो निग्राहक और शुभग्रह देखते हों तो अनुग्राहक होता है।।८५।।

कारकांशेन्दुशुकौ च शुभग्रहनिरीक्षितौ।
रसवादी भवेद्बालो धातूनां भस्मकारकः।।८६।।

कारकांश में चन्द्रमा और शुक्र हों तथा शुभग्रह से देखे जाते हों तो रस बनाने वाला वैद्य होता है।।८६।।

शुक्रेन्दू बुधसन्दृष्टौ सद्वैद्यो हि नरो भवेत्।
पीयूषपाणिः कुशलः सर्वरोगहरो द्विज।।८७।।

शुक्र-चन्द्रमा को बुध देखता हो तो सद्वैद्य, कुशल और सभी रोगों को हरने वाला होता है।।८७।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे दैत्याचार्यनिरीक्षिते।
श्वेतकुष्ठी भवेन्नूनं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।८८।।

कारक से चौथे स्थान में चन्द्रमा हो और शुक्र से देखा जाता हो तो श्वेतकुष्ठी होता है।।८८।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे धरापुत्रेण वीक्षिते।
राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तार्तिको भवेत्।।८९।।

कारक से चौथे स्थान में चन्द्रमा को भौम देखता हो तो राजरोग (यक्ष्मा) और रक्तपित्त से कष्ट होता है।।८९।।

अंशाच्चतुर्थगे चन्द्रे शिखिना वीक्षिते सति।
नीलकुष्ठं भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९०।।

केतु कारकांश से चौथे चन्द्रमा को देखता हो तो नीलकुष्ठ होता है।।९०।।

चतुर्थे पञ्चमे वापि युतौ राहुकुजौ यदि।
क्षयरोगो भवेत्तस्य चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।९१।।

कारकांश से चौथे या पाँचवें राहु-भौम हों तो क्षयरोग होता है। चन्द्रमा देखता हो तो विशेषकर कुष्ठरोग होता है।।९१।।

स्वांशात्तुर्ये सुते वापि केवलः संस्थितः कुजः।
पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९२।।

कारकांश से चौथे या पाँचवें केवल भौम हो तो पिटक आदि क्षुद्र रोग होते हैं।।९२।।

तत्र स्थिते च शिखिना ग्रहणीरोगपीडितः।
स्वर्भानुर्गुलिके तत्र विषवैद्यो विषार्त्तिकः।।९३।।

यदि उन्हीं भावों में केतु हो तो संग्रहणी रोग होता है। यदि उक्त भावों में राहु और गुलिक हो तो विषवैद्य या विष से कष्ट पाने वाला होता है।।९३।।

कारकांशाद्धने तुर्ये केवले संस्थिते शनौ।
धनुर्विद्याधिको बालो जायते नात्र संशयः।।९४।।

कारकांश से दूसरे या चौथे भाव में शनि हो तो धनुष विद्या को जानने वाला होता है।।९४।।

कारकांशात्सुखे वित्ते केवले संस्थिते शिखी।
घटिकायन्त्रवादी स्यादिष्टशोधनतत्परः।।९५।।

कारकांश से चौथे वां दूसरे भाव में यदि केतु हो तो घटिकायंत्र को जानने वाला होता है।।९५।।

उक्तस्थाने स्थिते सौम्ये जातस्तु परमहंसकः।
तथा संन्यस्तकं ज्ञेयं निर्विशङ्को द्विजोत्तम।।९६।।

पूर्वोक्त स्थान में बुध हो तो परमहंस या संन्यासी दंडधारी।।९६।।

उक्तस्थानस्थिते राहौ लोहयन्त्रादिकारकः।
रविणा खड्गधारी च कुजेन कुन्तंधारकः।।९७।।

राहु हो तो लोह के यंत्रों को बनाने वाला, रवि हो तो खड्ग धारण करने वाला और भौम हो तो कुंत (भाला) धारण करने वाला होता है।।९७।।

चन्द्रेज्यौ कारकांशे च तथा तत्पञ्चमे स्थितौ।
ग्रन्थकर्त्ता भवेन्नूनं सर्वविद्याविशारदः।।९८।।

चन्द्रमा और गुरु कारकांश में हो अथवा उससे पाँचवें भाव में हो तो बालक सभी विद्याओं को जानने वाला और ग्रंथकार होता है।।९८।।

उक्तस्थानगते शुक्रे स्वल्पग्रन्थकरो द्विज।
उक्तस्थानगते सौम्ये किञ्चिद्ग्रन्थकरो ह्यसौ।।९९।।

यदि उक्त स्थान में शुक्र हो तो अल्प ग्रंथकार होता है। यदि बुध हो तो कुछ ग्रंथकार होता है।।९९।।

शुक्रेण काव्यकर्ता च प्राकृतग्रन्थतत्परः।
गुरुणा सर्वग्रन्थानां कारको द्विजसत्तम।।१००।।

शुक्र हो तो काव्य करने वाला, गुरु हो तो सभी ग्रंथों को करने वाला होता है।।१००।।

उक्तस्थानगतः शौरिः सभाजाड्यो भवेन्नरः।
मीमांसको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधः।।१०१।।

यदि शनि हो तो सभामूक होता है। उक्त स्थान में बुध हो तो मीमांसक होता है।।१०१।।

कारकांशे धरासूनुर्लग्ने वा नवपञ्चमे।
नैयायिको भवेन्नूनं सुष्ठुकाव्यकरो नरः।।१०२।।

कारकांश लग्न में वा नवम-पंचम में हो तो नैयायिक और कविता करने वाला होता है।।१०२।।

कारकांशे निशानाथे त्रिकोणे चाथ लग्नगे।
सांख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमान्नरः।।१०३।।

कारकांश में वा त्रिकोण वा लग्न में यदि चन्द्रमा हो तो सांख्यशास्त्र को जानने वाला होता है।।१०३।।

कारकांशे स्थिते केतौ पञ्चमे वापि संस्थिते।
गणितज्ञो भवेत्नूनं ज्योतिश्शास्त्रविशारदः।।१०४।।

कारकांश में या पाँचवें भाव में केतु हो तो गणित को जानने वाला ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण होता है।।१०४।।

सुराचार्येण सम्बन्धात्साम्प्रदायिकसिद्धिकृत्।
ये योगा पञ्चमे भावे यथावद्भाषितं मया।।१०५।।

सभी योगों में गुरु का संबंध होने से साम्प्रदायिक कार्यों की सिद्धि होती है। जो योग पाँचवें भाव में कहा है उसमें गुरु का योग होने से फल होता है।।१०५।।

वित्तस्थानेऽपि ते ज्ञेया पूर्ववत्फलसिद्धिदम्।
कोऽपि तृतीयभावे तु कथयन्ति पुरो द्विज।।१०६।।

जो योग मैंने पाँचवें भाव में कहे हैं उन्हें दूसरे भाव में भी जानना चाहिए। किसी प्राचीन आचार्य ने तीसरे भाव में भी देखने को कहा है।।१०६।।

कारकांशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते।
पापग्रहेण सन्दृष्टे वाचालश्च भवेन्नरः।।१०७।।

कारकांश में वा उससे दूसरे या ९वें भाव या ५वें भाव में केतु हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो मनुष्य वाचाल होता है।।१०७।।

अंशाल्लग्नात्तथारूढाद्धने रन्ध्रे स्थिते द्विज।
पापसाम्ये च विज्ञेयो योगः केमद्रुमो भवेत्।।१०८।।

कारकांश लग्न तथा आरूढलग्न से दूसरे, आठवें भाव में यदि समान पापग्रह हो तो केमद्रुम योग होता है।।१०८।।

चन्द्रदृष्टिविशेषेण योगः केमद्रुमो मतः।
द्वितीयाष्टमभावाभ्यां योगोऽयं कथ्यते द्विज।।१०९।।

चन्द्रमा देखता हो तो विशेष रूप से केमद्रुम होता है। दूसरे और आठवें भाव में विशेषकर यह योग होता है।।१०९।।

कारकांशेषु ये योगाः पूर्वोक्ता गदितो मया।
तत्तद्राशिदशापाके सर्वेषां फलमादिशेत्।।११०।।

कारकांश से जिन योगों को मैंने कहा है उनका फल उन राशियों के दशा-अंतर में होता है।।११०।।

एवं दशाप्रदाद्राशेर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज।
ग्रहसाम्ये च विज्ञेयः केमद्रुः शशिनेक्षिते।।१११।।

इसी प्रकार दशाप्रद राशि से दूसरे, आठवें भाव में ग्रहसाम्य हो और चन्द्रमा देखता हो तो केमद्रुम योग होता है।।१११।।

दशाप्रारम्भसमये शोधयेज्जन्मलग्नवत्।
सूर्यादिखेचरान् स्पष्टान् साधयेज्जन्मवद्द्विज।।११२।।

दशा प्रवेश समय में सूर्यादि ग्रहों और लग्न को साधना चाहिए।।११२।।

तत्र वित्ताष्टमे भावे ग्रहसाम्यो यदा भवेत्।
तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।११३।।

उस समय उक्त भावों में ग्रहसाम्य और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो केमद्रुम योग होता है।।११३।।

एवं तन्वादिभावानां दशारम्भेषु योजयेत्।
तत्तद्ग्रहानुसारेण फलं वाच्यं बुधैः सदा।।११४।।

इसी प्रकार तनु आदि भावों की दशा के आरंभ में भी योजना करना चाहिए। क्योंकि उस समय के ग्रह के अनुसार ही फल होता है।।११४।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां कारकांशफलकथनं नामाऽष्टमोऽध्यायः।

अथाऽऽरूढमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि राश्यारूढपदं द्विज।
राशीनां द्वादशानान्तु यावदीशाश्रयो भवेत्।।१।।

अब मैं राशि का आरूढ़-पद कहता हूँ— बारहों राशियों का उसके स्वामी जहाँ बैठे हों, उस राशि के राशि की संख्या जितनी हो।।१।।

संख्या त्वीशोदयादग्रे समाना तत्पदं वदेत्।
राशिवद्ग्रह आरूढं ज्ञायते गणकैर्जनैः।।२।।

उतनी संख्या और आगे गिनने से जो राशि हो वही आरूढ़ लग्न या पद होता है। इसी प्रकार अर्थात् राशि के ही समान ग्रहों का भी आरूढ़ लग्न होता है।।२।।

यावद्दूरं यस्य राशिस्तावत्संख्याक्रमेण वै।
अग्रे लग्नारूढपदं ज्ञायते द्विजसत्तम।।३।।

जिस ग्रह की राशि उस ग्रह से जितनी दूर हो उतनी ही संख्या आगे उस ग्रह की लग्नारूढ़ राशि होती है।।३।।

जनुर्लग्नाल्लग्नस्वामी यावद्दूरं हि तिष्ठति।
तावद्दूरं तदग्रे च लग्नारूढं च कथ्यते।।४।।

जन्मलग्न से लग्नेश जितनी दूर राशि पर हो उतनी ही राशि आगे जो राशि हो उसे लग्नारूढ़ राशि रहते हैं।।४।।

यदि लग्नेश्वरः स्वर्क्षे कलत्रे संस्थितोऽथवा।
आरूढलग्नमित्याहुर्जन्मलग्नं द्विजोत्तम।।५।।

यदि लग्नेश अपनी राशि के सप्तम में हो तो जन्मलग्न ही आरूढ़ लग्न होती है।।५।।

एकं तन्वादिभावानां भावारूढपदं भवेत्।
यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र सुसंलिखेत्।।६।।

इसी प्रकार तन्वादि भावों का प्रत्येक का आरूढ़ बनाना चाहिए।।६।।

इस प्रकार लग्नारूढ़ को लग्न मानकर चक्र बनावे। उसमें जो ग्रह जिस स्थान में हो वहाँ लिखकर फल कहे।

विशेष— यहाँ पद और आरूढ़ शब्द दोनों एकार्थक हैं। जैमिनि के मत से यदि लग्नेश लग्न से चौथे भाव में हो तो चतुर्थभावगत राशि और सातवें भाव में हो तो दशमभावगत राशि लग्न का पद होता है। जैसे मिथुन लग्न का स्वामी बुध वृश्चिक राशि में है, मेषादि गणना से वृश्चिक की संख्या ५ है, अतः वृश्चिक से ५वीं मेष राशि ही मिथुन लग्न का पद हुआ। प्रायः लग्न के पद से ही विचार करना चाहिए।

पदादेकादशस्थानफलम्—

पदादेकादशे स्थाने शुभग्रहयुतेक्षिते।
लक्ष्मीवाञ्जायते बालः प्रजावाञ्छीलसंयुतः।।७।।

पद से ११वें भाव में शुभग्रह हों या देखते हों तो बालक धनी, पुत्रवान् और शीलवान् होता है।।७।।

वित्तोपार्जनन्यायेन नीतिवाञ्जायते सदा।
नरो न नास्तिको नूनं न तु शास्त्रविरुद्धकृत्।।८।।

सन्मार्ग से द्रव्य पैदा करने वाला नीतियुक्त होता है और धार्मिक तथा शास्त्रज्ञ होता है।।८।।

पदादेकादशे विप्र पापखेटयुतेक्षिते।
अन्यायोपार्जितं वित्तं विरुद्धं शास्त्रमार्गतः।।९।।

यदि पद से ११वें भाव में पापग्रह वा पापग्रह देखते हों तो अन्याय से द्रव्य को पैदा करने वाला और शास्त्र से अनभिज्ञ होता है।।९।।

मिश्रैर्मिश्रफलं ज्ञेयमुच्चमित्रादिक्षेत्रगः।
बहुधा जायते लाभो यत्र तत्र द्विजोत्तम।।१०।।

यदि शुभग्रह और पापग्रह दोनों से दृष्ट-युत हों तो दोनों फल होता है। यदि उच्च-मित्र आदि के गृह में हों तो प्रायः लाभ ही होता है।।१०।।

आरूढाल्लाभभवनं ग्रहः पश्येत्तु न व्ययम्।
यस्य जन्मनि सोऽपि स्यात्प्रबलो धनवानपि।।११।।

यदि शुभाशुभ ग्रह उच्चराशि में बैठे हों और ११वें भाव को देखते हों तो अनेक प्रकार से लाभ होता है, परन्तु १२वें भाव को न देखते हों तो।।११।।

दृष्टग्रहाणां बाहुल्ये तथा द्रष्टरि तुङ्गगे।
सार्गले चापि तत्रापि बह्वर्गलसमागमे।।१२।।

यदि बहुत से ग्रह अपनी उच्चराशि में होकर ११वें भाव को देखते हों और अर्गला योग करते हों।।१२।।

शुभग्रहार्गले तत्र तत्राप्युच्चग्रहार्गले।
सुखानि स्वामिनां दृष्टे लग्नभाग्यादिगेन वा।।१३।।

उच्चराशिस्थ शुभग्रह का अर्गला योग हो तो बालक अत्यंत सुख को पाता है।।१३।।

जातस्य पुंसः प्राबल्यं निर्दिशेदुत्तरोत्तरम्।
उक्तयोगेषु खेटाश्चेद्द्वादशं नैव पश्यति।।१४।।

लग्न, भाग्य में बैठे हुए ग्रह से देखा जाता हो, जो द्वादशभाव को न देखता हो तो जातक उत्तरोत्तर उन्नति करता है।।१४।।

पदाद्द्वादशभावादीनां फलम्—

आरूढाद्द्वादशे विप्र शुभपापयुतेक्षिते।
व्ययाधिक्यं भवेदेवं विशेषोपार्जनात्तथा।।१५।।

पद से १२वें भाव में शुभग्रह-पापग्रह युत हों और देखते हों तो विशेष लाभ के कारण द्रव्य का अधिक खर्च होता है।।१५।।

शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमार्गात्पापखेचरैः।
मिश्रैर्मिश्रफलं वाच्यं यथालाभेषु पूर्ववत्।।१६।।

शुभग्रह का संबंध होने से सुमार्ग में और पापग्रह का संबंध होने से कुमार्ग में व्यय होता है। दोनों (शुभ-पाप) के रहने से दोनों मार्ग में व्यय होता है।।१६।।

आरूढाद्द्वादशे शुक्रे भानुस्वर्भानुवीक्षिते।
राजमूलाद्व्ययं वाच्यं चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः।।१७।।

आरूढ से १२वें शुक्र हो, सूर्य-राहु से देखा जाता हो तो राजा के द्वारा व्यय होता है। चन्द्रमा देखता हो तो विशेष व्यय होता ही है।।१७।।

आरूढाद्द्वादशे सौम्ये शुभखेटयुतेक्षिते।
ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्यं पापदृक्कलहाद्व्ययः।।१८।।

आरूढ से १२वें भाव में बुध हो और शुभग्रह से दृष्ट वा युत हो तो जाति (भाई-बंधु) में व्यय होता है और पापग्रह देखता हो तो कलह होने से व्यय होता है।।१८।।

पदाद्व्यये सुराचार्ये वीक्षिते चान्यखेचरैः।
करमूलाद्व्ययं वाच्यं करव्याजेन वै द्विज।।१९।।

पद से १२वें भाव में गुरु हो और अन्य ग्रहों से देखा जाता हो तो कर (लगान) आदि से व्यय होता है।।१९।।

आरूढाद्द्वादशे सौरी धरापुत्रेण संयुते।
अन्यग्रहेक्षिते विप्र भ्रातृमूलाद्धनव्ययम्।।२०।।

आरूढ से व्ययभाव में शनि हो और भौम से देखा जाता हो तथा शेष ग्रहों से देखा जाता हो तो भाई, कुटुंब के कारण धन का व्यय होता है।।२०।।

पदाद्द्वादशे भावे ये योगा गदिता मया।
लाभस्थानेषु ते योगा लाभयोगकराः सदा।।२१।।

पद से बारहवें भाव में जिन योगों को मैंने कहा है वे ही योग लाभभाव में हों तो लाभ करने वाले होते हैं।।२१।।

पदात्सप्तमभावफलम्—

पदाच्च सप्तमे राहुरथवा संस्थितः शिखी।
उदरव्यथायुतो बालः शिखिना पीडितोऽधिकम्।।२२।।

पद से सातवें भाव में राहु अथवा केतु हो तो बालक पेट की बीमारी से व्यथित रहता है। केतु से अधिक पीड़ायुक्त होता है।।२२।।

पदाच्च सप्तमे केतुः पापखेटयुतेक्षिते।
साहसी श्वेतकेशी च दीर्घलिङ्गी भवेन्नरः।।२३।।

पद से सातवें केतु हो और पापग्रह से युत वा दृष्ट हो तो बालक साहसी, सफेद बालों वाला और दीर्घलिंगी होता है।।२३।।

पदाच्च सप्तमे स्थाने गुरुशुक्रनिशाकराः।
एको द्वयं त्रयं वा स्याल्लक्ष्मीवान् कारयेद्बुधः।।२४।।

पद से सातवें भाव में गुरु, शुक्र, चन्द्रमा तीनों हों वा इनमें से एक या दो हों तो बालक धनी होता है।।२४।।

तुङ्गर्क्षे सप्तमे खेटे शुभो वाप्यशुभः पदात्।
श्रीमान् सोऽपि भवेन्नूनं सत्कीर्त्तिसहितो द्विज।।२५।।

पद से सातवें भाव में अपनी उच्चराशि में शुभग्रह या पापग्रह में से कोई हो तो बालक कीर्त्तिमान् और लक्ष्मीवान् होता है।।२५।।

ये योगाः सप्तमे भावे आरूढात् कथिता मया।
ते योगा द्यूनवच्चिन्त्या वित्तभावेऽपि वै द्विज।।२६।।

पद से सातवें भाव में जिन योगों को मैंने कहा है उनको उसी प्रकार दूसरे भाव में भी विचार करना चाहिए।।२६।।

तुङ्गस्थो रौहिणेयो वा जीवो वा शुक्र एव वा।
एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः।।२७।।

यदि बुध, गुरु, शुक्र इनमें से कोई भी अपनी उच्चराशि में बली होकर धनभाव में हो तो धन को देता है।।२७।।

ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदिता मया।
कारकांशस्थकुण्डल्यां निर्बाधका विचिन्तयेत्।।२८।।

जो योग लग्न पद में कहे गये हैं उनको कारकांश कुंडली में भी देखना चाहिए।।२८।।

आरूढाद्वित्तभे सौम्ये सर्वदेशाधिपो भवेत्।
सर्वज्ञो वा भवेद्बालः कविर्वाग्मी च भार्गवे।।२९।।

पद से दूसरे भाव में शुभग्रह हो तो सभी देशों का स्वामी होता है अथवा सर्वज्ञ होता है। केवल शुक्र हो तो कवि और वक्ता होता है।।२९।।

आरूढात्केन्द्रकोणेषु तथा लाभपदे द्विज।
लग्नदारपदे वापि सबलग्रहसंयुते।।३०।।
श्रीमांश्च जायते नूनं देशं विख्यातिमान् भवेत्।
षष्ठाष्टमे व्ययस्थाने श्रीमान्स न भवेत्तदा।।३१।।

पद से केन्द्र तथा कोण में लाभ पद में अथवा लग्न दारपद में बलवान् ग्रह हों तो श्रीमान् और प्रसिद्ध होता है। यदि छठे, आठवें, बारहवें स्थान में हों तो श्रीमान् नहीं होता है।।३०-३१।।

पदाल्लग्ने सप्तमे वा केन्द्रत्रिकोणोपचये।
सुवीर्यसंस्थिते खेटे भार्याभर्तृसुखप्रदः।।३२।।

पद से लग्न में वा सातवें वा केन्द्र, त्रिकोण, उपचय स्थान में बली ग्रह हों तो स्त्री, भाई आदि का सुख होता है।।३२।।

एवं लग्नपदाद्विप्र पुत्रभावादि चिन्तयेत्।
मित्रामित्रे विजानीयात्त्रिकभावेषु वै द्विज।।३३।।

इसी प्रकार लग्नपद से पुत्रभाव आदि का भी विचार करना चाहिए। यदि दोनों में मित्रता हो तो मित्रता, अन्यथा शत्रुता होती है।।३३।।

लग्नारूढं दारपदं मिथः केन्द्रगते यदि।
लाभे वा त्रित्रिकोणे वा तदा राजा धराधिपः।।३४।।

लग्नपद और दारपद परस्पर केन्द्रगत, लाभ, तृतीय वा त्रिकोण में हो तो पृथ्वी का राजा होता है।।३४।।

एवं दारादिभावानामर्जयित्वारिमित्रता।
जातकद्वयमालोक्य चिन्तनीयं विचक्षणैः।।३५।।

इसी प्रकार दारा आदि भावों के शत्रु-मित्रादि का विचार कर उनके फलों को भी कहना चाहिए।।३५।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां आरूढफलाध्यायः नवमः।

उपपदप्रकरणम्

पराशर उवाच–

अधुना सम्प्रवक्ष्याम्युपपदं च द्विजोत्तम।
यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः।।१।।

अब मैं उपपद को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान मात्र से फल का निर्णय होता है।।१।।

लग्ने विषमे विप्र धनस्य पदोपपदम्।
समे लग्ने व्ययस्य च पदमुपपदं भवेत्।।२।।

लग्न यदि विषम हो तो धनभाव का पद उपपद होता है, यदि समलग्न हो तो बारहवें का पद उपपद होता है।।२।।

तदेवोपारूढगौणपदं च कथ्यते द्विज।
तस्मादेव फलं सर्वं शुभाशुभं विचारयेत्।।३।।

उपपद को ही उपारूढ़ और गौणपद कहते हैं। इसी से शुभ-अशुभ फलों का विचार करना चाहिए।।३।।

पापाक्रान्ते पापयुते पापर्क्षे पापवीक्षिते।
पापसम्बन्धसंयोगे उपपदाद् द्वितीयके।।४।।

उपपद से दूसरे भाव में पापग्रह हो, पापग्रह की राशि पापग्रह से देखी जाती हो तो।।४।।

प्रव्रज्या योगो विज्ञेयः संन्यासो भवति ध्रुवम्।
तथा भार्याविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत्।।५।।

व्रज्या (संन्यास) योग होता है। इसमें उत्पन्न बालक अवश्य संन्यासी होता है तथा स्त्री का विरोधी वा स्त्री का नाश करने वाला होता है।।५।।

रवेः पापत्वमात्रैव सिंहर्क्षे स्वोच्चभे सति।
पूर्वोक्तं नो फलं ज्ञेयं जायते गृहिणीसुखम्।।६।।

यदि सूर्य सिंह राशि में वा अपनी उच्चराशि में हो तो सूर्य पापग्रह नहीं होता है। ऐसी स्थिति का सूर्य उक्त भाव में हो तो प्रव्रज्या योग नहीं होता अपितु स्त्री का सुख होता है।।६।।

मेषादिपापराशौ चेत्संस्थिते दिवसाधिपे।
पूर्वोक्तं च फलं ज्ञेयं प्रव्रज्यादारनाशकः।।७।।

यदि मेषादि पापराशियों में सूर्य हो तो पूर्वोक्त फल होता है और स्त्री का नाश होता है।।७।।

उपपदाच्च द्वितीयं वै शुभसम्बन्धदृष्टियुक्।
शुभर्क्षे शुभसंयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत्।।८।।

उपपद से दूसरे भाव में शुभग्रह का संबंध हो, शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रह की राशि हो तो पूर्वोक्त फल होता है।।८।।

उपपदे द्वितीये वा नीचांशे नीचखेटयुक्।
नीचसम्बन्धयोगे वा प्रव्रज्यादारनाशकृत्।।९।।

उपपद में उससे दूसरे भाव में नीचांश वा नीच राशि में नीच ग्रह युक्त हो, नीचस्थ ग्रह से संबंध होता हो तो प्रव्रज्या योग और स्त्री का नाश होता है।।९।।

उच्चांशे उच्चराशौ वा उच्चसम्बन्धदृष्टियुक्।
बहुदारा भवेत्तस्य रूपलक्षणसंयुताः।।१०।।

यदि उच्चांश का उच्चराशि में उच्चस्थ ग्रह से संबंध और दृष्टि हो तो उसे रूपवती अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१०।।

उपपदे द्वितीये वा युग्मर्क्षे संस्थिते यदा।
तत्र प्रजातः पुरुषः बहुदारसमन्वितः।।११।।

उपपद वा दूसरे भाव में मिथुन राशि हो तो जातक को अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।११।।

उपपदे द्वितीये वा. स्वस्वामिखेटसंयुते।
उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न संशयः।।१२।।
स्वराशौ संस्थिते वापि नित्याख्ये दारकारके।
उत्तरायुषि भो विप्र! निर्दारः स नरो भवेत्।।१३।।

उपपद या दूसरा भाव अपने स्वामी शुभग्रह से युत हो तो आयुष्य के उत्तरार्ध में बिना स्त्री के पुरुष होता है।।१३।।

उपपदेऽपि तुङ्गर्क्षे नित्याख्ये दारकारके।
उत्तमकुलाद्दारलाभो नीचस्थे तु विपर्ययः।।१४।।

उपपद में उच्च में नित्य स्त्रीकारक हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। नीच राशि में हो तो विपर्यय होता है।।१४।।

शुभग्रहयुते दृष्टे उपपदे दारकारके।
सुन्दरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज।।१५।।

उपपद और स्त्रीकारक शुभग्रह से युत-दृष्ट हों तो बहुत सुन्दर स्त्री प्राप्त होती है।।१५।।

उपपदे द्वितीये वा शनिराहुयुते सति।
अपवादात्स्त्रियस्त्यागो भार्यानाशोऽथवा भवेत्।।१६।।

उपपद वा द्वितीय में शनि-राहु युत हों तो अपवाद के कारण स्त्री का त्याग या स्त्री का नाश होता है।।१६।।

उपपदे च द्वितीये वा शिखिशुक्रौ स्थितौ यदा।
रक्तप्रदररोगार्त्ता जायते तस्य भामिनी।।१७।।

उपपद या द्वितीय में केतु-शुक्र युत हों तो स्त्री रक्तप्रदर रोग से रोगिणी होती है।।१७।।

उपपदादिषु संयोगो बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम।
अस्थिस्रावयुता बाला गृहे तस्य न संशयः।।१८।।

यदि बुध-केतु का संयोग हों तो अस्थिस्राव से स्त्री रोगिणी होती है।।१८।।

रविराहुस्तथा पङ्गुरुपपदे योगकारकः।
अस्थिज्वरवती बाला तप्ताङ्गा च दिवानिशम्।।१९।।

रवि, राहु, शनि उपपद में हों तो स्त्री अस्थिज्वर से पीड़ित होती है।।१९।।

उपपदे बुधकेतुभ्यां योगसम्बन्धके द्विज।
स्थूलाङ्गी गृहिणी तस्य जायते नात्र संशयः।।२०।।

उपपद में बुध-केतु का योग वा संबंध हो तो उसकी स्त्री स्थूल शरीर की होती है।।२०।।

उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्क्षे चाथवा द्विज।
मन्दारौ संस्थितौ तत्र नासिकारोगयुग्भवेत्।।२१।।

उपपद में बुध की राशि या भौम की राशि हो और शनि-भौम युत हों तो स्त्री की नाक में रोग होता है।।२१।।

यदि तत्र युतो सौरिः गुरुणा सहितो भवेत्।
कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगयुता तथा।।२२।।

यदि गुरु-शनि का योग हो तो स्त्री कान तथा आँख के रोग वाली होती है।।२२।।

कुजसौम्यौ चान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम।
योगे स्वर्भानुदेवेज्यौ दन्तार्ता गृहिणी भवेत्।।२३।।

यदि भौम-बुध वा गुरु-राहु उपपद में हों तो दाँत के रोग से पीड़ित स्त्री होती है।।२३।।

उपपदे च कुम्भस्थे मीनस्थेऽपि तथा द्विज।
शनिस्वर्भानुयोगश्चेत्पंग्वंगी तस्य भामिनी।।२४।।

उपपद में कुम्भ या मीन राशि हो और उसमें शनि-राहु का योग हो तो उसकी स्त्री पंगुल (वातव्याधि से) होती है।।२४।।

ये योगाः पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम।
शुभयुग्दृष्टिसंयोगे न भवेयुः फलप्रदाः।।२५।।

पूर्वोक्त जो योग कहे गये हैं वे यदि शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हों तो फलप्रद नहीं होते हैं।।२५।।

लग्नादुपपदाद्वापि यो राशिः सप्तमो द्विज।
तदीशात्तन्नवांशाच्च फलमेव विचारयेत्।।२६।।

लग्न से वा उपपद से सातवीं राशि के जो स्वामि और उसके नवांश से भी इसी प्रकार फल का विचार करना चाहिए।।२६।।

शनिः शुक्रस्तथा चान्द्रिः सप्तमांशग्रहेभ्यश्च।
नवमे संस्थितो विप्र अपत्यरहितो नरः।।२७।।

उक्त प्रकार से सप्तमेश से नवम में शनि, शुक्र और बुध हों तो पुरुष पुत्रहीन होता है।।२७।।

पदोपपदलग्नाच्च सप्तमांशग्रहेभ्यश्च।
नवमस्थे गुरौ भावौ स्वर्भानौ योगकृत्तथा।।२८।।

उपपद से वा सप्तमांश ग्रह से नवमभाव में गुरु, सूर्य, राहु का योग हो तो।।२८।।

बहुपुत्रो भवेन्नूनं प्रतापी बलवीर्ययुक्।
प्रचण्डविजयी विप्र रिपुनिग्रहकारकः।।२९।।

बड़े बलवान् पराक्रमी, प्रतापी शत्रुओं का दमन करने वाले अनेक पुत्र होते हैं।।२९।।

उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विज।
उक्तस्थाने शुभे पापे पुत्रसौख्यं विलम्बितम्।।३०।।

उक्त स्थान में चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है। यदि उक्त स्थान में शुभ-पाप दोनों हों तो विलंब से पुत्र का सुख होता है।।३०।।

उक्तस्थाने कुजशनिर्जायते च ह्यपुत्रवान्।
परपुत्रयुतो वापि सहोढ सुतवान् भवेत्।।३१।।

उक्त स्थान में भौम-शनि हों तो पुत्रहीन होता है और दूसरे के पुत्र से (दत्तक पुत्र) पुत्रवान् होता है, वा सहोदर के पुत्र से पुत्रवाला होता है।।३२।।

उक्तस्थाने चोजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत्।
युग्मराशौ स्थिते तत्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः।।३२।।

उक्त स्थान में विषम राशि हो तो बहुत पुत्र होते हैं। समराशि हो तो अल्पसंतान होते हैं।।३२।।

उपपदे सिंहलग्ने निशानाथयुतेक्षिते।
स्वल्पापत्यो भवेन्नूनं कन्यायां कन्यका भवेत्।।३३।।

उपपद में सिंहलग्न हो और चन्द्रमा से युत वा दृष्ट हो तो थोड़ी संतान होती है, कन्या राशि हो तो कन्या होती है।।३३।।

सुतभावनवांशाच्च तथापि पुत्रकारकात्।
यद्वा त्रिंशांशकुण्डल्यां तदंशाच्च सदा द्विज।।३४।।

पंचम भाव के नवांश से, पुत्रकारक से, अथवा त्रिंशांश कुण्डली वा उसके नवांश से।।३४।।

तदीशाश्चिन्तयेद्विप्र सन्ततेर्योगमुत्तमम्।
एवं सर्वप्रकारेण चिन्तनीयं सदा बुधैः।।३५।।

वा उसके स्वामी से संतान भावों के उत्तम योगों का विचार करना चाहिए।।३५।।

उपारूढाच्च त्र्यायस्थौ शनिराहू भ्रातृनाशदौ।
एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकम्।।३६।।

उपपद से ३रे, ११वें भाव में शनि-राहु हों तो भाइयों का नाश होता है। ११वें में ज्येष्ठ भाई का और तीसरे में छोटे भाई का विचार करना चाहिए।।३६।।

उपपदैकादशस्थाने तृतीये दानवेज्यके।
व्यवहितगर्भस्य नाशः स्याद्यथा सम्भवति द्विज।।३७।।

उपपद से ११वें, ३रे स्थान में शुक्र हो तो उससे व्यवहित गर्भ माता का नाश हो जाता है।।३७।।

लग्नाद्वापि लये भावे दैत्याचार्ययुतेक्षिते।
व्यवहितगर्भस्य नाशः स्यादित्युक्तं गणकोत्तमैः।।३८।।

लग्न से आठवें भाव में शुक्र युत हो वा देखता हो तो भी व्यवहित गर्भ का नाश होता है।।३८।।

तृतीयैकादशे विप्र! कुजेज्यबुधचन्द्रमाः।
भ्रातृबाहुल्यता वाच्या प्रतापी बलवत्तरः।।३९।।

उपपद से ३रे, ११वें भाव में भौम, गुरु, बुध, चन्द्रमा हों तो प्रतापी बलवान् अधिक भाई होते हैं।।३९।।

शन्यारसंयुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज।
कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावहृत्।।४०।।

३, ११ को शनि-भौम देखते हों वा युत हों तो छोटे-बड़े दोनों भाइयों का नाश होता है। भिन्न भावों में हो तो उन भावों का नाश करते हैं।।४०।।

भ्रातृस्थाने युते सौरे लाभस्थे वा तृतीयगे।
स्वमात्रमेव शेषः स्यादन्यं नश्यन्ति वै द्विज।।४१।।

यदि शनि ३रे वा ११वें में हो तो केवल अपने बच जाता है और सभी भाई नष्ट हो जाते हैं।।४१।।

तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं स्याद्भगिन्ययोः।
भ्रात्रोः स्वल्पसुखं तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।४२।।

३,११ वें भाव में केतु हो तो बहनें अधिक होती हैं और भाइयों का सुख अल्प होता है।।४२।।

सप्तमेशाद्द्वितीये वै सैंहिकेययुतेक्षिते।
दंष्ट्रावान् स भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो भवेत्।।४३।।

सप्तमेश से दूसरे भाव में राहु युक्त हो अथवा देखता हो तो बालक के दाँत बड़े-बड़े होते हैं और वह भाग्यशाली होता है।।४३।।

सप्तमेशाद्द्वितीये चेत्पुच्छनाथयुतेक्षिते।
स्तब्धवाग् जायते बालस्तथा स्खलितवाग्द्विज।।४४।।

सप्तमेश से दूसरे भाव को केतु देखता हो वा युत हो तो बालक हकलाकर बोलने वाला होता है।।४४।।

आरूढान्मृत्युभावस्थे पापाख्ये शुभवर्जिते।
शुभसम्बन्धरहिते चोशे भवति निश्चितम्।।४५।।

पद से आठवें भाव में पापग्रह हों, शुभग्रह से संबंध न हो तो चोर होता है।।४५।।

आरूढभावे सौम्ये तु सर्वदेशाधिपो भवेत्।
सर्वज्ञस्तत्र जीवे स्यात्कविर्वाग्मी च भार्गवे।।४६।।

पद में बुध हो तो चक्रवर्त्ती होता है, गुरु हो तो सर्वज्ञ होता है और शुक्र हो तो कवि तथा वक्ता होता है।।४६।।

सप्तमे द्वादशे स्थाने सैंहिकेययुतेक्षिते।
ज्ञानवांश्च भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो द्विज।।४७।।

सातवें, बारहवें भाव में राहु हो अथवा देखता हो तो बालक ज्ञानी तथा बहुत भाग्यशाली होता है।।४७।।

आरूढाच्च पदाद्वापि धनस्थे शुभखेचरे।
सर्वद्रव्याधिपो धीमान् जायते द्विजसत्तम।।४८।।

आरूढ़ से वा पद से दूसरे भाव में शुभग्रह हो तो सम्पूर्ण द्रव्य का अधिपति और बुद्धिमान् होता है।।४८।।

उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते वित्तभे यदा।
पापखेचरसंयुक्ते चौरो भवति निश्चितम्।।४९।।

उपपद से द्वितीयेश यदि धनभाव में हो और पापग्रह से संबंध करता हो तो निश्चय ही चोर होता है।।४९।।

अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्तिं विचिन्तयेत्।
नीचत्वादेव नीचत्वं शुभपापाच्छुभाशुभम्।।५०।।

भ्रातृकारक से भी पूर्ववद् देवभक्ति-विचार करना चाहिए। यदि नीचग्रह का संबंध हो तो नीच देवता और शुभ-पाप के संबंध द्वारा शुभ-पाप देवता को समझना चाहिए।।५०।।

कारकांशे पापखगैः पापांशे पापयोगकृत्।
पापवर्गे शुभैर्हीने जायते परजातकः।।५१।।

कारकांश में पापग्रह, पापांश में पापग्रह से योग करते हुए पापग्रह के वर्ग में हों, शुभग्रह का सम्बन्ध न हो तो दूसरे से उत्पन्न हुआ होता है।।५१।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां उपपदफलं नाम दशमोऽध्यायः।

अथ कारकमारकविचाराध्यायः

पञ्चमं नवमं चैव विशेषधनमुच्यते।
चतुर्थं दशमं चैव विशेषसुखमुच्यते।।१।।

पाँचवाँ और नवम स्थान विशेष धनस्थान होता है और चौथा तथा दशम विशेष सुखस्थान होता है।।१।।

चन्द्रभानू विना सर्वे मारके मारकाधिपाः।
षष्ठाष्टमव्ययेशास्तु राहुः केतुस्तथैव च।।२।।

चन्द्रमा-सूर्य को छोड़कर शेष सभी ग्रह मारकेश होते हैं। छठा, आठवाँ, बारहवाँ स्थान के स्वामी और राहु तथा केतु ये सभी मारकेश होते हैं।।२।।

केन्द्राधिपतयः सौम्याः शुभं नैव दिशन्ति च।
क्रूराः नैवाशुभं कुर्युः कोणपौ शुभदायकौ।।३।।

यदि शुभग्रह केन्द्र के स्वामी हों तो शुभ फल नहीं देते हैं। पापग्रह केन्द्राधिपति हों तो अशुभ फल नहीं देते हैं। यदि कोण (९/५) के स्वामी हों तो शुभफल देते हैं।।३।।

धनेशो हि व्ययेशश्च संयोगात्फलदौ मताः।
लाभारित्र्यधिपा पापा रन्ध्रेशो न शुभप्रदः।।४।।

द्वितीयेश और व्ययेश संयोगवश (साहचर्य) फल देते हैं। ११/६/३भावों के स्वामी पाप होते हैं। अष्टमेश शुभद नहीं होता है।।४।।

जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकौ परिकीर्त्तितौ।
क्रूराश्चैते ग्रहा ज्ञेया क्षीणचन्द्रो रविस्तथा।।५।।

सप्तम और दूसरे भाव के स्वामी मारकेश होते हैं। क्षीणचन्द्र और रवि क्रूर ग्रह हैं।।५।।

शनिर्भौमश्च विज्ञेया प्रबला ह्युत्तरोत्तराः।
लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि।।६।।

शनि, भौम ये क्रूर ग्रह कहे जाते हैं और उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम ये उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं।।६।।

सुतधर्मौ तथा ख्यातौ प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ।
लाभारिव्रितयस्थानं त्वधोधः प्रबलं भवेत्।।७।।

पंचम और नवम उत्तरोत्तर प्रबल होते हैं। ११/६/३ स्थान क्रमशः प्रबल होते हैं।।७।।

पुनर्मारकयोर्मध्ये ह्युत्तरं प्रबलं मतम्।
भाग्यस्थानाद्व्ययं विप्र तस्माच्चैवाशुभं वदेत्।।८।।

मारकों के मध्य में द्वितीयेश प्रबल मारक होता है। भाग्यस्थान से व्ययस्थान (अष्टम) से भी अशुभ फल होता है।।८।।

एतत्स्थानानुसारेण ग्रहाणां मानमालिखेत्।
चन्द्रज्ञगुरुशुक्राणां केन्द्रदोषो यथोत्तरम्।।९।।

इस प्रकार ग्रहों की शुभ-अशुभ फलों की तालिका लिखकर फल का विचार करें। चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र का केन्द्रदोष यथोत्तर बलवान् होता है।।९।।

तथैव ग्रहाः क्रूरा प्रबलाश्चैवोत्तरोत्तरम्।
भाग्येशः सर्वदा सौम्यो न क्रूरः फलदायकः।।१०।।

उसी प्रकार उसमें स्थित ग्रह भी यथोत्तर बली होते हैं। भाग्येश सर्वदा शुभफल देने वाला होता है, किन्तु क्रूरग्रह हो तो शुभ फलदायक नहीं होता है।।१०।।

पुत्राधिपोऽपि शुभदः क्रूरोऽपि सुखदः स्मृतः।
त्रिलाभरिपुमृत्यूनां पतयो दुःखदायकाः।।११।।

पंचमेश शुभग्रह हो या पापग्रह हो शुभफल ही देता है। ३/११/६/८ के अधिपति दुःखदायी होते हैं।।११।।

यद्यद्भावगतो राहुः केतुश्च जनने नृणाम्।
यद्यद्भावेशसंयुक्तस्तत्फलं प्रदिशेदलम्।।१२।।

राह-केतु जिन-जिन भावों में हों, जिन-जिन भावेशों से युत हों उनके अनुसार फल को देते हैं।।१२।।

अथ मेषलग्ने शुभाशुभदायकौ—

मन्दसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ।
न शुभं योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः।।१३।।

मेष लग्न में उत्पन्न बालक को शनि, बुध, शुक्र पापफल देने वाले और गुरु-सूर्य शुभफल देनेवाले होते हैं। शनि-गुरु योग मात्र से शुभदायक नहीं होते किन्तु सहायक होते हैं।।१३।।

परतन्त्रेण जीवस्य पापकर्माणि निश्चितम्।
कविः साक्षान्निहन्ता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः।।१४।।

गुरु के पारतंत्र्य होने से (व्ययेश होने के कारण—पापसंबंध से) पापफल देना भी निश्चित है। शुक्र साक्षात् मारकेश होता है।।१४।।

मन्दादयो निहन्तारो भवेयुः पापिनो ग्रहाः।
शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियोद्भवैः।।१५।।

शनि आदि पापग्रह भी मारकेश के सहयोग से मारक होते हैं। इस प्रकार मेषलग्न में उत्पन्न जातक के शुभ-अशुभ का निर्णय करना चाहिए।।१५।।

विशेष—यहाँ मेषलग्न के स्वामी भौम अष्टमेश होने के कारण अशुभ है। किन्तु लग्नेश होने के कारण शुभ फल देने वाले के सहायक हैं। शनि केन्द्राधिपति होने के कारण शुभद है, किन्तु लाभाधिपति होने के कारण पापी हो गया। बुध ३/६ भाव का अधिपति होने के कारण अशुभ, शुक्र मारकस्थान (२/७) का स्वामी यानि केन्द्रेश होने के कारण अशुभ, सूर्य (५) का स्वामी होने से शुभ, गुरु व्ययेश और भाग्येश होने के कारण अपने सहयोगी के अनुसार पापफलद भी हो सकता है। इसी प्रकार प्रत्येक लग्नों में समझना चाहिए।

वृषलग्नम्—

जीवशुक्रेन्दवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ।
राजयोगकरः साक्षादेक एव रवेः सुतः।।१६।।

वृष लग्न वाले को गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफल देने वाले, शनि-सूर्य शुभ फलदायक और राजयोगकारक होते हैं।।१६।।

जीवादयो ग्रहाः पापाः सन्ति मारकलक्षणाः।
बुधः स्वल्पफलान्येवं ज्ञेयानि वृषजन्मनः।।१७।।

गुरु, शुक्र, चन्द्रमा ये पापफलदायक मारकेश के फल को देने वाले होते हैं और बुध अल्प शुभफल को देने वाला होता है। ऐसा लक्षण वृषलग्न वालों का होता है।।१७।।

मिथुनलग्नम्—

भौमजीवारुणः पापा एक एव कविः शुभः।
शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेषभवो यथा।।१८।।

मिथुन लग्नवाले को भौम, गुरु, सूर्य पापफल देने वाले, केवल एक मात्र शुक्र शुभफल देने वाला हौता है। शनि-गुरु का योग मेषलग्न वाले के समान ही फलदायक होता है।।१८।।

नायं शशी निहन्ता स्याल्लक्षणं पापनिष्फलम्।
ज्ञातव्यानि द्वन्द्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः।।१९।।

चन्द्रमा मारक नहीं होता है किन्तु साहचर्यानुसार फल देने वाला होता है। इस प्रकार मिथुन लग्न वालों के फल का विचार करना चाहिए।।१९।।

कर्कलग्नम्—

भार्गवेन्दुसुतौ पापौ भौमेज्यशशिनः शुभाः।
एकग्रहस्तु भवेत्साक्षान्महीसुतो योगकारकः।।२०।।

कर्क लग्नवाले को शुक्र-बुध पाप फल देने वाले और भौम, गुरु, चन्द्रमा शुभ फल देने वाले होते हैं। केवल एक भौम ही राजयोगकारक होता है।।२०।।

निहन्ता रविजोऽन्ये च साहचर्यात्फलप्रदाः।
कुलीरसम्भवस्यैव फलान्युक्तानि सूरिभिः।।२१।।

शनि मारकेश होता है, अन्य ग्रह साहचर्य के अनुसार फल देते हैं। ऐसा कर्क लग्न वाले का फल होता है।।२१।।

अथ सिंहलग्नम्—

बुधशुक्रार्कजाः पापाः भौमेज्यार्काः शुभप्रदाः।
प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभं गुरुशुक्रयोः।।२२।।

सिंह लग्नवाले को बुध, शुक्र, शनि पापफल देने वाले और भौम, गुरु, सूर्य शुभ फल देने वाले होते हैं। गुरु-शुक्र के योगमात्र से शुभफल नहीं होता है।।२२।।

घ्नन्ति सौम्यादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः।
एवं फलानि वेद्यानि सिंहे यस्य जनुर्भवेत्।।२३।।

बुध पापग्रहों के साहचर्य से मारकेश होता है। ऐसा सिंहलग्न वालों का फल होता है।।२३।।

अथ कन्यालग्नम्—

कुजजीवेन्दवः पापा एक एव भृगुः शुभः।
भार्गवेन्दुसुतावेव भवेतां योगकारकौ।।२४।।

कन्या लग्नवाले को भौम, गुरु, चन्द्रमा पापफल देने वाले, केवल शुक्र ही शुभफलदायक है। शुक्र-बुध योगकारक होते हैं।।२४।।

निहन्ता कविरन्ये तु मारकास्तु कुजादयः।
प्रतीक्षते फलान्युक्तान्येवं कन्याभवे बुधैः।।२५।।

मारकेश शुक्र ही होता है, अन्य भौम आदि मारकेश के साहचर्य से फल देते हैं। यह कन्यालग्न का फल है।।२५।।

अथ तुलालग्नम्—

जीवार्कमहीजाः पापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ।
भवेतां राजयोगस्य कारकौ चन्द्रतत्सुतौ।।२६।।

तुलालग्न वाले को गुरु, सूर्य, भौम पापफल देनेवाले, शनि-बुध शुभफलदाता, चंद्रमा-बुध राजयोगकारक होते हैं।।२६।।

कुजो निहन्ति जीवाद्याः परे मारकलक्षणाः।
निहन्तारः फलान्येवं काव्यो न तु तुलाभवः।।२७।।

भौम मारकेश होता है, गुरु आदि अन्य ग्रह, जो मारकेश के लक्षण के हैं, वे अनिष्टकारक और शुक्र समफलदाता होता है; ऐसा तुलालग्न का फल जानना चाहिए।।२७।।

अथ वृश्चिकलग्नम्—

सौम्यभौमसिताः पापाः शुभौ गुरुनिशाकरौ।
सूर्यचन्द्रमसावेव भवेतां योगकारकौ।।२८।।

वृश्चिक लग्नवाले को बुध, भौम, शुक्र पाप फल देने वाले, गुरु-चंद्रमा शुभ फल देने वाले और सूर्य-चंद्रमा योगकारक होते हैं।।२८।।

जीवो निहन्ता सौम्याद्या हन्तारो मारकाह्वयाः।
तत्तत्फलानि विज्ञान्येवं वृश्चिकजन्मनः।।२९।।

गुरु मारकेश होता है, बुध आदि मारक के समान ही फलदाता होते हैं। ऐसा वृश्चिक लग्न वाले का फल होता है।।२९।।

अथ धनुर्लग्नम्—

एक एव कविः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ।
योगो भास्करसौम्याभ्यां निहन्ता भास्करःसुतः।।३०।।

धनुलग्नवाले को शुक्र पाप फल देने वाला, बुध-सूर्य शुभफल देने वाले, सूर्य-बुध का योग राजयोगकारक होता है।।३०।।

घ्नन्ति शुक्रादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः।
ज्ञातव्यानि फलान्येवं चापजस्य मनीषिभिः।।३१।।

शनि मारकेश होता है, शुक्र आदि मारकेश के समान ही पापफल देने वाले होते हैं; ऐसा धन लग्न का फल होता है।।३१।।

अथ मकरलग्नम्—

कुजजीवेन्दवः पापाः शुभौ भार्गवचन्द्रजौ।
स्वयं चैव निहन्ता स्यान्मन्दो भौमादयः परे।।३२।।

मकर लग्न वाले को भौम, गुरु, चंद्रमा पाप फल देने वाले शुक्र और चंद्रमा शुभफल देने वाले, शनि मारकेश होता है। भौम आदि मारकेश के लक्षण के समान होने से मारक होते हैं।।३२।।

तल्लक्षणानि हन्तारः कविरेकः सुयोगकृत्।
ज्ञातव्यानि फलान्येवं विबुधैर्मृगजन्मनः।।३३।।

शुक्र योगकारक होता है। इस प्रकार का फल मकर लग्न का होता है।।३३।।

अथ कुम्भलग्नम्—

जीवचन्द्रकुजाः पापा एको दैत्यगुरुः शुभः।
राजयोगकरः शुक्रो भौमश्चैव बृहस्पतिः।।३४।।

कुंभ लग्न वाले को गुरु, चंद्रमा, भौम पापफल देने वाले और शुक्र केवल राजयोग कारक होता है।।३४।।

निहन्ता सन्ति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिताः।
एवमेव फलान्यूहान्येतानि घटजन्मनः।।३५।।

भौम-गुरु मारकेश होते हैं, अन्य ग्रह भी मारकेश से संबंध होने से उनके फलों को देते हैं।।३५।।

अथ मीनलग्नम्—

मन्दशुक्रांशुमद् पापाः सौम्यो भौमविधू शुभौ।
महीसुतगुरुश्चैव भवेतां योगकारकौ।।३६।।

मीनलग्न वाले को शनि, शुक्र, सूर्य पाप फल देनेवाले, बुध, भौम, चंद्रमा शुभफलदायक और भौम-गुरु राजयोगकारक होते हैं।।३६।।

भौमः मारकत्वेऽपि न हन्तामन्दज्ञौ पापिनः।
इत्यूहानि फलान्येवं बुधैस्तु झषजन्मनः।।३७।।

भौम मारकेश होते हुए भी मारता नहीं है, किन्तु शनि-बुध मारक होते हैं। इस प्रकार मीनलग्न का फल जानना चाहिए।।३७।।

एतच्छास्त्रानुसारेण मारकान्निर्दिशेद् बुधः।
चन्द्रसूर्यं विना सर्वे मारकाः परिकीर्त्तिताः।।३८।।

इस शास्त्र के अनुसार मारकेश का निर्देश करना चाहिए। रवि-चंद्र को छोड़कर शेष सभी मारकेश होते हैं।।३८।।

स्वदशायां स्वमुक्तौ च नराणां निधनं न हि।
क्वचिद्दशायामिच्छन्ति स्वभुक्तौ न कदाचन।।३९।।

मारकेश की दशा और अन्तर्दशा में मृत्यु नहीं होती है। किसी-किसी के मत से मारकेश की दशा में मृत्यु होती है और कभी अंतर्दशा में नहीं होती है।।३९।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां कारकमारकादिविचारो नामैकादशोऽध्यायः।

अथ द्वादशभावेषु विचार्यत्वमाह

तनोरूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाबलम्।
शीलं वै प्रकृतिं चैव तनुस्थानाद्विचारयेत्।।१।।

प्रथम भाव से शरीर, रूप (रंग), ज्ञान, वर्ण (ब्राह्मणादि), बल, निर्बल, शील(स्वभाव) और प्रकृति का विचार करना चाहिए।।१।।

धनं धान्यं कुटुम्बं च मृत्युजालममित्रकम्।
धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानाद्विचारयेत्।।२।।

दूसरे भाव में धन, धान्य, कुटुंब, मृत्यु, शत्रु का और धातु, रत्न आदि का विचार करना चाहिए।।२।।

विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम्।
पित्रोर्वै मरणं विप्र दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत्।।३।।

तीसरे भाव में नौकर, भाई, उपदेश, यात्रा और पिता के मरण का विचार करना चाहिए।।३।।

वाहनस्याथ बन्धूनां मातृसौख्यादिकानपि।
निधिक्षेत्रं गृहं चापि पातालाच्च निरीक्षयेत्।।४।।

चौथे भाव से वाहन (सवारी) का, बंधुओं का, मातृसुख का, निधि (गड़े धन) का, क्षेत्र (खेत) तथा गृह का विचार करना चाहिए।।४।।

यन्त्रमन्त्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम्।
पुत्रराज्यापभ्रंशादि पश्येत्पुत्रालयाद् बुधः।।५।।

पाँचवें भाव से यंत्र, मंत्र, विद्या, बुद्धि, प्रबंध, पुत्र और राज्य के स्खलन का विचार करना चाहिए।।५।।

मातुलान्तकशङ्कानां शत्रूंश्चैव व्रणादिकान्।
सपत्नीमातरञ्चापि शत्रुस्थानान्निरीक्षयेत्।।६।।

छठे भाव से मामा के मरण की शंका का, शत्रु और व्रण का तथा सौतेली माँ का विचार करना चाहिए।।६।।

जायामध्वप्रयाणं च व्यापारं हृतवीक्षणम्।
मरणं च स्वदेहस्य जायाभावान्निरीक्षयेत्।।७।।

सप्तम भाव से स्त्री, मार्ग, यात्रा, व्यापार, नष्ट वस्तु और मृत्यु का विचार करना चाहिए।।७।।

ऋणदानग्रहणयोर्गुदे चैवाङ्कुरादयः।
गत्यनूकादिकं सर्वं पश्येद्रन्ध्राद्विचक्षणः।।८।।

आठवें भाव से ऋण देना-लेना, गुदा की बीमारी, पूर्वजन्म और इस जन्म का विवरण— ये सब विचार करना चाहिए।।८।।

भाग्यं धर्मं च श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा।
तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत्।।९।।

नवम भाव से भाग्य, साला, भाई की स्त्री, तीर्थयात्रा आदि का विचार करना चाहिए।।९।।

राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा।
प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षयेत्।।१०।।

दशम स्थान से राज्य, आकाशवृत्ति, प्रतिष्ठा, पिता, परदेश आदि का विचार करना चाहिए।।१०।।

नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च।
लाभवृद्धिपशूनां च भवस्थानाद्विचारयेत्।।११।।

एकादश भाव से अनेक वस्तुओं की प्राप्ति, पुत्र, स्त्री, पशुओं की वृद्धि तथा लाभ आदि का विचार करना चाहिए।।११।।

व्ययं च वैरिवृत्तान्तं फलमन्त्यादिकं तथा।
व्ययभावाच्च तत्सर्वं ज्ञातव्यं हि विपश्चिता।।१२।।

बारहवें भाव से व्यय, शत्रु का वृत्तांत आदि का विचार करना चाहिए।।१२।।

यो यो भावपतिर्नष्टस्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः।।१३।।
भावं न वीक्षते सम्यग्ग्रहो वापि मृतो यदा।
स्थविरो वा भवेत्खेटः सुप्तो वापि प्रपीडितः।
तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं ब्रूयाद्विशङ्कितः।।१४।।

जिन-जिन भावों के स्वामी अस्त हों, त्रिकेश (६।८।१२ के स्वामी) से युत हों, भाव को न देखते हों, मृत अवस्था में हों, वृद्ध अथवा सुप्त हों वा पीडित हों तो उन भावों के फल नष्ट हो जाते हैं।।१३-१४।।

यदा सौम्यग्रहैर्दृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्।
युवा प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद् भवेत्।।१५।।

जो भाव शुभग्रह से दृष्ट हों, भाव अपने स्वामी शुभग्रह से युत हो, भावेश युवा, प्रबुद्ध, राजकुमार अवस्था में हो।।१५।।

ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद्बुधः।
एवं हि सर्वभावेषु ज्ञेयो साधारणो नयः।।१६।।

भाव को भावेश देखता हो तो उस भाव के सुख की वृद्धि होती है। यह नियम सभी भावों में साधारणतः समझना चाहिए।।१६।।

शुक्रः शुक्रश्च नेत्रं च चन्द्रमा मनसस्तथा।
आत्मा वै दिनकृत्तत्र जीवो जीवितसौख्यदः।।१७।।

शुक्र धातु का स्वामी, नेत्र और मन का चन्द्रमा, आत्मा का सूर्य, गुरु सुख का।।१७।।

क्रोधः पराक्रमो भौमो बुधो बालत्वधीमतः।
शनिर्दुःखप्रदो ज्ञेयो राहुरैश्वर्यदायकः।।१८।।

क्रोध, पराक्रम का भौम, बुध बुद्धि का, शनि दुःख का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी होता है।।१८।।

शिरोनेत्रे तथा कर्णे नासा चापि कपोलकौ।
हनूमुखं तथा वाच्यं लग्नादाद्यद्रेकाणके।।१९।।

एक लग्न में तीन द्रेष्काण होते हैं। यदि जन्म समय लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो लग्न को मुख, २, १२ भाव को नेत्र, ३, ११ भाव को कान, ४, १२ को नाक, ५, ९ भाव को कपोल, ६, ८ भाव को दाढ़ी, ७ भाव को मुख कल्पना करना चाहिए।।१९।।

लग्नान्मध्यद्रेकाणे च कण्ठांशौ बाहुकौ तथा।
पार्श्वे च हृदयक्रोडे नाभिं चैव यथाक्रमम्।।२०।।

दूसरा द्रेष्काण हो तो लग्न को कण्ठ, २, १२ भाव को कंधा, ३,११ भाव को बाहु, ४,१० भाव को पार्श्व, ५,९ भाव को हृदय, ६, ८ भाव को पेट, ७ भाव को नाभि कल्पना करना चाहिए।।२०।।

वस्तिर्लिङ्गगुदे वृषणावुरू जानुजङ्घके।
पदेति चैवमुदितैर्वाममङ्गं तृतीयके।।२१।।

तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न को वस्ति (नाभि-लिंग के मध्य का स्थान), २।१२ भाव को लिंग और गुदा, ३।१० भाव को जंघा, ५।९ भाव को घुटना, ६।८ भाव को ठेहुने के नीचे, ७ भाव को पैर समझना चाहिए। सप्तम से १२ भाव तक वामभाग और लग्न से छठे भाव तक दाहिने भाग की कल्पना करना चाहिए।।२१।।

यस्मिन्नङ्गे स्थितः क्रूरस्तत्र चिह्नं समादिशेत्।
ससौम्यैर्नियतं विप्र सौम्यैर्लक्ष्मं समादिशेत्।।२२।।

अंग के जिस भाग में पापग्रह हों वहाँ चिह्न कहना चाहिए। यदि बुध के साथ पापग्रह हो तो निश्चय ही चिह्न होता है और शुभग्रह हो तो उस अंग में लक्षण होता है।।२२।।

अथ तनुभावफलम्—

देहाधिपः पापयुतोऽष्टमस्थो व्ययारिगोवाङ्गसुखं निहन्ति।
सर्वत्र भावेषु च योजनीयमेवं बुधैर्भाववशात्फलं हि।।२३।।

लग्नेश पापग्रह से युत होकर आठवें, बारहवें, छठे हो तो शरीर-सुख नहीं होता है। यही नियम सभी भावों का है, यानि जिस भाव का स्वामी पापग्रह से युत होकर ६, ८, १२ वें भाव के फल का अभाव होता है।।२३।।

पापो विलग्नाधिपतिर्विलग्ने चन्द्रेण युक्तो यदि बालकः स्यात्।
तदातिरोगं स हि केन्द्रसंस्थस्त्रिकोणलाभेषु गदं निहन्ति।।२४।।

यदि लग्नेश पापग्रह चन्द्रमा से युक्त होकर लग्न में हो तो बालक अत्यंत रोगी होता है। यदि वह केन्द्र-त्रिकोण और लाभभाव में हो तो रोग का नाश करता है।।२४।।

लग्नाधिपोऽथ जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रगः।
स जातो धनवांल्लोके दीर्घायू राजवल्लभः।।२५।।

लग्नेश वा गुरु या शुक्र केन्द्र में हो तो जातक धनी, दीर्घायु और राजप्रिय होता है।।२५।।

केन्द्रत्रिकोणेषु न यस्य पापा
लग्नाधिपःसुरगुरुश्च चतुष्टयस्थौ।
भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा
जीवेत्तु वर्षशतमेव विमुक्तरोगः।।२६।।

जिसके जन्मांग में केन्द्र-त्रिकोण भाव में पापग्रह न हों और लग्नेश तथा गुरु केन्द्र में हों तो वह बालक पुण्यकर्त्ता, अनेक प्रकार के सुखों को भोगने वाला एवं दीर्घायु होता है।।२६।।

लग्नेशे चरराशिस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते।
कीर्त्तिः श्रीमान्महाभोगी देहपुष्टिसमन्वितः।।२७।।

लग्नेश चरराशि में हो तथा शुभग्रह से देखा जाता हो तो बालक यशस्वी, धनी, भोगों को भोगने वाला और बलवान् होता है।।२७।।

शुक्रो बुधोऽथवा जीवो लग्ने चन्द्रसमन्वितः।
लग्नात्केन्द्रगतो वापि राजलक्षणसंयुतः।।२८।।

यदि शुक्र, बुध वा गुरु चन्द्रमा से युत होकर लग्न से केन्द्र में गये हों तो बालक राजलक्षण से युक्त होता है।।२८।।

रविचन्द्रौ च ह्येकस्थावेकांशकसमन्वितौ।
त्रिमात्रं च त्रिभिर्मासैर्भ्रात्रा पित्रा च जीवति।।२९।।

रवि-चन्द्रमा एक स्थान में एक ही अंश में हों तो बालक को तीन मास के अन्दर तीन माताएँ होती हैं और भाई पिता से जीवित रहता है।।२९।।

लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते।
लग्नांशे मन्दसूरी चेज्जातश्च यमलो भवेत्।।३०।।

लग्न में राहु हो, उसे चन्द्रमा देखता हो तथा लग्न के नवमांश में शनि-गुरु हों तो यमल बालक होते हैं।।३०।।

अथ धनभावफलम्—

शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथः शुक्रस्य स्वोच्चांशगृहे गतो वा।
सम्बन्धवान्स्याद्यदि देहपेन नेत्रं विधत्ते विपरीतभावम्।।३१।।

यदि धन भाव का स्वामी शुक्र से युक्त हो और शुक्र के उच्च, नवांश, गृह में हो और लग्नेश से संबंध करता हो तो टेढ़े नेत्र होते हैं।।३१।।

तत्र स्थितौ चन्द्ररवी निशान्धं जात्यन्धतां नेत्रपदेहपार्काः।
पैत्रर्क्षनाथेन युतास्तदान्ध्यं कुर्वन्ति मात्रादिफलं तथेदृक्।।३२।।

यदि चन्द्र-सूर्य धनेश-लग्नेश से युक्त होकर दुःस्थ हों तो जन्मांध होता है। पिता आदि के स्वामी युत हों तो उन्हें भी अंधा समझना चाहिए।।३२।।

दोषकृन्न च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रहः।
षडादित्रयसंस्थश्चेत्तदा दोषकृच्छुभः।।३३।।

यदि दोषकर्त्ता ग्रह अपनी उच्च राशि में हो तो दोष नहीं करता। यदि छठे, आठवें एवं बारहवें में हो तो दोष करता है।।३३।।

वागीशवाग्गृहाधीशौ षडादित्रयसंस्थितौ।
मूकतां कुरुतेऽप्येवं पितृमातृगृहाधिपाः।।३४।।

गुरु और द्वितीयेश छठे, आठवें, बारहवें भाव में हों तो मूक (गूंगा) होता है। इसी प्रकार पिता, माता आदि के भावेश हों तो उन्हें भी मूक कहना चाहिए।।३४।।

विद्याधिपौ जीवबुधावविद्यामरित्रयस्थौ कुरुतोऽथ तौ चेत्।
केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ प्रयच्छतां द्रागनवद्यविद्याम्।।

गुरु, बुध और द्वितीयेश छठे, आठवें और बारहवें भाव में हों तो मूर्ख होता है। यदि ये केन्द्र-त्रिकोण अपने गृह उच्च राशि में हों तो शीघ्र ही विद्वान् होता है।।३५।।

धनाधिपो गुरुर्यस्य धनराशिस्थितो यदि।
भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत्।।३६।।

धनेश और भौम दूसरे भाव में हो तो पुरुष धनी होता है।।३६।।

धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे वा धनङ्गते।
तावुभौ केन्द्रराशिस्थौ धनवान्स नरो भवेत्।।३७।।

धनेश ११वें भाव में हो और लाभेश दूसरे भाव में हो अथवा दोनों केन्द्र में हों तो धनी होता है।।३७।।

धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तत्त्रिकोणगे।
गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत्।।३८।।

धनेश केन्द्र में हो और लाभेश उससे त्रिकोण में हो तथा गुरु-शुक्र से युत-दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है।।३८।।

वित्तेशो रिपुभावस्थो लाभेशो तद्गतो यदि।
वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टौ निर्धन एव सः।।३९।।

धनेश, लाभेश छठे में हों अथवा धन-लाभ पापयुत और पापदृष्ट हों तो निर्धन होता है।।३९।।

वित्तलाभाधिपौ दुःस्थौ पापखेचरसंयुतौ।
जन्मप्रभृतिदारिद्र्यं भिक्षान्नं लभते नरः।।४०।।

धनेश, लाभेश पापग्रह से युत होकर छठे, आठवें, बारहवें भाव में हों तो जन्म से ही दरिद्र होता है और भिक्षा माँगकर खाने वाला होता है।।४०।।

षष्ठाष्टमव्ययस्थौ चेद्धनलाभाधिपौ यदि।
लाभे कुजे धने राहौ राजदण्डाद्धनक्षयः।।४१।।

यदि धनेश एवं लाभेश छठें, आठवें, बारहवें भाव में हो और ११वें भाव में भौम, धन भाव में राहु हो तो राजदंड से धन का नाश हौता है।।४१।।

लाभे जीवे धने शुक्रे तदीशे शुभसंयुते।
व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाद्धनव्ययः।।४२।।

११वें भाव में गुरु, दूसरे भाव में शुक्र हो और धनेश शुभग्रह से युत हो और बारहवें भाव में शुभग्रह हो तो धर्म के कारण द्रव्य का व्यय होता है।।४२।।

कुटुम्बराशेरधिपः ससौम्ये केन्द्रत्रिकोणे च सुहृद्गृही वा।
सौम्यर्क्षयुक्तो यदि जातपुण्यः कुटुम्बसंरक्षणवाग्विभूतः।।

द्वितीय भाव का स्वामी शुभग्रह से युक्त होकर केन्द्र-त्रिकोण में भिन्न क्षेत्र में वा अपनी राशि में वा शुभग्रह की राशि में हो तो पुण्यवान् कुटुम्ब की रक्षा करने वाला होता है।।४३।।

कुटुम्बनाथे परमोच्चयुक्ते देवेन्द्रपूज्ये च समीक्षिते वा।
तथाविधे तद्भवनेऽभिजातः सहस्त्ररक्षो भुवनप्रतापी।।४४।।

धनेश अपने उच्च में हो और गुरु से देखा जाता हो तो सहस्त्र द्रव्य कों रखने वाला होता है।।४४।।

तन्नाथे भृगुणा बुधेन सहिते पारावतांशे तथा
स्वोच्चेनाथ सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्थानकोलाहलः।।४५।।

धनेश शुक्र-बुध से युक्त हो, पारावतांश में हो, अपने उच्च मित्र के गृह में हो तो प्रसिद्ध धनी होता है।।४५।।

कुटुम्बराशिस्थपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे।
स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतेऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षकः स्यात्।।

धनेश शुक्र वा बुध अपने उच्च मित्र के गृह में हो तो परोपकारी जनरक्षक होता है।।४६।।

नेत्रेशे बलसंयुक्ते शोभनाक्षो भवेन्नरः।
षष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्पमादिशेत्।।४७।।

धनेश बलवान् हो तो सुंदर नेत्रों वाला होता है। यदि छठे, आठवें, बारहवें भाव में हो तो नेत्र में विकारवाला होता है।।४७।।

धनेशे पापसंयुक्ते धने पापसमन्विते।
असत्यवादी पिशुनः पवनव्याधिसंयुतः।।४८।।

धनेश पापग्रह से युत हो और धनभाव में पापग्रह हो तो झूठ बोलने वाला, कृपण और वातव्याधि से युक्त होता है।।४८।।

अथ सहजभावफलम्—

सभौमो भ्रातृभावेशो त्रिकभिन्नं च चेत् स्थितः।
भ्रातृक्षेत्रगतो वापि भ्रातृभावं विनिर्दिशेत्।।४९।।

मंगल के साथ तीसरे भाव के स्वामी त्रिक (६।८।१२) से भिन्न स्थान में वा तीसरे भाव में हो तो भाइयों का सुख होता है।।४९।।

तौ पापयोगतः पापक्षेत्रयोगेन वा पुनः।
उत्पाट्य सहजान्सद्यो निहन्ता शास्त्रनिश्चयात्।।५०।।

वे ही दोनों पापग्रह से युत हों और त्रिक में हों तो भाइयों का जन्म होता है, किन्तु बचते नहीं हैं।।५०।।

स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृगोऽपि वा।
भगिनी स्यात्तदा भ्राता पुंगृहे पुंग्रहो यदि।।५१।।

यदि भ्रातृभाव का स्वामी स्त्रीग्रह हो और तीसरे भाव में भी स्त्रीग्रह हो तो बहिनें होती हैं। पुरुष ग्रह हो तो भाई होते हैं।।५१।।

भ्रातृभे कारके वापि शुभयुक्तनिरीक्षिते।
भावे वा बलसम्पूर्णे भ्रातृणां वर्धनं भवेत्।।५२।।

भ्रातृभाव वा भ्रातृकारक शुभग्रह से युत-दृष्ट हो और भ्रातृभाव पूर्ण बलवान् हो तो भाइयों की वृद्धि होती है।।५२।।

केन्द्रत्रिकोणगे वापि स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे।
नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाभं वदेद्बुधः।।५३।।

यदि भ्रातृभावेश वा भ्रातृकारक केन्द्र-त्रिकोण में अपने उच्चमित्र आदि स्ववर्ग में हो तो भाइयों का लाभ होता है।।५३।।

भ्रातृभे बुधसंयुक्ते तदीशे चन्द्रसंयुते।
कारके मन्दसंयुक्ते भगिन्येकाग्रतो भवेत्।।५४।।

भ्रातृभावेश चन्द्रमा से युक्त हो और भ्रातृभाव में बुध हो और भ्रातृकारक शनि से युत हो तो उसके पहले एक बहन होती है।।५४।।

पश्चात्सहोदरोऽप्येकस्तृतीयस्तु मृतो भवेत्।
कारके राहुसंयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचगः।।५५।।

उसके बाद एक भाई होता है और तीसरा मर जाता है। भ्रातृकारक राहु से युक्त हो और तृतीयेश नीच राशि में हो तो।।५५।।

पश्चात्सहोदराभावः पूर्वं तु तत्त्रयं भवेत्।
भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्त्रिकोणगे।।५६।।

उससे छोटे भाइयों का अभाव और उससे बड़े ३ भाई होते हैं। भ्रातृस्थान के स्वामी केन्द्र में हों और भ्रातृकारक उससे त्रिकोण में।।५६।।

जीवेन सहितश्चोच्चे संख्या द्वादश सोदराः।
तत्र पूर्वद्वयं गर्भं जातकाच्च तृतीयकम्।।५७।।
सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः।
शेषाः सहोदराः षड्वै भवेयुर्दीर्घजीविनः।।५८।।

गुरु के साथ अपनी उच्चराशि में हो तो १२ भाई होते हैं। उसमें दो बड़े, तीसरा, सातवाँ, नवाँ और बारहवाँ मर जाता है। शेष ६ भाई दीर्घजीवी होकर रहते हैं।।५७-५८।।

व्ययेशेन युते भौमे गुरुणा सहितोऽपि वा।
भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसंख्यास्तु सोदराः।।५९।।

व्ययेश से भौम युत हो वा गुरु से युक्त हो और तीसरे भाव में चन्द्रमा हो तो सात भाई होते हैं।।५९।।

अथ चतुर्थभावफलम्—

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलब्धिः।
युते षडादौ तु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे देहपतौ च तद्वत्।।

यदि सुखभाव सुखेश और लग्नेश से युक्त हो तो गृह का लाभ होता है। यदि लग्नेश, सुखेश ६।८।१२ भाव में हो तो गृहप्राप्ति नहीं होती है।।६०।।

केन्द्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलब्धिः।
क्षेत्रस्य चिन्ता सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु सुखस्य कार्या।।६१।।

यदि दोनों केन्द्र-त्रिकोण में हों और शुभग्रह से युक्त हों तो सुन्दर गृह प्राप्त होता है। गृहादि की चिंता सुखेश से, गुरु से सुख की चिंता।।६१।।

दिव्याङ्गनावाहनवस्तुभूषा चिन्ता तु कार्या भृगुणा बुधैर्द्रैः।
तमः शनिभ्यामभिचिन्त्यमायुरर्केण तातःशशिना च माता।।६२।।

स्त्री, वाहन, आभूषण की चिन्ता शुक्र से, राहु-शनि से आयु की चिंता, सूर्य से पिता और चंद्रमा से माता की चिंता करनी चाहिए।।६२।।

बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्थां गतेन भावेशयुतेन वा स्यात्।
केन्द्रत्रिकोणेषु गतेषु तत्र प्रपश्यता वापि स्वतुङ्गगेन।।६३।।

बुध से बुद्धि की चिंता करना चाहिए। जब ये कारक उन-उन भावों में भावेशों से युत हों तो उन-उन पदार्थों की वृद्धि कहना चाहिए। सुखेश केन्द्र-त्रिकोण में उच्च में गये हुए ग्रह से दृष्ट हो।।६३।।

स्वकीये स्वांशगे स्वोच्चे सुखस्थानस्थितो यदि।
सुखवाहनवृद्धिः स्याच्छङ्खभेर्यादिवाद्ययुक्।।६४।।

अपने राशि, उच्च और अपनी अंश में होकर सुख-स्थान में हो तो विचित्र प्राकार से मंडित गृह होता है।।६४।।

विचित्रसौधप्राकारं मण्डितं गृहमादिशेत्।
कर्माधिपेन सहिते नाथे केन्द्रे कोणेऽवस्थिते।।६५।।

यदि सुखेश कर्मेश से युत होकर केन्द्र-त्रिकोण में हो तो सुन्दर गृह होता है।।६५।।

बन्धुस्थानेश्वरे सौम्ये शुभग्रहनिरीक्षिते।
शशिजे लग्नसंयुक्ते बन्धुपूज्यो भवेन्नरः।।६६।।

सुखेश शुभग्रह में हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तथा बुध लग्न में हो तो मनुष्य बंधुपूज्य होता है।।६६।।

मातुःस्थाने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे।
कारके बलसंयुक्ते मातुर्दीर्घायुरादिशेत्।।६७।।

मातृस्थान में शुभग्रह हो, सुखेश उच्चराशि में हो और मातृकारक बली हो तो माता दीर्घायु होती है।।६७।।

सुखेशे केन्द्रभावस्थे तथा केन्द्रे स्थितो भृगुः।
शशिजे स्वोच्चराशिस्थे विद्वान्पण्डित एव सः।।६८।।

सुखेश केंद्र में हो और शुक्र भी केंद्र में हो, बुध अपनी उच्च राशि में हो तो बालक विद्वान् एवं पंडित होता है।।६८।।

सुखे मन्दे रवियुते चन्द्रो भाग्यगतो यदि।
लाभस्थानगते भौमे गोमहिष्यादिलाभकृत्।।६९।।

सुखस्थान में रवि-शनि हों, चंद्रमा नवम स्थान में हो और लाभस्थान में भौम हो तो गाय, भैंस आदि का लाभ होता है।।६९।।

लग्नस्थानाधिपे सौम्ये सुखेशे नीचराशिगे।
कारके व्ययराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते।।७०।।
द्वादशे वत्सरे प्राप्ते लाभो वै वाहनस्य च।
वाहने रविसंयुक्ते स्वोच्चे तद्राशिनायके।।७१।।
कर्मेशेन युते बन्धुनाथे तुङ्गांशसंयुते।
शुक्रेण संयुते तत्र द्वात्रिंशे वाहनं भवेत्।।७२।।

लग्नेश शुभग्रह हो, सुखेश नीच राशि में हो, कारक बारहवें भाव में हो और सुखेश ११वें भाव में हो तो।।७०।।

१२वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है। सुख भाव में रवि हो, सुखेश अपनी उच्चराशि का हो और शुक्र से युक्त हो तो ३२ वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है।।७१।।

द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरोवाहनभाग्भवेत्।

कर्मेश युत होकर सुखेश अपनी उच्च राशि में हो तो ४२वें वर्ष में वाहन प्राप्त होता है।।७२।।

लाभेशे सुखराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते।।७३।।
द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरो वाहनलाभकृत्।
भावपस्य शुभत्वे तु फलं ज्ञेयं शुभं बुधैः।।७४।।

लाभेश सुख भाव में और सुखेश लाभ भाव में हो।।७३।।

तो १२वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है। भावेश और भाव की शुभता के आधार पर ही शुभफल की प्राप्ति होती है।।७४।।

चरग्रहसमायुक्ते सुखे तद्राशिनायके।
षष्ठे भौमे व्ययगते मूकत्वं प्राप्यते नरः।।७५।।

सुख भाव चरग्रह से युक्त हो तथा सुखेश छठे भाव में और व्ययभाव में भौम हों तो जातक मूक (गूंगा) होता है।।७५।।

अथ पञ्चमभावफलम्—

षडादित्रयसंस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता।
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भवः।।७६।।

पंचमेश ६।८।१२वें भाव में हो तो संतान का अभाव होता है। यदि केंद्र वा त्रिकोण में हो तो संतान का सुख होता है।।७६।।

षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेश्मनि।
म्रियते प्रथमापत्यं काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात्।।७७।।

छठे भाव में पंचमेश हो और लग्नेश भौम की राशि में हो तो प्रथम संतान नष्ट हो जाती है तथा स्त्री काकवंध्या होती है।।७७।।

सुताधीशो हि नीचस्थः षडादित्रयसंस्थितः।
काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि।।७८।।

पंचमेश अपनी नीचराशि का ६।८।१२वें भाव में हो और पाँचवें भाव में केतु-बुध हो तो स्त्री काकवंध्या होती है।।७८।।

सुतेशो नीचगो यत्र सुतस्थानं न पश्यति।
सुते सौरिबुधौ स्यातां काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात्।।७९।।

पंचमेश नीच राशि का हो और पंचम भाव को न देखता हो और पंचम में शनि-बुध हो तो स्त्री काकवंध्या होती है।।७९।।

भाग्येशो मूर्तिवर्ती चं सुतेशो नीचगो यदि।
सुते केतुबुधौ स्यातां सुतं कष्टाद्विनिर्दिशेत्।।८०।।

भाग्येश लग्न में हो, पंचमेश अपनी नीच राशि में हो और पाँचवें भाव में केतु-बुध हों तो कष्ट से पुत्र होता है।।८०।।

षडादित्रयसंस्थोऽपि नीचो वाप्यरिसंस्थितः।
पापाक्रान्ते सुतस्थाने पुत्रं कष्टाद्विनिर्दिशेत्।।८१।।

पंचमेश ६।८।१२ में हो अथवा नीच में शत्रु की राशि में हो और पंचम भाव में पापग्रह हो तो कष्ट से पुत्र होता है।।८१।।

दत्तकपुत्रयोगः—

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मन्दक्षेत्रेऽथवा पुनः।
मन्दमान्दियुते दृष्टे तदा दत्तादयः सुताः।।८२।।

पंचम स्थान में बुध की राशि (३।६) हो अथवा शनि की राशि (१०।११) हो, उसमें शनि और गुलिक हो वा उससे देखा जाता हो तो दत्तक पुत्र होता है।।८२।।

पञ्चमे षड्ग्रहैर्युक्ते तदीशे व्ययराशिगे।
लग्नेशे दुर्बलो चेत्स्यात्तदा दत्तादयः सुताः।।८३।।

पाँचवें भाव में ६ ग्रह हों, पंचमेश १२वें भाव में हो और लग्नेश, चंद्रमा बलवान् हो तो दत्तक पुत्र से सुख होता है।।८३।।

सन्तानयोगमाह—

सुतभवने भृगुजीवसौम्ययाते बलसहितेन विलोकिते युते वा।
बहुसुतजननं वदन्ति सन्तः सुतभवनेशबलेन चिन्त्यमेतत्।।८४।।

संतान भाव में शुक्र, गुरु, बुध हों तथा बलवान् ग्रह से देखे जाते हों वा युत हों और सुतेश बली हो तो अनेक संतान होती हैं।।८४।।

सुतेशे शशिसंयुक्ते तद्द्रेष्काणगतेऽपि वा।
तदा हि कन्यकालाभं प्रवदेन्मतिमान्नरः।।८५।।

सुतेश चंद्रमा से युक्त हो अथवा उसके द्रेष्काण में हो तो अधिक कन्या होती है।।८५।।

सुतेशे नरराशिस्थे राहुणा सहितो शशी।
पुत्रस्थानं गते मन्दे परजातं वदेच्छिशुम्।।८६।।

सुतेश पुरुष राशि में हो और चंद्रमा-राहु से युत हो और पंचम स्थान में शनि हो तो दूसरे से उत्पन्न बालक होता है।।८६।।

लग्नाद्दशमे चन्द्रे लग्नादष्टमगो गुरुः।
पापयुक्तेऽथ सन्दृष्टे अन्यबीजं न संशयः।।८७।।

लग्न से १०वें भाव में चंद्रमा हो तथा लग्न से आठवें भाव में गुरु हो तथा पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो दूसरे से उत्पन्न बालक होता है।।८७।।

पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नाच्चेद्द्वित्रिकोणभे।
गुरुणा संयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति सः।।८८।।

यदि पंचमेश अपनी उच्चराशि में होकर लग्न से २।९।५ भाव में हो और गुरु से युत-दृष्ट हो तो पुत्रसुख को भोगने वाला होता है।।८८।।

त्रिचतुःपापसंयुक्ते सुते च सौम्यरहिते।
सुतेशे नीचराशिस्थे नीचसंस्थो भवेच्छिशुः।।८९।।

पाँचवें भाव में ३ या ४ पापग्रह हों और शुभग्रह न हो और पंचमेश नीच राशि में हो तो बालक नीच कर्म करने वाला होता है।।८९।।

पुत्रप्राप्ति-वियोगसमयश्च—

पुत्रस्थानं गते जीवे तदीशे भृगुसंयुते।
द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत्।।९०।।

पंचम स्थान में गुरु हो और पंचमेश शुक्र से युत हो तो ३२वें वा ३३वें वर्ष में पुत्र का लाभ होता है।।९०।।

सुतेशे केन्द्रभावस्थे कारकेण समन्विते।
षट्त्रिंशे त्रिंशदब्दे च पुत्रोत्पत्तिं विनिर्दिशेत्।।९१।।

पंचमेश कारक से युत होकर केंद्र में हो तो ३६वें वर्ष में पुत्र उत्पन्न होता है।।९१।।

लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगौ।
लग्नेशे भृगुसंयुक्ते चत्वारिंशे सुतं लभेत्।।९२।।

लग्न से नवम स्थान में गुरु हो और गुरु से भाग्य ९वें भाव में शुक्र हो तथा लग्नेश शुक्र से युक्त हो तो ४०वें वर्ष में पुत्र का लाभ होता है।।९२।।

पुत्रस्थानं गते राहौ तदीशे पापसंयुते।
नीचराशिगते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युदः।।९३।।

पाँचवें भाव में राहु हो, पंचमेश पाप से युत हो और गुरु अपनी नीच राशि में हो तो ३२वें वर्ष में पुत्र की मृत्यु होती है।।९३।।

जीवात्पञ्चमगे पापे लग्नात्पुत्रं गतेऽपि च।
षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतक्षयः।।९४।।

गुरु से पाँचवें भाव में पापग्रह हों और लग्न से पाँचवें भाव में भी गये हों तो २६वें और ४०वें वर्ष में पुत्र का नाश होता है।।९४।।

लग्ने मान्दिसमायुक्ते लग्नेशे नीचराशिगे।
षट्पञ्चाशदब्देषु पुत्रशोकाकुलो भवेत्।।९५।।

लग्न में गुलिक हो और लग्नेश अपनी नीच राशि में हो तो ५६वें वर्ष में पुत्रशोक होता है।।९५।।

सन्तानसंख्याज्ञानमाह—

चतुर्थे पापसंयुक्ते षष्ठे चैव तथैव हि।
सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते।।९६।।
कारके शुभसंयुक्ते दशसंख्यास्तु सूनवः।

यदि ४, ६ भाव में पापग्रह हों, सुतेश लग्नेश से युत होकर परम उच्च में हो, सुतभावकारक शुभग्रह से युत हो तो दश पुत्र होते हैं।।९६।।

परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसंयुते।।९७।।
भाग्येशे भाग्यसंयुक्ते संख्यानां नव सूनवः।।९८।।

गुरु परमोच्च में हो, धनेश राहु से युत हो और भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो ९ पुत्र होते हैं।।९७-९८।।

पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसंयुते।
धनेशे कर्मराशिस्थे वसुसंख्यास्तु सूनवः।।९९।।

पंचम वा भाग्य स्थान में गुरु हो, पंचमेश बली हो और धनेश १०वें स्थान में हो तो ८ पुत्र होते हैं।।९९।।

पञ्चमात्पञ्चमे मन्दे सुतस्थे च तदीश्वरे।
सूनवः सप्तसंख्याश्च द्विगर्भे यमलं भवेत्।।१००।।

पाँचवें भाव से पंचम में शनि हो, पाँचवें भाव में पंचमेश हो तो ७ पुत्र होते हैं, जिन में २ यमल (जुड़वा) होते हैं।।१००।।

वित्तेशे पञ्चमस्थे च सुतस्थे पञ्चमाधिपे।
षट्संख्या च सुतप्राप्तिस्तेषां च त्रिप्रजामृतिः।।१०१।।

धनेश पाँचवें भाव में, पंचमेश पंचम में हो तो ६ पुत्र होते हैं, जिसमें तीन मर जाते हैं।।१०१।।

लग्नात्पञ्चमगे जीवे जीवात्पञ्चमगे शनौ।
मन्दात्पञ्चमगे राहौ पुत्रमेकं विनिर्दिशेत्।।१०२।।

लग्न से पाँचवें भाव में गुरु, गुरु से पाँचवें भाव में शनि हों, शनि से पाँचवें राहु हो तो १ पुत्र होता है।।१०२।।

पञ्चमे पापसंयुक्ते जीवात्पञ्चमगे शनौ।
सुतेशे भौमसंयुक्ते लग्नेशे धनसङ्गते।
जातं जातं विनाशं च दीर्घायुश्चैव मानवः।।१०३।।

पंचम में पापग्रह हो और गुरु से पाँचवें भाव में शनि हो, पंचमेश भौम से युक्त हो, लग्नेश धनभाव में हो तो जितने बालक उत्पन्न हो सभी मर जावें।।१०३।।

अथ षष्ठभावफलम्—

षष्ठाधिपोऽपि पापश्चेद्देहे वाप्यष्टमे स्थितः।
तदा व्रणो भवेद्देहे षष्ठस्थानेऽप्ययं विधिः।।१०४।।

षष्ठेश (६ठे भाव का स्वामी) पापग्रह हो और जन्मलग्न वा आठवें भाव में बैठा हो तो शरीर में व्रण (घाव) के चिह्न होते हैं। छठे भाव में हो तो भी वही फल होता है।।१०४।।

एवं पित्रादिभावेशास्तत्तत्कारकसंयुताः।
व्रणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि।।१०५।।

इसी प्रकार पिता आदि भावेशों के साथ षष्ठेश से युत होकर ६/८ भाव में हो तो उनके शरीर में भी व्रण के चिह्न कहना चाहिए। सूर्य षष्ठेश हो तो शिर में ।।१०५।।

तेषामपि व्रणं वाच्यमादित्ये च शिरोव्रणम्।
इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमज्ञेन च नाभिषु।।१०६।।

चंद्रमा हो तो मुख या कंठ में, भौम-बुध हों तो नाभि में।।१०६।।

गुरुणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे।
शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत्।।१०७।।

गुरु हो तो नाक में, शुक्ल हो तो आँख और पैर में, शनि-राहु हों तो कुक्षि (कोंख) में, केतु से भी कुक्षि में चिह्न कहना चाहिए।।१०७।।

लग्नाधिपः कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि संस्थितः।
यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरुक्प्रदः।।१०८।।

लग्नेश भौम की राशि में वा बुध की राशि में होकर कहीं पर बैठा हो तथा बुध से देखा जाता हो तो मुख में रोग होता है।।१०८।।

कुष्ठयोगः—

लग्नाधिपो कुजबुधौ चन्द्रेण यदि संयुतौ।
राहुणा शनिना सार्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशेत्।।१०९।।

यदि भौम वा बुध लग्नेश होकर चंद्रमा, राहु वा शनि से युत हों तो कुष्ठ-रोग होता है।।१०९।।

लग्नाधिपं विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी।
श्वेतकुष्ठं तथा कृष्णकुष्ठं च शनिना सह।।११०।।
कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तत्तदेवं विचारयेत्।

यदि लग्नेश को छोड़कर चंद्रमा राहु के साथ लग्न में हो तो सफेद कुष्ठ होता है। शनि के साथ हो तो काला कुष्ठ, भौम के साथ हो तो लाल कुष्ठ होता है।।११०।।

गण्डादिरोगयोगाः—

लग्ने षष्ठाष्टमाधीशौ रविणा यदि संस्थितौ।।१११।।
ज्वरगण्डः कुजे ग्रन्थिः शस्त्रव्रणमथापि वा।
बुधेन पित्तं गुरुणा रोगाभावं विनिर्दिशेत्।।११२।।

यदि सूर्य से युत होकर षष्ठेश अष्टमेश लग्न में हों तो ज्वर से उत्पन्न गंडरोग, भौम से युत हो तो गठिया वा शस्त्र से आघात, बुध हो तो पित्त से उत्पन्न गंड और गुरु हो तो रोग का अभाव कहना चाहिए।।११२।।

स्त्रीभिः शुक्रेण शनिना वायुना संयुतो यदि।
गण्डश्चाण्डालतो नाभौ तमःकेत्वोर्युते भयम्।।११३।।

शुक्र से युत हो तो स्त्रीजनित रोग, शनि से युत हो तो वायुजनित गंड, राहु से युत हो तो चांडाल से नाभि में गंडरोग और केतु से युत हो तो भय होता है।।११३।।

चन्द्रेण गण्डः सलिलैः कफश्लैष्मादिना भवेत्।
एवं पित्रादिभावानां तत्तत्कारकयोगतः।।११४।।

चंद्रमा से युत हो तो जल से तथा कफरोग होता है। इसी प्रकार पिता आदि के भावेशों से उन लोगों के भी रोग का विचार करना चाहिए।।११४।।

रोगप्राप्तिसमयः—

गण्डो तेषां भवेदेवमूह्यमत्र मनीषिभिः।
रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसंयुते।।११५।।
राहुणा संयुते मन्दे सर्वदा रोगसंयुतः।
रोगस्थानगते भौमे तदीशे रन्ध्रसंयुते।।११६।।
षड्वर्षे द्वादशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नरः।

छठे स्थान में पापग्रह हो, षष्ठेश पापयुत हो, राहु से शनि युत हो तो सर्वदा रोगी होता है। षष्ठस्थान में भौम हो और षष्ठेश आठवें भाव में हो तो छठे, बारहवें वर्ष में ज्वररोग से युक्त होता है।।११६।।

षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसंयुते।।११७।।
द्वार्विंशकोनविंशके कुष्ठरोगं विनिर्दिशेत्।

छठे भाव में गुरु हो और गुरु की राशि में चंद्रमा हो तो २२वें, १९ वें वर्ष में कुष्ठरोग होता है।।११७।।

रोगस्थानं गतो राहुः केन्द्रे मान्दिसमन्वितः।।११८।।
लग्नेशे नाशराशिस्थे षड्विंशे क्षयरोगता।

छठे भाव में राहु हो, केन्द्र में गुलिक हो, लग्नेश आठवें भाव में हो तो २६वें वर्ष में क्षयरोग होता है।।११८।।

व्ययेशे रोगराशिस्थे तदीशे व्ययराशिगे।।११९।।
त्रिंशद्वर्षैकोनवर्षे गुल्मरोगं विनिर्दिशेत्।

व्ययेश छठे भाव में हो और षष्ठेश बारहवें भाव में हो तो ३०वें वा २९वें वर्ष में गुल्मरोग होता है।।११९।।

रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना संयुते यदि।।१२०।।
पञ्चपञ्चाशताब्देषु रक्तकुष्ठं विनिर्दिशेत्।

छठे भाव में शनि से युत चंद्रमा हो तो ५५वें वर्ष में रक्तकुष्ठ होता है।।१२०।।

लग्नेशे लग्नराशिस्थे मन्दे शत्रुसमन्विते।।१२१।।
एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगार्दितो भवेत्।

लग्नेश लग्न में हो और शनि छठे भाव में हो तो ५९वें वर्ष में वात-रोग होता है।।१२१।।

रन्ध्रेशे रिपुराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंस्थिते।।१२२।।
चन्द्रे षष्ठेशसंयुक्ते वसुवर्षे मृगाद्भयम्।

अष्टमेश छठे भाव में हो और व्ययेश लग्न में हो, चन्द्रमा षष्ठेश से युत हो तो ८वें वर्ष में मृग से भय होता है।।१२२।।

षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनौ।।१२३।।
बालस्य जन्मतो विज्ञ आद्ये चैव द्वितीयके।
वत्सरेऽग्निभयं तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक्।।१२४।।

छठे, आठवें भाव में राहु हो, उससे आठवें भाव में शनि हो तो, बालक को १, २ वर्ष में अग्नि का भय और ३ वर्ष में पक्षि का भय होता है।।१२३।।

षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्व्यये चन्द्रसंयुते।
पञ्चमे नवमेऽब्दे च जलभीतिं विनिर्दिशेत्।।१२५।।

६, ८ भाव में सूर्य हो, उससे बारहवें चन्द्रमा हो तो ५, ९ वर्ष में जल से भय होता है।।१२४।।

अष्टमे मन्दसंयुक्ते रन्ध्राद्वे द्वादशे कुजः।
त्रिंशांके च दशांके च स्फोटकादि विनिर्दिशेत्।।१२६।।

आठवें भाव में शनि हो, उससे बारहवें भाव में भौम हो तो ३०वें वा १० वें वर्ष में चेचक आदि का भय होता है।।१२६।।

रन्ध्रेशे राहुसंयुक्ते तदंशे रन्ध्रकोणगे।
द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे ग्रन्थिमेहादिपीडनम्।।१२७।।

अष्टमेश राहु से युत होकर अपने ही अंश में आठवें ५/९ भाव में हो तो २२वें, १८वें वर्ष में गठिया, प्रमेह आदि से पीड़ा होती है।।१२७।।

लाभेशे रिपुभावस्थे तदीशे लाभराशिगे।
एकत्रिंशदेकचत्वारि शत्रुमूलाद्धनक्षयः।।१२८।।

लाभेश छठे भाव में हो और षष्ठेश लाभ भाव में होतो ३१वें, ४१वें वर्ष में शत्रु द्वारा द्रव्य का व्यय होता है।।१२८।।

सुतेशे रिपुभावस्थे षष्ठेशे गुरुसंयुते।
व्ययेशे लग्नभावस्थे तस्य पुत्रो रिपुर्भवेत्।।१२९।।

पंचमेश छठे भाव में हो, षष्ठेश गुरु से युत हो और व्ययेश लग्न में हो तो उसका पुत्र शत्रु होता है।।१२९।।

लग्नेशे षष्ठराशिस्थे तदीशे षष्ठराशिगे।
दशमैकोनविंशे च शुनकाद्भीतिरुच्यते।।१३०।।

लग्नेश छठे भाव में हो, षष्ठेश षष्ठ भाव में हो तो १०वें, १९वें वर्ष में कुत्ता से भय होता है।।१३०।।

अथ सप्तमभावफलम्—

कलत्रपो विनास्वर्क्षषडादित्रयसंस्थितः।
रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुङ्गादिकं विना।।१३१।।

सप्तमेश यदि अपनी राशि से भिन्न राशि में ६।८।१२ भाव में नीचादि राशि में हो तो स्त्री रोगिणी होती है।।१३१।।

सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीवकामी भवेन्नरः।
यत्र कुत्र स्थिते पापयुते स्त्रीमरणं भवेत्।।१३२।।

सातवें स्थान में शुक्र हो तो पुरुष अत्यंत कामी होता है। कहीं किसी भाव में शुक्र पापग्रह से युत हो तो स्त्री की मृत्यु होती है।।१३२।।

दाराधिपः पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोऽपि वा पूर्णबलः प्रसन्नः।
सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोग्यं बहुधान्ययुक्तः।।

यदि सप्तमेश शुभग्रह से युत-दृष्ट हो, पूर्ण बलवान् हो, असांगत आदि न हो तो पुरुष भाग्यवान्, गुणी, दाता, धन-धान्य से युक्त होता है।।१३३।।

कलत्रेशेऽस्तनीचशत्रुराशिगतेष्वपि ।
बहुभार्यान्तरं विद्याद्रोगिणीं च विशेषतः।।१३४।।

सप्तमेश अस्तंगत हो, नीचराशि में हो, शत्रुराशि में हो तो अनेक स्त्री रोगिणी होती है।।१३४।।

परमोच्चगते सप्ताधिनाथे मन्दराशौ शुभखेचरेण दृष्टे।
अथवा भृगुसदने तुंगे बहुभार्या प्रवदन्ति बुद्धिमन्तः।।१३५।।

सप्तमेश परमोच्च में होकर शनि की राशि में शुभग्रह से देखा जाता हो अथवा शुक्र की राशि में उच्च का हो तो अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१३५।।

वन्ध्यासंगो भवेद्भानौ चन्द्रे राशिसमस्त्रियः।
कुजे रजस्वलासंगो वन्ध्यासंगश्च कीर्त्तितः।।१३६।।

सातवें सूर्य हो तो विधवा से संबंध होता है। चंद्रमा हो तो सप्तमस्थ राशि की जाति से, भौम हो तो रजस्वला और वंध्या से।।१३६।।

बुधे वेश्या च हीना च वणिक् स्त्री वा प्रकीर्त्तितः।
गुरोर्ब्राह्मणभार्या स्याद्गर्भिणीसङ्ग एव च।।१३७।।

बुध हो तो वेश्या, हीना या बनिया की स्त्री से, गुरु हो तो ब्राह्मणी से वा गर्भिणी से।।१३७।।

हीना च पुष्पिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरैः।
कुजेऽथ सुस्तनी मन्दे व्याधिदौर्बल्यसंयुता।।१३८।।
कटिनोर्ध्वकुचार्ये च शुक्रे स्थूलोत्तमस्तनी।

शनि, राहु, केतु हों तो नीचजाति ओर रजोधर्मवती से सम्पर्क होता है। सप्तम में भौम हो तो अच्छे स्तनोंवाली, शनि हो तो रोगिणी, दुर्बल, भौम-गुरु हों तो कठिन ऊँचे कुचों वाली, शुक्र हो तो मोटे उन्नत कुचों वाली स्त्री होती है।।१३८।।

पापे द्वादशकामस्थे क्षीणचन्द्रस्तु पञ्चमे।
जातश्च भार्यावश्यः स्यादिति जातिविरोधकृत्।।१३९।।

१२वें, ७वें भाव में पापग्रह हों और क्षीण चंद्रमा पाँचवें भाव में हो तो पुरुष स्त्री के वश में होता है और जाति से विरोध करने वाला होता है।।१३९।।

जामित्रे मन्दभौमे च तदीशे मन्दभूमिगे।।१४०।।
वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः।
भौमांशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽथवा।।१४१।।
भौमयुक्ते च दृष्टे वा भगचुम्बनतत्परः।

सातवें भाव में शनि-भौम हों अथवा सप्तमेश शनि के गृह में हो तो उसकी स्त्री वेश्या या जारिणी होती है। यदि शुक्र-भौम के नवांश में हो वा भौम की राशि में हो अथवा भौम से युत वा दृष्ट हो तो पुरुष भगचुम्बन करने वाला होता है।।१४१।।

मन्दांशकगते शुक्रे मन्दक्षेत्रगतेऽपि वा।।१४२।।
मन्दयुक्ते च दृष्टे च शिश्नचुम्बनतत्परः।

शुक्र शनि के नवांश में अथवा शनि की राशि में हो, शनि से युत वा दृष्ट हो तो शिश्न (लिंग) का चुम्बन करने वाला होता है।।१४२।।

दारेशे स्वोच्चराशिस्थे दारे शुभसमन्विते।
दारे लग्नेशसंयुक्ते सत्कलत्रसमन्वितः।।१४३।।

सप्तमेश अपनी उच्चराशि में हो और सप्तम में शुभग्रह हों तथा लग्नेश भी सातवें हो तो अच्छी स्त्री से युक्त होता है।।१४३।।

कलत्रनाथे रिपुनीचसंस्थे मूढोऽथवा पापनिरीक्षिते वा।
कलत्रभे पापयुते च दृष्टे कलत्रहानिं प्रवदन्ति सन्तः।।१४४।।

सप्तमेश शत्रु राशि में वा अपनी नीचराशि में हो अथवा अस्तंगत हो, पापग्रह से युत वा दृष्ट हो और सप्तम भाव पापयुक्त वा पापदृष्ट हो तो स्त्री की हानि होती है।।१४४।।

षष्ठाष्टमव्ययस्थे चेन्मदेशो दुर्बलो यदि।
नीचराशिगतो वापि दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१४५।।

सप्तमेश दुर्बल होकर ६/८/१२वें भाव मे हो वा नीचराशि में हो तो स्त्री का नाश होता है।।१४५।।

कलत्रस्थानगे चन्द्रे तदीशे व्ययराशिगे।
कारको बलहीनश्च दारसौख्यं न विद्यते।।१४६।।

सप्तम भाव में चंद्रमा हो और सप्तमेश १२वें भाव में हो और कारक निर्बल हो तो स्त्री का सुख नहीं होता है।।१४६।।

भार्याधिपे नीचगृहे च पापे पापर्क्षगे वा बहुपापयुक्ते।
क्लीबे ग्रहे सप्तमराशिसंस्थे तस्योदयांशे द्विकलत्रसिद्धिः।।

सप्तमेश नीचराशि में हो और पापग्रह हो, पापग्रह की राशि में हो वा पापग्रह से युत हो और नपुंसक ग्रह सातवें भाव में हो वा नपुंसक की राशि सातवें भाव में हो तो २ स्त्रियाँ होती हैं।।१४७।।

कलत्रस्थानगे भौमे शुक्रे जामित्रगे शनौ।
लग्नेशे रन्ध्रराशिस्थे कलत्रत्रयवान् भवेत्।।१४८।।

सातवें भाव में भौम, शुक्र, शनि हों और लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३ स्त्रियाँ होती हैं।।१४८।।

द्विस्वभावगते शुक्रे स्वोच्चे तद्राशिनायके।
दारेशे बलसंयुक्ते बहुदारसमन्वितः।।१४९।।

शुक्र द्विस्वभाव राशि में हो, द्विस्वभाव राशि का स्वामी अपने उच्च में हो और सप्तमेश बली हो तो अनेक स्त्रियाँ होती हैं।।१४९।।

विवाहसमयमाह—

दारेशे शुभराशिस्थे स्वोच्चस्वर्क्षगतो भृगुः।
पञ्चमे नवमेऽब्दे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५०।।

सप्तमेश शुभग्रह की राशि में हो, शुक्र अपने उच्च या अपनी राशि में हो तो पाँचवें या नवें वर्ष में विवाह होता है।।१५०।।

दारस्थानगते सूर्ये तदीशे भृगुसंयुते।
सप्तमैकादशे वर्षे विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५१।।

सप्तम भाव में सूर्य हो, सप्तमेश शुक्र से युत हो तो ७वें या १२वें वर्ष में विवाह होता है।।१५१।।

कुटुम्बस्थानगे शुक्रे दारेशे लाभराशिगे।
दशमे षोडशाब्दे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५२।।

दूसरे भाव में शुक्र हो और सप्तमेश ११वें भाव में हो तो १०वें या १६वें वर्ष में विवाह होता है।।१५२।।

लग्नकेन्द्रगते शुक्रे लग्नेशे मन्दराशिगे।
वत्सरैकादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५३।।

लग्न वा केन्द्र में शुक्र हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो ११वें वर्ष में विवाह होता है।।१५३।।

लग्नात्केन्द्रगते शुक्रे तस्मात्कामगते शनौ।
द्वादशैकोनविंशे च विवाहः प्रायशो भवेत्।।१५४।।

लग्न से केन्द्र में शुक्र हो, उससे सातवें भाव में शनि हो तो १२वें वा १९वें वर्ष में विवाह होता है।।१५४।।

चन्द्राज्जामित्रगे शुक्रे शुक्राज्जामित्रगे शनौ।
वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५५।।

चन्द्रमा से ७वें भाव में शुक्र हो और शुक्र से ७वें भाव में शनि हो तो १८वें वर्ष में प्रायः विवाह होता है।।१५५।।

धनेशे लाभराशिस्थे लग्नेशे कर्मराशिभे।
अब्दे पञ्चदशे जाते विवाहं लभते नरः।।१५६।।

द्वितीयेश लाभभाव में हो और लग्नेश १०वें भाव में हो तो १५वें वर्ष में विवाह होता है।।१५६।।

धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे धनराशिगे।
अब्दत्रयोदशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः।।१५७।।

धनेश (द्वितीयेश) लाभभाव में और लाभेश (११ भाव का स्वामी) धन भाव में हो तो १३वें वर्ष में विवाह होता है।।१५७।।

रन्ध्राज्जामित्रगे शुक्रे तदीशे भौमसंयुते।
द्वाविंशे सप्तविंशाब्दे विवाहो लभते नरः।।१५८।।

अष्टमभाव से सातवें भाव में शुक्र हो और सप्तमेश भौम से युत हो तो २२वें या २७वें वर्ष में विवाह होता है।।१५८।।

दारांशकगते लग्ननाथे दारेश्वरे व्यये।
त्रयोविंशे च षड्विंशे विवाहं लभते नरः।।१५९।।

सप्तम भाव के नवांश में लग्नेश हो और सप्तमेश बारहवें भाव में हो तो २३वें या २६वें वर्ष में विवाह होता है।।१५९।।

रन्ध्रांशे दारराशिस्थे लग्नांशे भृगुसंयुते।
पञ्चविंशे त्रयस्त्रिंशे विवाहं लभते नरः।।१६०।।

अष्टम भाव की नवांश राशि सातवें भाव में हो और लग्न के नवांश में शुक्र युत हो तो २५वें या ३३वें वर्ष में विवाह होता है।।१६०।।

भाग्याद्भाग्यगते शुक्रे तद्व्यये राहुसंयुते।
एकत्रिंशात्त्रयस्त्रिंशे दारलाभं विनिर्दिशेत्।।१६१।।

भाग्यस्थान से भाग्यभाव में शुक्र हो, उससे बारहवें भाव में राहु हो तो ३१वें वा ३३वें वर्ष में विवाह होता है।।१६१।।

भाग्याज्जामित्रगे शुक्रे तद्द्यूने दारनायके।
त्रिंशे वा सप्तत्रिंशाब्दे विवाहं लभते नरः।।१६२।।

भाग्यभाव से ७वें भाव में शुक्र हो, उससे बारहवें भाव में राहु हो तो ३०वें वा ३७वें वर्ष में विवाह होता है।।१६२।।

स्त्रीमृत्युसमयमाह—

दारेशे नीचराशिस्थे शुक्रे रन्ध्रारिसंयुते।
अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे दारनाशनम्।।१६३।।

सप्तमेश अपनी नीच राशि में हो और शुक्र ८, ६ भाव में हो तो १८वें या ३३वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है।।१६३।।

मदेशे नाशराशिस्थे व्ययेशे मदराशिगे।
तस्य चैकोनत्रिंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१६४।।

सप्तमेश ८वें भाव में हो और व्ययेश सातवें भाव में हो तो २९वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है।।१६४।।

कुटुम्बस्थानगे राहुः कलत्रे भौमसंयुते।
पाणिग्रहे विवाहे च सर्पदंष्ट्रे वधूमृतिः।।१६५।।

दूसरे भाव में राहु हो और सातवें भाव में भौम हो तो विवाह के बाद ही साँप के काटने से स्त्री की मृत्यु होती है।।१६५।।

रन्ध्रस्थानगते शुक्रे तदीशे सौरिराशिगे।
द्वादशैकोनविंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१६६।।

आठवें भाव में शुक्र हो और अष्टमेश शनि की राशि में हो तो १२-वें या २९वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।।१६६।।

लग्नेशे नीचराशिस्थे धनेशे निधनं गते।
त्रयोदशे तु सम्प्राप्ते कलत्रस्य मृतिं वदेत्।।१६७।।

लग्नेश अपनी नीचराशि में हो और धनेश आठवें भाव में हो तो १३वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।।१६७।।

शुक्राज्जामित्रगे चन्द्रे चन्द्राज्जामित्रगे बुधे।
रन्ध्रेशे सुतभावस्थे प्रथमं दशमाब्दिकम्।।१६८।।
द्वाविंशे च द्वितीयं च त्रयस्त्रिंशं तृतीयकम्।
विवाहं लभते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा।।१६९।।

शुक्र से सातवें भाव में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवें भाव में बुध हो तथा अष्टमेश पाँचवें भाव में हो तो पहला विवाह १०वें वर्ष में, दूसरा २२वें वर्ष में और तीसरा ३३वें वर्ष में होता है।।१६९।।

अथाष्टमभावफलमाह—

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः।
करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थितः।।१७०।।

अष्टमेश पापग्रह और लग्नेश के साथ आठवें भाव में हो तो जातक अल्पायु होता है।।१७०।।

एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कैर्विचक्षणैः।
कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुषः।।१७१।।

इसी प्रकार तर्क द्वारा शनि और कर्मेश से भी आयु का विचार करना चाहिए।।१७१।।

षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये।
लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति।।१७२।।

षष्ठेश ६ या १२ भाव में हो और व्ययेश ६ या १२ भाव में हो अथवा लग्न वा आठवें भाव में हो तो दीर्घायु होता है।।१७२।।

स्वस्थाने स्वांशके वापि मित्रेशे मित्रमन्दिरे।
दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः।।१७३।।

लग्नेश, अष्टमेश और पंचमेश अपने भाव में, अपने नवांश में वा मित्र की राशि में हो तो दीर्घायु होता है।।१७३।।

लग्नाष्टमकर्मेशमन्दाः केन्द्रत्रिकोणयोः।
लाभे वा संस्थितास्तद्वत् दिशेयुर्दीर्घमायुषम्।।१७४।।

लग्नेश, अष्टमेश, कर्मेश और शनि केन्द्र-त्रिकोण और लाभ भाव में हों तो दीर्घायु होती है।।१७४।।

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जिते।
विंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशत्परमायुषम्।।१७५।।

अष्टमेश केन्द्र में हो और लग्नेश निर्बल हो तो २० वर्ष या ३२ वर्ष की आयु होती है।।१७५।।

रन्ध्रेशे नीचराशिस्थे रन्ध्रे पापग्रहैर्युते।
लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम्।।१७६।।

अष्टमेश अपनी नीच राशि में हो, अष्टम भाव में पापग्रह हों और लग्नेश दुर्बल हो तो अल्पायु होती है।।१७६।।

रन्ध्रेशे पापसंयुक्ते रन्ध्रे पापग्रहैर्युते।
व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्रं मृतिर्भवेत्।।१७७।।

अष्टमेश पापग्रह से युक्त हो, आठवें भाव में पापग्रह हों और बारहवें भाव में पापग्रह हों तो उत्पन्न होते ही मृत्यु हो जाती है।।१७७।।

केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टेषु शुभा यदि।
लग्ने रन्ध्रेशनीचस्थे जातः सद्यो मृतो भवेत्।।१७८।।

केन्द्र-त्रिकोण में पापग्रह हों, ६/८ भाव में शुभग्रह हों, लग्न में अष्टमेश अपनी नीचराशि का हो तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।।१७८।।

पञ्चमे पापसंयुक्ते रन्ध्रेशे पापसंयुते।
रन्ध्रे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते।।१७९।।

पाँचवें भाव में पापग्रह हो, अष्टमेश पापग्रह से युत हो और अष्टम भाव पापग्रह से युत हो तो अल्पायु होती है।।१७।।

रन्ध्रेशे रन्ध्रराशिस्थे चन्द्रे पापसमन्विते।
शुभदृग्रहिते विद्वन् मासान्ते च मृतिर्भवेत्।।१८०।।

अष्टमेश आठवें भाव में और चन्द्रमा पापयुक्त हो, शुभग्रह से न देखा जाता हो तो मास के अंत में मृत्यु होती है।।१८०।।

लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चन्द्रे लाभसमन्विते।
रन्ध्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः।।१८१।।

लग्नेश अपनी उच्चराशि में हो और चन्द्रमा लाभभाव में हो तथा आठवें भाव में गुरु हो तो दीर्घायु होती है, इसमें संशय नहीं है।।१८१।।

अथ नवमभावफलमाह—

गुरुस्थानगते जीवे तदीशे केन्द्रसंस्थिते।
लग्नेशे बलसंयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत्।।१८२।।

नवम स्थान में गुरु हो, नवमेश केन्द्र में हो और लग्नेश बलवान् हो तो बड़ा ही भाग्यवान् होता है।।१८२।।

भाग्येशे बलसंयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते।
लग्नात्केन्द्रगते जीवे पितृभाग्यसमन्वितः।।१८३।।

भाग्येश बलवान् हो, भाग्यस्थान में शुक्र हो, लग्न से केन्द्र में गुरु हो तो पिता भाग्यवान् होता है।।१८३।।

भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा सुखे भौमसमन्विते।
भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव च।।१८४।।

भाग्यस्थान से दूसरे वा चौथे स्थान में भौम हो और भाग्येश नीच राशि में हो तो पिता निर्धन होता है।।१८४।।

भाग्येशे परमोच्चस्थे भाग्यांशे जीवसंयुते।
लग्नाच्चतुष्टये शुक्रे पिता दीर्घायुरादिशेत्।।१८५।।

भाग्येश परम-उच्चांश में हो, गुरु भाग्यांश में हो, लग्न से केन्द्र में शुक्र हो तो पिता दीर्घायु होता है।।१८५।।

भाग्येशे केन्द्रभावस्थे गुरुणा च निरीक्षिते।
तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत्।।१८६।।

भाग्येश केन्द्र में गुरु से देखा जाता हो तो उसका पिता वाहन से युक्त राजा वा उसके समान होता है।।१८६।।

भाग्येशे कर्मभावस्थे कर्मेशे भाग्यराशिगे।
शुभयोगे धनाढ्यश्च कीर्तिमांस्तत्पिता भवेत्।।१८७।।

भाग्येश कर्मभाव में हो, कर्मेश भाग्यभाव में हो और शुभग्रह से किसी प्रकार का संपर्क हो तो उसका पिता धनी और कीर्त्तिमान् होता है।।१८७।।

परमोच्चांशगे सूर्ये भाग्येशे लाभसंस्थिते।
धर्मिष्ठो नृपवात्सल्यः पितृभक्तो भवेन्नरः।।१८८।।

सूर्य परम-उच्चांश में हो, भाग्येश लाभभाव में हो तो जातक धर्मिष्ठ, राजा का प्रेमपात्र और पितृभक्त होता है।।१८८।।

लग्नात्त्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते।
गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वितः।।१८९।।
भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे।
द्वात्रिंशात्परतो भाग्यं वाहनं कीर्त्तिसम्भवः।।१९०।।

लग्न से त्रिकोण में सूर्य हो, भाग्येश धनभाव में और धनेश भाग्यभाव में हो तो ३२वें वर्ष के बाद भाग्य, वाहन और कीर्त्ति का लाभ होता है।।१९०।।

पितृवैरयोगः—

लग्नेशे भाग्यराशिस्थे षष्ठेशे भाग्यराशिगे।
अन्योऽन्यवैरं ब्रुवते जनकः कुत्सितो भवेत्।।१९१।।

लग्नेश भाग्यभाव में हो और षष्ठेश भाग्यभाव में हो तो परस्पर पिता-पुत्र में वैर होता हैं तथा पिता निन्दनीय होता है।।१९१।।

भिक्षाशनयोगः—

कर्माधिपेन सहितो विक्रमेशो च निर्बलः।
नीचास्तगो च भाग्येशो योगो भिक्षाशनप्रदः।।१९२।।

यदि निर्बल तृतीयेश कर्मेश से युक्त हो और भाग्येश नीच वा अस्त में हो तो जातक भिक्षा से उदरपूर्त्ति करने वाला होता है।।१९२।।

पितृमरणयोगमाह—

षष्ठाष्टमव्यये भानू रन्ध्रेशे भाग्यसंयुते।
व्ययेशे लग्नराशिस्थे षष्ठेशे पञ्चमे स्थिते।।१९३।।
जातस्य जननात्पूर्वं जनकस्य मृतिं वदेत्।

सूर्य ६/८/१२ भाव में हो और अष्टमेश भाग्य भाव में हो तथा व्ययेश लग्न में और षष्ठेश पाँचवें भाव में हो बालक के जन्म से पूर्व ही पिता की मृत्यु हो जाती है।।१९३।।

रन्ध्रस्थानगते सूर्ये रन्ध्रेशे भाग्यभावगे।।१९४।।
जातस्य प्रथमाब्दे च पितुर्मरणमादिशेत्।

आठवें स्थान में सूर्य हो और अष्टमेश भाग्यभाव में हो तो बालक के पहले वर्ष में ही पिता की मृत्यु होती है।।१९४।।

व्ययेशे भाग्यराशिस्थे नीचांशे भाग्यनायके।
तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत्।।१९५।।

व्ययेश भाग्यभाव में, भाग्येश नीचांश में हो तो तीसरे वा सोलहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९५।।

लग्नेशे नाशराशिस्थे रन्ध्रेशे भानुसंयुते।
द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत्।।१९६।।

लग्नेश आठवें भाव में और अष्टमेश सूर्य से युत हो तो दूसरे वा १२वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९६।।

भाग्याद्रन्ध्रगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ।
राहुणा सहिते सूर्ये चन्द्राद्भाग्यगते शनौ।।१९७।।
सप्तमैकोनविंशाब्दे तातस्य मरणं भवेत्।

भाग्यभाव से आठवें भाव में राहु हो, भाग्य से भाग्यभाव में रवि राहु से युक्त हो और चन्द्रमा से भाग्यभाव में शनि हो तो ७वें या १९वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९७।।

भाग्येशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे भाग्यराशिगे।।१९८।।
चतुश्चत्वारिवर्षाच्च पितुर्मरणमादिशेत्।

भाग्येश १२वें भाव में और व्ययेश भाग्यभाव में हो तो ४४वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९८।।

रव्यंशे च स्थिते चन्द्रे लग्नेशे रन्ध्रसंयुते।।१९९।।
पञ्चत्रिंशैकचत्वारिंशद्वर्षे पितृनाशनम्।

सूर्य के नवांश में चन्द्रमा हो और लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३५वें वा ४१वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।१९९।।

पितृस्थानाधिपे सूर्ये मन्दभौमसमन्विते।।२००।।
पञ्चाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत्।

पितृस्थान (१०) का स्वामी सूर्य हो और शनि-भौम से युत हो तो ५०वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२००।।

भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगस्तमः।।२०१।।
षष्ठे वा पञ्चविंशाब्दे पितुर्मरणमादिशेत्।

भाग्यभाव से ७वें सूर्य हो और भ्रातृभाव से ७वें राहु हो तो छठे वा २५वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२०१।।

रन्ध्रजामित्रगे मन्दे मन्दाज्जामित्रगे रवौ।।२०२।।
त्रिंशैकविंशे षड्विंशे जनकस्य मृतिर्भवेत्।

आठवें से सातवें भाव में शनि हो और शनि से ७वें भाव में राहु हो तो ३०वें, २१वें वा २६वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।।२०२।।

भाग्येशे नीचराशिस्थे तदीशे भाग्यराशिगे।।२०३।।
षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत्।
एवं तातस्य भो विद्वन् फलं ज्ञात्वा समादिशेत्।।२९४।।

भाग्येश नीच राशि में और नीच राशि का स्वामी भाग्यभाव में हो तो २६वें वा ३३वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। इस प्रकार से पिता की मृत्यु का विचार कर आदेश देना चाहिए।।२०३-२०४।।

परमोच्चांशगे शुक्रे भाग्येशेन समन्विते।
भ्रातृस्थाने शनियुते बहुभाग्याधिपो भवेत्।।२०५।।

भाग्येश से युत शुक्र परम-उच्चांश में हो और मातृस्थान में शनि हो तो बड़ा भाग्यवान् होता है।।२०५।।

गुरुणा संयुते भाग्ये तदीशे केन्द्रराशिगे।
विंशद्वर्षात्परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।।२०६।।

भाग्यस्थान में गुरु हो और भाग्येश केंद्र में हो तो २२ वर्ष के बाद भाग्योदय होता है।।२०६।।

परमोच्चांशगे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे।
षट्त्रिंशाच्च परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।।२०७।।

बुध परम उच्चांश में हो और भाग्येश भाग्यभाव में हो तो ३६वें वर्ष के बाद भाग्योदय होता है।।२०७।।

लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नसंयुते।
गुरुणा संयुते द्यूने धनवाहनलाभकृत्।।२०८।।

लग्नेश भाग्यभाव में और भाग्येश लग्न में हो तथा गुरु सप्तम भाव में हो तो धन-वाहन से युक्त होता है।।२०८।।

भाग्यहीनयोगः

भाग्याद्भाग्यगतो राहुर्भाग्येशे निधनं गते।
भाग्येशे नीचराशिस्थे भाग्यहीनो भवेन्नरः।।२०९।।

भाग्यस्थान से नवम भाव में राहु हो तथा भाग्येश अपनी नीच राशि के आठवें भाव में हो तो मनुष्य भाग्यहीन होता है।।२०९।।

भाग्यस्थानगते मन्दे शशिना च समन्विते।
लग्नेशे नीचराशिस्थे भिक्षाशी च नरो भवेत्।।२१०।।

भाग्यस्थान में शनि चन्द्रमा के साथ हो और लग्नेश नीच राशि में हो तो भिक्षा का अन्न खाने वाला होता है।।२१०।।

अथ दशमभावफलमाह—

कर्माधिपो बलोनश्चेत्कर्मवैकल्यमादिशेत्।
सैंहिः केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत्।।२११।।

कर्मेश निर्बल हो तो जातक कर्महीन होता है। राहु केन्द्र-त्रिकोण में हो तो ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ करने वाला होता है।।२११।।

दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते।
दुष्कृतिं लभते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः।।२१२।।

दशम भाव में पापग्रह हो और लाभ भाव में पापग्रह हो तो जातक दुष्कीर्त्ति पाता है।।२१२।।

कर्मेशे नाशराशिस्थे राहुणा संयुतेऽपि च।
जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः।।२१३।।

कर्मेश राहु से संयुक्त होकर आठवें भाव में हो तो मनुष्यों से द्वेष करने वाला, महामूर्ख और दुष्कर्म में प्रवृत होता है।।२१३।।

कर्मेशे द्यूनराशिस्थे मन्दभौमसमन्विते।
द्यूनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोंदरपरायणः।।२१४।।

कर्मेश शनि-भौम से युत होकर सप्तम भाव में हो और सप्तमेश पाप से युत हो तो जातक शिश्न द्वारा उदरपूर्त्ति (जीविका) करने वाला होता है।।२१४।।

तुङ्गराशिं समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसंयुते।
भाग्येशे कर्मराशिस्थे यानैश्वर्यप्रतापवान्।।२१५।।

अपनी उच्चराशि में कर्मेश गुरु से युत हो और भाग्येश कर्मराशि में हो तो जातक मान-ऐश्वर्य से युक्त प्रतापी होता है।।२१५।।

लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते।
तावुभौ केन्द्रगौ वादि सुखजीवनभाग्भवेत्।।२१६।।

लाभेश कर्मराशि में हो और कर्मेश लग्न में हो अथवा दोनों केन्द्र में हों तो सुखी जीवन वाला होता है।।२१६।।

कर्मेशे बलसंयुक्ते मीने गुरुसमन्विते।
वस्त्राभरणसौख्यादि लभते नात्र संशयः।।२१७।।

कर्मेश बलवान् होकर मीनराशि में गुरु से युत हो तो जातक वस्त्र, आभूषण सुख आदि से युक्त होता है।।२१७।।

कर्महीनयोगः—

लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते।
रविपुत्रेण संयुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नरः।।२१८।।

सूर्य लाभभाव में राहु, भौम, शनि से युत हो तो जातक कर्महीन होता है।।२१८।।

शुभकर्मयोगाः—

मीने जीवे भृगुसुते लग्नेशे बलसंयुते।
स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत्।।२१९।।

मीनराशि में गुरु-शुक्र हों, लग्नेश बलवान् हो और चंद्रमा अपनी उच्चराशि में हो तो ज्ञानी और धनी होता है।।२१९।।

कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसंस्थिते।
कर्मराशिस्थिते शुक्रे रत्नवान् स नरो भवेत्।।२२०।।

कर्मेश लाभभाव में और लग्नेश लग्न में तथा शुक्र कर्मभाव में हो तो मनुष्य रत्नों से युक्त होता है।।२२०।।

केन्द्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते।
गुरुणा सहिते दृष्टे स कर्मसहितो भवेत्।।२२१।।

अपनी उच्च राशि में कर्मेश केंद्र-त्रिकोण में और गुरु से युत-दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मश्रेष्ठ होता है।।२२१।।

कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते।
केन्द्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत्।।२२२।।

कर्मेश लग्न में लग्नेश के साथ हो, केन्द्र- त्रिकोण में चंद्रमा हो तो पुरुष सत्कर्म में निरत होता है।।२२२।।

कर्मस्थानगते चन्द्रे तदीशे तत्त्रिकोणगे।
लग्नेशे केन्द्रभावस्थे सत्कीर्त्तिसहितो भवेत्।।२२३।।

कर्मस्थान में चंद्रमा हो और कर्मेश उससे त्रिकोण में हो तथा लग्नेश केंद्र में हो तो कीर्त्ति से युक्त होता है।।२२३।।

लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसंयुते।
देवेन्द्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्त्तिसहितो भवेत्।।२२४।।

लाभेश कर्मभाव में हो और कर्मेश बलवान् हो, गुरु से देखा जाता हो तो सत्कीर्त्ति से युक्त होता है।।२२४।।

कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसंयुते।
लग्नात्पञ्चमगे चन्द्रे ख्यातकीर्त्तिं विनिर्दिशेत्।।२२५।।

कर्मेश भाग्यभाव में और लग्नेश कर्मभाव में हो तथा लग्न से पाँचवें भाव में चंद्रमा हो तो विख्यात कीर्त्तिवाला पुरुष होता है।।२२५।।

अशुभयोगः—

कर्मस्थानगते मन्दे नीचखेचरसंयुते।
कर्मांशे पापसंयुक्ते कर्महीनो भवेन्नरः।।२२६।।

कर्मस्थान में शनि नीचराशिस्थ ग्रह से युत हो और कर्मांश में पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है।।२२६।।

कर्मेशे नाशराशिस्थे कर्मस्थे पापखेचरे।
कर्मभात्कर्मगे पापे कर्मवैकल्यमादिशेत्।।२२७।।

कर्मेश आठवें भाव में हो और कर्मभाव में पापग्रह हो तथा कर्मभाव से कर्मस्थान में पापग्रह हो तो पुरुष कर्महीन होता है।।२२७।।

अथैकादशभावफलमाह—

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयोः।
बहुलाभं तदा कुर्यादुच्चसूर्यांशगोऽपि वा।।२२८।।

लाभेश लाभभाव में वा केंद्र-त्रिकोण में हो वा अपने उच्च में वा सूर्यांश में हो तो भी फल का बहुत लाभ होता है।।२२८।।

लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसंस्थिते।
गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभं विनिर्दिशेत्।।२२९।।

लाभेश धन राशि में हो और धनेश केंद्र में हो तथा गुरु से युत हो तो अधिक लाभ होता है।।२२९।।

लाभेशे लाभभावस्थे शुभग्रहसमन्विते।
षट्त्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक्।।२३०।।

लाभेश लाभभाव में शुभग्रह से युत हो तो ३६वें वर्ष में २ सहस्र निष्क (मोहर) का लाभ होता है।।२३०।।

केन्द्रत्रिकोणगे भावनाथे शुभसमन्विते।
चत्वारिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रार्धं च निष्कभाक्।।२३१।।

लाभेश शुभग्रह से युत होकर केन्द्र-त्रिकोण में हो तो ४०वें वर्ष में पाँच सौ मोहर का लाभ होता है।।२३१।।

लाभस्थाने गुरुयुते धने चन्द्रसमन्विते।
भाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत्।।२३२।।

लाभभाव में गुरु हो और धनस्थान में चंद्रमा हो तथा भाग्यस्थान में शुक्र हो तो ६ हजार मोहर का अधिपति होता है।।२३२।।

लाभाच्च लाभगे जीवे गुरुचन्द्रेण संयुते।
धनधान्याधिपः श्रीमान् रत्नाद्याभरणैर्युतः।।२३३।।

लाभस्थान से लाभ में गुरु चंद्रमा से युत हो तो धन-धान्य का स्वामी, श्रीमान्, रत्न आदि आभूषणों से युक्त होता है।।२३३।।

लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसंयुते।
त्रयस्त्रिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रनिष्कभाग्भवेत्।।२३४।।

लाभेश लग्न में हो और लग्नेश लाभभाव में हो तो ३३वें वर्ष में १ हजार मोहर का लाभ होता है।।२३४।।

धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे।
विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्यं समादिशेत्।।२३५।।

धनेशलाभ भाव में और लाभेश धनभाव में हो तो विवाह के बाद अनेक प्रकार से भाग्योदय होता है।।२३५।।

धैर्येशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसंस्थिते।
भ्रातृभावाद्धनप्राप्तिर्दिव्याभरणसंयुतः।।२३६।।

तृतीय भावेश ११वें भाव में और लाभेश तीसरे भाव में हो तो भाइयों से धन का लाभ होता है।।२३६।।

अथ द्वादशभावाफलम्—

चन्द्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु संस्थितः।
स्वोच्चस्वर्क्षनिजांशे वा लाभधर्मात्मजांशके।
दिव्यागारादिपर्यङ्को दिव्यगन्धैकभोगवान्।।२३७।।
परार्थ्यं रमणो दिव्यवस्त्रमाल्यादिभूषणः।
परार्थ्यसंयुतो वित्तो दिनानि नवतिः प्रभुः।।२३८।।

चंद्रमा व्ययेश होकर ९।११।५वें भाव में हो वा अपनी उच्चराशि, अपनी राशि धनभाव के नवांश में हो अथवा लाभ नवम-पंचम के नवांश में हो तो दिव्य मकान, शय्या, गंध, दूसरे के द्रव्य को भोगने वाला होता है।।२३७-२३८।।

एवं स्वशत्रुनीचांशेऽष्टमांशे वाष्टमे रिपौ।
संस्थितः कुरुते जातं कान्तासुखविवर्जितम्।।२३९।।

इसी प्रकार अपने शत्रु की नीचराशि के नवांश में अष्टमभाव के नवांश में, आठवें या छठे भाव में हो तो जातक को स्त्री का सुख नहीं होता है।।२३९।।

व्ययाधिक्यपरिक्लान्तं दिव्यभोगनिराकृतम्।
स हि केन्द्रत्रिकोणस्थः स्वस्त्रियालङ्कृतः स्वयम्।।२४०।।

और अधिक खर्च से खिन्न होकर दिव्य भोग आदि से रहित होता है। यदि वह केन्द्र-त्रिकोण में हो तो स्त्रीसुख से युक्त होता है।।२४०।।

लग्नस्य पूर्वार्धगतानभोगाः फलं प्रदद्युस्तु प्रत्यृते।
परार्धषट्कोपगताः परोक्षं फलं वदन्तीति बुधाः पुराणाः।।२४१।।

लग्न के पूर्वार्ध (१० से ३ भाव तक) मतांतर से (७।८।९।१०।११।१२) में स्थित ग्रह प्रत्यक्ष में फल देने वाले होते हैं और परार्ध (४।५।६।७।८।९) भाव में मतांतर से (१।२।३।४।५।६) में स्थित ग्रह परोक्ष (अप्रत्यक्ष सूर्य) से फल देने वाले होते हैं।।२४१।।

व्ययस्थानगतो राहुर्भौमार्करविसंयुतः।
तदीशेऽप्यर्कसंयुक्ते नरके पतनं भवेत्।।२४२।।

बारहवें भाव में राहु भौम-सूर्य के साथ हो, व्ययेश भी सूर्य से युक्त हो तो जातक नरक में जाता है।।२४२।।

व्ययस्थानगते सौम्ये तदीशे स्वोच्चराशिगे।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे मोक्षः स्यात्रात्र संशयः।।२४३।।

बारहवें भाव में बुध हो, व्ययेश अपनी उच्च राशि में हो, शुभ ग्रह से युत और दृष्ट हो तो मोक्ष होता है।।२४३।।

व्ययेशे पापसंयुक्ते व्यये पापसमन्विते।
पापग्रहेण सन्दृष्टे देशाद्देशान्तरं गतः।।२४३।।

व्ययेश पापग्रह से युत हो और व्ययभाव में पापग्रह हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो देश-विदेश में जाने वाला होता है।।२४४।।

व्ययेशे शुभराशिस्थे व्ययर्क्षे शुभसंयुते।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे स्वदेशात्सञ्चरो भवेत्।।२४५।।

व्ययेश शुभराशि में हो और व्ययभाव में शुभग्रह हो, शुभग्रह से देखा जाता हो तो अपने देश से अन्य देश को जाने वाला होता है।।२४५।।

व्यये मन्दादिसंयुक्ते भूमिजेन समन्विते।
शुभदृष्टैर्न सम्प्राप्तिः पापमूलाद्धनार्जनम्।।२४६।।

व्ययभाव शनि-भौम से युत हो, शुभग्रह से न देखा जाता हो तो पाप करने से धन की हानि होती है।।२४७।।

लग्नेशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंयुते।
भृगुपुत्रेण संयुक्ते धर्ममूलाद्धनव्ययम्।।२४७।।

लग्नेश बारहवें भाव में हो और व्ययेश लग्न में हो, शुक्र से युत हो तो धर्म करने में धन का व्यय होता है।।२४७।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां द्वादशभावविचारो नाम द्वादशोऽध्यायः।

अथ भावेशफलाध्यायः

अथ लग्नेशभावफलम्—

लग्नेशे लग्नगे पुंसः सुखी भुजपराक्रमी।
मनस्वी चातिचाञ्चल्यो द्विभार्यः परगोऽपि वा।।१।।

लग्नेश लग्न में हो तो जातक सुखी, पराक्रमी, मनस्वी, अत्यंत चंचल, दो स्त्रियों वाला और परस्त्रीगामी भी होता है।।१।।

लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पण्डितो नरः।
सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्युतः।।२।।

लग्नेश धनस्थान में या लाभस्थान में हो तो जातक लाभ से युक्त पंडित, सुशील, धर्मात्मा, ज्ञानी और अनेक स्त्रियों से युक्त होता है।।२।।

लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी।
सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी।।३।।

लग्नेश तीसरे या छठे भाव में हो तो जातक सिंह के समान पराक्रमी, सभी सम्पत्ति से युक्त, मानी, दो स्त्रियों वाला और बुद्धिमान् एवं सुखी होता है।।३।।

लग्नेशे दशमे तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः।
बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौन्दर्यसंयुतः।।४।।

लग्नेश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो पिता-माता के सुख से युक्त, अनेक भाइयों वाला, कामी, गुण-सौंदर्य से युक्त होता है।।४।।

लग्नेशे पञ्चमे दानी सुतसौख्यं च मध्यमम्।
प्रथमापत्यनाशः स्यात्क्रोधी लोभी नृपप्रियः।।५।।

लग्नेश पाँचवें भाव में हो तो जातक दानी, मध्यम संतान सुखवाला, प्रथम संतान से हीन, क्रोधी, लोभी और राज़प्रिय होता है।।५।।

लग्नेशे सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति।
विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोऽपि वा।।६।।

लग्नेश सातवें भाव में हो तो स्त्री का विनाश होता है। वह व्यक्ति विरक्त हो या परदेशी हो, वा दरिद्र हो या राजा होता है।।६।।

लग्नेशे व्ययगेऽष्टस्थे सिद्धविद्याविशारदः।
द्यूती चौरो महाक्रोधी परनार्यतिभोगकृत्।।७।।

लग्नेश १२वें या ८वें भाव में हो तो जातक जूआ खेलने वाला, चोर, क्रोधी और परस्त्रीगामी होता है।।८।।

लग्नेशे नवमे पुंसो भाग्यवान् जनवल्लभः।
विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युतः।।८।।

लग्नेश नवम भाव में हो तो पुरुष भाग्यवान्, जनप्रिय, विष्णुभक्त, पंडित, वक्ता और पुत्र-स्त्री से युक्त होता है।।८।।

अथ धनेशभावफलम्—

धनेशे च तनौ पुत्री स्वकुटुम्बस्य कण्टकः।
धनवान्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः।।९।।

धनेश लग्न में हो तो जातक पुत्रवान्, अपने कुटुम्ब का कंटक, धनी, निष्ठुर, कामी और दूसरे के कार्य में तत्पर होता है।।९।।

धनेशे धनगे मर्त्यः धनवान् गर्वसंयुतः।
भार्याद्वयं त्रयं वापि पुत्रहीनः प्रजायते।।१०।।

धनेश धनभाव में हो जातक धनी, धर्म से युक्त होता है। उसे २ या ३ स्त्रियाँ होती है और पुत्रहीन होता है।।१०।।

धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी।
परदाराभिमानी च लोभी वा देवनिन्दकः।।११।।

धनेश तीसरे या चौथे भाव में हो तो जातक पराक्रमी, बुद्धिमान्, गुणी, परायी स्त्री का अभिमान करने वाला, लोभी या देवनिंदक होता है।।११।।

धनेशे सुतभावस्थे पुत्रतो धनवान् भवेत्।
कृपणो दुःखभाग्जातो यशस्वी पुत्रवान् भवेत्।।१२।।

धनेश पाँचवें भाव में हो तो पुत्र से धनी, कृपण, दुःख भोगने वाला, यशस्वी और पुत्रवान् होता है।।१२।।

धनेशे शत्रुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम्।
शत्रुतो वित्तनाशः स्याज्जंघोर्वोर्भवेच्च रुक्।।१३।।

धनेश छठे भाव में हो तो शत्रु से धन प्राप्त करने वाला, पुत्र द्वारा धन नाश वाला और जंघा तथा उरु प्रदेश में रोग युक्त होता है।।११।।

धनेशे सप्तमे वैद्यः परजायाभिगामिनः।
जाया तस्य भवेद्वेश्या माता च व्यभिचारिणी।।१४।।

धनेश सातवें भाव में हो तो जातक वैद्य होता है, परस्त्रीगामी होता है। उसकी स्त्री वेश्या और माता व्यभिचारिणी होती है।।१४।।

धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद् ध्रुवम्।
जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं न हि।।१५।।

धनेश आठवें भाव में हो तो जातक को भूमिगत द्रव्य का लाभ, स्त्री का सुख अल्प और ज्येष्ठ भाई का सुख नहीं होता है।।१५।।

धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चाद्यावदायुः समाप्यते।।१६।।

धनेश नवम भाव वा लाभभाव में हो तो जातक धनी, उद्यमी, विद्वान् होता है। बाल्य अवस्था में रोगी और पीछे आयु पर्यंत सुखी होता है।।१६।।

धनेशो दशमे यस्य कामी मानी च पण्डितः।
बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनो प्रजायते ।।१७।।

धनेश दशम भाव में हो तो जातक कामी, मानी, पंडित, अनेक स्त्री तथा धन से युक्त और पुत्रहीन होता है।।१७।।

धनेशे व्ययगे ज्ञानी साहसी धनवर्जितः।
जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुखं न हि।।१८।।

धनेश बारहवें भाव में हो तो जातक ज्ञानी, साहसी, धनहीन, राजगृह से जीविकावाला और ज्येष्ठ पुत्र के सुख से हीन होता है।।१८।।

अथ सहजेशभावफलम्—

तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान्।
मूर्खः कृशो महारोगी साहसी परसेवकः।।१९।।

तृतीयेश लग्न या लाभ भाव में हो तो जातक अपनी कमाई से धनी, मूर्ख, कृश, महारोगी अपितु साहसी, दूसरे का सेवक होता है।।१९।।

गुदाभञ्जनिकः स्थूलः परभार्याधने रुचिः।
स्वल्पारम्भी सुखी न स्यात्तृतीयेशे धनं गते।।२०।।

तृतीयेश दूसरे भाव में हो तो जातक स्त्री के स्वभाव का, स्थूल, परस्त्री के धन से कार्य आरम्भ करने वाला और सुखी नहीं होता है।।२०।।

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसंयुतः।
धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।२१।।

तृतीयेश तीसरे भाव में हो तो जातक पराक्रमी, पुत्रवान्, धनी; प्रसन्न और अद्भुत् सुख को भोगने वाला होता है।।२१।।

तृतीयेशे सुखे कर्मे पञ्चमे वा सुखी सदा।
अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान् भवेत्।।२२।।

तृतीयेश चौथे, दसवें और पाँचवें भाव में हो तो जातक सदा सुखी, अतिक्रूर स्त्री से युक्त, धनी और बुद्धिमान् होता है।।२२।।

तृतीयेशो रिपौ यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनी।
मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति।।२३।।

तृतीयेश छठे भाव में हो तो जातक का भाई शत्रु होता है। जातक स्वयं महाधनी, मामा के सुख से हीन और मामी से संभोग की इच्छावाला होता है।।२३।।

तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत्।
चोरो वा परगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने।।२४।।

तृतीयेश आठवें या सातवें भाव में हो तो जातक की मृत्यु राजद्वार में होती है, चोर, परस्त्रीगामी और बाल्य समय में कष्ट भोगने वाला होता है।।२४।।

तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत्।
पिता तस्य महाचोरः सुखेऽपि दुःखदर्शकः।।२५।।

तृतीयेश बारहवें या भाग्यभाव में हो तो जातक का भाग्योदय स्त्री के द्वारा होता है और उसका पिता बड़ा चोर होता है।।२५।।

अथ सुखेशभावफलम्—

सुखेशे लग्नगे वापि पितृपुत्रौ च स्नेहलौ।
पितृपक्षवैरिकलितं पितृनाम्ना प्रसिद्धं च।।२६।।

सुखेश लग्न में हो तो पिता-पुत्र में स्नेह होता है, चाचा आदि से वैरभाव और पिता के नाम से प्रसिद्धि होती है।।२६।।

सर्वसम्पद्युतो मानी साहसी कुहकान्वितः।
कुटुम्बसंयुतो भोगी सुखेशे च धनस्थिते।।२७।।

सुखेश धनभाव में हो तो जातक सभी सम्पत्तियों से युक्त, मानी, साहसी, इन्द्रजाल करने वाला, कुटुम्ब से युक्त और भोगी होता है।।२७।।

सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः।
उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान्।।२८।।

सुखेश तीसरे या ग्यारहवें भाव में हो तो जातक नित्यरोगी, उदार, गुणी, दाता और अपने परिश्रम से द्रव्य पैदा करने वाला होता है।।२८।।

तुर्येशे तुर्यगे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः।
चतुरः शीलवान् मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी।।२९।।

सुखेश सुख भाव में हो तो मंत्री सभी प्रकार की संपत्ति से युक्त, चतुर, शीलवान्, मानी, धनी और स्त्रीप्रिय तथा सुखी होता है।।२९।।

तुर्येशे पञ्चमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः।
विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान्।।३०।।

सुखेश पाँचवें वा नवम भाव में हो तो जातक सुखी, सर्वजनप्रिय, विष्णुभक्त, मानी और अपने पराक्रम से द्रव्य पैदा करने वाला होता है।।३०।।

सुखेशे शत्रुगेहस्थे सदा स्याद्बहुयातृकः।
क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्व्यपि।।३१।।

सुखेश छठे भाव में हो तो जातक हर समय परदेश में रहनेवाला, क्रोधी, चोर, घात करने वाला, दुष्ट और मनस्वी होता है।।३१।।

सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः।
पित्रार्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत्।।३२।।

सुखेश सातवें भाव में हो तो जातक अनेक विद्याओं से युक्त, पिता के धन को त्यागने वाला, सभा में मूक होता है।।३२।।

सुखेशे व्ययरन्ध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः।
पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोऽपि वा।।३३।।

सुखेश बारहवें या ८वें स्थान में हो तो जातक सुखहीन होता है और उसे पिता का अल्पसुख नपुंसक अथवा जार से उत्पन्न हुआ होता है।।३३।।

सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः।
रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।३४।।

सुखेश कर्मभाव में हो तो जातक राजमान्य, रसायन क्रिया को जानने वाला, प्रसन्न और सुख को भोगने वाला होता है।।३४।।

अथ सुतेशभावफलम्—

सुतेशे लग्नसहजे मायावी पिंशुनो महान्।
लोष्ठं दत्त्वान्नैव काचिद्द्रव्यस्य का कथा।।३५।।

पंचमेश लग्न और तीसरे भाव में हो तो जातक मायावी और कृपण होता है।।३५।।

सुतेशे चायुधि धने बहुपुत्री न संशयः।
कासश्वाससुखी न स्यात्क्रोधयुक्तो धनान्वितः।।३६।।

पंचमेश ८वें वा रसरे भाव में हो तो जातक अनेक पुत्रों से युक्त, कास-श्वासरोगी, क्रोधी और धनी होता है।।३६।।

सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुखं भवेत्।
लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः।।३७।।

सुतेश ४ भाव में हो तो जातक को माता का सुख अधिक, लक्ष्मीयुक्त, बुद्धिमान्, मंत्री वा गुरु होता है। मुहूर्त्त को जानने वाला, टेढ़ा बोलने वाला, धनी और बुद्धिमान् होता है।।३७।।

सुतेशे पञ्चमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति।
क्षणिकः क्रूरभाषी च धनिको मतिमान्भवेत्।।३८।।

सुतेश ५वें भाव में हो तो जातक का पुत्र नहीं जीता है।।३८।।

सुतेशे षष्ठरिःफस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात्।
मृतापत्यो दत्तपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत्।।३९।।

सुतेश छठे, बारहवें भाव में हो तो जातक को पुत्र से शत्रुता होती है और उसके पुत्र मर जाते हैं। उसे दत्तक पुत्र या क्रीत पुत्र होता है।।३९।।

सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः।
तुंगबष्टिस्तनुस्वामी भक्तियुक्तैकचेतसा।।४०।।

सुतेश ७वें भाव में हो तो जातक मानी, सभी धर्मों से युक्त, ऊँचे नाक वाला और भक्ति युक्त होता है।।४०।।

सुतेशे नवमे कर्मे पुत्रो भूपसमो भवेत्।
अथवा ग्रन्थकर्ता च विख्यातः कुलदीपकः।।४१।।

सुतेश ९वें या १०वें भाव में हो तो जातक का पुत्र राजा के समान होता है अथवा प्रसिद्ध ग्रंथकर्त्ता होता है।।४१।।

सुतेशे लाभभवने पण्डितो जनवल्लभः।
ग्रन्थकर्त्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः।।४२।।

सुतेश लाभभाव में हो तो जातक पंडित, जनप्रिय, ग्रंथकर्त्ता, दक्ष, अनेक पुत्र और धन से युक्त होता है।।४२।।

अथ षष्ठेशभावफलम्—

षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्त्तिमान् भवेत्।
धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जितः।।४३।।

षष्ठेश सातवें, ग्यारहवें या लग्न में हो तो जातक कीर्त्तिमान्, धनवान्, गुणी, मानी, साहसी और पुत्रहीन होता है।।४३।।

षष्ठेशे कर्मवित्तस्थे साहसी कुलविश्रुतः।
परदेशे सुखी वक्ता स्वकर्मे चैकनिष्ठिकः।।४४।।

षष्ठेश दशम वा दूसरे भाव में हो तो जातक साहसी, कुल में विख्यात, परदेशी, वक्ता और अपने कर्म में निष्णात होता है।।४४।।

षष्ठेशे सहजे तुर्ये क्रोधेनारक्तलोचनः।
मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽतिवित्तवान्।।४५।।

षष्ठेश तीसरे या चौथे भाव में हो जातक का नेत्र क्रोध से रक्तवर्ण का, मनस्वी, कृपण, द्वेष करने वाला, अस्थिरचित्त और अत्यंत धनी होता है।।४५।।

षष्ठेशे पञ्चमे यस्य चलमित्रधनादिकम्।
दयायुक्तः सुखी सौम्यः स्वकार्ये चतुरो महान्।।४६।।

पाँचवें भाव में हो तो जातक के मित्र तथा धन चंचल होते हैं। दयावान्, सुखी, सौम्यमूर्त्ति और अपने कार्य में अत्यंत चतुर होता है।।४६।।

षष्ठेशे रिपुभावस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत्।
परजातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम्।।४७।।

षष्ठेश छठे भाव में हो जातक के जातिवाले ही उसके शत्रु होते हैं, परजाति के लोग मित्र होते हैं और हमेशा सवारी से चलता है।।४७।।

षष्ठेशेऽष्टमरिःफस्थे रोगी शत्रुर्मनीषिणाम्।
परजायाभिगामी च जीवहिंसासु तत्परः।।४८।।

षष्ठेश ८वें या १२वें भाव में हो तो जातक रोगी और अच्छे लोगों का शत्रु, परस्त्रीगामी और हिंसक होता है।।४८।।

षष्ठेशो नवमे यस्य काष्ठपाषाणविक्रयी।
व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्वृद्धिर्भवेत्किल।।४९।।

षष्ठेश नवम स्थान में हो तो जातक लकड़ी, पत्थर आदि बेचने वाला, व्यापार में कभी हानि और कभी वृद्धिवाला होता है।।४९।।

अथ सप्तमेशभावफलम्—

सप्तमेशे तनौ चास्ते परजायासु लम्पटः।
दुष्टो विचक्षणो धीरो वातरुक् स्थीयते हृदि।।५०।।

सप्तमेश लग्न या सप्तम में हो तो जातक परस्त्री में आसक्त, दुष्ट, पंडित, वातरोगी होता है।।५०।।

द्यूनेशे नवमे वित्ते नानास्त्रीभिः समागमः।
आरम्भी दीर्घसूत्री च स्त्रीषु चित्तं हि केवलम्।।५१।।

सप्तमेश नवम और दूसरे भाव में हो तो अनेक स्त्रियों में आसक्त, कार्य को आरंभ करने वाला, दीर्घसूत्री और केवल स्त्री में चित्त को लगाने वाला होता है।।५१।।

द्यूनेशे सहजे लाभे मृतपुत्रः प्रजायते।
कदाचिज्जीवति सुता यत्नात्पुत्रोऽपि जायते।।५२।।

सप्तमेश ३रे या ११वें भाव में हो तो जातक के संतान नहीं जीते हैं। कदाचित् कन्या जीती है, यत्न करने से पुत्र भी जीता है।।५२।।

द्यूनेशे दशमे तुर्ये नास्य जाया पतिव्रता।
धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः केवलं दन्तरोगवान्।।५३।।

सप्तमेश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो जातक की स्त्री पतिव्रता नहीं होती है। जातक सर्वगुणसम्पन्न, मानी और सर्व सम्पत्तिमान् होता है।।५३।।

सर्वगुणयुतो मानी भवेत्सर्वधनाधिपः।
सदैव हर्षसंयुक्तः सप्तमेशे सुते स्थिते।।५४।।

सप्तमेश पाँचवें भाव में हो तो जातक सभी गुणों से युक्त, मानी, सभी प्रकार के धनों से युक्त, सदैव प्रसन्न रहने वाला होता है।।५४।।

जायेशे चाष्टमे षष्ठे रोगिणी कामिनी लभेत्।
क्रोधयुक्तो भवेद्वापि न सुखं लभते क्वचित्।।५५।।

सप्तमेश ६ या ८ भाव में हो तो जातक की स्त्री रोगिणी होती है। जातक क्रोधी होता है और सुखी नहीं रहता है।।५५।।

द्वादशस्थे सप्तमेशे दरिद्रः कृपणो महान्।
चारुकन्या भवेद्भार्या वस्त्राज्जीवी च निर्धनी।।५६।।

सप्तमेश १२वें भाव में हो तो जातक दरिद्र, अत्यंत कृपण, स्त्री सुंदरी, और वस्त्र से जीविका करने वाला निर्धन होता है।।५६।।

अथाष्टमेशभावफलम्—

अष्टमेशे तनौ कामे भार्यायुग्मं समादिशेत्।
विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी प्रजायते।।५७।।

अष्टमेश लग्न या सातवें भाव में हो तो जातक की दो स्त्रियाँ होती हैं। सदा विष्णु का द्रोह करने वाला और व्रणरोगी होता है।।५७।।

धनं तस्य भवेत्स्वल्पं गतं वित्तं न लभ्यते।
अष्टमेशे धने बाहुबलहीनः प्रजायते।।५८।।

अष्टमेश धनस्थान में हो तो जातक अल्प धन वाला, बाहुबल से हीन और नष्ट हुए द्रव्य को न पाने वाला होता है।।५८।।

अष्टमेशे तृतीये चेत् भ्रातृहीनो भवेन्नरः।
बन्धुद्वेषी सुहृद्द्वेषी व्यङ्गो दुर्बलदेहभाक्।।५९।।

अष्टमेश तीसरे भाव में हो तो जातक भ्रातृहीन, बंधुओं से द्वेष करने वाला, अंगहीन और दुर्बल शरीर का होता है।।५९।।

अष्टमेशे सुखे कर्मपिशुनो बन्धुवर्जितः।
मातापित्रोर्भवेन्मृत्युः स्वल्पकालेन भीतियुक्।।६०।।

अष्टमेश चौथे भाव में हो तो जातक कर्महीन, बंधुहीन और थोड़ी अवस्था में ही मातृ-पितृविहीन होता है।।६०।।

अष्टमेशे सुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते।
द्रव्यं न स्थीयते गेहे स्थिरबुद्धिर्भवेज्जनः।।६१।।

अष्टमेश पाँचवें या ग्यारहवें भाव में हो तो जातक बुद्धिहीन, द्रव्यहीन और मूर्ख होता है।।६१।।

अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्यं रोगी प्रजायते।
जलसर्पादिकाद्घातो भवेत्तस्य च शैशवे।।६२।।

अष्टमेश छठे या बारहवें भाव में हो तो जातक सदा रोगी, शैशव अवस्था में जल या सर्प भय से पीड़ित होता है।।६२।।

द्यूती चौरोऽन्यथावादी गुरुनिन्दासु तत्परः।
अष्टमेशेऽष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत्।।६३।।

अष्टमेश अष्टम भाव में हो तो जातक की स्त्री दूसरे में आसक्त होती है और वह जुआड़ी, चोर, असत्य बोलने वाला और गुरु की निंदा करने वाला होता है।।६३।।

अष्टमेशे तपः स्थाने महापापी च नास्तिकः।
सुतहा ह्यथवा वन्ध्या परभार्याधने रुचिः।।६४।।

अष्टमेश नवम भाव में हो तो जातक महापापी, नास्तिक, पुत्रनाशक, वा वंध्या और परस्त्री एवं परधनलोलुप होता है।।६४।।

अष्टमेशे स्थिते माने नीचकर्मप्रवृत्तिवान्।
प्रेष्यो च जारजो क्रूरो मातृहीनो भवेन्नरः।।६५।।

अष्टमेश दशमभाव में हो तो जातक नीच कर्म में रत, दासकर्म करने वाला, जार से उत्पन्न, क्रूर और मातृसुख से हीन होता है।।६५।।

अथ भाग्येशभावफलम्—

भाग्येशे च मदे कल्पे गुणवान्कीर्त्तिमान्भवेत्।
कदाचित्र भवेत्सिद्धं यत्कार्यं कर्त्तुमिच्छति।।६६।।

भाग्येश लग्न या सप्तम भाव में हो तो जातक गुणी, कीर्त्तियुक्त होता है। उसे जिस कार्य की इच्छा होती है वह कभी सिद्ध नहीं होता है।।६६।।

भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिन्तकः।
धनवान् गुणवान्कामी पण्डितो जनवल्लभः।।६७।।

भाग्येश तीसरे या दूसरे भाव में हो तो जातक सदा भाग्यवान्, धनी, गुणी, कामी, पंडित और जनवल्लभ होता है।।६७।।

भाग्येशे दशमे तुर्ये मन्त्री सेनापतिर्भवेत्।
पुण्यवान्सुयशो वाग्मी साहसी क्रोधवर्जितः।।६८।।

भाग्येश दशम या चतुर्थ भाव में हो तो जातक मंत्री वा सेनापति, पुण्यवान्, यशस्वी, बुद्धिमान्, साहसी और क्रोध रहित होता है।।६८।।

भाग्येशे पञ्चमे लाभे भाग्यवान् जनवल्लभः।
गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुणैर्युतः।।६९।।

भाग्येश पाँचवें या लाभ भाव में हो तो जातक भाग्यवान्, जनता का प्रेमी, गुरु की भक्ति में आसक्त, मानी तथा धीर होता है।।६९।।

भाग्येशे त्रिकभावे चेत्भाग्यहीनो भवेन्नरः।
मातुलस्य सुखं न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृसुखं तथा।।७०।।

भाग्येश ६, ८, १२ भावों में हो तो जातक भाग्यहीन, माता के और ज्येष्ठ भाई के सुख से हीन होता है।।७०।।

अथ कर्मेशभावफलम्—

कर्मेशाधिपतौ लग्ने कवितागुणसंयुतः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चाद्दर्थवृद्धिर्दिने दिने।।७१।।

कर्मेश लग्न में हो तो जातक कविता करने वाला, बाल्यकाल में रोगी, पीछे सुखी और प्रतिदिन धन में वृद्धि वाला होता है।।७१।।

धने मदे च सहजे कर्मेशो यदि संस्थितः।
मनस्वी गुणवान् वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः।।७२।।

कर्मेश २, ३, ७ भावों में हो तो जातक मनस्वी, गुणी, बुद्धिमान् और सत्य बोलने वाला होता है।।७२।।

दशःपेशे सुखे कर्मे ज्ञानवान्सुखविक्रमी।
गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः।।७३।।

कर्मेश चौथे वा दशम भाव में हो तो जातक ज्ञानी, सुखी, विक्रमी, गुरु-देवता के पूजन में रत, धर्मात्मा और सत्यवादी होता है।।७३।।

दशमेशे सुते लाभे धनवान् पुत्रवान् भवेत्।
सर्वदा हर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः।।७४।।

कर्मेश पाँचवें या एकादश भाव में हो तो जातक धनी, पुत्रवान्, सर्वदा प्रसन्नचित्त, सत्यवादी और सुखी होता है।।७४।।

कर्मेशोऽरिव्यये यस्य शत्रुभिः परिपीडितः।
चातुर्यगुणसम्पन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः।।७५।।

कर्मेश छठे या बारहवें भाव में हो तो जातक शत्रुओं से पीडित, चतुर और कभी सुखी न रहने वाला होता है।।७५।।

कर्मेशो रन्ध्रगे जातो क्रूरो चौरोऽथवा धूर्त्तः।
अल्पायुरसद्वक्ता मातृसन्तापकारकः।।७६।।

कर्मेश आठवें भाव में हो तो जातक क्रूर, चोर अथवा धूर्त्त और झूठ बोलने वाला और माता को संताप देने वाला होता है।।७६।।

कर्मेशो नवमे यस्य स भवेत्कुलपालकः।
सद्बन्धुमित्रसंयुक्तः मातृभक्तोऽथ पूजकः।।७७।।

कर्मेश नवम भाव में हो तो जातक कुलपालक श्रेष्ठ, बन्धु-मित्र से युक्त और भातृभक्त होता है।।७७।।

अथ लाभेशभावफलम्–

लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान्।
समदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुको च भवेत्सदा।।७८।।

लाभेश लग्न में हो तो जातक धनी, सात्त्विक, समदृष्टि, वक्ता और कौतुकी होता है।।७८।।

लाभेशे च धने पुत्रे नानासुखसमन्वितः।
पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धियुतः पुमान्।।७९।।

लाभेश दूसरे या पाँचवें भाव में हो तो जातक अनेक सुखों से युक्त, पुत्रवान्, धार्मिक और सभी पदार्थों से युक्त होता है।।७९।।

लाभेशे सहजे तुर्ये तीर्थेषु तत्परो महान्।
कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान्।।८०।।

लाभेश तीसरे या चोथे भाव में हो तो जातक तीर्थयात्रा में तत्पर, सभी कार्यों में कुशल और शूलरोग से युक्त होता है।।८०।।

लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः।
सर्वं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः।।८१।।

लाभेश छठे भाव में हो तो जातक अनेक रोगों से युक्त, प्रवासी और दूसरे का नौकर होता है।।८१।।

लाभेशे सप्तमे रन्ध्रे भार्या तस्य न जीवति।
उदारो गुणवान्कर्मी मूर्खो भवति निश्चितम्।।८२।।

लाभेश सातवें या आठवें भाव में हो तो जातक की स्त्री नहीं होती है। वह गुणी, उदार और मूर्ख होता है।।८२।।

लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः।
चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः।।८३।।

लाभेश दशम या नवम भाव में हो तो जातक राजा से पूज्य, धनी, चतुर, सत्यवक्ता और अपने धर्म से युत होता है।।८३।।

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी भवति ध्रुवम्।
पाण्डित्यं कविता चैव वर्धते च दिने दिने।।८४।।

लाभेश लाभ भाव में हो तो जातक बुद्धिमान्, पंडित और कवि होता है।।८४।।

प्राप्तिस्थानाधिपे रिःफे म्लेच्छसंसर्गकारकः।
कामुको बहुकान्तश्च क्षणिको लम्पटः सदा।।८५।।

लाभेश बारहवें भाव में हो तो जातक नीचों से संसर्ग करने वाला, कामी, अनेक स्त्रियों वाला और लम्पट होता है।।८५।।

अथ व्ययेशभावफलम्—

व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्न हि।
दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः।।८६।।

व्ययेश सातवें या लग्न में हो तो जातक को स्त्री का सुख नहीं होता है। जातक दुर्बल, कफरोगी और धन-विद्या से हीन होता है।।८६।।

व्ययेशे च धने रन्ध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः।
धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्णगुणसंयुतः।।८७।।

व्ययेश दूसरे या आठवें भाव में हो तो जातक विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभाषी, गुणी होता है।।८७।।

भार्याद्वेषी प्रियद्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः।
व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः।।८८।।

व्ययेश तीसरे या नवम भाव में हो तो जातक अपने शरीर का पोषक, स्त्रीद्वेषी, मित्रद्रोही और गुरुद्रोही होता है।।८८।।

पुत्रहीनो महादुःखी तीर्थाटनपरो भवेत्।
कृपणो रोगयुक्तश्च व्ययेशे च सुते सुखे।।८९।।

व्ययेश पाँचवें या चौथे भाव में हो तो जातक पुत्र रहित, महादुःखी, तीर्थाटन करने वाला, कृपण और रोगी होता है।।८९।।

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविचिन्तकः।
क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लम्पटः।।९०।।

व्ययेश छठें या बारहवें भाव में हो तो जातक पापी, माता के मृत्यु का कारण, क्रोधी, संतान से कष्ट और परस्त्रीगामी होता है।।९०।।

व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्न हि।
मणिमाणिक्यमुक्तादि धत्ते किञ्चित्समालभेत्।।९१।।

व्ययेश दशम या एकादश भाव में हो तो जातक पुत्रसुख से हीन, मणि-माणिक्य आदि के होते हुए भी सुखहीन होता है।।९१।।

एतत्ते कथितं विप्र भावेशानां तु यत् फलम्।
बलाबलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत्।।९२।।

जो भावेशों के फल कहे गये हैं वे ग्रहों के बल-अबल के अनुसार ही होते हैं।।९२।।

ग्रहे पूर्णबले प्राप्ते फलं पूर्णं समादिशेत्।
अर्धमर्धबले प्राप्ते हीने पादं समादिशेत्।।९३।।

भावानां द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत्।
उक्तं भावस्थितानां च भावेशानां फलं मया।।९४।।

ग्रह पूर्णबली हो तो पूर्णबल, मध्यबली हो तो आधाबल और हीनबली हो तो चतुर्थांश फल देता है।।९४।।

इति पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे सुबोधिन्यां भावेशफलाध्यायः त्रयोदशः।।१३।।

अथ नाभसादियोगाध्यायः

अधुना नाभसा योगाः कथयामि सविस्तरः।
अष्टादशशतगुणितास्तेषां भेदाः समासतः।।१।।

अब मैं नाभस योगों को विस्तारपूर्वक कह रहा हूँ, जिनके भेद १८०० होते हैं।।१।।

आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दशयोगद्वयं ततः।
आकृतिर्विंशतिः संख्या योगानां सप्तकं स्मृतम्।।२।।

जिसमें आश्रय योग ३, दल योग २, आकृति योग २० और संख्या योग ७ मुख्य हैं।।२।।

तेषां नामानि—

रज्जुयोगो मूसलश्च नलो मालाभुजङ्गमौ।
गदायोगश्च शकटः शृङ्गाटकविहङ्गमौ।।३।।

हलवज्रयवाश्चैव कमलो वापि यूपकौ।
शरशक्तिदण्डनौकाकूटछत्रधनूंषि च।।४।।
अर्धेन्दुयोगश्चक्राख्यः समुद्रश्चेति विंशतिः।
वीणादामनिकायोगः पाशकेदारशूलकाः।।५।।
युगगोलौ ततः प्रोक्तौ योगा द्वात्रिंशका इमे।
तेषां च लक्षणं वक्ष्ये यथाबुद्धिविवेकतः।।६।।

रज्जु, मुशल, नल ये आश्रययोग हैं और मालासर्प ये दलयोग हैं। गदा, शकट, शृंगाटक, पक्षी, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूप, शरशक्ति, दंड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धचक्र, चक्र, समुद्र–ये २० आकृतियोग हैं। वीणा, दाम, पारा, केदार, शूल, युग, गोल ये ७ संख्या योग हैं। ये सभी मिलकर ३२ नाभस योग कहे जाते हैं। अब इनके लक्षण कह रहा हूँ।।३-६।।

अथाऽऽश्रययोगलक्षणम्–

सर्वे चरस्था अपि वा स्थिरस्था द्विदेहसंस्था यदि वा भवन्ति।
क्रमेण रज्जुर्मुशलं नलश्च योगत्रयं स्यादिदमाश्रयाख्यम्।।७।।

यदि सभी ग्रह चर राशि में हों तो रज्जुयोग, सभी स्थिर राशि में हों तो मुशल योग और सभी ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों तो नलयोग होता है। ये तीन आश्रय योग हैं।।७।।

अथ दलयोगद्वयमाह–

केन्द्रत्रये सौम्यखगैस्तु माला खलग्रहैर्व्यालसमाह्वयः स्यात्।
इदं तु योगद्वितयं दलाख्यं मुनीश्वरेण प्रतिपादितं हि।।८।।

यदि किसी भी तीन केंद्रों में शुभग्रह हों तो माला योग होता है। यदि पापग्रह हों तो व्याल योग होता है। ये दोनों दल योग हैं।।८।।

अथ विंशत्याकृतियोगमाह–

आसन्नकेन्द्रद्वयगैर्गदाख्यो लग्नास्तसंस्थैः शकटः समस्तैः।
खबन्धुयातैर्विहगः प्रदिष्टः शृङ्गाटकं लग्ननवात्मजस्थैः।।९।।

यदि सभी ग्रह समीप के दो केंद्रों में हों तो 'गदा' योग होता है। सभी ग्रह केवल लग्न और सप्तम में हों तो शकट योग होता है। यदि सभी ग्रह दशम और चतुर्थ में हों तो 'विहग' योग होता है। सभी ग्रह लग्न नवम और पाँचवें भाव में हों तो 'शृंगाटक' योग होता है।।९।।

धनादिखस्थैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसंस्थितैर्वा।
नभस्तलस्थैर्हलनाम योगः किलोदितोऽयं निखिलागमज्ञैः।।१०।।

सभी ग्रह २, ६, १०, ३, ७, ११, ४, ८, १२ हों तो 'हल' नाम का योग होता है।।१०।।

लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः।
वज्राभिधस्तैर्विपरीतसंस्थैर्यवश्च मिश्रैः कमलाभिधानः।।११।।

शुभग्रह लग्न और सप्तम भाव में हों और पापग्रह दशम और चतुर्थ भाव में हों तो 'वज्र' योग होता है। इसके विपरीत यानि १, ७ भाव में पापग्रह और ४, १० भाव में शुभग्रह हों तो 'यव' योग होता है। यदि सभी केंद्रों में मिश्रित शुभ-पाप ग्रह बैठे हों तो 'कमल' योग होता है।।११।।

त्यक्त्वा केन्द्राणि चेत्खेटाः शेषस्थानेषु संस्थिताः।
वापीयोगो भवेदेवं गदितः पूर्वसूरिभिः ।।१२।।

यदि केंद्र से भिन्न स्थान (पणफर) में सभी ग्रह हों तो (वापी) योग होता है।।१२।।

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेन्द्रैः।
क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः।।१३।।

सभी ग्रह लग्न से चौथे भाव के अंदर ही हों तो 'यूप' योग होता है। सभी ग्रह लग्न से चौथे से सप्तम के अन्दर हों तो 'शर' योग होता है। सभी ग्रह सप्तम से दशम के अंदर हों तो 'शक्ति' योग होता है। सभी ग्रह दशम से लग्न के अंदर हों तो 'दंड' योग होता है।।१३।।

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्यात्सप्तर्क्षगैर्नौरथकूटसंज्ञः।
छत्रं धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वकैर्योग इहार्धचन्द्रः।।१४।।
तनोर्धनाद्यैकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः।
चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत्।।१५।।

सभी ग्रह लग्न से सातवें भाव के अंदर हों तो 'नौका' योग होता है। सभी ग्रह चतुर्थ से दशम भाव के अंदर सात घरों में हो तो 'कूट' योग होता है। सभी ग्रह सप्तम से लग्न पर्यंत सात भावों में हो तो 'छल' योग होता है। सभी ग्रह दशम से चतुर्थ भाव के अंदर सात भावों में हों तो 'चाप' योग होता है। इससे अतिरिक्त भावों में ग्रह हों तो 'अर्धचंद्र' योग होता है।।१४-१५।।

ये योगाः कथिताः पुरा बहुतरास्तेषामभावे भवेद्
गोलश्चैकगतैर्युगं द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः।
केदारश्च चतुर्गृहगतैर्ग्रहैः पाशस्तु पञ्चस्थितैः
षट्स्थैर्दामनिका च सप्तगृहगैर्वीणेति संख्या इमे।।१६।।

पूर्वोक्त योगों के अभाव में निम्नलिखित योग होते हैं। यदि सभी ग्रह एक ही राशि में हों तो 'गोल' योग, दो भावों में हों तो 'युग', तीन गृहों में हों तो 'शूल' योग, चार भावों में हों तो 'केदार' योग, पाँच राशियों में सभी ग्रह हों तो 'पाश' योग, ६ राशियों में हों तो 'दामिनी' योग और सभी ग्रह ७ राशियों में हों तो 'वीणा' नामक योग होता है।।१६।।

रज्जुयोगफलम्—

अटनप्रियाः सुरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः।
क्रूरा खलस्वभावा रज्जुप्रभवाः सदा कथिताः।।१७।।

रज्जु योग में उत्पन्न पुरुष भ्रमणशील, स्वरूपवान्, परदेश में स्वस्थ रहनेवाला, क्रूर और खल स्वभाव का होता है।।१७।।

मुसलयोगफलम्—

मानज्ञानधनैश्वर्यैर्युक्ता नृपप्रियाः ख्याताः।
बहुपुत्राः स्थिरचित्ता मुसलसमुत्था भवन्ति नराः।।१८।।

मुसल योग में उत्पन्न पुरुष मान, ज्ञान, धन, ऐश्वर्य से युक्त, राजा का प्रिय, प्रसिद्ध, अनेक पुत्रों वाला और स्थिरचित्त होता है।।१८।।

नलयोगफलम्—

न्यूनातिरिक्तदेहा धनसञ्चयभागिनोऽतिनिपुणाश्च।
बन्धुहिताश्च सुरूपा नलयोगे सम्प्रसूयन्ते।।१९।।

नलयोग में उत्पन्न पुरुष हीन और अधिक अंगों वाला, धनसंचय करने वाला, अत्यंत चतुर, बंधुओं का हितैषी और सुरूप होता है।।१९।।

मालायोगफलम्—

नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रान्नभोगसम्पन्नाः।
कान्ताः सुबहुस्त्रीका मालायां सम्प्रसूताः स्युः।।२०।।

माला योग में उत्पन्न पुरुष नित्य सुखी, वाहन, वस्त्र-अन्नभोग से संपन्न, सुंदर शरीर, अनेक स्त्रियों से युक्त होता है।।२०।।

सर्पयोगफलम्—

विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च।
परभक्षपानविरताः सर्पप्रभवा भवन्ति नराः।।२१।।

सर्प योग में उत्पन्न पुरुष कुटिल, क्रूर, निर्धन, नित्य दुःखी, दीन और दूसरे भक्ष्य भोज्य से विरत रहने वाला होता है।।२१।।

गदायोगफलम्—

सततोद्युक्तार्थवशा यज्वानः शास्त्रगेयकुशलाश्च।
धनकनकरत्नसम्पत्संयुक्ता मानवा गदायां तु।।२२।।

गदा योग में उत्पन्न गुरुष निरंतर धन के लिए उद्योगी, यज्ञ करने वाले, शास्त्र और संगीत में कुशल, धन, सुवर्ण, रत्न से युक्त होते हैं।।२२।।

शकटयोगफलम्—

रोगार्ताः कुनखा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वाः।
मित्रस्वजनविहीनाः शकटे जाता भवन्ति नराः।।२३।।

शकट योग में उत्पन्न पुरुष रोगी, कुनखी, मूर्ख, गाड़ी से जीविका चलाने वाले और मित्र तथा स्वजनों से हीन होते हैं।।२३।।

विहगयोगफलम्—

भ्रमणरुचयो विकृष्टा दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः।
कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः।।२४।।

विहग 'पक्षी' योग में उत्पन्न पुरुष भ्रमणशील, परतंत्र, दूत, सुरत से जीविका वाले, ढीठ और झगड़ालू होते हैं।।२४।।

शृङ्गाटकयोगफलम्—

प्रियकलहाः समरसहाः सुखिनो नृपतेः प्रियाः शुभकलत्राः।
युवतिद्वेष्याः शृङ्गाटकसम्भवा मनुजाः।।२५।।

शृंगाटक योग में उत्पन्न पुरुष कलहप्रिय, झगड़ालू, सुखी, राजा के प्रिय, सुंदर स्त्रियों से युक्त और स्त्री के द्वेषी होते हैं।।२५।।

हलयोगफलम्—

बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः।
बन्धुसुहृद्भिः सक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरुषाः।।२६।।

हल योग में उत्पन्न पुरुष बहुभोजी, दरिद्र, कृषि करने वाले, दुःखी, उद्वेग से युक्त, बंधु तथा मित्रों में आसक्त और दास होते हैं।।२६।।

वज्रयोगफलम्—

आद्यन्तवयः सुखिनः शूराः सुभगा निरीहाश्च।
भाग्यविहीना वज्रे जाता खला विरुद्धाश्च।।२७।।

वज्र योग में उत्पन्न पुरुष आदि और अंत अर्थात् बाल्य और वृद्ध अवस्था में सुखी, शूर, सुंदर, निर्दय और भाग्यहीन होते हैं।।२७।।

यवयोगफलम्—

व्रतनियममङ्गलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुताः।
दातारः स्थिरचित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः।।२८।।

यव योग में उत्पन्न पुरुष व्रत, नियम, मंगल को करने वाले, आयुष्य के मध्य में सुख, धन, पुत्र से युक्त, दाता और स्थिरचित्त होते हैं।।२८।।

कमलयोगफलम्—

विभवगुणाढ्याः पुरुषाः स्थिरायुषो विपुलकीर्त्तयः शुद्धाः।
शुभशतकाः पृथ्वीशाः कमलभवा मानवा नित्यम्।।२९।।

कमल योग में उत्पन्न पुरुष धन-ऐश्वर्य एवं गुणों से युक्त, दीर्घायु, अत्यंत कीर्तिमान्, सैकड़ों शुभ कार्य करने वाले राजा होते हैं।।२९।।

वापीयोगफलम्—

निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुखसंयुताः सुतयुताश्च।
नंयनसुखसम्प्रहृष्टा वापीयोगेन राजानः।।३०।।

वापी योग में उत्पन्न पुरुष धनसंग्रह में चतुर, स्थिर धन और संपत्ति से युक्त, पुत्रवान्, नेत्र को सुख देने वाले पदार्थों से युक्त राजा होते हैं।।३०।।

यूपयोगफलम्—

आत्मविदिज्यानिरतः स्त्रिया युतः सत्त्वसम्पन्नः।
व्रतयमनियमे निरतो यूपे जातो विशिष्टश्च।।३१।।

यूपयोग मे उत्पन्न पुरुष ज्ञानी, यज्ञकर्ता, स्त्री से युत, सत्त्वयुक्त, व्रत-नियम में संपृक्त और विशिष्ट व्यक्ति होता है।।३१।।

शरयोगफलम्—

इषुकरणे च समर्था मृगयाधनसेविताश्च मांसादाः।
हिंस्राः कुशिल्पकराः शरयोगे मानवाः प्रसूयन्ते।।३२।।

शरयोग में उत्पन्न पुरुष बाण बनाने वाले, आखेट के धन से सुखी, मांस खाने वाले, हिंसक, कुत्सित शिल्प करने वाले हाते हैं।।३२।।

शक्तियोगफलम्—

धनरहितविफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुषः पुरुषाः।
संग्रामबुद्धिनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिराः सुभगाः।।३३।।

शक्ति योग में उत्पन्न पुरुष दरिद्र, निष्फल, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घजीवी, झगड़ालू बुद्धि और निपुण होते हैं।।३३।।

दण्डयोगफलम्—

हतदारपुत्रनिःस्वाः सर्वत्र च निर्घृणाः स्वजनबाह्याः।
दुःखितनीचप्रेष्या दण्डंप्रभवा भवन्ति नराः।।३४।।

दंड योग में उत्पन्न पुरुष स्त्री-पुत्र से हीन, निर्धन, निर्लज्ज, अपने स्वजनों से त्यक्त, दुःखी और नीचों के दास होते हैं।।३४।।

नौकायोगफलम्—

सलिलोपजीविविभवा बह्वाशाः ख्यातकीर्त्तयो दुष्टाः।
कृपणा मलिना लुब्धा नौसञ्जाताः खलाः पुरुषाः।।३५।।

नौका योग में उत्पन्न पुरुष जल से उत्पन्न पदार्थों से जीविका वाले, बहुत भोजन करने वाले, प्रसिद्ध कीर्त्ति वाले, दुष्ट, कृपण, मलिन और लोभी होते हैं।।३५।।

कूटयोगफलम्—

अनृतकथनवधपापा निष्किञ्चनाः शठाः क्रूराः।
कूटसमुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः।।३६।।

कूट योग में उत्पन्न पुरुष झूठ बोलने वाले, पापी, वधिक, धूर्त, क्रूर, नित्य झूठे व्यापार वाले, पहाड़ और जंगलों में रहने वाले होते हैं।।३६।।

छत्रयोगफलम्—

स्वजनाश्रयो दयावान्नानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः।
प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात्।।३७।।

छत्रयोग में उत्पन्न पुरुष अपने जनों को आश्रय देने वाला, दयावान्, अनेक राजाओं का प्रिय, उत्तमबुद्धि से युक्त, प्रथम और अंतिम अवस्था में सुखी, दीर्घायु होता है।।३७।।

चापयोगफलम्—

आनृतिकगुप्तपालाश्चौराः कितवाश्च कानने निरताः।
कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीनाः शुभा वयोमध्ये।।३८।।

चापयोग में उत्पन्न पुरुष झूठ बोलने वाले, जेलखाने के मालिक, चोर, धूर्त्त, जंगल के प्रेमी, भाग्यहीन और अवस्था के मध्य में सुखी होते हैं।।३८।।

अर्धचन्द्रयोगफलम्—

सेनापतयः सर्वे कान्तशरीरा नृपप्रिया बलिनः।
मणिकनकभूषणयुता भवन्ति योगे वार्धचन्द्राख्ये।।३९।।

अर्धचन्द्रयोग में उत्पन्न होने वाले सभी पुरुष सुंदर शरीर के, सेनापति, राजा के प्रिय, बली, मणि, सुवर्ण और आभूषणों से युक्त होते हैं।।३९।।

चक्रयोगफलम्—

प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभास्फुरितपादः।
भवति नरेन्द्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे।।४०।।

चक्र योग में उत्पन्न पुरुष अनेक राजाओं के रत्नजटित मुकुटों से नमस्कार किये जाने वाला राजा होता है।।४०।।

समुद्रयोगफलम्—

बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः ससुताः।
उदधिसमुत्थाः पुरुषाः स्थिरविभवाः साधुशीलाश्च।।४१।।

समुद्रयोग में उत्पन्न पुरुष अनेक रत्न एवं धन से समृद्ध, भोगयुक्त, जनप्रिय, पुत्रवान्, स्थिर धनवाले और सज्जन होते हैं।।४१।।

वीणायोगफलम्—

प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः।
नेतारो बहुभृत्या वीणायां कीर्त्तिताः पुरुषाः।।४२।।

वीणा योग में उत्पन्न पुरुष गीत, नाच और बाजा के प्रेमी, निपुण, सुखी, धनी, नेता, अनेक नौकरों वाले होते हैं।।४२।।

दामिनीयोगफलम्—

दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरः ख्यातः।
बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत विद्वांश्च।।४३।।

दामिनी योग में उत्पन्न पुरुष नीति और धन से युक्त, प्रभु, प्रसिद्ध, अनेक पुत्र, रत्न से समृद्ध और धीर तथा पंडित होता है।।४३।।

पाशयोगफलम्—

पाशे बन्धनभाजः कार्ये दक्षाः प्रपञ्चकाराश्च।
बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्याः सम्प्रतानाश्च।।४४।।

पाश योग में उत्पन्न पुरुष बंधन को भोगने वाले, कार्य में चतुर, प्रपंची, बहुत बोलने वाले, दुःशील और अनेक नौकरों से युक्त तथा परिवार वाले होते हैं।।४४।।

केदारयोगफलम्—

सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिनः।
केदारे सम्भूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः।।४५।।

केदार योग में उत्पन्न पुरुष बहुतों के उपकारी, कृषिकर्त्ता, सत्यवादी, सुखी, चंचल और धनी होते हैं।।४५।।

शूलयोगफलम्—

तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्राः सुबहिष्कृता महाशूराः।
संग्रामे लब्धयशस्काः शूले योगे भवन्ति नराः।।४६।।

शूल योग में उत्पन्न पुरुष बड़े आलसी, निर्धन, हिंसक, जातिबहिष्कृत, शूरवीर, संग्राम में लब्धकीर्त्ति वाले होते हैं।।४६।।

युगयोगफलम्—

पाखण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके।
सुतमातृधर्मरहिता युगयोगे ये नरा जाताः।।४७।।

युग योग में उत्पन्न पुरुष पाखंडी, निर्धन, लोक में बहिष्कृत, पुत्र-माता के धर्म से हीन होते हैं।।४७।।

गोलयोगफलम्—

बलसंयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः।
नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवन्ति नराः।।४८।।

गोलयोग में उत्पन्न पुरुष बलवान्, निर्धन, विद्या से हीन, मलिन, हमेशा दुःखी और दीन होते हैं।।४८।।

सर्वास्वपि दशास्वेते भवेयुः फलदायिनः।
प्रा[illegible]मिति विज्ञेयाः प्रवदन्ति तवाग्रजाः।।४९।।

इन योगों का फल सभी ग्रहों की दशा में होता है, यह पूर्वजों का निर्णय है।।४९।।

इति बृहत्पाराशरहोरायां पूर्वखण्डे नाभसयोगाध्यायः चतुर्दशः।।१४।।

अथानेकयोगाध्यायः

अथ गजकेसरीयोगस्तत्फलं चाह—

केन्द्रस्थिते देवगुरौ शशाङ्काद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति।
दृष्टे सितार्येन्दुसुतैः शशाङ्के नीचास्तहीनैर्गजकेसरीति।।१।।

चन्द्रमा से केन्द्र में गुरु हो तो गजकेसरी योग होता है और चन्द्रमा नीच-अस्तादि में न गये हुए शुक्र, गुरु और बुध से देखा जाता हो तो गजकेसरी योग होता है।।१।।

गजकेसरिसञ्ज्ञातस्तेजस्वी धनवान् भवेत्।
मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत्।।२।।

इस योग में उत्पन्न पुरुष धनी, मेधावी, गुणी एवं राजा का प्रिय करने वाला होता है।।२।।

अथामलायोगस्तत्फलं चाह—

लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते।
योगोऽयममला नाम कीर्त्तिराचन्द्रतारकी।।३।।
राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रियः।
परोपकारी गुणवानमलायोगसम्भवः।।४।।

जन्मलग्न से वा चन्द्रमा से दशम स्थान में केवल शुभग्रह हों तो अमला योग होता है। अमला योग में उत्पन्न पुरुष की कीर्त्ति जब तक चन्द्रमा आकाश में रहेगा तब तक रहती है और वह राजा से पूज्य, महाभोगी, दाता और बंधुओं का प्रिय होता है ।।३-४।।

अथ शुभाशुभयोगस्तत्फलं चाह—

शुभाशुभाढये यदि जन्मलग्ने शुभाशुभाख्यौ भवतस्तदानीम्।
व्ययस्वगैः पापशुभैर्विलग्नात्पापाख्यसौम्यग्रहकर्त्तरी च।।५।।
शुभयोगभवो वाग्मी रूपशीलगुणान्वितः।
पापयोगोद्भवः कामी पापकर्मपरार्थयुक्।।६।।

यदि लग्न में शुभग्रह युत हों तो शुभयोग और पापग्रह युत हों तो अशुभ योग होता है। १२।२ भाव में पापग्रह हों तो पापकर्त्तरी और शुभग्रह हों

तो शुभकर्त्तरी होती है। शुभ योग वा शुभ कर्त्तरी हो तो जातक बुद्धिमान्, रूप, शील, गुण से युक्त होता है। पापग्रह से उत्पन्न योग हो तो जातक कामी, पापकर्म करने वाला होता है।।५-६।।

अथ पर्वतयोगस्तत्फलं चाह—

सौम्येषु केन्द्रगृहगेषु सपत्नरंध्रे शुद्धेऽथवा शुभयुते यदि पर्वतः स्यात्।
लग्नान्त्यपौ यदि परस्परकेन्द्रयातौ मित्रेक्षितौ भवति पर्वतनामयोगः।।७।।
भाग्यान्वितः पर्वतयोगजातो विद्याविनोदाभिरतः प्रदाता।
कामो परस्त्रीजनकेलिलोलस्तेजो यशस्वी पुरनायकः स्यात्।।८।।

यदि सातवें, आठवें भाव में कोई ग्रह न हो अथवा शुभग्रह से युत हो और केन्द्रों में शुभग्रह हों तो पर्वत योग होता है। लग्नेश और व्ययेश केन्द्र में हों और मित्रग्रह से देखे जाते हों तो पर्वत योग में उत्पन्न पुरुष भाग्यवान्, विद्वान् और दाता होता है।।७-८।।

अथ काहलयोगस्तत्फलं चाह—

अन्यो न्यकेन्द्रगृहगौ गुरुबन्धुनाथौ
लग्नाधिपे बलयुते यदि काहलः स्यात्।
कर्मेश्वरेण सहिते तु विलोकिते वा
स्वोच्चे स्वके सुखपतौ यदि काहलः स्यात्।।९।।
ओजस्वी साहसी मूर्खश्चतुरङ्गबलैर्युतः।
यत्किञ्चिद् ग्रामनाथस्तु काहले जायते नरः।।१०।।

गुरु और चतुर्थेश परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बली हो तो काहल योग होता है। यदि सुखेश अपने उच्च या अपनी राशि का होकर कर्मेश से युत हो तो काहल योग होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष तेजस्वी, साहसी, मूर्ख, सेवा के बल से युक्त, कुछ ग्रामों का स्वामी होता है।।९-१०।।

अथ चामरयोगस्तत्फलं चाह—

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुंगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः।
सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा यदि चामरः स्यात्।।११।।
योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान् वाग्मी पंडितो वा महीपः।
सर्वज्ञः स्याद्वेदशास्त्राधिकारी जीवेल्लोके सप्ततिर्वत्सराणाम्।।१२।।

लग्नेश अपनी उच्चराशि का होकर केन्द्र में हो और गुरु से देखा जाता हो तो (चामर) योग होता है। यदि लग्न सप्तम वा नवम वा दशम में दो शुभग्रह हों तो (चामर) योग होता है। चामरयोग में उत्पन्न पुरुष राजा से पूज्य, विद्वान्, वक्ता, पंडित वा राजा, सर्वज्ञ, वेद शास्त्र का अधिकारी, ७० वर्ष तक जीने वाला होता है।।११-१२।।

अथ शङ्खयोगः—

अन्योन्यकेन्द्रगृहगौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलयुतेयदुशंखयोगः।
लग्नाधिपेच गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपेबलयुते तु तथावदन्ति।।
शंखे जातो भोगशीलो दयालुः स्त्रौपुत्रार्थक्षेत्रवान् पुण्यकर्मा।
शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेल्लोके वत्सराणामशीतिः।।१४।।

पंचमेश, षष्ठेश परस्पर केन्द्र में हों, लग्नेश बलवान् हो तो शंख योग होता है। लग्नेश, कर्मेश दोनों चर राशि में हों, भाग्येश बली हो तो (शंख) योग होता है। शंख योग में उत्पन्न पुरुष भोगी, दयालु, स्त्री, पुत्र, धन और क्षेत्र से युक्त पुण्य कार्य करने वाला, पंडित, सज्जन और ८० वर्ष तक जीने वाला होता है।।१३-१४।।

अथ भेरीयोगमाह—

स्वान्त्योदयास्तभवनेषु वियच्चरेषु कर्माधिपेबलयुते यदि भेरियोगः।
केन्द्रे गते सुरगुरौ सितलग्ननाथौभाग्येश्वरे बलयुतेतु तथैववाच्यम्।।
दीर्घायुषो विगतरोगभया नरेन्द्रा
बह्वर्थभूमिसुतदारयुताः प्रसिद्धाः।
आचारभूरिसुखशौर्यमहानुभावा
भेरीप्रजातमनुजा निपुणाः कुलीनाः।।१६।।

यदि २।१२।७ भाव में ग्रह हों और कर्मेश बली हो तो भेरी योग होता है। भाग्येश बली हो, गुरु, शुक्र, लग्नेश केन्द्र में हों तो भेरी योग होता है। भेरी योग में उत्पन्न पुरुष दीर्घायु, नीरोगी, निर्भय, राजा, भूमि, धन, पुत्र, स्त्री से युक्त, प्रसिद्ध, आचारवान्, सुख-पराक्रम से युक्त, निपुण और कुलीन होते हैं।।१५-१६।।

अथ मृदङ्गयोगमाह—

उच्चग्रहांशकपती यदि कोणकेन्द्रे
तुङ्गस्वकीयभवनोपगते बलाढ्ये।

लग्नाधिपे बलयुते तु मृदङ्गयोगः
कल्याणरूपनृपतुल्ययशः प्रदः स्यात्।।१७।।

जन्मकाल में ग्रह उच्चराशि का हो, उसके नवांश का स्वामी यदि केन्द्र, कोण में अपने उच्च, स्वगृह में हो, बली हो और लग्नेश बली हो तो मृदंग योग होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष कल्याणकारी, राजा के समान यश वाला होता है।।१७।।

अथ श्रीनाथयोगमाह—

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुंगे कर्माधिपे भाग्यपसंयुते च।
श्रीनाथयोगः शुभदस्तदानीं जातो नरः शक्रसमो नृपालः।।१८।।

सप्तमेश दशम स्थान में हो, अपनी उच्चराशि में कर्मेश भाग्येश के साथ हो तो श्रीनाथ योग होता है। इसमें उत्पन्न पुरुष इन्द्र के समान राजा होता है।।१८।।

अथ शारदयोगः—

योगः शारदसंज्ञकः सुतगते कर्माधिपे चन्द्रजे
केन्द्रस्थे दिननायके निजगृहप्राप्तेऽतिवीर्यान्विते।
चन्द्रात्कोणगते पुरन्दरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे
लाभे वा यदि देवमन्त्रिणि बुधात्तच्छारदासंज्ञकः।।१९।।
स्त्रीपुत्रबन्धुसुखरूपगुणानुरक्ता
भूपप्रिया गुरुमहीसुरदेवभक्ताः।
विद्याविनोदरतिशीलतपोबलाढ्या
जाताः स्वधर्मनिरता भुवि शारदाख्ये।।२०।।

यदि पाँचवें भाव में कर्मेश हो, बुध केन्द्र में हो और सूर्य अपनी राशि में अत्यंत बली हो अथवा चंद्रमा से ९, ५ भाव में गुरु हो, बुध से त्रिकोण में भौम हो, बुध से लाभ भाव में गुरु हो तो शारद योग होता है। शारद योग में उत्पन्न पुरुष विद्या का विनोदी, कामी, शीलवान्, तपस्वी, अपने धर्म में निरत, स्त्री, पुत्र, बंधु के सुख से युक्त, राजा का प्रिय, गुरु, ब्राह्मण तथा देवता का भक्त होता है।।१९-२०।।

अथ मत्स्ययोगः—

लग्नधर्मगते पापे पञ्चमे सदसद्युते।
चतुरस्त्रगते पापे योगोऽयं मत्स्यसंज्ञकः।।
कालज्ञः करुणासिन्धुर्गुणधीबलरूपवान्।
यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भवः।।२१।।

लग्न से नवम भाव में पापग्रह हो, पाँचवें भाव में शुभग्रह, पापग्रह दोनों हों, चौथे या आठवें भाव में पापग्रह हों तो मत्स्य योग होता है। मत्स्ययोग में उत्पन्न पुरुष ज्योतिषी, करुणा की मूर्ति, गुणी, विद्वान्, बली, रूपवान्, यशस्वी वा तपस्वी होता है।।२१।।

अथ कूर्मयोगः—

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुङ्गमित्रांशकराशियाताः।
तृतीयलाभोदयगास्त्वसौम्या मित्रोच्चसंस्था यदि कूर्मयोगः।।२२।।
विख्यातकीर्त्तिर्भुवि राज्यभोगी धर्माधिकः सत्त्वगुणप्रधानः।
धीरः सुखी वागुपकारकर्त्ता कूर्मोद्भवो मानवनायको वा।।२३।।

अपने उच्च वा मित्रांश वा अपनी राशि में शुभग्रह ७-५-६ भाव में हो और अपने मित्र वा उच्च की राशि में गये हुए पापग्रह ३-११-१ भाव में हों तो कूर्मयोग होता है। कूर्मयोग में उत्पन्न पुरुष प्रसिद्ध कीर्त्तिवाला, राज्यभोग करने वाला, धार्मिक, सात्त्विक, धीर, सुखी, वाणी से उपकार करनेवाला अथवा राजा होता है।।२२-२३।।

अथ खड्गयोगमाह—

भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे।
लग्नेशे केन्द्रकोणस्थे खड्गयोग इतीरितः।।२४।।
वेदार्थशास्त्रनिखिलागमतत्त्वयुक्ति-
बुद्धिप्रतापबलवीर्यसुखानुरक्ताः।
निर्मत्सराश्च निजवीर्यमहानुभावाः
खड्गे भवन्ति पुरुषाः कुशलाः कृतज्ञाः।।२५।।

भाग्येश धनभाव में हो और धनेश भाग्यभाव में हो और लग्नेश केन्द्र-कोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। खड्गयोग में उत्पन्न पुरुष वेद के अर्थ को जाननें वाले, शास्त्र तथा समस्त आगमशास्त्र के तत्त्व को जाननेवाले, बुद्धिमान्, प्रतापी, बलवान्, सुखी, मत्सरता से रहित, अपने पराक्रम से श्रेष्ठ, कुशल और कृतज्ञ होते हैं।।२४-२५।।

अथ लक्ष्मीयोगफलम्—

केन्द्रमूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे परमोच्चगे।
लग्नाधिपे बलाढ्ये च लक्ष्मीयोग इतीरितः।।२६।।
गुणाभिरामो बहुदेशनाथो विद्यामहाकीर्त्तिरनङ्गरूपः।
दिगन्तविश्रान्तनृपालवन्द्यो राजाधिराजो बहुदारपुत्रः।।२७।।

भाग्येश अपने परम उच्च में होकर केन्द्र (१-४-७-१०) वा अपनी मूल त्रिकोण राशि में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' योग होता है। लक्ष्मी योग में उत्पन्न पुरुष गुणों से युक्त, अनेक देशों का स्वामी, विद्या तथा महत्कीर्त्ति से युक्त, कामदेव के समान स्वरूप, दिशाओं में प्रसिद्ध, राजाओं से पूज्य, राजाओं का राजा और अनेक स्त्री-पुत्रों से युक्त होता है।।२६-२७।।

अथ कुसुमयोगस्तत्फलं चाह—

स्थिरलग्ने भृगौ केन्द्रे त्रिकोणेन्दौ शुभेतरे।
मानस्थानगते सौरे योगोऽयं कुसुमो भवेत्।।२८।।
दाता महीमण्डलनाथवन्द्यो
भोगी महावंशजराजमुख्यः।
लोके महाकीर्त्तियुतः प्रतापी
नाथो नराणां कुसुमोद्भवः स्यात्।।२९।।

स्थिरलग्न (२-५-८-११) में जन्म हो और शुक्र केंद्र में हो, चंद्रमा ५वें भाव में हो और १०वें स्थान में शनि हो तो 'कुसुम' योग होता है। कुसुम योग में उत्पन्न पुरुष दाता, राजाओं से वंद्य, भोगी, उत्तम कुल में उत्पन्न, राजाओं में मुख्य, संसार में कीर्त्तियुक्त, प्रतापी और राजा होता है।।२८-२९।।

अथ पारिजातयोगस्तत्फलं चाह—

विलग्ननाथस्थितराशिनाथः स्थानेशराशीशतदंशनाथः।
केन्द्रत्रिकोणायगतो यदि स्यात्स्वतुङ्गगो वा यदि पारिजातः।।३०।।
मध्यान्तसौख्यः क्षितिपालवन्द्यो युद्धप्रियो वारणवाजियुक्तः।
स्वकर्मधर्माभिरतो दयालुर्योगो नृपः स्याद्यदि पारिजातः।।३१।।

लग्नेश जिस राशि में हो, उसका स्वामी जिस राशि में हो, उसका स्वामी वा उसके नवांश का स्वामी यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में अथवा अपनी उच्चराशि में हो तो 'पारिजात' योग होता है। पारिजात योग में उत्पन्न पुरुष मध्य और अंतिम अवस्था में सुखी, राजा से वंदनीय, युद्धप्रिय, हाथी-घोड़ों से युक्त, अपने धर्म-कर्म में रत, दयालु होता है।।३०-३१।।

अथ कलानिधियोगस्तत्फलं चाह—

द्वितीये पञ्चमे जीवे बुधशुक्रयुतेक्षिते।
क्षेत्रे तयोर्वा सम्प्राप्ते योगः स्यात्स कलानिधिः।।३२।।

कामी कलानिधिभवा सुगुणाभिरामः
संस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यैः।
सेनातुरङ्गमदवारणशङ्खभेरी
वाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसङ्घः।।३३।।

दूसरे या पाँचवें स्थान में गुरु हो, बुध, शुक्र से युत वा दृष्ट हो अथवा इन्हीं की राशि में हो तो 'कलानिधि' योग होता है। कलानिधि योग में उत्पन्न पुरुष कामी, सुंदर गुणों से युक्त, राजाओं से पूज्यचरण वाला, सेना, घोड़ा, मतवाले हाथी, शंख, भेरी आदि बाजाओं से युक्त, रोग, भय और शत्रु से रहित होता है।।३२-३३।।

अथ पारिजातादियोगफलानि—

सपारिजातद्युचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गयातः।
सगोपुरांशो यदि गोधनानि सिंहासनस्थः कुरुते विभूतिम्।।३४।।
करोति पारावतभागयुक्तो विद्यायशःश्रीविपुलं नराणाम्।
सदेवलोको बहुयानसेनामैरावतस्थो यदि भूपतित्वम्।।३५।।

अपने पारिजात भाग (पृ० ५३) में ग्रह हो तो सुख होता है। उत्तम वर्ग में हो तो नीरोग करता है। गोपुरांश में हो तो गौ और धन देता है। सिंहासनांश में हो तो विभूति अर्थात् ऐश्वर्य को देता है। पारावत भाग में हो तो विद्या, यंश, विपुल लक्ष्मी को देता है। देवलोकांश में हो तो अनेक सवारी और सेना से युक्त होता है। ऐरावत अंश में हो तो जातक राजा होता है।।३४-३५।।

अथ लग्नाधियोगस्तत्फलं चाह—

लग्नाच्च दाराष्टमगेहसंस्थैः शुभैर्न पापग्रहयोगदृष्टैः।
लग्नाधियोगो हि तथा प्रसिद्धः पापैः सुखस्थानविवर्जितैश्च।।३६।।
लग्नाधियोगे बहुशास्त्रकर्त्ता विद्याविनीतश्च बलाधिकारी।
मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यशोवित्तगुणाधिकः स्यात्।।

लग्न से सातवें, आठवें भाव में शुभग्रह पापग्रह से दृष्ट-युत न हों और चौथे भाव में पापग्रह न हों तो लग्नाधियोग होता है। लग्नाधियोग में उत्पन्न जातक अनेक शास्त्रों को बनाने वाला, विद्वान्, नम्र, सेनाधिकारी, मुख्यतः निष्कपट महात्मा और संसार में यश, धन और गुण से प्रसिद्ध होता है।।३६-३७।।

अथ चन्द्रयोगानाह—

सहस्ररश्मितश्चन्द्रे कण्टकादिगते सति।
न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनधीनैपुणानि च।।३८।।
स्वांशे वा स्वाधिमित्रांशे स्थिते चेद्दिवसे शशी।
गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः।।३९।।
स्वाधिमित्रांशगश्चन्द्रो दृष्टो दानवमन्त्रिणा।
निशासु कुरुते लक्ष्मीं छत्रध्वजसमाकुलम्।
विपर्यस्थे तु शीतांशौ जायन्तेऽल्पधना नराः।।४०।।

यदि सूर्य से चंद्रमा केन्द्र में हो तो जातक को धन, बुद्धि और निपुणता अल्प होती है। चंद्रमा पणफर में हो तो धन की निपुणता मध्यम होती है और चंद्रमा आपोक्लिम में हो तो धन आदि उत्तम होते हैं। यदि दिन में जन्म हो और चंद्रमा गुरु से देखा जाता हुआ अपने नवांश में वा अधिमित्र के अंश में हो तो जातक धनी और सुखी होता है। रात्रि का जन्म हो और चंद्रमा अपने अधिमित्रांश में होकर शुक्र से देखा जाता हो तो लक्ष्मी, छत्र, ध्वज से युक्त मनुष्य होता है। इसके विपरीत चंद्रमा हो तो अल्पधनी होता है।।३८-४०।।

अथ चन्द्राधियोगस्तत्फलं चाह—

शशिनः सौम्याः षष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिते।
स्यादधियोगो जाताः सौम्यैः सबलैर्धराधीशः।
मध्यबलैर्मन्त्री स्यादधमबलैः सैन्यनायकः।।४१।।
चन्द्राद्बुद्धिगतैः सौम्यैः धर्मशीलो महाधनी।
द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमानेकेन परिकीर्त्तितः।
चन्द्राल्लग्नाद्ग्रहाभावे दरिद्रो दुःखितो भवेत्।।४२।।

चंद्रमा से शुभग्रह ६-७-८ भाव में हो तो 'अधियोग' होता है। यदि शुभग्रह बली हों तो अधियोग में उत्पन्न जातक राजा होता है। मध्यम बली हों तो मंत्री, अधम बली हों तो सेनानायक होता है। चंद्रमा से (३-६-११) भाव में शुभग्रह हों तो जातक धर्मशील एवं महाधनी होता है। दो शुभग्रह हों तो समधनी और एक शुभग्रह हो तो अल्पधनी होता है। यदि चंद्रमा से वा लग्न से उक्तस्थानों में ग्रह न हों तो दरिद्र होता है।।४१-४२।।

अथ सुनफाऽनफादियोगानाह—

शीतांशोर्द्रविणस्थितैश्च सुनफायोगोऽनफाऽन्त्यस्थितैः
स्वान्त्यस्थैः खचरैर्भवेद्दुरुधरा पङ्केरुहेशोज्झितैः।
चेत्वित्तव्ययगा भवन्ति न खगा केमद्रुमः स्यात्तदा
प्राचीनैर्मुनिभिः स्मृताः श्रुतिमिता योगाः शशाङ्कोद्भवाः।।४३।।

चंद्रमा से दूसरे भाव में सूर्य को छोड़कर शेष ग्रहों में से कोई हो तो 'सुनफा' योग, बारहवें भाव में हो तो 'अनफा' योग, चक्र से दूसरे बारहवें भाव में ग्रह हो तो 'दुरुधरा' योग होता है। यदि चक्र से २-१२ भाव में ग्रह न हों तो 'केमद्रुम' योग होता है। ये ४ प्रकार के चंद्रयोग मुनियों ने कहे हैं।।४३।।

अथ सुनफायोगफलम्—

भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृती च
नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः।
ख्यातः सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या
बुध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधाने।।४४।।

सुनफा योग में उत्पन्न पुरुष राजमंत्री, सुंदर यशस्वी, अपने बाहुबल से उपार्जित धन से युक्त, प्रसिद्ध, बड़ी कीर्तिवाला, बुद्धिमान् होता है।।४४।।

अथाऽनफायोगफलम्—

प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलाससच्छीलशाली गुणपूर्त्तियुक्तः।
उदारकीर्त्तिः स्मरतुष्टचित्तो नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने।।४५।।

अनफा योग में उत्पन्न पुरुष समर्थ, नम्र, सुंदर वाणी, उदार, कीर्त्तियुक्त एवं कामी होता है।।४५।।

अथ दुरुधरायोगफलम्—

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्रीसौख्याभियुक्तः सततं हतारिः।
कान्तासुनेत्राञ्चललालसः स्याद्योगे सदा दौरधरे मनुष्यः।।४६।।

दुरुधरा योग में उत्पन्न पुरुष धन-वाहन सुख से युक्त, विजित शत्रुपक्ष वाला, स्त्री से संतुष्ट होता है।।४६।।

अथ केमद्रुमयोगफलम्—

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः
प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी।
नित्यं विरुद्धधिषणो मलिनः कुवेषः
केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि।।४७।।

केमद्रुम योग में उत्पन्न जातक धन, पुत्र, स्त्री, बंधु से हीन होता है, दास और परदेशी होता है, नित्य मलिन कुवेषधारी होता है; चाहे वह राजा का ही लड़का हो तो भी।।४७।।

अथ केमद्रुमभङ्गयोगः—

प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वै सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणास्तदा वै।
दीर्घायुष्यं राजयोगं मनुष्यं सत्कोशाढ्यं हन्ति केमद्रुमं च।।४८।।

यदि जन्म समय में चंद्रमा सभी ग्रहों से देखा जाता हो तो जातक के केमद्रुम योग के दुष्टफल का नाश कर दीर्घायु, धनी और राजा बनाता है।।४८।।

सर्वे खेटाः केन्द्रकोणेषु संस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम्।
दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय कुर्युः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम्।।४९।।

यदि सभी ग्रह केन्द्र-कोण में हों तो यह दुष्ट केमद्रुम योग का नाश कर उसके दुष्ट फलों का भी नाश कर मनुष्य को शुभफल देते हैं।।४९।।

सर्वेषु चन्द्रयोगेषु चेदं यत्नाद्विचिन्तयेत्।
केमद्रुमादिका योगाः सम्भवेऽस्य लयं ययुः।।५०।।

सभी चक्र योगों में इसका विशेष विचार करना चाहिए। क्योंकि सभी शुभ योगों के रहते यदि केमद्रुम योग हो तो उसका नाश होता है।।५०।।

अथ रवियोगानाह—

व्ययधनयुतखेटैर्वोशिवेशी दिनेशा-
दुभयचरिकयोगश्चोभयस्थानसंस्थैः।
निजगृहसुहृदुच्चस्थानयातैश्च जाता
बहुधनसुखयुक्ता राजतुल्या भवन्ति।।५१।।

सूर्य से बारहवें ग्रह हो तो 'वोशि' योग, दूसरे भाव मे हो तो 'वेशि' योग और २/१२ दोनों भावों में ग्रह हों तो 'उभयचरिक' योग होता

है। योगकर्त्ता ग्रह यदि अपने गृह वा मित्रगृह वा अपने उच्चस्थान में हो तो जातक बहुत धन-सुख से युक्त राजा के समान होता है।।५१।।

अथ वोशियोगफलम्—

स्यान्मन्ददृष्टिर्बहुकर्मकर्त्ता पश्यत्यधश्चोन्नतपूर्वकायः।
असत्यवादी यदि वोशियोगो प्रसूतिकाले मनुजस्य यस्य।।५२।।

वोशि योग में उत्पन्न पुरुष मंददृष्टिवाला, बहुत कार्य करने वाला, नीचे देखने वाला, ऊँचा शरीर और झूठ बोलने वाला होता है।।५२।।

अथ वेशियोगफलम्—

चत् सम्भवे यस्य च वेशियोगे भवेद्दयालुः पृथुपूर्वकायः।
स्याद्वाग्विलासालसतासमेतस्तिर्यक्प्रचारः खलु तस्य दृष्टे।।५३।।

वेशि योग मे उत्पन्न जातक दयालु, मोटा शरीर, वाणी बोलने में चतुर, आलसी और तिरछी निगाह वाला होता है।।५३।।

अथो-भयचरीयोगफलम्—

सर्वंसहः स्थिरतरोऽतितरां समृद्धः
सत्त्वाधिकः समशरीरविराजमानः।
नात्युच्चकः सरलदृक् प्रबलामलश्री-
युक्तः किलोभयचरीप्रभवो नरः स्यात्।।५४।।

उभयचरी योग में उत्पन्न जातक सबका सहन करने वाला, स्थिर स्वभाव, अत्यन्त समृद्ध, अधिक बलवान् शरीर वाला, छोटा कद, एक-सी सीधी दृष्टि और अधिक लक्ष्मी से युक्त होता है।।५४।।

इति योगाध्यायः।

अथ राजयोगादिफलाध्यायः

पराशर उवाच—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राजयोगादिकं परम्।
ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम्।।१।।

पराशर ने कहा— अब मैं राजयोग आदि को कह रहा हूँ, जो कि ग्रहों के स्थानभेद और राशिदृष्टिवश से फल देने वाले होते हैं।।१।।

तपस्थानाधिपो राजा मन्त्री मन्त्राधिपो भवेत्।
उभावन्योन्यसंदृष्टौ जातश्चेदिह राज्यभाक्।।२।।

इनमें मुख्य दो ग्रह होते हैं– १. भाग्येश राजा होता है और २. पंचमेश मंत्री होता है। दोनों का परस्पर दृष्टिसंबंध हो तो जातक राजा होता है।।२।।

यत्र कुत्रापि संयुक्तौ तौ वापि समसप्तमौ।
राजवंशोद्भवो बालो राजा भवति निश्चितम्।।३।।

उक्त दोनों ग्रह कहीं पर एक साथ हों अथवा एक दूसरे के सातवें भाव में हों तो इस योग में राजा का लड़का राजा होता है।।३।।

वाहनेशस्तथा माने मानेशो वाहने स्थितः।
बुद्धिधर्माधिपाभ्यां तु दृष्टश्चेदिह राज्यभाक्।।४।।

सुखेश दशम स्थान में और कर्मेश सुख स्थान में और पंचमेश नवमेश से देखा जाता हो तो राजयोग होता है।।४।।

सुतेशकर्मेशसुखेशलग्ननाथा यदा धर्मपसंयुताश्चेत्।
नृपोत्तमश्चेदिह वारणाढ्यः स्वतेजसा व्याप्तदिगन्तरालः।।५।।

पंचमेश, कर्मेश, सुखेश, लग्नेश यदि धर्मेश से युत हों तो हाथी, घोड़े आदि से युक्त अपने तेज से दिशाओं में प्रसिद्ध उत्तम राजा होता है।।५।।

सुखकर्माधिपौ चैव मन्त्रिनाथेन संयुतौ।
धर्मेशेनाऽथ वा युक्तौ जातश्चेदिह राज्यभाक्।।६।।

सुखेश, कर्मेश यदि पंचमेश धर्मेश से युत हों तो जातक राज्य का अधिकारी होता है।।६।।

सुतेश्वरो धर्मपसंयुतश्चे-
ल्लग्नेश्वरेणापि युतो विलग्ने।
सुखेऽथवा मानगृहेऽथ वा स्याद्
राज्याभिषिक्ता यदि राजवंश्यः।।७।।

पंचमेश, धर्मेश लग्नेश से युत होकर लग्न में हों वा चतुर्थ वा दशम स्थान में हों तो यदि राजा का लड़का हो तो वह राजा होता है।।७।।

धर्मस्थाने गुरुक्षेत्रे स्वगृहे भृगुसंयुते।
पञ्चमाधिपसंयुक्ते जातश्चेदिह राज्यभाक्।।८।।

नवम स्थान में गुरु की राशि हो और अपने स्थान में शुक्र हो तथा पंचमेश से युत हो तो राजा होता है।।८।।

निशार्धाच्च दिनार्धाच्च परं सार्धद्विनाडिका।
शुभो तदुद्भवो राजा धनी वा तत्समोऽपि वा।।९।।

आधी रात के बाद और दोपहर के बाद अढ़ाई घटी २½ शुभवेला होती है। इस समय में उत्पन्न बालक धनी के समान होता है।।९।।

चन्द्रः कविं कविश्चन्द्रं पश्यति लाभतृतीयगः।
शुक्राच्चन्द्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान्।।१०।।

चन्द्रमा शुक्र को और शुक्र चन्द्रमा को एकादश, तीसरे भाव में होकर परस्पर देखते हों तो वाहन और धन से पूर्ण होता है। इसमें चाहे जो तीसरे भाव में हो।।१०।।

अथ चतुर्विधसम्बन्धमाह—

प्रथमः स्थानसम्बन्धो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः।
तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्थकः।।११।।

योगकर्त्ता ग्रह परस्पर एक-दूसरे की राशि में हों अथवा परस्पर देखते हों, अपने-अपने स्थान में होकर देखते हों वा एक ही राशि में हों; ये चार प्रकार के संबंध ग्रहों के होते हैं।।११।।

अथ पारिजातादियोगफलम्—

तन्वीशः पारिजातस्थस्तदा दाता भवेन्न हि।
उत्तमे चोत्तमो दाता गोपुरे पुरुषत्वयुक्।।१२।।

यदि लग्नेश पारिजात अंश में हो तो जातक दाता नहीं होता है। उत्तमांश में हो तो उत्तम दाता होता है। गोपुर में हो तो पुरुषत्व से युक्त होता है।।१२।।

सिंहासने भवेन्मान्यः शूरः पारावतांशके।
सभासदो देवलोके द्वितीये च मुनिर्मतः ।।१३।।

सिंहासनांश में सर्वजनमान्य, पारावतांश में हो तो शूरवीर, देवलोकांश में हो तो सभासद् और दूसरे में हो तो मुनि-समान होता है।।१३।।

ऐरावते गजे दुष्टो दिग्योगो न भवेद् ध्रुवम्।
सुखेशो वापि जायेशो राज्येशोऽप्येवमेव हि।।१४।।

ऐरावत में दुष्ट होता है, इसी प्रकार सुखेश, सप्तमेश और कर्मेश के फल को जानना चाहिए।।१४।।

पारिजाते सुताधीशो विद्या चैव कुलोचिता।
उत्तमे चोत्तमा विद्या गोपुरे भवनाङ्किता।।१५।।

पंचमेश पारिजातांश में हो तो कुलानुसार विद्या होती है। उत्तमांश में हो तो उत्तम विद्या, गोपुरांश में हो तो कुलानुसार होती है।।१५।।

सिंहासने तथा वाच्या साचिव्येन युता तथा।
पारावते तथा वाच्यं ब्रह्मविद्यासमन्वितम्।।१६।।

सिंहासन में मंत्रित्व-योग्य विद्या और पारावत में ब्रह्मविद्या युक्त विद्या होती है।।१६।।

सुतेशे देवलोकस्थे कर्मयोगान्वितो भवेत्।
उपासना द्वितीयें स्याद्भक्तिस्त्वैरावते भवेत्।।१७।।

पंचमेश देवलोकांश में हो तो जातक कर्मयोगी, दूसरे में उपासक, ऐरावत में भक्तियुक्त होता है।।१७।।

धर्मेशे पारिजातस्थे तीर्थकृत्त्वत्र जन्मनि।
पूर्वेऽपि मनुजो जातो ह्युत्तमे चोत्तमो भवेत्।।१८।।

धर्मेश पारिजातांश में हो तो इस जन्म और पूर्वजन्म दोनों में तीर्थयात्री होता है, उत्तमांश में उत्तम।।१८।।

गोपुरे मखकर्त्ता च परे चैवात्र जन्मनि।
सिंहासने भवेद्धीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः।।१९।।

गोपुरांश में हो तो इस जन्म और दूसरे जन्म में यज्ञकर्त्ता होता है। सिंहासनांश में हो तो धीर, सत्यवादी, जितेन्द्रिय होता है।।१९।।

सर्वधर्मपरित्यागी धर्मैकपदमाश्रितः।
पारावते परे चैव हंसश्चैवात्र जन्मनि।।२०।।

सभी धर्मों को त्यागकर एक धर्म का व्यवस्थापक होता है। पारावतांश में इस जन्म और परजन्म में जातीय पुरुष होता है।।२०।।

लगुडी पितृदण्डी स्याद्देवलोके न संशयः।
द्वितीये चेन्द्रपदं गच्छेत्कृत्वा वै हयमेधकम्।।२१।।

देवलोकांश में हो तो दंडधारी संन्यासी और दूसरे में अश्वमेध यज्ञ करके इन्द्रपद को पाता है।।२१।।

ऐरावते तु धर्मात्मा स्वयं धर्मो भविष्यति।
श्रीरामः कुन्तिपुत्रो वा द्वितीयो न भविष्यति।।२२।।

ऐरावतांश में हो तो स्वयं धर्माचार्य होता है, चाहे श्रीराम हों वा युधिष्ठिर होता है।।२२।।

अथ विशेषयोगफलम्—

अथ योगफलं ब्रूमो ज्ञातव्यं च विशेषतः।
पारिजातादिकानां च फलमेवैकसंस्थितम्।।२३।।

अब विशेषकर योगफल को कह रहा हूँ, पारिजातादि योगों से भिन्न इनका फल होता है।।२३।।

लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणं च विष्णुस्थानं च केन्द्रकम्।
तयोः सम्बन्धमात्रेण राजयोगादिकं भवेत्।।२४।।

त्रिकोण (९।५) लक्ष्मी का स्थान और केन्द्र (१।४।७।१०) विष्णु का स्थान है। इन दोनों के संबंध मात्र से राजयोग होता है।।२४।।

केन्द्रपुत्रेशयोर्योगे योगोऽमात्याभिधो भवेत्।
पारिजातादिके तौ च तदा स प्रबलो भवेत्।।२५।।

केन्द्रेश और पंचमेश के योग से 'अमात्य' नाम का योग होता है। यदि योगकारक पारिजातादि वर्ग में हो तो प्रबल राजयोग होता है।।२५।।

लग्नेशेन धनेशाद्यात्रैव योगः प्रकीर्त्तितः।
मन्त्रेशोऽमात्यतां याति सप्तमाधीशयोगतः।।२६।।

लग्नेश के साथ धनेश आदि के संबंध से योग नहीं होता है। पंचमेश सप्तमेश से योग होता हो तो अमात्य योग होता है।।२६।।

कर्मेशस्य तु योगेन राजा साचिव्यतामियात्।
केन्द्रधर्मेशयोर्योगे राजा वै राजवन्दितः।।२७।।

इसी में कर्मेश योग करता हो तो राजा या मंत्री होता है। केन्द्रेश और नवमेश का योग हो तो राजा से वंदित राजा होता है।।२७।।

धर्मकर्माधिपौ चैव व्यत्यये तावुभौ स्थितौ।
युक्तश्चेद्वै तदा वाच्यः सर्वसौख्यसमन्वितः।।२८।।

धर्मेश, कर्मेश व्यत्यय से अर्थात् धर्मेश कर्म में और कर्मेश धर्म भाव में अथवा एकत्र युक्त हों तो सभी सुखों से युक्त होता है।।२८।।

पारिजाते स्थितौ तौ तु दण्डे लोकानुशिक्षकः।
उत्तमे चोत्तमो भूयो गजवाजिरथादिमान्।।२९।।

यदि धर्मेश कर्मेश पारिजात में हों तो राजा दंड का शिक्षक होता है। उत्तमांश में हो तो हाथी-घोड़े से युक्त उत्तम राजा होता है।।२९।।

गोपुरे नृपशार्दूलो पूजितांघ्रिर्नृपैर्भवेत्।
सिंहासने चक्रवर्त्ती सर्वक्षोणीशपालकः।।३०।।

गोपुरांश में हों तो राजाओं में सिंह, राजाओं से पूज्यचरण वाला राजा होता है। सिंहासनांश में हों तौ सभी राजाओं का पालन करने वाला चक्रवर्त्ती राजा होता है।।३०।।

इति राजयोगादिविचारकथनम्।

अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच—

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजयोगा द्विजोत्तम।
येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत्।।१।।

पराशर ने कहा—हे विप्र! अब मैं राजयोगों को कहता हूँ, जिनके जानने से मनुष्य राजा से पूज्य होता है।।१।।

ये ये योगाः पुरा शम्भुभाषिताः शैलजाग्रतः।
तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन।।२।।

पहले शंकरजी ने पार्वतीजी सें जिन-जिन योगों को कहा था मैं उनके सार को तुमसे कह रहा हूँ।।२।।

चिन्तयेत्कारके लग्ने जनुर्लग्नेऽथवा द्विज।
राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रथमोदितौ।।३।।

आत्मकारकांश लग्न और जन्मलग्न यही दो लग्न मुख्यतः राजयोग-कारक होते हैं।।३।।

आत्मकारकपुत्राभ्यां राजयोगं प्रकल्पयेत्।
तनुपञ्चमनाथाभ्यां तथैव द्विजसत्तम।।४।।

आत्मकारक और पंचमेश से राजयोग को देखना चाहिए। इसी प्रकार जन्मलग्न और उससे पंचमाधिपति द्वारा राजयोग देखना चाहिए।।४।।

विलग्नात्पञ्चमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयः।
विप्रसम्बन्धयोगेन ज्ञेयाः वीर्यबलान्विताः।।५।।

जन्मलग्नेश तथा पंचमेश के संबंध से तथा आत्मकारक और उससे पंचमेश इन दोनों के बलाबल के अनुसार उत्तम, मध्यम और अधम राजयोग होता है।।५।।

लग्नेऽथ पञ्चमे वापि लग्नेशे पञ्चमाधिपे।
पुत्रात्मकारकौ विप्र लग्ने वा पञ्चमेऽपि च।।६।।
सम्बन्धे वीक्षिते तत्र दृष्टैवं पञ्चमाधिपे।
स्वोच्चे स्वांशे स्वभे वापि शुभग्रहनिरीक्षिते।।७।।
महाराजेति योगोऽयं सोऽत्र जातः सुखी नरः।
गजवाजिरथैर्युक्तः सेनासङ्गमनेकधा।।८।।

लग्नेश और पंचमेश लग्न में वा पंचम भाव में हों, आत्मकारक और पंचमेश लग्न वा पंचम में हो, दोनों का किसी प्रकार का संबंध हों और अपने उच्च, नवांश या राशि में हों तो 'महाराज' योग होता है। इसमें उत्पन्न पुरुष सुखी, हाथी, घोड़ा और रथ-सेना आदि से युक्त होता है।।६-८।।

भाग्येशः कारके लग्ने पञ्चमे सप्तमेऽपि वा।
राजयोगप्रदातारौ गजवाजिधनैरपि।।९।।

भाग्येश और आत्मकारक लग्न, पंचम वा सप्तम में हों तो हाथी, घोड़े और धन से युक्त राज्य को देते हैं।।९।।

कारकाद्द्विचतुर्थे च पञ्चमे भावगे द्विज।
शुभखेटो न सन्देहो राजयोगं ददाति च।।१०।।

कारक से २, ४, ५ भाव में शुभग्रह हों तो निश्चय ही राजयोग करते हैं।।१०।।

कारकात् त्रितये षष्ठे राश्योरुभयपापयुक्।
राजवंशोद्भवो विप्र राजयोगस्तथा भवेत्।।११।।

कारक से ३, ६ वा लग्न से ३, ६ भाव में पापग्रह युक्त हों तो राजयोग होता है।।११।।

लग्नाधीशाद्द्यूननाथाद्धने तुर्ये च पञ्चमे।
शुभखेटयुते विप्र राजा च भवति ध्रुवम्।।१२।।

लग्नेश से वा सप्तमेश से ४ वा ५ भाव में शुभग्रह युत हों तो निश्चय ही राजा होता है।।१२।।

कारके पञ्चमे शुक्रे सितेन्दुयुतवीक्षितः।
तन्वारूढपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नरः।।१३।।

कारकांश वा पाँचवें भाव में शुक्र हो और शुक्र-चन्द्रमा से युत-दृष्ट हो, लग्न वा आरूढ़ लग्न में हो तो राजा होता है।।१३।।

जग्माङ्गे च हि होराङ्गे कलाङ्गे येन केनचित्।
रव्यादि दृष्टिमात्रेण सराजा भवति ध्रुवम्।।१४।।

जन्मलग्न वा होरालग्न वा पदलग्न सूर्यादि किसी ग्रह से देखा जाता हो तो राजा होता है।।१४।।

स्वक्षेत्रे तु नवांशे वा द्रेष्काणे भानुजादयः।
लग्नं च सप्तमं विप्र पश्यन्ति राजयोगदाः।।१५।।

पूर्णदृष्टे पूर्णयोगमर्धे चार्धं विधीयते।
पादेन पादयोगं च राजयोगमिदं क्रमात्।।१६।।

अपने राशि, नवांश, द्रेष्काण में सूर्य आदि ग्रह होकर लग्न वा सप्तम को देखें तो राजयोग होता है। पूर्णदृष्टि हो तो पूर्ण, अर्धदृष्टि हो तो आधा, पाददृष्टि हो तो चौथाई राजयोग होता है।।१५-१६।।

षट्कुण्डल्यन्तरे विप्र पश्यन्ति भास्करादयः।
राजयोगप्रदातारौ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१७।।

षड्वर्ग कुण्डली के लग्न को सूर्य आदि ग्रह देखते हों तो राजयोग होता है।।१७।।

लग्नस्थाने पूर्णदृष्ट्या सप्तमे स्वल्पवीक्षिते।
स्वल्पराज्यप्रदो विप्र षट्लग्नेषु विचिन्तयेत्।।१८।।

यदि लग्न को पूर्णदृष्टि से और सप्तम को अल्पदृष्टि से देखते हों तो अल्प राजयोग होता है।।१८।।

एवं नवांशकुण्डल्यां द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत्।
लग्नसप्तमयोः खेटो राजयोगप्रदायकः।।१९।।

इसी प्रकार नवांशकुंडली और द्रेष्काणकुंडली को भी देखना चाहिए। क्योंकि लग्न और सप्तम देखने वाला ग्रह राजयोगकारक होता है।।१९।।

उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत्।
राशेर्द्रेष्काणतोंऽशाच्च राशेरंशादथापि वा।।२०।।

इन दोनों भावों को अपने उच्च में बैठा ग्रह देखता हो अथवा लग्न और दूसरे भाव को देखता हो तो राजयोग होता है।।२०।।

जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते।
उच्चारूढे तु सम्प्राप्ते चन्द्राक्रान्ते विशेषतः।।२१।।

भावलग्न, होरालग्न और घटीलग्न को कोई ग्रह देखता हो तो राजयोग होता है। इसमें भी लग्नपद वा चन्द्र के साथ कोई उच्चस्थ ग्रह हो तो विशेष राजयोग होता है।।२१।।

क्रान्ते वा गुरुशुक्राभ्यां केनाप्युच्चग्रहेण वा।
दुष्टार्गलाग्रहाभावे राजयोगो न संशयः।।२२।।

लग्नपद वा चन्द्र के साथ कोई उच्च ग्रह हो, उसमें गुरु-शुक्र का योग हो और पापग्रह कृत अर्गला योग हो तो निःसंशय राजयोग होता है।।२२।।

शुभारूढे तत्र चन्द्रे धने देवगुरुस्तथा।
राजयोगप्रदाता च निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२३।।

अथवा पदस्थान में चन्द्रमा हो, उससे दूसरे गुरु हो तो निश्चय ही राजयोग होता है।।२३।।

शुभे लग्ने शुभे त्वर्थे तृतीये पापखेचरैः।
चतुर्थे तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समोऽपि वा।।२४।।

शुभग्रह लग्न द्वितीय और चतुर्थ में हों और तीसरे भाव में पापग्रह हों तो राजा वा राजा के समान होता है।।२४।।

उच्चस्थे हरिणाङ्को वा जीवो वा शुक्र एव वा।
एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः।।२५।।

यदि चन्द्रमा, गुरु वा शुक्र में कोई अपनी उच्चराशि का बली होकर दूसरे भाव में हो तो लक्ष्मीप्राप्ति होती है।।२५।।

लग्नं पश्यति ये खेटास्ते सर्वे शुभदायिनः।
नीचखेटोऽपि लग्नं चेत्पश्येद्राजा प्रकीर्त्तितः।।२६।।

लग्न को जो ग्रह देखते हैं वे सभी शुभ देने वाले होते हैं। यदि अपनी नीच राशि में स्थित ग्रह लग्न को देखता हो तो राज्यदायक होता है।।२६।।

षष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे सम्बन्धनीचकृत्।
यो ग्रहः पश्यते लग्नं राजयोगप्रदायकः।।२७।।

छठे, आठवें और तीसरे भाव में अपनी नीचराशि का ग्रह भी योगकारक होता है। इनमें से जो ग्रह लग्न को देखता हो वह राजयोगकारक होता है।।२७।।

राजयोगो जन्मलग्नं पश्येदुच्चग्रहो यदि।
षष्ठाष्टमगते नीचे लग्नं पश्यति योगकृत्।।२८।।

यदि अपनी उच्चराशि में स्थित ग्रह को देखता हो तो राजयोग होता है। छठे, आठवें में अपने नीच राशि में बैठा ग्रह को देखे तो राजयोग होता है।।२८।।

षष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्नं पश्यति वाथवा।
तृतीये लाभगे नीचे लग्नं पश्यति राज्यदः।।२९।।

अथवा षष्ठेश वा अष्टमेश अपनी नीचराशि में होकर लग्न को देखते हों अथवा तीसरे, ग्यारहवें भाव में होकर लग्न को देखते हों तो राजयोग करते हैं।।२९।।

षष्ठाष्टमाधिपौ खेटौ शुभौ नीचाश्रितौ यदा।
पश्यतो जन्मलग्नं च राजयोग उदाहृतः।।३०।।

षष्ठेश, अष्टमेश शुभग्रह हों, अपनी नीचराशि में होकर लग्न को देखते हों तो राजयोग होता है।।३०।।

इति राजयोगाध्यायः।

अथ राजप्रधानयोगाध्यायः

राज्येशोऽपि जनुर्ल्लग्नादमात्येशयुतेक्षिते।
अमात्यकारकेणापि प्रधानत्वं नृपालये।।१।।

राज्येश (दशमेश) जन्मलग्न से पंचमेश से और अमात्यकारक से युत-दृष्ट हो तो राजा के यहाँ प्रधान होता है।।१।।

लाभेशो वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविवर्जिते।
तदा राज्यालये विप्र प्रधानत्वं कुलेऽपि च।।२।।

लाभेश लाभस्थान को देखता हो और पापग्रह से दृष्ट-युत न हो तो राजा के यहाँ प्रधान होता है।।२।।

अमात्यकारकेणापि कारकेन्द्रेशसंयुते।
तीव्रबुद्धियुतो बालः सेनाधीशोऽपि जायते।।३।।

आत्मकारक के राशीश अमात्यकारक से युत-दृष्ट हो तो बालक कड़ी तीक्ष्ण बुद्धि का सेनापति होता है।।३।।

कारके केन्द्रकोणेषु तुङ्गर्क्षे चापि संस्थिते।
भाग्यपेन युते दृष्टे राजमन्त्री प्रजायते।।४।।

आत्मकारक अपने उच्च का होकर केन्द्र (१।४।९।१०) वा कोण (९।५) में हो और भाग्येश से युत वा दृष्ट हो तो राजमंत्री होता है।।४।।

कारको यस्य राशीशे लग्नगे संयुतेक्षिते।
मन्त्रित्वमुख्ययोगोऽयं वार्धके नात्र संशयः।।४।।

आत्मकारक ही जन्मराशीश होकर लग्न में और भाग्येश से युत वा दृष्ट हो तो वृद्धावस्था में मुख्यमंत्री होता है।।५।।

कारके शुभसंयुक्ते पञ्चमे सप्तमेऽपि वा।
यत्कारके यदा प्राप्ते तत्कारके धनं लभेत्।।६।।

आत्मकारक शुभग्रह से युक्त होकर पाँचवें वा सातवें भाव में जिस भाव के कारक से युक्त होता है उसके द्वारा धन का लाभ होता है।।६।।

भाग्यारूढपदे लग्ने कारके नवमेऽपि वा।
राजयोगप्रदातारौ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।७।।

भाग्यभाव का पद लग्न में वा आत्मकारक नवम भाव में हो तो राजसंबंधकारक होते हैं।।७।।

लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिविवर्जितः।
कारके शुभसंयुक्ते लाभं तस्य नृपालयात्।।८।।

लाभेश लाभभाव में हो, पापग्रह से न देखा जाता हो, आत्मकारक शुभग्रह से युत हो तो राजा के यहाँ से लाभ होता है।।८।।

कारकात्तूर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम।
आदावन्ते विशेषस्य राजचिह्नेन संयुतः।।९।।

कारक से चौथे भाव में शुक्र और चन्द्रमा हों तो आयु के पूर्वार्ध में और अंतिम में राजचिह्नों से युक्त होता है।।९।।

इति राजप्रधानयोगाध्यायः।

अथ धनयोगाध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धनयोगं विशेषतः।
पञ्चमे तु भृगेक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण वीक्षिते।।१।।
लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः।

अब मैं विशेष धनयोगों को कहता हूँ। पाँचवें भाव में शुक्र की राशि (२।७)हो और उसे शुक्र देखता हो तथा एकादश में शनि हो तो बहुधन का स्वामी होता है।।१।।

पञ्चमे सौम्यकक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि।।२।।
लाभे तु चन्द्रभौमौऽथ बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में बुध की राशि (३।६) हो और उसमें बुध युत हो तथा एकादश भाव में चन्द्रमा-भौम हो तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।२।।

पञ्चमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्सूर्यसुतो यदि।।३।।
लाभे सोमात्मजस्थे वा बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में शनि की राशि (१०।११) हो और उसमें शनि युत हो तथा एकादश भाव में बुध हो तो अनेक द्रव्य का स्वामी होता है।।३।।

पञ्चमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन् रवियुते यदि।।४।।
लाभे रवीन्दुसंस्थे तु बहुद्रव्यस्य नायकः।

पाँचवें भाव में सूर्य की राशि (५) हो और उसमें सूर्य हो तथा लाभभाव में रवि-चन्द्रमा हों तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।४।।

पञ्चमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनियुते यदि।
लाभे भौमेन संयुक्ते बहुद्रव्यस्य नायकः।।५।।

पाँचवें भाव में शनि की राशि (१०।११) हो और शनि युत हो तथा लाभभाव में भौम हो तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।५।।

पञ्चमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुयुते यदि।
लाभे तु चन्द्रभौमौ चेद्बहुद्रव्यस्य नायकः।।६।।

पाँचवें भाव में गुरु की राशि (९।१२) हो और उसमें गुरु युत हो और लाभभाव में चंद्रमा-भौम हों तो बहुत द्रव्य का स्वामी होता है।।६।।

भानुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् भानौ स्थिते यदि।
भौमेन गुरुणा युक्ते दृष्टे वा स्याद्युतो धनैः।।७।।

सूर्य की राशि जन्मलग्न हो और सूर्य युत हो और मंगल गुरु से युत वा दृष्ट हो तो धनी होता है।।७।।

चन्द्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिंश्चन्द्रयुते यदि।
जीवभौमयुते दृष्टे जातोऽवश्यं धनी भवेत्।।८।।

चंद्रमा की राशि लग्न में हो और चंद्रमा से युत हो और गुरु-भौम से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।८।।

भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि।
सोमशुक्रार्कजैर्दृष्टे युक्ते श्रीमान्नरो भवेत्।।९।।

मंगल की राशि लग्न में हो और उसमें भौम युत हो और बुध, शुक्र शनि से दृष्ट-युत हो तो धनी होता है।।९।।

गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् गुरुयुते यदि।
सौम्यभौमयुते दृष्टे यातो यस्तु धनीश्वरः।।१०।।

गुरु की राशि लग्न में हो और उसमें गुरु युत हो और बुध-भौम से दृष्ट-युत हो तो धनी होता है।।१०।।

बुधक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् सौम्ययुते यदि।
शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः।।११।।

बुध की राशि लग्न में हो और उसमें बुध युक्त हो और शनि-शुक्र से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।११।।

भृगुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन् भृगुयुते यदि।
शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी भवेत्।।१२।।

शुक्र की राशि लग्न में हो और शुक्र युत हो और शनि-बुध से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।१२।।

ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्यां युक्ताऽथ दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते।
रन्ध्रेश्वरादिव्ययपैर्युताः स्युः शोकप्रदा मारकनायकैश्च।।१३।।

जो-जो ग्रह भाग्येश, पंचमेश से युत-दृष्ट होते हैं वे अपने दशा अंतर में शुभफलद होते हैं और जो अष्टमेश, षष्ठेश और व्ययेश से युत होते हैं वे तथा मारकेश अपने समय में दुःखद होते हैं।।१३।।

क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्थानादिवशात्तथा।
ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम्।।१४।।

इस प्रकार क्रूर तथा शुभ ग्रह के अपने स्थानादि भेद से ग्रहों के बलाबल को विचार कर फलादेश समझना चाहिए।।१४।।

इति धनयोगाः।

अथ दरिद्रयोगाध्यायः

लग्नेशे वै रिष्फगते रिष्फेशे लग्नमागते।
मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनः पुमान्।।१।।

जन्मलग्नेश बारहवें भाव में और व्ययेश लग्न में हो, मारकेश से युत दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है।।१।।

लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेऽपि वा चेत्।
विलग्नपे मारकनाथदृष्टे जातो भवेन्निर्धनकीपि मुख्यः।।२।।

लग्नेश छठे भाव में हो और षष्ठेश लग्न में हो और लग्नेश मारकेश से दृष्ट हो तो निर्धन होता है।।२।।

लग्नेन्दू केतुयुक्तौ वा लग्नेशे निधनं गते।
मारकेशयुते दृष्टे जातो वै निर्धनो भवेत्।।३।।

लग्न और चंद्रमा केतु से युत हों तथा लग्नेश आठवें भाव में हो, मारकेश से युत-दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है।।३।।

षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसंयुते।
मारकेशयुते दृष्टे राजवंशोऽपि निर्धनः।।४।।

लग्नेश पापग्रह से युत होकर ६-८-१२ भाव में गया हो और मारकेश से युत-दृष्ट हो तो राजबालक भी निर्धन होता है।।४।।

विलग्ननाथेऽरिविनाशरिष्फनाथेन युक्ते यदि पापदृष्टे।
मित्रात्मजेनाथयुतेपि दृष्टे शुभैर्न दृष्टे स भवेद्दरिद्रः।।५।।

लग्नेश ६-८-१२ भावों के स्वामी से युक्त होकर पापग्रह से दृष्ट होकर शनि से भी युत हो तथा शुभग्रह से न दृष्ट हो तो मनुष्य दरिद्र होता है।।५।।

मन्त्रेशो धर्मनाथश्च षष्ठव्ययस्थितौ क्रमात्।
दृष्टो चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्धनो नरः।।६।।

पंचमेश और धर्मेश क्रम से ६/१२ भाव में हों और मारकेश से देखे जाते हों तो जातक निर्धन होता है।।६।।

पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना।
मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनो नरः।।७।।

कर्मेश और नवमेश से अतिरिक्त अन्य पापग्रह लग्न में हों और मारकेश से युत-दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है।।७।।

यद्भावेशो रन्ध्ररिष्फारिसंस्थो यद्भावस्था रन्ध्ररिष्फारिभेशाः।
पापैर्दृष्टो मन्ददृष्टोऽथवा चेद्दुःखाक्रान्तश्चञ्चलो निर्धनः स्यात्।।८।।

जो भावेश (३-८-१२)में स्थित हों और जिस भाव में (६-८-१२) के स्वामी हों, पापग्रह वा शनि से दृष्ट हों तो जातक दुःखी, चंचल और दरिद्र होता है।।८।।

चन्द्राक्रान्तनवांशेशो मारकेशयुतो यदि।
मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निर्धनो भवेत्।।९।।

चंद्रमा के नवांश का स्वामी मारकेश से युत हो अथवा मारक स्थान में हो तो जातक निर्धन होता है।।९।।

विलग्नेशनवांशेशौ रिष्फषष्ठाष्टगौ यदि।
मारकेशयुतौ दृष्टौ जातोऽसौ निर्धनो नरः।।१०।।

लग्नेश के नवांश का स्वामी १२-६-८ भाव में हो और मारकेश से युत दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है।।१०।।

शुभस्थानगताः पापाः पापस्थाने गताः शुभाः।
धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडितः।।११।।

शुभग्रह की राशि में पापग्रह और पापग्रह की राशि में शुभग्रह हों तो जातक को धन और अन्न दोनों का कष्ट होता है।।११।।

कारकाद्वा विलग्नाद्वा रन्ध्रे रिष्फे द्विजोत्तम।
लग्नकारकयोर्दृष्ट्या दरिद्रार्त्तियुतो नरः।।१२।।

कारक से वा लग्न से ८/१२ वें भाव को कारक और लग्नेश न देखते हों तो जातक दरिद्र होता है।।१२।।

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज।
लग्नकारकयोर्दृष्ट्या व्ययशीलो भवेन्नरः।।१३।।

लग्न वा कारक से १२वें भाव पर लग्नेश वा कारक की दृष्टि हो तो जातक अधिक व्यय करने वाला होता है।।१३।।

ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्यां युक्ता न दृष्टा बहुदुःखदास्ते।
रन्ध्रादिषष्ठव्ययगैर्युतास्ते व्ययप्रदा मारकनाथकेन।।१४।।

जो-जो ग्रह त्रिकोणेश से युत-दृष्ट न होकर त्रिकेश (६-८-१२) से युत हों और मारकेश से दृष्ट हों, वे अपने दशा में दुःखदायी होते हैं।।१४।।

अथ दरिद्रभङ्गयोगाः—

धनसंस्थौ च भौमेन्दू कथितौ धननाशकौ।
बुधेक्षितौ महावित्तं कुरुतस्तत्रगः शनिः।।१५।।

धन भाव में भौम-चंद्रमा धननाशक होते हैं, किंतु बुध से देखे जाते हों तो महाधनी होता है एवं शनि हों तो भी महाधनी होता है।।१५।।

निःस्वतां कुरुते तत्र रविर्नित्यं यमेक्षितः।
महाधनयुतं ख्यातं शन्यदृष्टः करोत्यसौ।।१६।।

दूसरे भाव में रवि हो और शनि से देखा जाता हो तो दरिद्र होता है, किंतु शनि न देखता हो तो महाधनी होता है।।१६।।

धनभावगताः सौम्याः कुर्वन्त्येव धनं बहु।
बुधदृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुरुते नरम्।।१७।।

धनभाव में शुभग्रह हों तो बहुत धन होता है, किंतु उसी भाव में गुरु हो और बुध देखता हो तो निर्धन होता है।।१७।।

बुधश्चन्द्रेक्षितस्तत्र सर्वस्वं हन्ति निश्चितम्।
क्रूरखेटादियोगैश्च दारिद्र्यं सम्भवेन्नृणाम्।।१८।।

यदि बुध हो और चंद्रमा देखता हो तो सर्वस्व का नाश होता है। क्रूरग्रह आदि के योग से जातक को दरिद्रयोग होता है।।१८।।

इति दारिद्रयोगाध्यायः।

ग्रहाणामवस्थाध्यायः

मैत्रेय उवाच—

आदित्यादिग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक् पृथक्।
भेदाः कतिविधाः सन्ति कथय त्वं कृपानिधे!।।१।।

मैत्रेय ने कहा—हे कृपानिधि! सूर्य आदि ग्रहों की अवस्थाओं के भेद और उनकी संख्या पृथक्-पृथक् मुझसे कहें।।१।।

पराशर उवाच—

भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधानि च।
षण्णवत्याश्रितावस्था सारभूतं वदाम्यहम्।।२।।

पराशरजी ने कहा— सूर्य आदि ग्रहों की अनेक अवस्थायें हैं, जिनकी संख्या ९६ हैं। उनमें सारभूत प्रधान अवस्थाओं को कह रहा हूँ।।२।।

अथ जाग्रदाद्यवस्था तत्फलं चाह—

त्रिंशदंशं त्रिभागं च कल्पयित्वा पृथक् पृथक्।
विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम्।।३।।
विज्ञानं प्रथमं पुंसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः।
विशेषतः परीक्ष स्याज्जागरः कार्यसाधकः।।४।।

तीस अंशात्मक राशि के तीन भाग करके दश-दश अंश के एक-एक भाग का विषम राशि में जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्त अवस्था होती है और समराशि में विलोम(सुषुप्त, स्वप्न, जाग्रत्) अवस्था होती है। परीक्षण से यह निश्चित है कि जाग्रत् अवस्था में कार्य सिद्ध होता है।।३-४।।

स्वप्नावस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यदि।
निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम।।५।।

स्वप्नावस्था मध्यम फलदायक और सुषुप्त अवस्था निष्फल होती है।।५।।

अथ दीप्ताद्यवस्था तत्फलं चाह—

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शान्तो दीनोऽतिदुःखितः।
विकलश्च खलः क्रोधी नवधा खेचरो भवेत्।।६।।

दीप्त, स्वस्थ, मुदित, शांत, दीन, अतिदुःखी, विकल, खल और कोपी— ये नव अवस्थायें होती हैं।।६।।

उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्यादधिमित्रके।
मुदितो मित्रभे शान्तः समभे दीन उच्यते।।७।।

जो ग्रह अपनी उच्चराशि में होता है वह दीप्त होता है। अपने अधिमित्र के गृह में हो तो स्वस्थ, मित्र के गृह में हो तो मुदित, सम के गृह में हो तो दीन।।७।।

शत्रुभे दुःखितोऽतीवविकलः पापसंयुतः।
खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः।।८।।

शत्रु की राशि में हो तो अतिदुःखी, पापग्रह के साथ हो तो विकल, पापग्रह की राशि में हो तो खल और सूर्य के साथ हो तो कोपी होता है।।८।।

पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहने च।
स्त्रीपुत्रलाभं शुभबन्धुपूजां क्षितीश्वरान्मानमुपैति विद्वान्।।९।।

दीप्त ग्रह की राशि में पृथ्वी का लाभ, उत्साह, पराक्रम, धन, वाहन, स्त्री-पुत्र का लाभ, शुभकार्य, बंधुओं से प्रतिष्ठा और राजा से प्रतिष्ठा का लाभ होता हैं।।८।।

स्वस्थस्य खेटस्य दशाविपाके स्वस्थो नृपाल्लब्धधनादिसौख्यम्।
विद्यां यशः प्रीतिमहत्त्वमाराद्दारार्थभूम्यात्मजधर्ममेति।।१०।।

स्वस्थ ग्रह की दशा में स्वस्थता, राजा से प्राप्त धन आदि का सुख, विद्या, यश, धन-धर्म आदि का लाभ होता है।।१०।।

मुदान्वितस्यापि दशाविपाके वस्त्रादिकं गन्धसुतीर्थधैर्यम्।
पुराणधर्मश्रवणादिलाभं हयादियानाम्बरभूषणाप्तिम्।।११।।

मुदित ग्रह की दशा में वस्त्र, गंध, तीर्थयात्रा, धैर्य, पुराण आदि का श्रवण, घोड़ा आदि सवारियों का लाभ, आभूषण का लाभ होता है।।११।।

दशाविपाके सुखधर्ममेति शान्तस्य भूपुत्रकलत्रयानम्।
विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं बह्वर्थदेशाधिपपूज्यतां च।।१२।।

शांत की दशा में सुख, धर्म का लाभ, भूमि, स्त्री, सवारी, विद्या का विनोद, धर्मशास्त्र, बहुत धन तथा राजाओं से पूज्य होता है।।१२।।

स्थानच्युतिबन्धुविरोधता च दीनस्य खेटस्य दशाविपाके।
जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या त्यक्तो जनै रोगनिपीडितः स्यात्।१३।

दीन ग्रह की दशा में स्थानच्युति, बंधुओं से विरोध, कुत्सित वृत्ति से जीविका, लोगों से त्यागा हुआ और रोग से पीडित होता है।।१३।।

दुःखार्दितस्यापि दशाविपाके नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम्।
विदेशगो बन्धुजनैर्विहीनश्चौराग्निभूपैर्भयमातनोति।।१४।।

अतिदुःखी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के दुःखों से युक्त, विदेश यात्रा, बंधुओं से त्याज्य, चोर, अग्नि और राजा से भय होता है।।१४।।

वैकल्यखेटस्य दशाविपाके वैकल्यमायाति मनोविकारम्।
मित्रादिकानां मरणं विशेषात्स्त्रीपुत्रयानाम्बरचोरपीडाम्।।१५।।

विकल ग्रह की दशा में शरीर में विकलता, मन में विकार, मित्रादिकों का मरण, स्त्री, पुत्र, सवारी आदि की पीडा होती है।।१५।।

दशाविपाके कलहं वियोगं खलस्य खेटस्य पितुर्वियोगम्।
शत्रोर्जनानां धनभूमिनाशमुपैति नित्यं स्वजनैश्च निन्दाम्।।१६।।

खल ग्रह की दशा में कलह, वियोग, पिता का वियोग, शत्रु द्वारा जन, धन, भूमि का नाश और अपने ही लोगों से नित्य निंदा होती है।।१६।।

कोपान्वितस्यापि दशाविपाके पापाः समायान्ति बहुप्रकारैः।
विद्याधनस्त्रीसुतबन्धुनाशं पुत्रादिकृच्छ्रं खलु नेत्ररोगम्।।१७।।

कोपी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के पापकर्म, विद्या, धन, स्त्री, पुत्र और बंधुओं का नाश, पुत्रादि को कष्ट और नेत्ररोग होता है।।१७।।

अथ बालाद्यवस्थाफलम्—

बालो रसांशैरसमे प्रदिष्टस्ततः कुमारो हि युवाथ वृद्धः।
मृतः क्रमादुत्क्रमतः समर्क्षे बालाद्यवस्था कथिता ग्रहाणाम्।।
फलं तु किञ्चिद्वितनोति बालश्चार्द्धं कुमारो यतते न पुंसाम्।
युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम्।।१९।।

एक राशि में षष्ठांश के तुल्य बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत ये पाँच अवस्थाएँ होती हैं। बाल साधारण, कुमार में आधा, युवा में कुछ, वृद्ध में संपूर्ण और मृत में मृत्यु होती है।।१८।१९।।

अथ प्रवासाद्यवस्थाफलम्—

प्रवासनष्टा च मृता जया हास्या रतिर्मुदा।
भुक्तं ज्वरा च कम्पा च सुप्तिर्निर्वाण सन्निभा।।२०।।

प्रवास, नष्टा, मृत, जय, हास्य, रति, मुद, सुदा, भुक्त, ज्वर, कंप और स्थिर ये १२ अवस्थाएँ होती हैं।।२०।।

षष्ठिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम्।
शराब्धिहल्लब्धतोऽर्काच्छेषावस्था द्विजोत्तम।।२१।।

गत नक्षत्र की संख्या को ६० से गुणाकर उसमें नक्षत्र की भुक्त घटी को जोड़कर ४ से गुणाकर उसमें ४५ से भाग देवे तो लब्धि तुल्य अवस्था होती है। लब्धि १२ से अधिक हो तो उसमें १२ से भाग देने से शेष गत अवस्था होती है।।२१।।

प्रवासः प्रवासोपगे जन्मकालेऽर्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः।
मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः।।
रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री
प्रसुप्तापि निद्रां कलिं देहपीडाम्।
भयं तापहानिः सुखं स्यात्तु भुक्त्वा
ज्वराकम्पितासुस्थितासु क्रमेण।।२३।।

अवस्थाओं के नाम के अनुसार ही उनके फल होते हैं।।२२-२३।।

अथ लज्जिताद्यवस्था तत्फलं चाह–

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृषितस्तथा।
मुदितः क्षोभितश्चैव ग्रहावस्थाः प्रकीर्त्तिताः।।२४।।

लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित, क्षोभित, ये ६ ग्रहों की अवस्थाएँ होती हैं।।२४।।

पुत्रगेहगतः खेटो राहुकेतुयुतो भवेत्।
रविमन्दकुजैर्युक्तो लज्जितो ग्रह एव च।।२५।।

पाँचवें भाव में ग्रह राहु, केतु, रवि, शनि और भौम से युक्त हो तो लज्जित होता है।।२५।।

तुङ्गस्थानगतो वापि त्रिकोणेऽपि भवेत्पुनः।
गर्वितः सोऽपि गदितो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२६।।

यदि अपनी उच्चराशि वा मूल त्रिकोण में हो तो गर्वित होता है।।२६।।

शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि।
क्षुधितः स च विज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा।।२७।।

शत्रु की राशि में हो, शत्रु से युक्त हो, शत्रु से देखा जाता हो अथवा शनि से युक्त हो तो क्षुधित होता है।।२७।।

जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः।
शुभग्रहा न पश्यन्ति तृषितः स उदाहृतः।।२८।।

ग्रह जलराशि में हो, अपने शत्रु से देखा जाता हो, शुभ ग्रह से न देखा जाता हो तो तृषित होता है।।२८।।

मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः।
गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्त्तितः।।२९।।

यदि ग्रह मित्र के गृह में हो, मित्र से युक्त हो और मित्र से देखा जाता हो और गुरु से युक्त हो तो मुदित होता है।।२९।।

रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यन्ति सर्वथा।
क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः।।३०।।

रवि से युक्त हो और केवल पापग्रह से दृष्ट हो और शत्रु से देखा जाता हो तो क्षोभित होता है।।३०।।

येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति सर्वथा।
क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः।।३१।।

जिन-जिन भावों में क्षुधित और क्षोभित ग्रह रहते हैं उन-उन भाव के फलों का नाश होता है।।३१।।

एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु पण्डितैः।
बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः।।३२।।

इसी प्रकार सभी भावों का बलाबल के विचार से फल का निर्णय करना चाहिए।।३२।।

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः।
बलहीने तथा हानिः सबले च महाफलम्।।३३।।

परस्पर मुदित ग्रह हों तो मिश्रित फल होता है। यदि ग्रहहीन बल हो तो हानि और बली हो तो अधिक फल होता है।।३३।।

कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृषितस्तथा।
क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः।।३४।।

जिसके कर्मभाव में लज्जित वा तृषित ग्रह हो अथवा क्षुधित वा क्षोभित ग्रह हो तो वह मनुष्य दुःखी होता है।।३४।।

सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च।
सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा।।३५।।

जिसके पुत्रस्थान में लज्जित ग्रह हो तो उसके पुत्र का नाश होता है।।३५।।

क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत्।
म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम।।३६।।

जिसके सातवें भाव में क्षोभित वा तृषित ग्रह हो तो उसकी स्त्री का नाश होता है।।३६।।

नवालयारामसुखं नृपत्वं कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम्।
सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य।।३७।।
भवति मुदितयोगे वासशालाविशाला
विमलवसनभूषाभूमियोषासु सौख्यम्।
स्वजनजनविलासो भूमिपागारवासो
रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकाशः।।३८।।

गर्वित ग्रह की दशा में नूतन मकान, बगीचा का सुख, नृपत्व, कला में पटुता, सदा धन का लाभ, व्यवहार में कुशलता, राजगृह में वास और शत्रुओं के समूह का नाश होता है।।३८।।

दिशति लज्जितभाववशाद्रतिं विगतराममतिं विमतिक्षयम्।
सुतगदागमनं गमनं वृथा कलिकथाभिरुचिं न रुचिं शुभे।।३९।।

लज्जित ग्रह की दशा में ईश्वर में अनिच्छा, सुंदर बुद्धि की हानि, पुत्र को कष्ट, व्यर्थ भ्रमण, झगड़ा आदि में रुचि और धर्म में अरुचि होती है।।३९।।

संक्षोभितस्यापि फलं विशेषाद्दरिद्रजातं कुमतिं च कष्टम्।
करोति वित्तक्षयमंघ्रिबाधां धनादिबाधामवनीशकोपात्।।४०।।
क्षुधितग्रहवशाद्वै शोकमोहादितापः
परिजनपरितापादाधिभीत्या कृशत्वम्।
कलिरपि रिपुलोकैरर्थबाधा नराणा-
मखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात्।।४१।।

क्षोभित ग्रह की दशा में दरिद्रता, दुर्बुद्धि, कष्ट, धन का नाश, पैर में कष्ट, राजा के कोप से धनप्राप्ति में बाधा होती है। क्षुधित ग्रह की दशा में शोक, मोह, परिजनों के कष्ट से मानसिक व्यथा, कृशता, शत्रु से विवाद, धन की हानि और विरोध से बुद्धि की हानि होती है।।४१।।

तृषितखगभवे स्यादंगनासंगमध्ये
भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकारः।
निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्वं
खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव।।४२।।

तृषित ग्रह की दशा में स्त्री के संसर्ग से रोग, दुष्ट कार्य का अधिकार, अपने ही लोगों के विवाद से धन की हानि, कृशता, दुष्टों से कष्ट और मानहानि होती है।।४२।।

अथ शयनाद्यवस्थानयनम्—

शयनं चोपवेशं च नेत्रपाणिप्रकाशनम्।
गमनागमनं चाथ सभायां वसतिं तथा।।४३।।
आगमं भोजनं चैव नृत्यलिप्सां च कौतुकम्।
निद्रां ग्रहाणां चेष्टां च कथयामि तवाग्रतः।।४४।।

१ शयन, २ उपवेशन, ३ नेत्रपाणि, ४ प्रकाशन, ५ गमन, ६ आगमन, ७ सभावास, ८ आगम, ९ भोजन, १० नृत्यलिप्सा, ११ कौतुक, १२ निद्रा —ये १२ अवस्था और उनकी चेष्टाओं को कहता हूँ।।४३-४४।।

यस्मिनृक्षे भवेत्खेटस्तेन तं परिपूरयेत्।
पुनरंशेन सम्पूर्य स्वनक्षत्रं नियोजयेत्।।४५।।
यातदण्डं तथा लग्नमेकीकृत्य सदा बुधः।
रविणा हरते भागं शेषं कार्ये नियोजयेत्।।४६।।

जिस नक्षत्र में ग्रह हो उसकी संख्या से ग्रहसंख्या को गुणा कर दे। गुणन-फल को ग्रह की नवांश संख्या से गुणा कर दे। गुणनफल में जन्मनक्षत्र संख्या को जोड़ दे और इसमें इष्टघटी और लग्न की संख्या को जोड़ कर उसमें १२ का भाग देने से शेष के तुल्य शयन आदि अवस्था होती है।।४५-४६।।

नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुनः पूरणमाचरेत्।
नामाक्षरेण संयुक्ते हर्तव्यं रविणा ततः।।४७।।

फिर शेषांक को उसी से गुणा कर गुणनफल में नाम के आद्यक्षर के अनुसार स्वरांक को जोड़ दे और १२ से भाग देवे, शेष में ग्रह का ध्रुवांक जोड़ दे।।४७।।

रवौ पञ्च तथा देयं चन्द्रे दद्याद्द्वयं तथा।
कुजे द्वयं च संयुक्तं बुधे त्रीणि नियोजयेत्।।४८।।

जैसे रवि का ५, चंद्र का २, भौम का २, बुध का ३।।४८।।

गुरौ बाणाः प्रदेयाश्च त्रयं दद्याच्च भार्गवे।
शनौ त्रयमथो देयं राहौ दद्याच्चतुष्टयम्।।४९।।

गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३ और राहु का ४।।४९।।

शेषं हतं च रामेण ग्रहाणां त्रिविधं भवेत्।
दृष्टिं चेष्टां विचेष्टां च कथयामि तवाग्रतः।।५०।।

जोड़कर ३ का भाग देने से १ बचे तो दृष्टि, २ बचे तो चेष्टा और ३ या ० बचे तो विचेष्टा होती है।।५०।।

उदाहरण— जैसे सूर्य ३-१८-२६-१४ जन्मनक्षत्र पुनर्वसु, इष्टघटी ३२ और जन्मलग्न मकर है। सूर्य आश्लेषा नक्षत्र में है, उसकी संख्या ९ है, रवि की संख्या १ को गुणा किया तो ९ हुआ, रवि की नवांश संख्या ६ से गुणा करने पर ६x९=५४ हुआ। इसमें जन्मनक्षत्र संख्या ७, इष्टघटी ३२ और जन्मलग्न संख्या १० इन तीनों को जोड़ने से १०३ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष ७ बचा, अतः सातवीं सभावास अवस्था सूर्य की हुई। फिर शेष को उसी से गुणा करने से ४९ हुआ। इसमे दिनेश के आद्य अक्षर का स्वरांक ५ जोड़कर १२ से भाग देने से ६ शेष बचा। इसमें रवि का ध्रुवांक ५ जोड़कर तीन का भाग देने से २ बचा, अतः चेष्टा अवस्था हुई।

स्वराङ्कचक्र

१	२	३	४	५
अ.	इ.	उ.	ए.	ओ.
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	र	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

दृष्ट्यादिफलम्—

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं धनम्।
विचेष्टायां फलं न स्यादेवं दृष्टिफलं विदुः।।५१।।

दृष्टि में ग्रहों की अवस्था का अल्पफल, चेष्टा में अधिक फल और विचेष्टा में निष्फल होता है।।५१।।

शुभाशुभं ग्रहाणां च समीक्ष्याथ बलाबलम्।
तुङ्गस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं तथा बुधैः।।५२।।

ग्रहों का शुभाशुभ और बलाबल विचार कर फलादेश करना चाहिए।।५२।।

अथ रवेर्द्वादशावस्थाफलम्—

मन्दाग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रेरपि पित्तकोपः।
व्रणं गुदे शूलमुरःप्रदेशे यदोष्णभानौ शयनं प्रयाते।।५३।।

यदि सूर्य शयन अवस्था में हो तो जातक को मंदाग्निरोग, चरण में स्थूलता, पित्तप्रकोप, गुदा में व्रण तथा हृदय में शूल होता है।।५३।।

दरिद्रताभारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात्।
कठोरचित्तः खलु नष्टवित्तः सूर्यो यदा चेदुपवेशनस्थः।।५४।।

उपवेशन अवस्था में हो तो दरिद्रता को भोगने वाला, कठोर चित्त वाला तथा नष्ट धन वाला होता है।।५४।।

नरः सदानन्दधरः विवेकी परोपकारी बलवित्तयुक्तः।
महासुखी राजकृपाभिमानी दिवाधिनाथो यदि नेत्रपाणौ।।५५।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो सदा आनंद भोगनेवाला, विवेकी, परोपकारी, बली, धनी, महासुखी, राजा की कृपा से अभिमानी होता है।।५५।।

उदारचित्तः परिपूर्णवित्तः सभासु वक्ता बहुपुण्यकर्त्ता।
महाबली सुन्दररूपशाली प्रकाशने जन्मनि पद्मनीशे।।५६।।

प्रकाशन में हो तो उदार चित्तवाला, धन से पूर्ण, सभा मे वक्ता, अनेक पुण्य करने वाला, महाबली, सुंदर रूपवाला होता है।।५६।।

प्रवासशाली किल दुःखमाली सदालसी धीधनवर्जितश्च।
भयातुरः कोपपरो विशेषाद्दिवाधिनाथे गमने मनुष्यः।।५७।।

गमन अवस्था में हो तो जातक प्रवास मे रहने वाला, दुःखी, सदा आलसी, बुद्धि-धन से रहित, भयातुर, क्रोधी होता है।।५७।।

परदाररतो जनतारहितो बहुधा गमने गमनाभिरुचिः।
कृपणः खलताकुशलो मलिनं दिवसाधिपतौ मनुजः कुमतिः।।५८।।

आगमन अवस्था में हो तो परस्त्री में आसक्त, जनमत से रहित, यात्रा में रुचि, कृपण, दुष्टता में कुशल और मलिन होता है।।५८।।

सभागते हिते नरः परोपकारतत्परः
सदार्थरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकरः।
वसुन्धरानवाम्बरालयान्वितो महाबली
विचित्रमित्रवत्सलः कृपाकलाधरः परः।।५९।।

सभा अवस्था में हो तो परोपकारी, सदा धन-रत्न से परिपूर्ण, गुण का भंडार, भूमि, नूतन वस्त्र, गृह से युक्त, महाबली, अनेक मित्रों से युक्त और कृपालु होता है।।५९।।

क्षोभितो रिपुगणैः सदा नरश्चञ्चलः खलमतिः कृशस्तथा।
धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्चागमे दिनपतौ यदा तदा।।६०।।

आगम अवस्था में सूर्य हो तो जातक शत्रुओं से क्षुभित, चंचल, दुष्टबुद्धि, कृशशरीर, धर्म-कर्म से रहित और उद्धत स्वभाव का होता है।।६०।।

सदाङ्गसन्धिवेदना पराङ्गनाधनक्षयो
बलक्षयः पदे पदे यदा तदा हि भोजने।
असत्यता शिरोव्यथा तथा वृथान्नभोजनं
रवावसत्कथारतिः कुमार्गगामिनी मतिः।।६१।।

भोजन अवस्था में हो तो जातक हमेशा संधियों में वेदना, परस्त्री से द्रव्य की हानि, बल की हानि, असत्यभाषी, शिर में पीडा, व्यर्थ अन्न और भोजन करने वाला, व्यर्थ बकवाद करने वाला, कुमार्गगामी होता है।।६१।।

विज्ञलोकैः सदा मण्डितः पण्डितः काव्यविद्यानवद्यप्रलापान्वितः।
राजपूज्यो धरामण्डले सर्वदा नृत्यलिप्सागते पद्मिनीनायके।।६२।।

नृत्यलिप्सा में हो तो सदा विज्ञजनों से आवृत, पंडित, काव्य करने वाला, राजा से पूज्य होता है।।६२।।

सर्वदानन्दधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्त्ता धराधीशसद्मस्थितः।
पद्मबन्धावरातेर्भयं स्वाननः काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके।।६३।।

कौतुक अवस्था में हो तो सदा आनंद करने वाला, ज्ञानी, यज्ञ करने वाला, राजगृह में रहने वाला, शत्रु से भयभीत, सुंदर मुख और काव्य करने वाला होता है।।६३।।

निद्राभरारक्तनिभे भवेतां निद्रागते लोचनपद्मयुग्मे।
रवौ विदेशे वसतिर्जनस्य कलत्रहानिः कतिधार्थनाशः।।६४।।

निद्रा अवस्था में हो तो निद्रा से भरे नेत्रों वाला, विदेशी, स्त्री की हानि और अनेक प्रकार से धन का नाशक होता है।।६४।।

अथ चन्द्रावस्थाफलम्—

जनुःकाले क्षपानाथे शयनं चेदुपागते।
मानी शीतप्रधानश्च कामी वित्तविनाशकः।।६५।।

यदि चंद्रमा शयन अवस्था में हो तो उसकी दशा में जातक मानी, शीतल स्वभाव, कामी और धन का नाश करने वाला होता है।।६५।।

रोगार्दितो मन्दमतिर्विशेषाद्वित्तेन हीनो मनुजः कठोरः।
अकार्यकारी परवित्तहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्थे।।६६।।

उपवेशन अवस्था में हो तो रोगी, मंदबुद्धि, धनहीन, कठोर, कुकर्म में रत, दूसरे के धन को हरण करने वाला होता है।।६६।।

नेत्रपाणौ क्षपानाथे महारोगी नरो भवेत्।
अनल्पजल्पको धूर्त्तः कुकर्मनिरतः सदा।।६७।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो महारोगी, व्यर्थ बोलने वाला, धूर्त्त और कुकर्म करने वाला होता है।।६७।।

यदा राकानाथे गतवति विकाशं च जनने
विकाराः संसारे विमलगुणराशेरवनिपात्।
नवाशामाला स्यात्करितुरगलक्ष्म्या परिवृता
विभूषा योषाभिः सुखमनुदिनं तीर्थगमनम्।।६८।।

यदि प्रकाश अवस्था में हो तो संसार में प्रसिद्ध, अपने गुणों से राजा से द्रव्य प्राप्त करने वाला, हाथी, घोड़ा, लक्ष्मी से युक्त, स्त्री से सुखी और तीर्थयात्री होता है।।६८।।

सितेतरे पापरतो निशाकरे विशेषतः क्रूरतरो नरो भवेत्।
सदाक्षिरोगैः परिपीड्यमानो बलक्षपक्षे गमने भयातुरः।।६९।।

यदि चंद्रमा कृष्णपक्ष में गमन अवस्था में हो तो पापी और क्रूर स्वभाव का, नेत्ररोगी और शुक्लपक्ष में भयभीत होता है।।६९।।

विधावागमने मानी पादरोगी नरो भवेत्।
गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविवर्जितः।।७०।।

आगमन अवस्था में हो तो मानी, चरण में रोग युक्त, गुप्त पाप करने वाला दीन, मलिन और असंतोषी होता है।।७०।।

सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो
रतिपतिसमकान्तिः शान्तिकृत्कामिनीनाम्।
सपदि सदसि याते चारुबिम्बे शशाङ्के
भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः।।७१।।

सभावस्था में हो तो सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ, राजाओं का मान्य, कामदेव के समान सुंदर, स्त्रियों को सुखदाता, प्रीति के रीति को जाननेवाला होता है।।७१।।

विधावागमने मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः।
कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टनरो हठी।।७२।।

आगमन अवस्था मे हो तो वक्ता, धर्मात्मा, कृष्णपक्ष हो तो दो स्त्री वाला, रोगी, दुष्ट और हठी होता है।।७२।।

भोजने जनुषि पूर्णचन्द्रमा मानयानजनतासुखं नृणाम्।
आतनोति वनितासुतासुखं सर्वमेव न सितेतरे शुभम्।।७३।।

भोजन अवस्था में हो तो मान-प्रतिष्ठा, सवारी और सुख से संपन्न, स्त्री-पुत्र से सुखी होता है। कृष्णपक्ष का चन्द्रमा हो तो उक्त फल नहीं होता है।।७३।।

नृत्यलिप्सागते चन्द्रे सबले बलवान्नरः।
गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णो पापकरो भवेत्।।७४।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो और चन्द्रमा शुक्लपक्ष का हो तो बलवान्, गीतज्ञ, रसज्ञ होता है और कृष्णपक्ष का हो तो पापी होता है।।७४।।

कौतुकभवनं गतवति चन्द्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम्।
कामकलासु सदा कुशलत्वं वारवधूरतिरमणपटुत्वम्।।७५।।

कौतुक अवस्था में हो तो राजा वा धनी, कामकला में कुशल और स्त्रियों का प्रेमी होता है।।७५।।

निद्रागते जन्मनि मानवानां कलाधरे जीवयुतं महत्त्वम्।
यदाङ्गनासञ्चितवित्तनाशः शिवालये रौति विचित्रमुच्चैः।।७६।।

निद्रा अवस्था में हो, गुरु से युत हो तो प्रतिष्ठावान् होता है। गुरु से युत न हो, चन्द्रमा क्षीण हो तो स्त्री और संचित धन का नाश और सियारिन उसके घर में उच्च स्वर से रोती है।।७६।।

अथ भौमावस्थाफलम्—

शयने वसुधापुत्रे जन्तुरङ्गे व्रणो भवेत्।
बहुना कण्डुना युक्तो दद्रुणा च विशेषतः।।७७।।

शयन अवस्था में भौम हो तो जातक के शरीर में बहुधा व्रण, खुजली और दाद से पीडित रहता है।।७७।।

बली सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भः।
धनेन पूर्णो निजधर्महीनो धरासुतश्चेदुपवेशनस्थः।।७८।।

उपवेशन अवस्था में हो तो पापरत, असत्यभाषी, प्रगल्भ, धन से पूर्ण और अपने धर्म से हीन होता है।।७८।।

यदा भूमिसुतो लग्ने नेत्रपाणिमुपागतः।
दरिद्रता सदा पुंसामन्यभे नगरेशता।।७९।।

यदि नेत्रपाणि अवस्था में लग्न में हो तो सदा दरिद्र, अन्यभाव में हो तो नगरसेठ होता है।।७९।।

प्रकाशो गुणस्यापि वासः प्रकाशे
धराधीशभर्त्तुः सदा मानवृद्धिः।
सुते भूसुते पुत्रकान्तावियोगो
भवेद्राहुणा दारुणो वा निपातः।।८०।।

प्रकाशावस्था में हो तो गुणों का विकास, राजा से सम्मान, यदि पाँचवें भाव में भौम हो तो पुत्र-स्त्री का वियोग, राहु से युक्त हो तो घोर पतन होता है।।८०।।

गमनागमने कुरुतेऽनुदिनं व्रणजालभयं वनिताकलहः।
बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः।।८१।।

गमन अवस्था में हो तो सदा यात्रा करने वाला, व्रणभय, स्त्री से कलह, दाद, खुजली का भय और धन की हानि होती है।।८१।।

आगमने गुणशाली मणिमाली वा करालकरवाली।
गजगता रिपुहन्ता परिजनसन्तापहारको भौमे।।८२।।

आगमन अवस्था में हो तो गुणी, मणियों की माला धारण करने वाला, भीषण तलवार से युक्त, हाथी पर चलने वाला, शत्रुनाशक, अपने परिजनों के संताप को हरने वाला होता है।।८२।।

तुङ्गे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः
कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान्।
अन्तेऽपत्यकलत्रमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्थानगे-
ऽवश्यं राजसभाबुधो बहुधनी मानी च दानी जनः।।८३।।

अपनी उच्चराशि में होकर सभा अवस्था में हो तो युद्धकला में निपुण, धर्मध्वजी, धनी होता है। यदि ५-९ भाव में हो तो विद्या से रहित होता है। १२वें भाव में हो तो पुत्र, स्त्री और मित्र से रहित होता है। इनसे भिन्न स्थानों में हो तो राजसभा का पंडित, बड़ा धनी, मानी और दानी होता है।।८३।।

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः।
कर्णशूलगुरुशूलरोगवानेव कातरमतिः कुसङ्गमी।।८४।।

आगम अवस्था में भौम हो तो जातक धर्म-कर्म से हीन, रोगी, कान के दर्द एवं बड़े शूलरोग से पीडित, कातरबुद्धि और दुष्टों की संगति करने वाला होता है।।८४।।

भोजने मिष्टभोजी च जनने सबल कुजे।
नीचकर्मकरो नित्यं मनुजो मानवर्जितः।।८५।।

भोजन अवस्था में हो तो मिठाई खानेवाला, नीचकर्म करने वाला और अप्रतिष्ठित होता है।।८५।।

नृत्यलिप्सागते भूसुते जन्मिनामिन्दिराराशिरायाति भूमीपतेः।
स्वर्णरत्नप्रवालैः सदा मण्डिता वासशाला नराणां भवेत्सर्वदा।।८६।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो राजा के यहाँ से लक्ष्मी की प्राप्ति, सदा सुवर्ण, रत्न, मूंगा आदि से युक्त गृह वाला होता है।।८६।।

कौतुकी भवति कौतुके कुजे मित्रपुत्रपरिपूरितो जनः।
उच्चगे नृपतिगेहमण्डितः पूजितो गुणवरैर्गुणाकरैः।।८७।।

कौतुक अवस्था में हो तो कौतुक करने वाला, मित्र, पुत्र से परिपूर्ण, यदि उच्च में भौम हो तो राजगृह और गुणियों से पूजित होता है।।८७।।

निद्रावस्थां गते भौमे क्रोधी धीधनवर्जितः।
धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गदपीडितः।।८८।।

निद्रा अवस्था में भौम हो तो क्रोधी, बुद्धि-धन से हीन, धूर्त, धर्म से भ्रष्ट और रोगी होता है।।८८।।

अथ बुधावस्थाफलम्—

क्षुधातुरो भवेदङ्गे खञ्जो गुञ्जानिभेक्षणः।
अन्यभे लम्पटो धूर्त्तो मनुजः शयने बुधे।।८९।।

बुध शयन अवस्था में होकर लग्न में हो तो भूखा, चलने में असमर्थ, गुंजा के समान (लाल) नेत्रवाला होता है। अन्य भावों में हो तो लंपट, धूर्त्त होता है।।८९।।

शशाङ्कपुत्रे जनुरङ्गगेहे यदोपवेशे गुणराशिपूर्णः।
पापेक्षिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तसुखी मनुष्यः।।९०।।

उपवेशन अवस्था में बुध लग्न में हो तो गुणी, पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो दरिद्र, शुभग्रह वा मित्र से युत-दृष्ट हो तो धनी होता है।।९०।।

विद्याविवेकरहितो हिततोषहीनो
मानी जनो भवति चन्द्रसुतेऽक्षिपाणौ।
प्रजालये सुतकलत्रसुखेन हीनः
कन्याप्रजा नृपतिगेहबुधो वरार्थः।।९१।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो विद्या-विवेक से रहित, मित्रतारहित, अभिमानी, ५वें भाव में बुध हो तो स्त्री-पुत्र के सुख से रहित, कन्या संततिवाला, राजा से धन प्राप्त करने वाला होता है।।९१।।

दाता दयालुः खलु पुण्यकर्त्ता विकाशने चन्द्रसुते मनुष्यः।
अनेकविद्यार्णवपारगन्ता विवेकपूर्णः खलवर्गहन्ता।।९२।।

प्रकाश अवस्था में हो तो दानी, दयालु, पुण्यात्मा, अनेक विद्याओं को जानने वाला, विवेकी और दुष्टों का दमन करने वाला होता है।।९२।।

गमनागमने भवतो गमने बहुधा वसुधाधिपतेर्भवने।
भवनं च विचित्रमलं रमया विदि नुश्च जनुः समये नितराम्।।९३।।

गमन अवस्था में हो तो राजगृह में जाने वाला, लक्ष्मी से पूर्ण गृहवाला होता है। यही फल आगमन अवस्था का भी होता है।।९३।।

सपदि विदिजनानामुच्चगे जन्मकाले
सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः।
धनपतिसमता वा भूपता मन्त्रिता वा
हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिलब्धिः।।९४।।

सभा अवस्था में हो तो धनी, पुण्यकर्त्ता, उच्चराशि में हो तो बहुत धनी, राजा का मंत्री तथा ईश्वर का भक्त और अंत में मुक्ति पानेवाला होता है।।९४।।

आगमे जनुषि जन्मिनां यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया।
अर्थसिद्धिरपि पुत्रयुग्मता बालिका भवति मानदायिका।।९५।।

आगमन अवस्था में हो तो नीच सेवा से धन प्राप्त करने वाला, दो पुत्र और एक कन्या प्रतिष्ठा को देनेवाली होती है।।९५।।

भोजने चन्द्रजे जन्मकाले यदा जन्मिनामर्थहानिः सदा वादतः।
राजभीत्या कृशत्वं चलत्वं मतेरङ्गसङ्गो न जाया न मायासुखम्।।

भोजन अवस्था में हो तो वाद-विवाद (मुकदमे में) में द्रव्य की हानि, राजभय, कृशता, मन की अस्थिरता, शरीर, स्त्री तथा धन का सुख नहीं होता है।।९६।।

नृत्यलिप्सागते चन्द्रजे मानवो मानयानप्रवालव्रजैः संयुतः।
मित्रपुत्रप्रतापैः सभापण्डितः पापभे वारवामारतो लम्पटः।।९७।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो मान, वाहन, रत्न, मित्र, पुत्र और प्रताप से युक्त होता है। पापराशि में हो तो वेश्याप्रेमी और लम्पट होता है।।९७।।

कौतुके चन्द्रजे जन्मकाले नृणामङ्गभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत्।
सप्तमे नैधने वारवध्वा रतिः पुण्यभे पुण्ययुक्ता मतिः सद्गतिः।।

कौतुकावस्था में होकर लग्न में हो तो गीतविद्या का पंडित, सातवें आठवें भाव में हो तो वेश्यागामी, ९वें भाव में हो तो पुण्यवान् बुद्धि होती है।।९८।।

निद्राश्रिते चन्द्रसुते न निद्रासुखं सदा व्याधिसमाधियोगः।
सहोत्थवैकल्यमनल्पताप्तो निजेन वादो धननाननाशः।।९९।।

निद्रावस्था में हो तो निद्रा से सुख, आधि-व्याधि से पीडित, सहोदर से हीन, अधिक संताप, अपने कुटुंब से विवाद और धन का नाश होता है।।९९।।

अथ गुरोरवस्थाफलम्—

वचसामधिपे तु जनुःसमये शयने बलवानपि हीनरवः।
अतिगौरतनुः खलु दीर्घहनुः सुतरामरिभीतियुतो मनुजः।।१००।।

यदि जन्मसमय में गुरु शयनावस्था में हो तो बलवान् होते हुए भी जातक हीन शब्द (मंदस्वर), अत्यंत गौरवर्ण, लंबी दाढ़ीवाला और निरंतर शत्रु के भय से युक्त होता है।।१००।।

उपवेशं गतवति यदि जीवे वाचालो बहुगर्वपरीतः।
क्षोणीपतिरिपुजनपरितप्तः करजङ्घास्यपदव्रणयुक्तः।।१०१।।

उपवेशन अवस्था में हो तो वक्ता, अत्यंत गर्वीला, राजा और शत्रु से संताप पानेवाला, हाथ, जंघा, मुख और पैर में घाव से युक्त होता है।।१०१।।

नेत्रपाणिं गते देवराजार्चिते रोगयुक्तो वियुक्तो वरार्थश्रिया।
गीतनृत्यप्रियः कामुकः सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोद्भवप्रीतियुक्।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो रोगी, धन से हीन, गाने-नाचने का प्रेमी, कामी, गौरवर्ण, विजातियों से प्रेम करने वाला होता है।।१०२।।

गुणानामानन्द विमलसुखकन्दं वितनुते
सदा तेजःपुञ्जं व्रजपतिनिकुञ्जं प्रतिगमम्।
प्रकाशं चेदुच्चे द्रुतमुपगतो वासवगुरु-
र्गुरुत्वं लोकानां धनपतिसमत्वं तनुभृताम्।।१०३।।

प्रकाश अवस्था में हो तो गुणों का आनंद, स्वच्छ सुख के समूहों का आनंद, तेजस्वी कृष्णचंद्र के स्थान (वृन्दावन) को जाने को उद्यत, यदि गुरु उच्चराशि का हो संसार में मान्यता और कुबेर के समान धनी होता है।।१०३।।

साहसी भवति मानवः सदा मित्रवर्गसुखपूरितो सदा।
पण्डितो विविधवित्तमण्डितो वेदविद्यादि गुरौ गमं गते।।१०४।।

यदि गमनावस्था में हो तो साहसी, मित्रवर्ग के सुख से पूर्ण, पंडित, अनेक सम्पत्तियों से युक्त और वेद को जानने वाला होता है।।१०४।।

आगमने जनता वरजाया यस्य जनुःसमये हरिमाया।
मुञ्चति नालमिहालयमद्धा देवगुरौ परितः परिविद्धा।।१०५।।

आगमन अवस्था में हो तो उसके गृह में जनता, सुंदरी स्त्री और लक्ष्मी (धन) सदा उपस्थित रहता है।।१०५।।

सुरगुरुसमवक्ता शुभ्रयुक्ता फलाढ्यः
सदसि सपदि पूर्णो वित्तमाणिक्ययानैः।
गजतुरगरथाढ्यो देवताधीशपूज्यो
जनुषि विविधविद्यागर्वितो मानवः स्यात्।।१०६।।

सभावस्था में हो तो बृहस्पति के समान वक्ता, सुंदर मोतियों से युक्त, धन, रत्न, हाथी, घोड़ा, रथ आदि सवारियों से युक्त, इन्द्र से पूज्य और अनेक विद्याओं को जानने वाला गर्वयुक्त होता है।।१०६।।

नानावाहनमानयानपटलीसौख्यं गुरावागमे-
भृत्यापत्यकलत्रमित्रजसुखं विद्यानवद्या भवेत्।
क्षोणीपालसमानतानवरतं चातीव हृद्या मतिः
काव्यानन्दरतिः सदा हितगतिः सर्वत्र मानोन्नतिः।।१०७।।

आगमन अवस्था में हो तो संसार में मान-प्रतिष्ठा से युक्त, अनेक वाहन-समूह से युक्त, नौकर, पुत्र, स्त्री, मित्र का सुख, उत्तम विद्या, राजा के समान, अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धिवाला, काव्यप्रेमी, अच्छे मार्ग से चलने वाला और मान-मर्यादा वाला होता है।।१०७।।

भोजने भवति देवगुरौ यस्य तस्य सततं सुभोजनम्।
नैव मुञ्चति रमालयं तदा वाजिवारणरथैश्च मण्डितम्।।१०८।।

भोजनावस्था में हो तो उसे निरंतर सुंदर भोजन मिलता है, कभी भी धन उसका साथ नहीं छोड़ता है। हमेशा घोड़ा, हाथी, रथ आदि सवारियों से घिरा रहता है।।१०८।।

नृत्यलिप्सागते राजमानी धनी देवताधीशवन्द्यः सदा धर्मवित्।
तन्त्रविज्ञो बुधैर्मण्डितः पण्डितः शब्दविद्यानवद्यो हि सद्यो जनः।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो राजा से मान्य, धनी, धर्म को जानने वाला, तंत्रविद्या को जानने वाला, पंडितों से घिरा हुआ श्रेष्ठ पंडित और शब्दशास्त्र (व्याकरण) का पंडित होता है।।१०९।।

कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा
निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी।
निलिम्पराजपूजिते सुतेन भूनयेन वा
युतो महाबली धराधिपेन्द्रसद्मपण्डितः।।११०।।

कौतुक अवस्था में हो तो कुतूहली, महाधनी, अपने घर में सूर्य के समान तेजस्वी, कृपालु, सुखी, पुत्र, भूमि से युक्त और नीतिमान्, महाबली और राजपंडित होता है।।११०।।

गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि।
दरिद्रतापरिक्रान्तं भवनं पुण्यवर्जितम्।।१११।।

निद्रावस्था में हो तो वह सभी कर्मों में मूर्खता करने वाला, दरिद्रता से युक्त और पुण्यहीन होता है।।१११।।

अथ भृगोरवस्थाफलम्—

जनो बलीयानपि दन्तरोगी भृगौ महारोषसमन्वितः स्यात्।
धनेन हीनं शयनः प्रयाते वराङ्गनासङ्गमलम्पटश्च।।११२।।

यदि जन्मसमय शुक्र शयन अवस्था में हो तो जातक बलवान् होते हुए भी दंतरोगी, महाक्रोधी, निर्धन और स्त्रीलंपट होता है।।११२।।

यदि भवेदुशना उपवेशने नवमणिव्रजकाञ्चनभूषणैः।
सुखमजस्त्रमरिक्षय आदरादवनिपादपि मानसमुन्नतिः।।११३।।

उपवेशन अवस्था में हो तो नूतन मणि, सुवर्ण के आभूषणों से सुखी, शत्रुओं का नाश करने वाला, राजा से आदर और प्रतिष्ठा में वृद्धि वाला होता है।।११३।।

नेत्रपाणिं गते लग्नगेहे कवौ सप्तमे मानभे यस्य तस्य ध्रुवम्।
नेत्रपाते निपातो धनानामलं चान्यभे वासशाला विशाला भवेत्।।

नेत्रपाणि अवस्था में शुक्र लग्न, सप्तम वा दशम भाव में हो तो नेत्रहीनता के कारण धन का नाश होता है व अन्य भाव में हो तो बड़ा मकान होता है।।११४।।

स्वालये तुङ्गभे मित्रभे भार्गवे तुङ्गमातङ्गलीलाकलापीजनः।
भूपतेस्तुल्य एव प्रकाशं गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित्।।

प्रकाश अवस्था में हो और अपने उच्च, स्वगृह वा मित्रगृह में हो तो मतवाले हाथी के समान बलवान्, राजा के सदृश धनी, सुखी, काव्य और संगीत में पारंगत होता है।।११५।।

गमने जनने शुक्रे तस्य माता न जीवति।
आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभीतितः।।११६।।

गमन अवस्था में हो तो माता नहीं जीती है, मानसिक चिन्ता, बंधुओं का वियोग और शत्रु से भय होता है।।११६।।

आगमनं भृगुपुत्रे गतवति वित्तेश्वरो मनुजः।
सत्तीर्थभ्रमशाली नित्योत्साही करांघ्रिरोगी च।।११७।।

आगमन अवस्था में हो तो महाधनी, तीर्थयात्री, उत्साही और हाथ-पैर के रोग से युक्त होता है।।११७।।

अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा
प्रगल्भत्वं राज्ञः सदसि गुणविज्ञः किल कवौ।
सभायामायाते रिपुनिवहहन्ता धनपतेः
समत्वं वा दाता बलतुरगगन्ता नरवरः।।११८।।

सभावस्था में हो तो अनायास ही अपने ही प्रताप से राजदरबार में प्रगल्भता होती है। स्वयं गुणी, शत्रु का नाश करने वाला, महाधनी दाता और हाथी तथा घोड़े की सवारी पर चलनेवाला होता है।।११८।।

आगमे भार्गवे नागमो जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः।
पुत्रपातो निपातो जनानामपि व्याधिभीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत्।।

आगमन अवस्था में हो तो शत्रु द्वारा धन की अधिक हानि, पुत्र, परिजनों का वियोग, रोग का भय और स्त्री के सुख की हानि होती है।।११९।।

क्षुधातुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिभयार्दितश्च।
कवौ यदा भोजनगे युवत्या महाधनो पण्डितमण्डितश्च।।१२०।।

भोजन अवस्था में हो तो भूख से व्याकुल, रोग से पीडित और बारम्बार शत्रु से पीडित होता है।।१२०।।

काव्यविद्यानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यलिप्सागते भार्गवे।
शङ्खवीणामृदङ्गादिगानध्वनिव्रातनैपुण्यमेतस्य वित्तोन्नतिः।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो काव्य करने वाला, बुद्धिमान्, वीणा, मृदंग आदि बाजों को बजाने में चतुर और धन की उन्नति करने वाला होता है।।१२१।।

कौतुकभवनं गतवति शुक्रे शक्रेशत्वं सदसि महत्त्वम्।
हृद्या विद्या भवति च पुंसः पद्मा निवसति सद्मादरतः।।१२२।।

कौतुक अवस्था में हो तो इन्द्र के समान पराक्रमी, सभा में चतुर, उत्तम विद्या और गृह मे सदा लक्ष्मी के वास वाला होता है।।१२२।।

परसेवारतो नित्यं निद्रामुपगते कवौ।
परनिन्दापरो वीरो वाचालो भ्रमते महीम्।।१२३।।

यदि निद्रावस्था में हो तो दूसरे की सेवा करने वाला, दूसरे की निंदा करने वाला; व्यर्थ बोलनेवाला और व्यर्थ घूमने वाला होता है।।१२३।।

अथ शनेरवस्थाफलम्—

क्षुत्पिपासापरिक्रान्तो विश्रान्तः शयने शनौ।
वयसि प्रथमे रोगी ततो भाग्यवतां वरः।।१२४।।

यदि शनि शयनावस्था में हो तो जातक बाल्यकाल में रोगी, भूख-प्यास से पीडित रहता है, परन्तु वृद्धावस्था में भाग्यवान् होता है।।१२४।।

भानोः सुते चेदुपवेशनस्थे करालकारातिजनानुतप्तः।
अपायशाली खलु दद्रुमाली नराऽभिमानी नृपदण्डयुक्तः।।१२५।।

उपवेशन अवस्था में हो तो प्रबल शत्रु द्वारा पीड़ित, व्यर्थ अपव्यय करने वाला, दाद-खुजली रोग वाला, अभिमानी और राजदंड से दंडित होता है।।१२५।।

नयनपाणिगते नृपनन्दने परमया रमया रमया युतः।
नृपतितो हिततो मतितोषकृद्बहुकलाकलितो विमलोक्तिकृत्।।१२६।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो परम सुंदरी स्त्री और संपत्ति से युक्त, राजा और मित्रों से उपकृत, अनेक कलाओं का ज्ञाता और प्रिय बोलने वाला होता है।।१२६।।

नानागुणग्रामधनाधिशाली सदा नरो बुद्धिविनोदमाली।
प्रकाशने भानुसुते सुभानुः कृपानुरक्तो हरपादभक्तः।।१२७।।

प्रकाश अवस्था में हो तो अनेक गुण-ग्राम-धन से युक्त, बुद्धिमान्,

कृपालु और ईश्वरभक्त होता है।।१२७।।

महाधनी नन्दननन्दितः स्यादपायकारी रिपुभूमिहारी।
गमे शनौ पण्डितराजभावं धरापतेरायतने प्रयाति।।१२८।।

गमन अवस्था में हो तो महाधनी, पुत्र से युक्त, खर्चीला, शत्रु की भूमि को लेने वाला, राजा का पंडित होता है।।१२८।।

आगमने पदगर्दभयुक्तः पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तः।
भानुसुते भ्रमते भुवि नित्यं दीनमना विजनाश्रयभावम्।।१२९।।

आगमन अवस्था में हो तो स्थान का भय, रोगभय, पुत्र, स्त्री के सुख से रहित, दीन स्थिति में निरंतर घूमने वाला होता है।।१२९।।

रत्नावलीकाञ्चनमौक्तिकानां व्रातेन नित्यंव्रजति प्रमोदम्।
सभागते भानुसुते नितान्तं नयेन पूर्णो मनुजो महौजाः।।१३०।।

सभा अवस्था में हो तो रत्न-सुवर्ण-मुक्ता के समूह से नित्य आनंदित, नीतियुक्त, महातेजस्वी होता है।।१३०।।

आगमे गदसमागमो नृणामब्जबन्धुतनये यदा तदा।
मन्दमेव गमनं धरापतेर्याचनाविरहिता मतिः सदा।।१३१।।

आगमन अवस्था में हो तो रोग युक्त, मंदगति और राजा से लाभ पाने की बुद्धि से हीन होता है।।१३१।।

सङ्गते जनुषि भानुनन्दने भोजनं भवति भोजनं रसैः।
संयुतं नयनमन्दताननाा मोहतापपरितापिता मतिः।।१३२।।

भोजन अवस्था में हो तो सरस भोजन का लाभ, नेत्रज्योति मन्द और माया-मोह से मन्द बुद्धि वाला होता है।।१३२।।

नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरितः।
राजपूज्यो नरो धीरो महावीरो रणाङ्गणे।।१३३।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो धर्मात्मा, मन से पूर्ण, राजा से पूज्य, धीर, महावीर होता है।।१३३।।

भवति कौतुकभावमुपागते रविसुते वसुधावसुपूरितः।
अतिसुखी सुमुखी सुखपूरितः कवितयामलया कलया नरः।।

कौतुक अवस्था में हो तो भूमि, धन से पूर्ण, अत्यंत सुखी, स्त्रीसुख से पूर्ण और कविता करने वाला होता है।।।१३४।।

निद्रागते वासरनाथपुत्रे धनी सदा चारुगुणैरुपेतः।

पराक्रमी चण्डविपक्षहन्ता सुवारकान्तारतिरीतिंविज्ञः।।१३५।।

निद्रा अवस्था में हो तो धनी, सुंदर गुणों से युक्त, पराक्रमी, दुष्टों का नाश करने वाला और वेश्यागामी होता है।।१३५।।

अथ राहोरवस्थाफलम्—

यदागमो जन्मनि यस्य राहौ क्लेशाधिकत्वं शयनं प्रयाते।
वृषेऽथ युग्मेऽपि च कन्यकामजे समाजो धनधान्यराशेः।।१३६।।

यदि राहु जन्मसमय में शयन अवस्था में हो तो जातक अधिक क्लेश से युक्त होता है। किन्तु वृष, मिथुन, कन्या या मेष में शयन अवस्था में हो तो धन-धान्य से पूर्ण होता है।।१३६।।

उपवेशनमिह गतवति राहौ दद्रुगदेन जनः परितप्तः।
राजसमाजयुतो बहुमानी वित्तसुखेन सदा रहितः स्यात्।।१३७।।

उपवेशन अवस्था में हो तो दाद से पीडित, राजा से सम्मानित, अभिमानी, धनसुख से हीन होता है।।१३७।।

नेत्रपाणावगौ नेत्रे भवतो रोगपीडिते।
दुष्टव्यालारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः।।१३८।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो नेत्ररोग से पीडित, दुष्ट सर्प, शत्रु और चोर के भय से मुक्त और धन की हानि होती है।।१३८।।

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां
धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह।
धराधिपाधिकारिता यशोलता तता भवे-
न्नवीननीरदाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः।।१३९।।

प्रकाश अवस्था में हो तो सुंदर स्थान, सुंदर यश, धन और गुण की उन्नति, राजा से अधिकार की प्राप्ति, नूतन मेघ के समान आकृति और विदेश में उन्नति पाने वाला होता है।।१३९।।

गमने च यदा राहौ बहुसन्तानवान्नरः।
पण्डितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत्।।१४०।।

गमन अवस्था में राहु हो तो बहुत संतानवाला, पंडित, धनी, दाता, राजा से पूज्य होता है।।१४०।।

राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः।
कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा।।१४१।।

आगमन अवस्था में हो तो क्रोधी, बुद्धि तथा धन से हीन, कुटिल, कृपण, कामी होता है।।१४१।।

सभागतो यदा राहुः पण्डितः कृपणो नरः।
नानागुणपरिक्रान्तो वित्तसौख्यसमन्वितः।।१४२।।

सभा अवस्था में राहु हो तो पंडित और कृपण, अनेक गुणों से युक्त, धनसुख से युक्त होता है।।१४२।।

चेदगावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदारातिभीत्या भयम्।
महद्बन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम्।।

आगमन अवस्था में हो तो हमेशा शत्रुभय से भयभीत और व्याकुल, बंधुओं से बड़ा विवाद और पतन, धन की हानि, मूर्खता और कृशता होती है।।१४३।।

भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत्।
मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रसुखवर्जितः।।१४४।।

भोजन अवस्था में हो तो भोजन के बिना विकल, मन्दबुद्धि, कार्य में आलसी, स्त्री-पुत्र के सुख से रहित होता है।।१४४।।

नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिविवर्धनम्।
नेत्ररोगी रिपोर्भीतिर्धनधर्मक्षयो नृणाम्।।१४५।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो महाव्याधि का भय, नेत्र में रोग, शत्रुभय, धन-धर्म का नाश होता है।।१४५।।

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत्।
परदाररतो नित्यं परवित्तापहारकः।।१४६।।

कौतुकावस्था में हो तो स्थानहीन, परस्त्रीगामी और परधन हरण करने वाला होता है।।१४६।।

निद्रावस्थां गते राहौ गुणग्रामयुतो नरः।
कान्तासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान्।।१४७।।

निद्रावस्था में हो तो गुण-समूह से युक्त, स्त्री-संतान से युक्त, धीर, गर्वीला और अधिक धनी होता है।।१४७।।

अथ केतोरवस्थाफलम्—

मेषे वृषेऽथ युग्मे वा कन्यायां शयनं गते।
केतौ धनसमृद्धिः स्यादन्यभे रोगवर्धनम्।।१४८।।

केतु शयनावस्था में मेष, वृष, मिथुन वा कन्या राशि में हो तो जातक धनी होता है। अन्य राशि में हो तो रोग की वृद्धि होती है।।१४८।।

उपवेशं गते केतौ दद्रुरोगविवर्धनम्।
अरिवातनृपव्यालचौरशङ्का समन्ततः।।१४९।।

उपवेशनावस्था में हो तो दादरोग की वृद्धि, शत्रु-वायु-राज-सर्प-चोर का भय होता है।।१४९।।

नेत्रपाणिं गते केतौ नेत्ररोगः प्रजायते।
दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि।।१५०।।

नेत्रपाणि अवस्था में हो तो नेत्र-रोग, दुष्ट सर्प आदि का भय, शत्रु तथा राजकुल से भी भय होता है।।१५०।।

केतौ प्रकाशने संज्ञे धनवान्धार्मिकः सदा।
नित्यं प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवकः।।१५१।।

प्रकाश अवस्था में हो तो धनी, धार्मिक, नित्य परदेशी, उत्साही, सात्त्विक और राजसेवक होता है।।१५१।।

गमेच्छायां भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधनः।
पण्डितो गुणवान्दाता जायते च नरोत्तमः।।१५२।।

गमन अवस्था में हो तो महाधनी, पंडित, गुणी, दाता होता है।।१५२।।

आगमे च यदा केतुर्नानारोगो धनक्षयः।
दन्तघाती महारोगी पिशुनः परनिन्दकः।।१५३।।

आगमन अवस्था में हो तो अनेक रोग होते हैं, धन का नाश, दंतरोग, महारोग, कृपण, दूसरे की निंदा करने वाला होता है।।१५३।।

सभावस्थां गते केतौ वाचालो बहुगर्वितः।
कृपणो लम्पटश्चैव धूर्त्तविद्याविशारदः।।१५४।।

सभावस्था में हो तो वाचाल, गर्वीला, कृपण, लम्पट और धूर्त्तविद्या का पंडित होता है।।१५४।।

यदागमे भवेत्केतुः केतुः स्यात्पापकर्मणाम्।
बन्धुवादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडितः।।१५५।।

आगम अवस्था में केतु हो तो पापकर्म करनेवालों में श्रेष्ठ, बंधुओं से विवादरत, दुष्ट और शत्रु तथा रोग से पीडित होता है।।१५५।।

भोजने तु जनो नित्यं क्षुधया परिपीडितः।
दरिद्रो रोगसन्तप्तः केतौ भ्रमति मेदिनीम्।।१५६।।

भोजन अवस्था में हो तो भूख से पीडित, दरिद्र, रोग से संतप्त होकर घूमता है।।१५६।।

नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकलो भवेत्।
बुद्बुदाक्षो दुराधर्षो धूर्तोऽनर्थकरो नरः।।१५७।।

नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो व्याधि से विकल, चकाचौंध नेत्रवाला, किसी के वश में न होने वाला, धूर्त और अनर्थकारी होता है।।१५७।।

कौतुकी कौतुके केतौ नटवामारतिप्रियः।
स्थानभ्रष्टो दुराचारी दरिद्रो भ्रमते महीम्।।१५८।।

कौतुक अवस्था में हो तो वेश्या आदि से प्रेम करने वाला, स्थान-भ्रष्ट, दुराचारी और दरिद्र होता है।।१५८।।

निद्रावस्थां गते केतौ धनधान्यसुखं महत्।
नानागुणविनोदेन कालो गच्छति जन्मिनाम्।।१५९।।

निद्रा अवस्था में हो तो धन-धान्य का बड़ा सुख होता है। अनेक गुणों की चर्चा में समय व्यतीत करने वाला होता है।।१५९।।

अथ ग्रहावस्थानुसारेण भावफलम्—

शयने येषु भावेषु यस्य तिष्ठन्ति सद्ग्रहाः।
नित्यं तस्य शुभज्ञानं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६०।।

जन्म समय शयन अवस्था में स्थित शुभ ग्रह जिन-जिन भावों में होता है तो उन-उन भावों के फलों को शुभकारक होता है।।१६०।।

भोजने येषु भावेषु पापास्तिष्ठन्ति सर्वथा।
तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा।।१६१।।

एवं भोजन अवस्था में गया हुआ पापग्रह जिन भावों में होता है उनके फलों का नाश करता है।।१६१।।

निद्रायां च यदा पापो जायास्थाने शुभं वदेत्।
यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभं च कदाचन।।१६२।।

यदि निद्रा अवस्था में पापग्रह सातवें भाव में हो तो शुभ फल, यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो अशुभ फल करता है।।१६३।।

सुतस्थाने स्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा।
तदा शुभं भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा।।१६३।।

पाँचवें भाव मे निद्रा या शयन अवस्था में पापग्रह हो तो शुभद नहीं होता है।।१६३।।

मृत्युस्थानस्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा।
तदा तस्यापमृत्युः स्याद्राजतः परतस्तथा।।१६४।।

आठवें स्थान में पापग्रह निद्रा या शयन अवस्था में हो तो उसकी अपमृत्यु राजा के द्वारा या शत्रु के द्वारा होती है।।१६४।।

शुभग्रहैर्यदा युक्तः शुभैर्वा यदि वीक्षितः।
तदा तु मरणं तस्य गङ्गायां च विशेषतः।।१६५।।

यदि पापग्रह शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो गंगा नदी में मृत्यु होती है।।१६५।।

कर्मस्थाने यदा पापः शयने भोजनेऽपि वा।
तदा कर्मविपाकः स्यान्नानादुःखप्रदायकः।।१६६।।

कर्मभाव में पापग्रह शयन या भोजन अवस्था में हो तो कर्म से अनेक दुःख होते हैं।।१६६।।

दशमस्थो निशानाथो कौतुके च प्रकाशने।
तदैव राजयोगः स्यान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६७।।

दशम स्थान में चन्द्रमा कौतुक या प्रकाशन अवस्था में हो तो राजयोग होता है।।१६७।।

बलाबलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम्।
एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु बुद्धिमान्।।१६८।।

ग्रहों के बल और निर्बलता को देखकर शुभ-अशुभ फलों को बुद्धिमान् को जानना चाहिए।।१६८।।

इति ग्रहाणामवस्थाध्यायः॥

आयुर्दायाध्यायः

मैत्रेय उवाच—

दरिद्रधनयोगौ च कथितौ प्राङ्महामुने!।
नराणामायुषो ज्ञानं कथं जातं महामुने!।।१।।

मैत्रेय ने कहा— हे मुने! आपने दरिद्र और धन योग को कहा। हे महामुने! मनुष्यों की आयु का ज्ञान कैसे होता है, इसे कहिए।।१।।

पराशर उवाच—

साधु पृष्टं त्वया विप्र! नराणां हितकाम्यया।
आयुर्ज्ञानं प्रवक्ष्यामि दुर्लभं यत् सुरैरपि।।२।।

पराशरजी ने कहा— हे विप्र! मनुष्यों के हित की कामना से तुमने बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया है, अब मैं आयुष्य ज्ञान को कहता हूँ, जो कि देवताओं को भी दुर्लभ है।।२।।

अंशायुसाधनम्—

समाहता भांशकलाविलिप्ता गजाभ्रचन्द्रैर्ग्रहपर्ययेभ्यः।
विकर्त्तनैः संविहतावशेषेऽब्दमासाद्यस्त्रादिकमायुरेवम्।।३।।

ग्रहों की राशि अंश, कला, विकला को १०८ से गुणा कर १२ से भाग देने से शेष वर्ष, मास, दिन, घटी आदि ग्रह की आयु होती है।।३।।

होरादायोष्येवमत्राधिवीर्यं लग्नं चेद्राशितुल्यैस्तथाब्दकैः।
युक्तं शेषं भागपूर्वद्विनिघ्नं बाणैर्भक्तं मासपूर्वैर्युतं तत्।।४।।

इसी प्रकार लग्न की भी आयु होती है, किन्तु लग्न अधिक बली हो तो लग्न राशि के तुल्य वर्ष और शेष अंशादि को २ से गुणाकर ५ से भाग देने से मास आदि आयु होती है।।४।।

अंशायुषि साधने विशेषः—

नीचेऽस्तगेऽर्द्धमरिभे त्रिलवं हरन्ति
नास्तङ्गतौ शनिसितौ व्ययतोऽत्र वामम्।
सर्वार्धकत्रिकचतुर्थशरर्तुभागान्
हरन्त्यशुभदाः शुभदास्तदर्धम् ।।५।।

यदि ग्रह अपनी नीचराशि में हो या अस्त हो तो आयु का आधा, शत्रु की राशि में हो तो आयु का तीसरा भाग कम आयु देता है। किन्तु शनि,

शुक्र अस्त होते हुए भी आधा हानि नहीं करते हैं। बारहवें भाव से विलोम संपूर्ण, आधा, तृतीयांश, चतुर्थांश, पंचमांश और षष्ठांश पापग्रह अपने आयु की हानि करते हैं और शुभग्रह इन्हीं भावों में आधा हानि करते हैं। अर्थात १२वें भाव में पापग्रह हों तो अपने संपूर्ण आयु का नाश, ग्यारहवें भाव में हो तो आधा इत्यादि।।५।।

एकस्थानस्थिताश्चेत्स्युर्द्वात्रयो गगनेचराः।
तदा बलयुतः खेटो हरत्यकेन चापरे।।६।।

एक ही स्थान में दो-तीन ग्रह बैठे हों तो उनमें जो बलवान् हो उसी के आयु का अपहरण होता है।।६।।

वर्गोत्तमस्वर्क्षनवांशदृक्के द्विसंगुणं तत्सकलं विधेयम्।
वक्रोच्चयोस्तत्त्रिगुणं विधेयं द्वित्रिगुणत्वे त्रिगुणं सकृच्च।।७।।

जो ग्रह वर्गोत्तम नवांश, अपनी राशि या नवांश या द्रेष्काण में हो उसके संपूर्ण आयु को दूना कर देना चाहिए। जो वक्री हो या अपनी उच्चराशि में हो तो उसकी आयु को तिगुना कर देना चाहिए। एक ही ग्रह की आयु द्विगुणित और त्रिगुणित करनी हो तो केवल त्रिगुणित ही करना चाहिए।।७।।

अंशायु-साधन का उदाहरण

पृ. २४ में दिये हुए स्पष्ट ग्रहचक्र और जन्माङ्ग को देखना चाहिए। सूर्य ३।१८।२६।३४ है।

३	१८	२६	३४ x १०८
३२४	८६४	६४८	४३२
	१०८	२१६	३२४
३२८	१९४४	२८०८	३६७२ ÷ ६०
६६	४७	६१	

३२ ÷ १२ ३९० ÷ १२ १९९१ ÷ ३० २८६९ ÷ ६०
८ शेष ६ शेष ११ शेष ४९ शेष १२ शेष

= ८।६।११।४९।१२ सूर्यायुर्दाय वर्षादि।

इसी प्रकार से लग्न सहित सभी ग्रहों के अंशायु का साधन करना चाहिए।

असंस्कृतांशायुचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहायु
८	०	०	१	३	७	३	६	वर्ण
६	९	९	७	१०	६	६	१	मास
११	१	३	११	७	५	१९	२९	दिन
४९	२४	५०	२२	३७	३३	५७	७	घटी
१२	३६	२४	१२	१२	०	३६	४८	पल

विशेष संस्कार

सूर्य सातवें भाव में है, अतः सूर्यायुवर्षादि ८।६।११।४९।१२ ÷६ = १।५।१।५८।१२ लब्धि वर्षादि हुई। इस लब्धि को सूर्यायु

८।६।११।४९।१२ में

लब्धि— १।५।१।५८।१२ को घटाया तो

= स्पष्टसूर्यायुवर्षादि ७।१।९।५१।० हुए।

चन्द्र में हानि-वृद्धि का कोई योग न होने के कारण स्पष्ट चन्द्रायुवर्षादि ०।९।१।२४।३६ हुए।

भौम अपने नवमांश (मेष) में होने के कारण भौमायु ०।९।३।५०।२४ x २ = ०।१८।७।४०।४८ भौम का स्पष्टायुवर्षादि हुआ।

बुध में हानि वृद्धि के कोई योग न होने से स्पष्ट बुधायुवर्षादि = १।७।११।२२।१२ हुए।

गुरु आठवें भाव में है अतः आधा भाग कम होना चाहिए, अतः गुरु की आयुवर्षादि ३।१०।७।३७।१२ ÷ २ = १।११।३।४८।३६ लब्धि को गुरु आयुर्वर्षादि ३।१०।७।३७।१२ में

लब्धि १।११।३।४८।३६ घटाया तो

शेष १।११।३।४८।३६ वर्षादि हुए।

गुरु अपने द्रेष्काण का है अतः हानिकृत गुरु आयुवर्षादि १।११।३।४८।३६ x२ = २।२२।७।३७।१२ स्पष्ट गुरु की आयु हुई।

शुक्र में कोई हानि-वृद्धि के योग न होने से स्पष्ट शुक्रायुवर्षादि ७।६।५।३३।० हुए।

शनि शत्रु राशि में है, अतः शनि के आयुवर्षादि ३।६।१५।५७।३६ ÷३ लब्धि १।२।५।१९।१२ को घटाना चाहिए। अतः शनि की आयुवर्षादि

३।६।१५।५७।३६ में

लब्धि १।२।५।१९।१२ को घटाया तो

स्पष्टशन्यायु २।४।१०।३८।२४ वर्षादि हुए।

लग्नायु को त्रैराशि द्वारा लाना चाहिए, जिसके लिए नीचे दी हुई तालिका से काम लेना चाहिए।

१ राशि वा ३० अंश = १ वर्ष = १२ मास
∴ १ मास = $\frac{३०}{१२}$ = २$\frac{१}{२}$ अंश
∴ १ अंश = १२ दिन = ६० कला
∴ १ दिन = ५ कला = ६० घटी
∴ १ कला = १२ घटी = ६० विकला
∴ १ घटी = ५ विकला = ६० पल
∴ १ विकला = १२ पल

अर्थात्

१ राशि = १२ मास
१ अंश = १२ दिन
१ कला = १२ घटी
१ विकला = १२ पल

तात्पर्य यह हुआ कि अंश को २ से गुणाकर ५ से भाग देने से लब्धि मास शेष को ६ से गुणा कर देने से दिन होता है। कला को २ से गुणा कर १० से भाग देने से लब्धि दिन शेष को ६ से गुणा देने से घटी होता है। विकला को २ से गुणाकर १० से भाग देने से लब्धि घटी और शेष को ६ से गुणा करने से पल होता है।

लग्न राश्यादि ९।१५।३२।५१ बलवान् है अतः राशितुल्य वर्ष ९ प्राप्त हुआ, शेष अंशादि १५।३२।५१ का त्रैराशिक द्वारा मासादि का साधन–

अंश १५ x २ = ३० ÷ ५ = लब्धि ६ मास, शेष ० x ६ = ०
दिन कला ३२ x २ = ६४ ÷ १० = लब्धि ६ दिन, शेष ४ x ६ = २४
घटी विकला ५१ x २ = १०२ ÷ १० = लब्धि १० घटी, शेष २ x ६ = १२ पल।

राशितुल्य वर्षादि–	९।०।०।०।०
अंशोत्पन्न मासादि–	०।६।०।०।०
कलोत्पन्न दिनादि–	०।०।६।२४।०
विकलोत्पन्न घट्यादि–	०।०।६।१०।१२
योगफल–	९।६।६।३४।१२ में
पूर्वोक्त लग्नार्युवर्षादि–	६।१।२९।९।३८ को जोड़ा तो
स्पष्ट लग्नायुवर्षादि–	१५।८।५।४२।० हुए।

संस्कृतांशायुचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहायु	योग
७	०	०	१	२	७	२	१९	वर्ष	४०
१	९	१८	७	२२	६	४	८	मास	४
९	१	७	१	७	९	१०	९	दिन	२९
५१	२४	४०	२२	३७	३३	३८	४२	घटी	४९
०	३६	४८	१२	२२	०	२४	०	पल	२२

अथ पिण्डायुसाधनम्—

१. तत्रादौ पिण्डायुषि वर्षाणि—

नन्देन्दवो पञ्च यमाः शरक्ष्मा भास्कराश्च पञ्चेन्दवः कुपक्षाः।
नखाश्च रव्यादिमुखग्रहाणां पिण्डायुषोऽब्दाः निजोच्चगानाम्।।

सूर्यादि ग्रह अपनी उच्चराशि में हों तो पिण्डायुसाधन में क्रम से १९, २५, १५, १२, १५, २१, २० सूर्यादि ग्रहों के वर्ष होते हैं।।७।।

निसर्गायुसाधने वर्षादिः—

कृत्येकद्व्यङ्कधृत्यश्च नखपञ्चाशदेव हि।
सूर्यादीना क्रमादब्दाः स्वोच्चे नैसर्गिके द्विज।।८।।

सूर्यादि ग्रह अपनी उच्चराशि में हो तो क्रम से २०, १, २, ९, १८, २०, ५० वर्ष नैसर्गिक आयु में होते हैं।।८।।

पिण्ड-निसर्गायुसाधनम्—

स्वोच्चशुद्धो ग्रहः शोध्यः षड्भादूनो भमण्डलात्।
षड्भाधिको यथास्थित एव लिप्तानिघ्नो निजाब्दैः।।९।।

जिस ग्रह की पिण्डायु या निसर्गायु साधन करना हो उसके राश्यादि को उसके परमोच्च राश्यादि में घटाकर शेष ६ राशि से न्यून हो तो उसे १२ राशि में घटावे। यदि शेष ६ राशि से अधिक हो तो राश्यादि की

कला बनाकर उसे ग्रहवर्ष संख्या (पिण्डायुसाधन में पिण्डायु ग्रहवर्ष, निसर्गायुसाधन में नैसर्गिक ग्रहवर्ष) से गुणा कर।।९।।

खाभ्ररसभूनेत्रैर्भक्ते प्राप्यते तु यत्फलम्।
वर्षमासदिनादिकं तद्धि पिण्डायुः स्फुटं भवेत्।
एवं क्रियानिसर्गेऽपि हानिवृद्धिस्तु पूर्ववत्।।१०।।

२१६०० से भाग देने से लब्धि वर्ष, मास, दिनादि पिण्डायु या निसर्गायु होते हैं।।१०।।

पिण्डायु-साधन का उदाहरण—

सूर्योच्चांशराश्यादि = ०।१०।०।० में
सूर्य = ३।१८।२६।३४ को घटाया तो
उच्चांशान्तर ८।१२।३३।२६ हुआ।

नोट— यह ६ राशि से अधिक है अतः १२ राशि में नहीं घटाया गया। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह का चक्र शुद्ध उच्चांशान्तरचक्र नीचे लिखा है।

ग्रहोच्चांशान्तरचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
८	१०	११	१०	१०	९	११	राशि
२१	१०.	५	२३	२२	२१	१८	अंश
३३	२९.	२७	२२	९	९६	११	कला
२६	१३	५२	५९	६	५५	८	विकला

सूर्यपिण्डायुसाधनम्—

उदाहरण— परमोच्चांशान्तर ८।२१।३३।२६ पिण्डायु वर्ष १९
राशि ८ x १९ = मास १५२ ÷ १२ = वर्षादि १२।८
अंश २१ x १९ = दिन ३९९ ÷ ३० = मासादि १३।९
कला ३३ x १९ = घटी ६२७ ÷ ६० = दिनादि १०।२७
विकला २६ x १९ = पल ४९४ ÷ ६० = घट्यादि ८।१४
वर्षादि = १२।८।०।०।०
मासादि = ०।१३।९।०।०
दिनादि = ०।०।१०।२७।०
घट्यादि = ०।०।०।८।१४

सूर्यायुर्वर्षादि = १२।२१।१९।३५।१४ इस प्रकार प्रत्येक ग्रहों का पिंडायु एवं निसर्गायु साधन कर असंस्कृतपिण्डायु चक्र और असंस्कृतनिसर्गायु चक्र दिया जाता है।

असंस्कृतपिण्डायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहायु
१२	२०	१३	१०	१२	१७	१८	वर्ष
२१	१८	११	९	१७	०	१६	मास
१९	२२	२१	१०	२	१०	३	दिन
३५	१०	५८	३५	१६	५५	४२	घटी
२४	२५	०	४८	३०	१५	४०	पल

असंस्कृतनिसर्गायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहायु
१३	०	१	८	१५	१५	४६	वर्ष
१८	१०	१०	१	१३	१४	१०	मास
११	१०	१०	०	११	१८	९	दिन
२६	२९	५५	२०	४२	५८	१६	घटी
०	१३	५४	५१	४८	२०	४०	पल

विशेष— सूर्य सातवें भाव में है, अतः सूर्य का पिंडायुवर्षादि २१।२१।१९।३५।२४ ÷ ६ = २।३।१८।१५।५४ लब्धि वर्षादि हुई। इस लब्धि को सूर्यायु—

१२।२१।१९।३५।२४ में

लब्धि २।३।१८।१५।५४ को घटाया तो

शेष स्पष्टसूर्यायुवर्षादि १०।१८।१।१९।३० हुए।

चन्द्र में हानि-वृद्धि का कोई लक्षण न होने से स्पष्ट चन्द्रायुवर्षादि २०।१८।२२।१०।२५ हुए।

भौम अपने नवांश में हैं, अतः भौमायु १३।११।२१।५८।० × २ = २७।११।१३।५६।० भौमायु हुआ।

बुध में हानि-वृद्धि का कोई योग न होने से बुधायुवर्षादि १०।९।१०।३५।४८ हुआ।

गुरु आठवें भाव में है, गुरु से आयु का आधा भाग घटाकर शेष को दूना करने से गुरु के आयु में से घटाकर शेष को दूना करने से गुरु की स्पष्टायु वर्षादि ६।८।१८।१५ हुई।

शुक्र में कोई हानि-वृद्धि का योग न होने से शुक्रायुवर्षादि १७।०।१०।५५।१५ हुई।

शनि शत्रुराशि में है, शनि के आयु का तृतीय भाग १८।१६।३।४२।४० ÷ ३ = ६।५।११।१४।१३ को शन्यायु में घटाने से शेष १२।१०।२२।२८।२७ शनि की स्पष्टायु हुई।

संस्कृतपिण्डायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	योग	ग्रहायु
१०	२०	२७	१०	६	१७	१२	४	११२	वर्ष
१८	१८	११	९	८	०	१०	७	३	मास
१	२२	१३	१०	१८	१०	२२	२९	८	दिन
१९	१०	५६	३५	८	५५	२८	७	३३	घटी
३०	२५	०	४८	१५	१५	२७	४८	२८	पल

निर्सगायु में विशेष— सूर्य सातवें भाव में है, अतः नैसर्गिक सूर्यायु का छठा भाग घटाने से स्पष्ट सूर्यायु नैसर्गिक वर्षादि ९।७।१।६।१५ हुई।

चन्द्र में कोई हानि-वृद्धि नहीं हुई।

भौम अपने नवांश में है, अतः भौम की आयु दूनी हुई = २।२०।२१।५१।४८

बुध में कोई हानि-वृद्धि नहीं हुई।

गुरु आठवें भाव में है, अतः गुरु के आयु का आधा भाग घटाना चाहिए और अपने द्रेष्काण में है अतः दूना करना चाहिए। इसलिए गुरु की आयु ज्यों की त्यों रही।

शुक्र की आयु में कोई संस्कार नहीं है।

शनि शत्रु राशि में है, अतः शन्यायु का तीसरा भाग उसमें घटाने से शनि की आयु = ८।७।४।५८।५८ हुई।

संस्कृतनिसर्गायुचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	योग	ग्रहायु
९	०	२	८	१५	१५	८	४	६७	वर्ष
७	१०	२०	१	१३	१४	७	७	११	मास
३२	१०	२१	०	११	१८	४	२९	१०	दिन
२८	२९	५५	२०	४३	५८	५८	७	३	घटी
१५	१३	४८	५१	४८	२०	५८	४८	१	पल

अत्र लग्नायुसाधनम्—

राशीन्विहाय लग्नस्य लिप्तीकृत्य तथा द्विज।
शतद्वयेन भक्ते च फलं वर्षादिकं च यत्।
सबले लग्ने फलं त्वत्र पूर्वोक्तं नैवमत्र हि।।११।।

यहाँ बलवान् लग्न हो तो लग्न की राशि को त्याग कर अंशादि को कला बनाकर दो सौ से भाग देने से जो वर्षादि फल होता है, यही लग्न की आयु यहाँ होती है।।११।।

विशेषः—

क्रूरे लग्नस्थिते विद्वन् लग्नस्यांशसंख्यया।
निघ्नं क्रूरग्रहस्यायुः भक्ताष्टोत्तरशतेन च।
लब्धं वर्षादिकं शोध्यं ग्रहस्यायुः स्फुटो भवेत्।।१२।।

यदि लग्न में क्रूरग्रह हो तो लग्न की नवमांश संख्या से उस ग्रह की आयु को गुणाकर १०८ से भाग देने से लब्ध वर्षादि को उस ग्रह की आयु में घटाने से शेष ग्रह की स्पष्टायु होती है।।१२।।

उदाहरण— जन्मलग्न राश्यादि ९।१५।३२।५१ है, राशि का त्याग कर अंशादि १५।३२।५१ का विकला बनाया तो अंश १५ x ६०+३२=९३२ कला हुई। ९३२ x ६० + ५१ = ५५९७१ विकला हुई। इसमें १२००० से भाग देने से लब्धि ४ (वर्ष) शेष ७९७१ x १२ = ९५६५२ ÷१२००० = लब्धि ७ मास, शेष ११६१२ x ३० = ४३४९५६ ÷ १२००० = लब्धि २९ दिन, शेष १४६० x ६० = ९३६०० ÷ १२००० = लब्धि ७ घटी, शेष ९६०० x ६० = ५७६००० ÷ १२००० लब्धि ४८ पल लग्नायु प्राप्त हुई।

आयुग्रहणे विशेषः—

अंशायुः सबले लग्ने सूर्ये ग्राह्यं तु पैण्डकम्।
चन्द्रे नैसर्गिकं ग्राह्यं बलसाम्ये द्वयोस्तथा।।१३।।

यदि लग्न बली हो तो अंशायु ही मुख्य आयु होती है। सूर्य बली हो तो पिण्डायु और चन्द्रमा बली हो तो निसर्गायु प्रधान आयु होती है।।१३।।

योगार्धमायुस्तत्र स्यादिति प्राज्ञैर्विनिश्चितम्।।
त्रयोऽप्येते बलाढ्यश्चेत्सर्वेषां योगत्र्यंशकः।
आयुर्ग्राह्यं तु सर्वेषामिति प्रोक्तं पुरातनैः।।१४।।

इनमें दो समान बली हों तो दोनों के आयु का योगार्ध मुख्य आयु होती है। यदि तीनों समान बली हों तो तीनों के आययोग का तृतीयांश स्पष्टायु होती है।।१४।।

अथ नानाजातीयमायुः—

गृध्रोलूकशुकध्वाङ्क्षसर्पाणां च सहस्रकम्।
श्येनवानरभल्लूकमण्डूकानां शतत्रयम्।।१५।।

गिद्ध-उल्लू-शुक-कौआ और सर्पों की एक हजार वर्ष की आयु होती है। बटेर-वानर-भालू-मेढक की तीन सौ वर्ष की आयु होती है।।१५।।

पञ्चाशदुत्तरशतं राक्षसानां प्रकीर्त्तितम्।
नराणां कुञ्जराणां च विंशोत्तरशतं विदुः।।१६।।

राक्षसों की १५० वर्ष की आयु होती है। मनुष्य और हाथियों की १२० वर्ष की आयु होती है।।१६।।

द्वात्रिंशदायुरश्वानां पञ्चविंशत् खरोष्ट्रयोः।
वृषमाहिषयोश्चैव चतुर्विंशतिवत्सराः।।१७।।

घोड़ों की ३२ वर्ष की आयु होती है। गधा और ऊँट की २५ वर्ष की आयु होती है। बैल और भैंसा की आयु २४ वर्ष की होती है।।१७।।

विंशत्यायुर्मयूराणां छागादीनां च षोडश।
हंसस्य पञ्चनवकं पिकानां द्वादशाब्दकाः।।१८।।

मोर की २० वर्ष की आयु होती है। बकरा आदि की १६ वर्ष की आयु होती है। हंस की १४ वर्ष की आयु होती है। कोकिल और कबूतर की १२ वर्ष की आयु होती है।।१८।।

तद्वत्पारावतानाञ्च कुक्कुटस्याष्टवत्सराः।
बुद्बुदानामण्डजानां सप्तसङ्ख्याः समाः स्मृताः।।१९।।

मुर्गों की ८ वर्ष आयु होती है। बुलबुलों की ७ वर्ष की आयु होती है।।१९।।

अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि आयुर्दायगतिं तव।
यस्य विज्ञानमात्रेण कालज्ञो भवति ध्रुवम्।।२०।।

अन्य रीति से आयु जानने की रीति कह रहा हूँ, जिसके जान लेने से मनुष्य कालज्ञ हो जाता है।।२०।।

लग्नेशाष्टमेशाभ्यां योगैकः कथितो द्विज।
द्वितीयं शनिचन्द्राभ्यां चिन्तनीयं सदा द्विज।।२१।।

प्रथम लग्नेश और अष्टमेश से १ योग। द्वितीय शनि और चन्द्रमा से।।२१।।

होरालग्नलग्नाभ्यां तृतीयं च विचिन्तयेत्।
लग्नेन्दूमदने वापि चिन्तयेल्लग्नचन्द्रतः।।२२।।

तथा तीसरा होरालग्न और जन्मलग्न से होता है। दूसरे योग में यदि चन्द्रमा जन्मलग्न या सातवें भाव में हो तो लग्न और चन्द्रमा से अन्यथा शनि और चन्द्रमा से जो आयु आवे उसे लेना चाहिए।।२२।।

चरे चरे स्थिते द्वौ च लग्नरन्ध्राधिपौ यदि।
दीर्घायुयोगो विज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२३।।

यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों चर राशि में हों।।२३।।

स्थिरर्क्षे लग्ननाथो हि लयेशे द्वन्द्वभे स्थिते।
तदा दीर्घायुषो योगः सम्भवेद्गणिताग्रणीः।।२४।।

अथवा एक स्थिर और दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो दीर्घायु योग होता है।।२४।।

लग्नाधीशे स्थिते द्वन्द्वे स्थिरे रन्ध्राधिपे स्थिते।
दीर्घायुयोगो विज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२५।।

यदि लग्नेश और अष्टमेश में से एक चर राशि में और दूसरा स्थिर राशि में हो तो मध्यायु योग होता है।।२५।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगमुत्तमम्।
चरे लग्नाधिपे विप्र स्थिरे रन्ध्रपतिर्यदि।।२६।।

अथवा दोनों द्विस्वभाव राशि में हों तो भी मध्यायु योग होता है।।२६।।

तदा मध्यायुषं विद्याद् द्वौ द्वन्द्वे मध्यमायुषः।
अधुनाल्पायुयोगं च तवाग्रे कथयाम्यहम्।।२७।।

लग्नेश और अष्टमेश दोनों में से एक चर राशि में तथा दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो अल्पायु योग होता है।।२७।।

लग्नाधीशश्चरे यस्य द्वन्द्वभे रन्ध्रनायके।
तस्याल्पायुर्महाप्राज्ञ निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२८।।

अथवा लग्नेश और अष्टमेश दोनों स्थिर राशि में ही हों तो भी अल्पायु योग होता है।।२८।।

स्थिरे स्थिरे स्थितौ द्वौ चेल्लग्नरन्ध्राधिपौ द्विज।
अल्पायुस्तत्र विज्ञेयं सृष्टिकर्त्रा प्रणोदितम्।।२९।।

इसी प्रकार शनि-चन्द्रमा या लग्न-चन्द्रमा तथा होरालग्न और जन्मलग्न से भी आयु लाना चाहिए।।२९।।

एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपकः।
द्वयोर्योगेन सङ्ग्राह्यं न ग्राह्यं चैकरूपतः।।३०।।

यदि तीनों प्रकार में दो प्रकार से एक आयु और तीसरे से भिन्नायु आती हो तो दो प्रकार से आई हुई आयु को ही लेना चाहिए।।३०।।

योगत्रयं त्रयं रूपं भिन्नं भिन्नं भवेद्द्विज।
होरालग्नविलग्नाभ्यां प्राप्तायुर्योगनिश्चितम्।।३१।।

यदि तीनों प्रकार से भिन्न-भिन्न आयु आती हो तो होरालग्न और लग्न से जो आयु आती हो उसे ही लेना चाहिए।।३१।।

अथाहं सम्प्रवक्ष्यामि आयुर्वर्षाणि भो द्विज।
यस्य ज्ञानं विना विद्वन् स्पष्टायुर्नोपलभ्यते।।३२।।

हे द्विज! अब मैं आयु के वर्गों को कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान के बिना आयु की स्पष्टता नहीं होती है।।३२।।

रसाङ्कैर्गजाभ्रेन्दुभिः शून्यमासैस्त्रिधा दीर्घमायुः कलौ सम्प्रदिष्टम्।
चतुःषष्टिबाह्वब्द्यशीति प्रमाणैर्मतं मध्यमायुर्नृणां वत्सरैः स्यात्।।

९०, १०८, १२० वर्ष ये तीन प्रकार की दीर्घायु कलियुग में होती है। ६४, ७२, ८० वर्ष की मध्यमायु होती है।।३३।।

तथा द्वित्रिषड्वार्धिनशून्याब्धिवर्षै-
र्भवेदल्पमायुर्नराणां युगान्ते।।३४।।

३२, ३६, ३० वर्ष की अल्पायु का प्रमाण कहा है।।३४।।

योगत्रयेण दीर्घायुस्तदा ग्राह्यं खवेदकम्।
योगद्वयेन सम्प्राप्ते ग्राह्यं षट्त्रिंशताब्दकम्।।३५।।

यदि ३ प्रकार से दीर्घायु आये तो ४० वर्ष का खंड और दो प्रकार से दीर्घायु हो तो ३६ वर्ष का।।३५।।

योगैकेन सदा ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मिताब्दकम्।
एवमल्पायुयोगे तु प्रोक्ताच्च विपरीतकम्।।३६।।

और एक प्रकार से दीर्घायु हो तो ३२ वर्ष का खंड लेना चाहिए। इसी प्रकार अल्पायु योग में इसके विपरीत यानि ३ प्रकार से अल्पायु हो तो ३२ वर्ष, दो प्रकार से अल्पायु हो तो ३६ और एक प्रकार से अल्पायु हो तो ४० वर्ष का खंड स्पष्टायु साधन में लेना चाहिए।।३६।।

तथा लग्नेशाष्टमेशाभ्यां मध्यमायुः समागते।
ग्राह्यं चत्वारिंशन्मितं वर्षं च द्विजसत्तम।।३७।।

इसी प्रकार लग्नेश, अष्टमेश से मध्यमायु हो तो ४० वर्ष।।३७।।

लग्नेन्दुना वा चन्द्रमन्दाभ्यां मध्यायुः समागते।
खण्डं ग्राह्यं तदा विद्वन् षट्त्रिंशन्मिताब्दकम्।।३८।।

लग्नचन्द्र वा शनिचन्द्र से मध्यमायु हो तो ३६ वर्ष।।३८।।

होरालग्नलग्नाभ्यां मध्यमायुः समागते।
ग्राह्यं तत्र सदा विप्र द्वात्रिंशन्मिताब्दकम्।।३९।।

और होरालग्न, जन्मलग्न से मध्यमायु हो तो ३२ वर्ष का खंड लेना चाहिए।।३९।।

अथायुर्बोधकचक्रम्—

दीर्घायुः चरे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः	दीर्घायुः स्थिरे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः	दीर्घायुः द्विस्वभावे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः
मध्यायुः चरे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः	मध्यायुः स्थिरे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः	मध्यायुः द्विस्वभावे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः
हीनायुः चरे लग्नेशः द्विस्वभावेऽष्टमेशः	हीनायुः स्थिरे लग्नेशः स्थिरेऽष्टमेशः	हीनायुः द्विस्वभावे लग्नेशः चरेऽष्टमेशः

अथायुष्खण्डबोधकचक्रम्—

आयुः	प्रकारत्रयेण	खण्डम्	वर्षम्
दीर्घायुः	प्रकारत्रयेण	१	१२०
	प्रकारद्वयेन	२	१०८
	प्रकारैकेन	३	९६
मध्यायुः	प्रकारत्रयेण	१	८०
	प्रकारद्वयेन	२	७२
	प्रकारैकेन	३	६४
अल्पायुः	प्रकारत्रयेण	१	४०
	प्रकारद्वयेन	२	३६
	प्रकारैकेन	३	३२

अथ स्पष्टायुःसाधनप्रकारः—

योगकारकखेटानां राशीन्त्यक्त्वांशकस्य च।
योगं कृत्वा भजेत्तत्र योगकारकसंख्यया।।४०।।

योगकारक ग्रहों की राशियों को छोड़कर शेष अंशादिकों का योग करके योगकारक ग्रहों की संख्या (१,२,३ आदि) से भाग देवै।।४०।।

लब्धघ्नं प्राप्तखण्डेन त्रिंशता तु विभाजितम्।
लब्धं वर्षादिकं यच्च प्राप्तखण्डे तु शोधयेत्।।४१।।

भाग देने से लब्धि को आयु के अनुसार अल्पायु के प्राप्त खंड से गुणाकर गुणन फल में ३० का भाग देने से लब्ध वर्षादि को दीर्घायु वा मध्यायु के प्राप्त खंडों में घटादे।।४१।।

शेषं वर्षादिकमत्र स्पष्टायुः परिकीर्त्तितम्।
एवं स्पष्टक्रिया प्रोक्ता ब्रह्मणा शङ्करादिभिः।।४२।।

उदाहरण— पृ.२५ के जन्माङ्गचक्र और आयुर्बोधक चक्र पृ. २५६ के अनुसार—

लग्नेश शनि स्थिर (८) में
अष्टमेश सूर्य चर (४) में } मध्यायु

शनि स्थिर (८) में
चन्द्र द्विस्वभाव (३) में } दीर्घायु

होरालग्न पृ. (२४) स्थिर (२) में
जन्मलग्न चर (१०) में } मध्यायु

पृ. २५५ श्लोक ३३ के अनुसार दो प्रकार से मध्यायु तथा आयुखण्ड-बोधक चक्र (पृ. २५७) के अनुसार मध्यायु का दूसरा खण्ड (७२) वर्ष प्राप्त हुआ।

लग्नेश शनि	१।४८।५।२	योगकर्ता ४ हैं अतः चारों के अंशादि का योग किया गया है।
अष्टमेश सूर्य	१८।२६।३४	
होरा लग्न	१५।१०।०	
जन्म लग्न	१५।२३।३७	

५०।३८।३ ÷ ४ : = १२।३९।३०।४५

अंशादि १२।३९।३०।४५ x ३६ (द्वितीय खण्ड पृ. २५७)

३०) ४५५।४२।२७।० (१५ (वर्ष)

३०

१५५

१५०

५ x १२

६०

४२

१०२ (३ (मास)

९०

१२ x ३०

३६०

२७

३८७ (१२ (दिन)

३०

८७

६०

२७ x ६०

१६२०

०

१६२० (५४ (घटी)

१५०

१२०

१२०

x

लब्धि वर्षादि = १५।३।१२।५४।०

मध्यायु द्वितीय खण्ड वर्षादि ७२।०।०।०।० में
लब्धि वर्षादि = १५।३।१२।५४।० घटाने से
स्पष्टायुर्वर्षादि = ५६।८।१७।६।०

शेष स्पष्टायु होती है, शेष स्पष्ट है।।४२।।

तत्र विशेषः—

अथ योगत्रये विप्र शनियोगं करोति चेत्।
एकएकादशह्रासः कक्ष्याह्रासस्त्वयं क्रमात्।।४३।।

हे विप्र! तीनों प्रकार के आयु के योगों में यदि शनि योग करता हो तो क्रम से कक्ष्या का ह्रास होता है।।४३।।

ततः फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम्।
गुणैः प्रपूरितः सौरिः कक्ष्यावृद्धिं करोति च।।४४।।

अतः उसके गुण-दोष को कह रहा हूँ। गुणों से युक्त शनि कक्ष्या वृद्धि को करता है।।४४।।

दोषयुक्ता भवेद्धानिस्ताभ्यां निर्णय उच्यते।
अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्यं प्रजायते।।४५।।

यदि दोषयुक्त हो तो कक्ष्या की हानि करता है अर्थात् अत्यंत अल्पायु हो तो मध्यायु।।४५।।

मध्यमाज्जायते दीर्घं कक्ष्यावृद्धेश्च लक्षणम्।
एवं नीचारिगः सौरिः पापदृष्टिसमन्वितः।।४६।।

मध्यायु हो तो दीर्घायु करता है। इसी प्रकार शनि अपनी नीच राशि, शत्रु की राशि में पापग्रह से दृष्ट और युत हो तो।।४६।।

कक्ष्याह्रासकृतो विप्र त्रिभागेनायुहानिकृत्।
दीर्घाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च।।४७।।

कक्ष्या की हानि करता है। अर्थात् दीर्घायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो अल्पायु।।४७।।

अल्पादत्यल्पकं याति बाल्ये निधनसम्भवः।
लग्नेशे वापि होरेशे केवलं शनिसंयुते।।४८।।

और अल्पायु हो तो अत्यल्पायु होता है तथा बाल्यकाल में ही मरण हो जाता है। लग्नेश वा होरेश केवल शनि से युत हो।।४८।।

पापर्क्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते।
कक्ष्याह्रासं न कुर्वीत विना नीचारिगे द्विज।।४९।।

पापग्रह की राशि में वा पापयुक्त हो, पापग्रह से देखा जाता हो, यदि नीच राशि या शत्रु की राशि में न हो तो कक्ष्या का ह्रास नहीं करता है।।४९।।

एवं तुङ्गादिरहितः कक्ष्यावृद्धिं न कारयेत्।
शुभर्क्षे शुभसंयुक्ते शुभदृष्टौ च तुङ्गगे।।५०।।

इसी प्रकार उच्चादि से रहित हो तो कक्ष्यावृद्धि को नहीं करता है। यदि शनि शुभ ग्रह की राशि में शुभ ग्रह से युक्त और शुभ ग्रह से दृष्ट होकर अपने उच्च में हो।।५०।।

पापयोगेन रहिते कक्ष्यावृद्धिकरः शनिः।
एवं नीचादिदोषेण कक्ष्याह्रासः प्रजायते।।५१।।

और पापग्रह के योग से रहित हो तो कक्ष्या की वृद्धि करता है। इसी प्रकार नीचादि दोष के कारण कक्ष्या का ह्रास होता है।।५१।।

गुरुणा स्थानसम्बन्धेऽप्येवं वृद्धिर्भविष्यति।
लग्ने वा सप्तमे वापि तुङ्गादिगुणसंयुते।।५२।।

इसी प्रकार गुरु भी स्थान संबंध से आयु में वृद्धि करता है। यदि गुरु लग्न में वा सप्तम में उच्चादि गुणों से युक्त हो।।५२।।

शुभर्क्षे शुभदृग्युक्ते कक्ष्यावृद्धिकरो गुरुः।
जीवने संशयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम्।।५३।।

शुभ राशि में शुभ ग्रह से दृष्ट और युक्त हो तो कक्ष्या की वृद्धि करता है।।५३।।

अल्पायुषि च मध्यायुर्मध्याप्ते दीर्घमायुषि।
एवं भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रतः।।५४।।

अल्पायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो दीर्घायु को करता है। इस प्रकार भेदानुभेद से मैंने ह्रास-वृद्धि तुमसे कहा।।५४।।

अथ अमितायुर्योगः—

गुरुचन्द्रौ च कर्काङ्गे बुधशुक्रौ च केन्द्रगौ।
शेषे लाभत्रिषष्ठस्थश्चेदमितायुस्तदा भवेत्।।५५।।

जन्मलग्न कर्क हो, उसमें गुरु चन्द्रमा हों, बुध-शुक्र केन्द्र में हों और शेष ग्रह ११।३।६ भाव में हों तो अमित आयु होती है।।५५।।

अथ मुनितुल्यायुर्योगः—

देवलोकांशके मन्दे भौमे पारावतांशके।
गुरौ सिंहासने लग्ने जातो मुनिसमो भवेत्।।५६।।

देवलोकांश में शनि हो, भौम पारावतांश में हो और गुरु सिंहासनांश में होकर लग्न में हो तो मुनि समान आयुवाला होता है।।५६।।

अथ युगान्तायुर्योगः—

गोपुरांशे गुरौ केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके।
त्रिकोणे कर्कटे लग्ने युगान्तं स तु जीवति।।५७।।

गोपुरांश में होकर गुरु केन्द्र में हो, शुक्र पारावतांश में होकर त्रिकोण में हो और कर्क-लग्न में जन्म हो तो युगान्त पर्यन्त आयु होती है।।५७।।

अथ पूर्णायुर्योगः—

चतुष्टये शुभैर्युक्ते लग्नेशे शुभसंयुते।
गुरुणा दृष्टिसंयोगे पूर्णमायुस्तु जायते।।५८।।

यदि केन्द्र में शुभ ग्रह हों, लग्नेश शुभग्रह से युक्त हो और गुरु से देखा जाता हो तो दीर्घायु होता है।।५८।।

केन्द्रस्थिते च लग्नेशे गुरुशुक्रसमन्विते।
ताभ्यां निरीक्षिते वापि पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।५९।।

लग्नेश केन्द्र में हो और गुरु-शुक्र से युत वा दृष्ट हो तो पूर्णायु होती है।।५९।।

स्वोच्चस्थितैस्त्रिभिः खेटैर्लग्नरन्ध्रेशसंयुतैः।
रन्ध्रे पापविहीने च दीर्घमायुः समादिशेत्।।६०।।

कोई तीन ग्रह अपनी उच्च राशि में लग्नेश, अष्टमेश से युत हों और अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो तो दीर्घायु होता है।।६०।।

लयस्थितैस्त्रिभिः खेटैः स्वोच्चमित्रस्ववर्गगैः।
लग्नेशे बलसंयुक्ते पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।६१।।

अपनी उच्च राशि वा मित्र की राशि में वा अपने वर्ग में होकर तीन ग्रह और लग्नेश बली हो तो पूर्ण आयु होती है।।६१।।

स्वोच्चस्थितेन केनापि खेचरेण समन्वितः।
रन्ध्रनाथो शनिर्वापि पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६२।।

अपने उच्च में गये हुए किसी ग्रह से अष्टमेश या शनि युत हो तो पूर्ण आयु होती है।।६२।।

त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः।
लग्नेशो बलसंयुक्तः पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६३।।

३।६।११ भाव में पापग्रह हों और शुभग्रह केन्द्र-त्रिकोण में हों तथा लग्नेश बली हो तो पूर्ण आयु होती है।।६३।।

षट्सप्तरंन्ध्रभावेषु संयुक्तेषु शुभेषु च।
त्रिषडायेषु पापेषु पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत्।।६४।।

६।७।८ भाव में शुभ ग्रह हों और ३।६।११ भाव में पापग्रह हों तो पूर्ण आयु होती है।।६४।।

अथायुर्बाधकं विप्र कथयामि तवाग्रतः।
दीर्घायुर्योगं सम्प्राप्य प्रकारशकलेष्वपि।।६५।।

आयु के बाधक योगों को कह रहा हूँ।।६५।।

अथ निधनसमयज्ञानम्—

किं दशायां च निधनमिति ज्ञातुमपेक्षया।
निर्णयं तस्य कुर्वीत तवाग्रे कथयाम्यहम्।।६६।।

तीनों प्रकार से दीर्घायु योग के प्राप्त होने पर किस दशा में मृत्यु होती है, इसके ज्ञान के लिए मै निर्णय कह रहा हूँ।।६६।।

दीर्घे द्विसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं तु चिन्तयेन्मृतिम्।
षट्त्रिंशदकादूर्ध्वं च चिन्तयेन्मध्यमायुषि।।६७।।

दीर्घायु योग में ७२ वर्ष के बाद और मध्यायु योग में ३६ वर्ष के बाद मृत्यु का विचार करना चाहिए।।६७।।

अथ स्पष्टं प्रवक्ष्यामि मलिने द्वारबाह्ययोः।
नवांशे निधनं तस्य त्रिशूलिभाषितं पुरा।।६८।।

द्वार राशि और बाह्य राशि के पापाक्रांत होने से उसकी दशा में मृत्यु होती है।।६८।।

द्वारद्वारेशयोर्विप्र मालिन्ये तन्नवांशके।
जातस्य हि भवेन्मृत्युः सत्यमेव न संशयः।।६९।।

अथवा द्वार राशि वा द्वारेश के पापाक्रांत होने से उसकी दशा में मृत्यु होती है।।६९।।

पाकभोगद्वये विप्र चिन्तनीयं प्रयत्नतः।
स्वयं पापः पापदृष्टे पापखेटसमन्विते।
तन्नवांशदशाकाले निधनं च भवेद्ध्रुवम्।।७०।।

दोनों दशाओं में (दशा-अंतर्दशा) में अर्थात् द्वारेश स्वयं पापी हो अथवा पापग्रह से देखा जाता हो वा पापयुक्त हो तो उसकी दशा या अंतरदशा में मृत्यु होती है।।७०।।

अथवा योगायुर्दायसमाप्तिसमयेष्वपि।
प्रोक्ते मूलाश्रयीभूते चिन्तनीयं द्विजोत्तम।।७१।।

अथवा योगज आयु की समाप्ति समय में मृत्यु काल के समीप की दशा में मृत्यु का विचार करना चाहिए।।७१।।

खण्डे वा यदि पाकस्य बाह्यस्य मलिने यदि।
दशा न हि समाप्येत तत्त्रिकोणाब्दके मृतिः।।७२।।

अथवा बाह्य राशि के मलिन होने के समय उसके खंड में यदि दशा न समाप्त हो तो उसकी त्रिकोण राशि के वर्ष में मृत्यु होती है।।७२।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि मृत्युयोगापवादकम्।
शुभदृष्ट्या शुभयोगे शुभखेचरसंयुते।।७३।।

यदि द्वारबाह्य राशि वा उनके स्वामी शुभ ग्रह से युक्त वा शुभ दृष्टि से युक्त हों तो।।७३।।

न च द्वारे न बाह्ये च द्वारेशे चोपलक्षिते।
द्वारेशाश्चयनवांशभुक्तौ च निधनं भवेत्।।७४।।

उक्त द्वार बाह्य राशि वा इनके स्वामियों की दशा अंतर में मृत्यु नहीं होती है, किन्तु द्वारेश के आश्रयीभूत नवांश की दशा में मृत्यु होती है।।७४।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रकारं वै द्वितीयकम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण आयुर्दासूचको भवेत्।।१।।

अब मैं आयु के निर्णय का दूसरा प्रकार कह रहा हूँ, जिसके ज्ञान मात्र से आयु को जाननेवाला मनुष्य होता है।।१।।

कारकात्सप्तमाद्विप्र अष्टमेशो तयोर्द्वयोः।
मध्ये चैको बली चिन्त्यः सोऽपि ह्यायुःप्रदो ग्रहः।।२।।

आत्मकारक और उससे सातवाँ भाव दोनों से जो अष्टमेश, दोनों अष्टमेशों में जो बली हो।।२।।

केन्द्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्याल्पतायुषि।
स विज्ञेया महाप्राज्ञ तवाग्रे प्रवदाम्यहम्।।३।।

वह यदि केंद्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में हो तो मध्यायु और आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होती है।।३।।

केन्द्रे स्थितेऽपि दीर्घायुर्मध्यायुः पणफरे स्थिते।
आपोक्लिमे स्थिते त्वल्पमायुर्भवति निश्चितम्।।४।।

इसी प्रकार लग्न और उससे सप्तम भाव, दोनों से अष्टमेश, इन दोनों अष्टमेशों में जो बली हो वह यदि केंद्र में हो तो दीर्घायु, पणफर में हो तो मध्यायु और आपोक्लिम में हो तो अल्पायु होती है।।४।।

लग्नात्तत्सप्तमाद्विप्र अष्टमेशो तयोर्द्वयोः।
ताभ्यां मध्ये बली चैकः स्थितः केन्द्रादि पूर्ववत्।
दीर्घमध्याल्पभेदेन आयुर्निश्चित्य पूर्ववत्।।५।।

हे विप्र! लग्न और सप्तम से जो अष्टमेश, दोनों में जो एक बली, उसके केन्द्रादि में रहने से पूर्ववत् दीर्घ, मध्य, अल्पायु का निर्णय करना चाहिए।।५।।

पूर्ववद्द्वन्द्वखण्डस्य त्रैराशिकक्रमेण च।
आयुर्दायकृते स्पष्टं प्रवक्ष्यामि इदं वचः।।६।।

इस प्रकार दीर्घ आदि में आयु का निर्णय करके पूर्व कहे हुए आयु को स्पष्ट करके निर्णय इस प्रकार करना चाहिए।।६।।

स्वस्मिन्समबले खेटेऽनधिके च बले द्विज।
न वीर्यतायां दीर्घादि विपरीतायुषि भवेत्।।७।।

यदि आयुकर्त्ता ग्रह समान बल के अथवा अल्प बल के हों तो दीर्घादि विपरीत आयु होती हैं।।७।।

दीर्घमध्ये च वाल्पं च स्वल्पं वा किञ्चिदेव च।
विपरीतं योगभङ्गे सत्यमेव न संशयः।।८।।

दीर्घ, मध्य, अल्प वा उससे कुछ कम आयु होती है। इस प्रकार योग भंग होने से विपरीत आयु होती है।।८।।

अथाग्रेऽनेकभेदानामायुषो निर्णयः कृतः।
दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम्।।९।।

आयु जानने का दूसरा प्रकार कह रहा हूँ, जिसे दीर्घादि तीनों प्रकार से ब्रह्माजी ने कहा है।।९।।

जन्मलग्नाष्टमेशौ द्वौ चिन्तयेज्जन्मपत्रके।
पञ्चमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते।।१०।।

जन्मांग चक्र में लग्नेश और अष्टमेश यदि ५।११ भाव में हों तो दीर्घायु।।१०।।

लाभे तृतीयगे वापि मध्यमायुर्विचिन्तयेत्।
लाभे वित्ते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्पं भवेद्द्विज।।११।।

११।३ भावों में हों तो मध्यमायु और ११।२।५।९ भावों में हों तो अल्पायु।।११।।

गतायुर्लाभगौ द्वौ चेज्जातकोऽपि न जीवति।
एवं समस्तजन्तूनामीदृग्योगं विचिन्तयेत्।।१२।।

और दोनों ११ भाव में हों तो गतायु होता है और जातक नहीं जीता है। इस प्रकार से सभी प्राणियों के आयुर्दाय का निर्णय करना चाहिए।।१२।।

अथैवं भिन्नमार्गेण आयुर्दायं निरूप्यते।
तनुतन्वीशतद्राशिपत्युर्भानां त्रिकोणके।।१३।।

पुनः प्रकारान्तर से आयु का निर्णय कह रहा हूँ। लग्न, लग्नेश और उनकी राशियों के स्वामि से त्रिकोण में।।१३।।

अल्पमध्यचिरायुष्यं रूपवर्णप्रमाणतः।
अष्टमेशादियोगेन निर्याणं कारयेद्ग्रहः।।१४।।

अल्प, मध्य और दीर्घायु रूप वर्ष प्रमाण से होती है। इसमें अष्टमेश आदि के युग से निर्याणकर्ता ग्रह होता है।।१४।।

लग्नत्रिकोणगेऽल्पायुर्लग्नेशस्य त्रिकोणगे।
मध्यमायुर्विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१५।।

लग्न त्रिकोण में अल्पायु, लग्नेश से त्रिकोण में मध्यमायु।।१५।।

लग्नेशात्स्वीयराशीशे त्रिकोणे रन्ध्रनायके।
दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शम्भुप्रणोदितम्।।१६।।

लग्नेश वा जन्मराशीश वा अष्टमेश त्रिकोण में हो तो दीर्घायु होता है।।१६।।

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नवं कथम्।
स्वल्पमध्यचिरायुष्यं द्वादशाद्वाधिकेन च।।१७।।

यहाँ पर त्रिकोण के विभाग में नव का भेद कैसे हो? यहाँ प्रत्येक त्रिकोण में अल्प, मध्य, दीर्घायु बारह (१२) वर्ष का भेद होता है।।१७।।

अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्थाने पृथक् पृथक्।
विलग्नेशाष्टमेशादि लग्नस्थेऽपि द्विजोत्तम।।१८।।

अल्पायु का तीन भेद तीनों स्थानों में होता है। यदि लग्नेश, अष्टमेश लग्न में हों तो।।१८।।

द्वादशाब्दं भवेदायुश्चतुर्विंशति पञ्चमे।
नवमे च षट्त्रिंशाब्दमित्येवं न तु संशयः।।१९।।

१२ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो २४ वर्ष और नवें भाव में हों तो ३६ वर्ष की अल्पायु होती है।।१९।।

लग्नेशराशिकोणेषु लग्नरन्ध्राधिपा यदि।
तत्र स्थितेष्टवेदाब्दं षष्टयब्दं पञ्चमे स्थिते।।२०।।

लग्नेश की राशि से त्रिकोण में लग्नेश अष्टमेश हों तो तीन भेद होता हैं। राशि में हो तो ४८ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो ६० वर्ष।।२०।।

नवमस्थे द्विसप्ताब्दं तन्नवकमिदं मतम्।
लग्नेशाश्रितराशीशात्त्रिकोणेषु स्थिते द्विज।।२१।।

और नवें भाव में हों तो ७२ वर्ष की मध्यमायु होती है। लग्नेश जिस राशि में हो उसके स्वामी से त्रिकोण में लग्नेश, अष्टमेश हों तो दीर्घायु के तीन भेद होते हैं।।२१।।

लग्नेशादष्टमेशादि त्रिभागं दीर्घमायुषि।
लग्नस्थे चतुरशीतिः पञ्चमे षट्नवात्मकः।।२२।।

लग्नेश, अष्टमेश के योग से दीर्घायु में भी तीन भेद होते हैं। लग्न में हों तो ८४ वर्ष, पाँचवें भाव में हों तो ९६ वर्ष।।२२।।

नवमेऽष्टोत्तरशतं वर्षेष्वायुर्विनिर्णयः।
द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छम्भुप्रणोदितम्।।२३।।

नवम भाव में हों तो १०८ वर्ष की दीर्घायु होती है। यही १२ वर्ष के अनुपात से शंभु ने कहा है।।२३।।

रविः कुजः शनी राहुर्मरणे बलिनः क्रमात्।
विशेषं दुर्बलं हित्वा गृह्वीयाद्बलिनः सुधीः।।२४।।

सूर्य, भौम, शनि और राहु ये प्रबल मारक होते हैं। इनमें जो विशेष दुर्बल हो उसे छोड़कर प्रबल को ही लेना चाहिए।।२४।।

केतुश्च शनिवन्मृत्युनाथसम्बद्धमादिशेत्।
शनिना राहुणा वापि युक्ते सौम्ये रवीक्षिते।।२५।।

केतु भी शनि के समान ही मारक होता है। शनि वा राहु के साथ शुभ ग्रह युत हो तथा सूर्य से देखा जाता हो तो।।२५।।

पर्यायमेकं तन्मध्ये एकराशौ मृतिं वदेत्।
तयोस्तु शुभयोगेन तद्दशामृतिमादिशेत्।।२६।।

एक पर्याय के मध्य में ही मृत्यु करता है। दोनों यदि शुभयुक्त हों तो उनकी दशा में मृत्यु होती है।।२६।।

भोगराशौ दुर्बले वा प्रबले ग्रहसंस्थिते।
तथापि निर्दिशेत्काले मरणं नात्र संशयः।।२७।।

अन्तर दशा की राशि दुर्बल हो वा प्रबल ग्रह से युक्त हो तो उसके समय में मृत्यु कहना चाहिए।।२७।।

केतौ चैवासनस्थे वा नाथे वाऽशुभवीक्षिते।
केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किञ्चन।।२८।।

यदि केतु अंत्य में हो अथवा उस राशि के स्वामी पापग्रह से देखा जाता हो तो केतु की दशा में मृत्यु होती है। शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो कुछ भी नहीं होता है।।२८।।

तन्वधीशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज।
अष्टमेशस्य स्वोच्चस्थे चर्पर्याब्दप्रमाणके।।२९।।

लग्नेश, अष्टमेश से आयु योग होता हो और अष्टमेश अपनी उच्च राशि में हो तो चर पर्याय के वर्ष में।।२९।।

अर्धाधिकाब्दं दत्वैव योजयेत्पूर्वमायुषि।
एवं नाथान्तरीत्या च चरपर्यातिरिक्तकः।।३०।।

आधे से अधिक वर्ष पूर्व आयु में जोड़कर विचार करना चाहिए। इस प्रकार राशिस्वामी तक चर पर्याय में विचार करना चाहिए।।३०।।

मर्यादयापि यदायुरष्टमेशेन दीयते।
तत्सर्वमर्धाधिक्ये च विधेयं द्विजसत्तम।।३१।।

मर्यादा के अनुसार अष्टमेश जिस आयु को देता हो उसमें अर्धाधिक्य कर देना चाहिए।।३१।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र नीचराशिगतोऽपि च।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च नाशयेत्।।३२।।

इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशि में हो तो उससे प्राप्त आयु का आधा ह्रास हो जाता है।।३२।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र नीचखेटेन संयुतः।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति।।३३।।

अथवा अष्टमेश किसी नीच राशि में स्थित ग्रह से युक्त हो तो भी प्राप्त आयु का आधा ह्रास होता है।।३३।।

एवं रन्ध्रपतिर्विप्र तुङ्गखेटेन संयुतः।
तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्धति।।३४।।

इसी प्रकार अष्टमेश उच्च स्थित ग्रह से युक्त हो तो उससे प्राप्त आयु का आधा बढ़ता है।।३४।।

एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम्।
लग्नेशाष्टमेशाभ्यां योगायुर्दायमागते।।३५।।

इस प्रकार मैंने आयु का निर्णय तुमसे कहा। लग्नेश, अष्टमेश के योग से आये हुए आयुर्दाय का।।३५।।

तेषु संस्कारमाज्ञेयमिदं पूर्वोक्तसंकथाम्।
लग्नेशादायुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम्।।३६।।

यथोचित संस्कार करके जो फल उच्च-नीचादि के अनुसार का आवे।।३६।।

संबुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः।
वृद्धिह्रासावुक्तरीत्या कार्या वै सम्प्रदायतः।।३७।।

उसे आयु में जोड़ देना चाहिए और संप्रदाय के अनुसार ह्रास-वृद्धि भी कर देना चाहिए।।३७।।

द्वित्र्यादिमृत्युयोगश्च प्रबलः पूर्वभाषितः।
नैसर्गिकोऽपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत्।।३८।।

यदि पूर्व में कहे हुए दो या तीन प्रबल मृत्यु योग हों तो नैसर्गिक योग-कारक भी बलवान् होते हैं। उसी की दशा में मृत्यु कहना चाहिए।।३८।।

रव्यारराहुपंगूनां चतुःखेटान्तरे बली।
तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृतिं वदेत्।।३९।।

रवि, भौम, राहु और शनि इन चारों में जो बलवान् हो उसी की दशा में मृत्यु होती है।।३९।।

अष्टमेशेन संयुक्तः शनिराहुः कुजो रविः।
न वीक्ष्यन्ते ग्रहैर्वापि तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत्।।४०।।

यदि शनि, राहु, भौम और रवि में से कोई अष्टमेश से युत हो, अन्य ग्रहों से न देखे जाते हों तो उसकी दशा में मृत्यु होती है।।४०।।

एषां मध्येषु प्रबला सा तत्स्वामिकराशिगे।
पाके मृत्युं विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।४१।।

इनमें जो प्रबल हों तो उसके स्वामी की राशि की दशा में निःसंशय मृत्यु होती है।।४१।।

एषां चतुर्ग्रहाणां च मध्ये चैको बली क्वचित्।
तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत्।।४२।।

इन चारों ग्रहों में कोई एक बली ग्रह हो उस ग्रह की राशि दशा में मृत्यु होती है।।४२।।

मृत्युस्थानाभिभूतायां सिद्धायां च महादशा।
तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तरमृतिप्रदा।।४३।।

मृत्युकारक ग्रह के निर्णयानुसार उसकी अंतर्दशा में भी मृत्यु होती है।।४३।।

शुभग्रहेण सम्बन्धे शनिराहु कुजो रविः।
तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत्।।४४।।

यदि शनि, राहु, भौम, रवि शुभग्रह से सम्बन्ध करते हों तो भी उनकी दशा में मृत्यु होती है।।४४।।

तदाश्रयराशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम्।
निर्विशङ्कं महाप्राज्ञ पुरा शम्भुप्रणोदितम्।।४५।।

एवं उनके आश्रयभूत राशि की दशा में भी मृत्यु होती है।।४५।।

सुखदुःखादि सन्ब्रूयात्पाकराशौ विचिन्तयेत्।
योगान्नरगता तत्तु तत्तद्वीर्यानुसारतः।।४६।।

पाकेश्वर के अनुसार सुख-दुःखादि उस ग्रह के योग और बल के अनुसार कहना चाहिए।।४६।।

सबलायां सुखं ब्रूयाद्दुर्बला दुःखदायिका।
वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च।।४७।।

यदि बलवान् हो तो मृत्यु और निर्बल हो तो दुःख देने वाला होता है, वैषम्य हो तो मृत्यु होती है।।४७।।

द्वादशे दशमे वापि संस्थिते पुच्छनायके।
पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदन्तरगते मृतिः।।४८।।

यदि केतु १२ या १० भाव में हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो उसके दशा और अन्तर से मृत्यु होती है।।४८।।

द्वादशे दशमे केतुः शुभग्रहनिरीक्षितः।
नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्टं न च मृत्युकृत्।।४९।।

यदि १२ या १० भाव में केतु हो और शुभग्रह से दखा जाता हो तो यह योग न तो कष्टकारक होता है और न मृत्युकारक होता है।।४९।।

प्राणिनीत्युक्तं विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते।
राश्यधीनं बलं ज्ञेयं तदुक्तं कथ्यतेऽधुना।।५०।।

पहले बल की चर्चा कर आये हैं अतः उसका विचार कह रहे हैं। राशि के अधीन ही बल का विचार होता है।।५०।।

अग्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः।
साम्ये चरस्थिरद्वन्द्वाः क्रमात्स्युर्बलशालिनः।।५१।।

जो ग्रह अकेला है उसकी अपेक्षा ग्रहयुक्त ग्रह बली होता है। ग्रहयुक्त ग्रह यदि समान ग्रहों से युक्त हो तो जो संख्या में अधिक ग्रहों से युक्त हो वह उसकी अपेक्षा बली होता है। इसमे भी समानता हो तो चर राशि में बैठे हुए की अपेक्षा स्थिर राशिवाला और इसकी अपेक्षा द्विस्वभावस्थ बली होता है।।५१।।

अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजसत्तम।
कक्षाह्रासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः।।५२।।

दीर्घायु, मध्यायु और अल्पायु योगों में कक्षा के ह्रास की स्थिति को कह रहा हूँ।।५२।।

लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विद्वादशकयोरपि।
षष्ठरन्ध्राधिपस्यापि जनुर्ल्लग्ने विचिन्तयेत्।।५३।।

लग्न सप्तम, द्वितीय-द्वादश, षष्ठ-अष्टम इनके अधिपति।।५३।।

पापाक्रान्ते पापयोगे पापमध्यत्वमागते।
कक्षाह्रासो विजानीयान्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।५४।।

पापाक्रांत पापग्रह पापग्रह से युक्त और और पापग्रह के मध्यम में हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।५४।।

दीर्घस्य मध्यमा याता भवेदायुषि मध्यमे।
अल्पादल्पं च विज्ञेयं कक्षाह्रासस्य लक्षणम्।।५५।।

अर्थात् दीर्घायु हो तो मध्यायु, मध्यायु हो तो अल्पायु और अल्पायु हो तो उससे भी अल्प आयु होती है। यही कक्षाह्रास का लक्षण है।।५५।।

कक्षाह्रासो यदार्थोऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम्।
अथैवं लग्नकुण्डल्यां पापयोगत्रिकोणके।।५६।।

कक्षाह्रास होने से आर्थिक स्थिति में न्यूनता आ जाती है। इसी प्रकार लग्न कुंडली में भी त्रिकोण में पाप योग से कक्षाह्रास होता है।।५६।।

लग्नपञ्चमभाग्येषु पापयोगकृते द्विज।
कक्षाह्रासो भवेद्द्विप्र निर्विशङ्कं विधेः सुत।।५७।।

लग्न, पंचम और नवम भाव में पाप ग्रह का योग होने पर कक्षा का ह्रास होता है।।५७।।

अत्रास्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलग्नवत्।
कारकांशे द्यूनराशेः पापमध्यत्वमेव हि।।५८।।

कारक लग्न में भी जन्मलग्न के समान ही विचार करना चाहिए। कारकांश से सप्तम भी पापमध्य में हो तो भी कक्षाह्रास होता है।।५८।।

एको योगः स विज्ञेयः कक्षाह्रासं च पूर्ववत्।
अथैककक्षाह्रासस्य चापवादं वदाम्यहम्।।५९।।

अब इसका अपवाद कह रहा हूँ।।५९।।

एकस्थकक्षाह्रासं च वित्तपे चान्यथा भवेत्।
पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति।।६०।।

जिसमें शुभ योग होने से कक्षावृद्धि होती है।।६०।।

जनुर्ल्लग्ने कारके च चिन्तयेत्पूर्ववद्विज।
लग्ने द्यूने धने रिष्फे षष्ठे रंध्रे स्थलत्रये।।६१।।

लग्न, सप्तम, द्वितीय, द्वादश, षष्ठ और अष्टम इनमें किन्हीं तीन स्थान में।।६१।।

शुभखेटकृते योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि।
चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विप्र त्रिकोणेषु स्थलद्वये।।६२।।

शुभ ग्रह का योग हो तो कक्षा की वृद्धि होती है। इसी प्रकार दोनों त्रिकोणों में भी विचार करना चाहिए।।६२।।

जनुर्ल्लग्नं कारकं च शुभयोगं करोति चेत्।
कक्षावृद्धिर्न सन्देहो भविष्यति द्विजोत्तम।।६३।।

तथा जन्मलग्न और कारक शुभग्रह से योग करता हो तो कक्षा की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं है।।६३।।

कारके च त्रिकोणस्थ नीचस्थाः पापखेचराः।
कक्षाह्रासो महाप्राज्ञ द्वितयेन भविष्यति।।६४।।

यदि कारक त्रिकोण में हो और पापग्रह अपनी नीचराशि में हो तो दोनों से कक्षा का ह्रास होता है।।६४।।

कारकांशात त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले।
कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न सन्देहो द्विजोत्तम।।६५।।

कारकांश में त्रिकोण में शुभराशि में शुभग्रह हो तो कक्षा में वृद्धि होती है।।६५।।

कारके पापखेटाच्च अन्त्यगे पापसंयुते।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम।।६६।।

पापग्रह १२वें भाव में कारक हो और पापग्रह से युक्त हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।६६।।

कारके शुभसंयुक्ते स्वतुङ्गे शुभखेचराः।
कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।६७।।

कारक शुभग्रह से युक्त हो और शुभग्रह अपने उच्च में हों तो कक्षावृद्धि होती है।।६७।।

पापकारकजैर्ह्रासो वृद्धिर्वा कथिता द्विज।
अथैव गुरुणा कक्षाह्रासवृद्धिं वदाम्यहम्।।६८।।

इस प्रकार पापग्रह से उत्पन्न कक्षा की ह्रास वृद्धि मैंने कहा। इसी प्रकार गुरु से कक्षा की ह्रास-वृद्धि कह रहा हूँ।।६८।।

वित्ते व्यये लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्द्विज।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र पूर्ववद्द्विजसत्तम।।६९।।

गुरु से दूसरे, बारहवें, लग्न, छठे और त्रिकोण में पापग्रह हों तो कक्षा का ह्रास पूर्ववत् होता है।।६९।।

गुरौ नीचे स्वतुङ्गे च संयुक्तेऽशुभखेचरैः।
कक्षाह्रासो भवेत्तत्र निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।७०।।

गुरु अपने नीच में अथवा अपनी उच्चराशि में पापग्रहों से संयुक्त हो तो कक्षा का ह्रास होता है।।७०।।

वित्तगे च गुरौ ज्ञेयं पूर्ववन्नियमं द्विज।
प्रागुक्तार्थकृतेयं कक्षा सर्वा प्रकथ्यते।।७१।।

गुरु दूसरे भाव में हो तो पूर्ववत् कक्षाह्रास-वृद्धि को समझना चाहिए। पूर्वोक्त कक्ष क्रम के ही लिए यह सब कहा गया है।।७१।।

तथैव शुभयोगेषु चापवादं वदाम्यहम्।
उक्तस्थाने शुभैर्योगे पूर्णेन्दुशुक्रयोर्द्विज।।७२।।

उक्त स्थानों में शुभग्रह के योग का अपवाद कह रहा हूँ। उक्त स्थानों में शुभग्रह का योग पूर्णचन्द्र, शुक्र का हो तो।।७२।।

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु वृद्धये।
तत्रैकराशिवृद्धिश्च भवत्येव न संशयः।।७३।।

कक्षा का ह्रास ही होता है, न कि वृद्धि, एक राशि की वृद्धि ही होती है।।७२।।

पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारकः।
कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिह्रासकृत्।।७४।।

पूर्वोक्त पापग्रह योग में शनि योग करता हो तो वहाँ पर कक्षा ह्रास में एक राशि का ह्रास होता है।।७४।।

अथ स्थिरदशायां मृत्युसमयज्ञानम्—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम।
आलम्ब्य स्थिरदशायां योगान्निधनमेव च।।७५।।

अब मैं स्थिर के अनुसार चार खंड के अनुसार मृत्युसमय को कह रहा हूँ।।७५।।

त्रित्रिभिराशिभिरेकं खण्डाश्चत्वार एव च।
कस्मिन्खण्डे च निधनं तस्य योगं विचिन्तयेत्।।७६।।

तीन-तीन राशियों के चार खंड होते हैं। किस खंड में मृत्यु होगी इसको कहता हूँ।।७६।।

योगत्रयमहं वक्ष्ये दीर्घमध्याल्पभेदतः।
चतुःखण्डेषु यत्रायुरागतं तत्र चिन्तयेत्।।७७।।
दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खण्डे समागते।
तस्मिन्खण्डे च निधनं भवत्यपि न सन्देहः।।७८।।

दीर्घायु, मध्यायु, अल्पायु के भेद चारों खंडों में जहाँ समाप्त हो उसी समय मृत्यु को कहना चाहिए।।७७-७८।।

वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज।
निधनाश्रयखण्डेषु लक्षणाक्रान्तया दशा।।७९।।

इसी प्रकार मध्यायु और अल्पायु के खंडों में जिस खंड के जिस दशा में मृत्यु का संदेह हो उसी खंड में उसे कहना चाहिए।।७९।।

तद्दशायां च निधनं भवत्येव द्विजोत्तम।
कदाचित्र मृतिस्तत्र क्लेशदुःखभयानि च।।८०।।

यदि कदाचित् मृत्यु न हो तो उस समय क्लेश, दुःख और भय होता है।।८०।।

भवन्ति तत्र संस्कारं पुनरित्थं वदाम्यहम्।
पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्।।८१।।

पापग्रहों के मध्य में स्थित राशि की दशा में मृत्यु होती है।।८१।।

लग्नाद्वा कारकाद्विप्र पापाक्रांते त्रिकोणके।
द्वादशाष्टमराश्येवं पापाक्रांतं भवेदपि।।८२।।

लग्न से आत्मकारक से त्रिकोण में पापग्रह हों अथवा १२वीं राशि में पापग्रह हों।।८२।।

तद्दशायां च निधनं जातकस्य न संशयः।
खण्डे स्थिरदशायां च चिन्तनीयं प्रयत्नतः।।८३।।

तो उस राशि की दशा में मृत्यु कहना चाहिए।।८३।।

पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशिषु।
पापाक्रान्ते तद्दशायां निधनं भवति ध्रुवम्।।८४।।

पापग्रह की राशि से त्रिकोण में अथवा १२०८वीं राशि में पापग्रह हो तो उस राशि की दशा में मृत्यु होती है।।८४।।

शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत्।
भूयोऽपि निधनार्थाय राशिदोषं वदाम्यहम्।।८५।।

शुभग्रह के मध्य की राशि में मृत्यु नहीं होती है और पापग्रह के मध्य की राशि की दशा में मृत्यु होती है। फिर भी निधन राशि के दोष को कह रहा हूँ।।८५।।

द्वादशाष्टमपत्योश्च दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः।
तद्दशायां च निधनं भवत्येव न संशयः।।८६।।

१२।८ के स्वामी क्षीणचन्द्र और शुक्र से देखे जाते हों तो उनकी दशा में निधन होता है।।८६।।

क्षीणेन्दोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम्।
दृष्टिमात्रेण निधनं स्थिरदशायां विचिन्तयेत्।।८७।।

केवल क्षीणचन्द्र और शुक्र के दृष्टि भाव से स्थिर दशा में मृत्यु होती है।।८७।।

मृत्युस्थाने तु या दृष्टिः पापमध्यर्क्षं प्रपश्यति।
तस्य दशां समालोक्य व्योमषष्ठाधिपाद्द्विज।।८८।।

पापग्रह के मध्य में स्थित अष्टम स्थान को पूर्वोक्त (क्षीण चन्द्र वा शुक्र) वा १०, ६ भाव के स्वामी देखते हों तो इसकी दशा में।।८८।।

निरीक्षते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम।
तत्रैव निधनं ज्ञेयं भाषितं च तवाग्रके।।८९।।

अथवा १०, ६ के स्वामी से देखी जाती हुई अष्टमस्थ पापद्वयमध्यस्थित राशि की अन्तर दशा में निधन होता है।।८९।।

पूर्वोक्तनिधनस्थाने महापाकं नरेष्वपि।
व्योमषष्ठाधिपौ विप्र तयोरंशं निरीक्षिते।।९०।।
राशेस्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम्।
अन्तर्दशायां रूपे द्वे निधनस्थानमेव च।।९१।।

पूर्वोक्त निधन स्थान के समय महादशा मे १०, ६ भावों के नवांशराशि के अन्तर में निधन होता है।।९०-९१।।

इति आयुर्दायप्रकरणम्।

अथ मारकप्रकरणम्

पराशर उवाच—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि निधनार्थे विशेषतः।
प्रकारान्तर्दशायास्तच्च रुद्राद्द्विजसत्तम।।१।।

अब मैं विशेषकर निधन के सम्बंध में दशा-अन्तर्दशा के विषय में रुद्रग्रह द्वारा कह रहा हूँ।।१।।

लग्नद्यूनाष्टमेशौ यौ तयोर्मध्ये च यो बली।
प्राणीरुद्रः स विज्ञेयः निधनार्थे विचिन्त्यताम्।।२।।

लग्न और सप्तम से जो अष्टमेश उनमें जो बली हो वही रुद्रग्रह होता है।।२।।

तयोर्मध्ये बली चिन्त्यः शुभदृष्टेन संयुते।
दुर्बलः सोऽपि गौणाख्यो रुद्रग्रह इतीर्यते।।३।।

वह शुभ दृष्ट वा शुभ युक्त हो तो बली होता है।।३।।

तत्रैव प्राणिरुद्रस्य विशेषं गणयेत्फलम्।
प्रवक्ष्यामि तवाग्रे च शृणुष्व त्वं महामते।।४।।

जो दुर्बल है वह भी रुद्रग्रह होता है।।४।।

शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसम्बन्धकारकः।
प्राणीरुद्रः स विज्ञेयस्तत्सीमांत्तमायुरेव च।।५।।

कारक यदि शुभग्रह से युक्त हो, शुभदृष्ट हो वा संबंध करता हो, बली हो तो वह रुद्रग्रह होता है। रुद्र शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।५।।

रुद्रशूलान्तमायुः स्यात् त्रिकोणान्ते तथा पुनः।
लग्नान्ते पञ्चमान्ते च नवमान्ते त्रयस्थले।।६।।

अथवा उसके त्रिकोण राशि पर्यन्त आयु होती है। लग्नान्त, पंचमान्त और नवमांत इन्हीं तीनों को त्रिकोणान्त समझना चाहिए।।६।।

चिन्तनीयं महाप्राज्ञ तत्तद्राशिदशान्तरे।
अल्पमध्यं च दीर्घायुर्योगभेदा न संशयः।।७।।
तत्राप्यायुःसमायोगे त्रिकोणमध्यमोत्तरे।
आयुस्तत्रैव विज्ञेयं तदग्रे च क्रमेण च।।८।।
योगे मध्यायुषं प्राप्ते त्रिकोणे मध्यमान्तगे।
आयुर्दायसमाप्तिश्च निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।९।।
दीर्घायुर्योगसंलब्धे त्रिकोणे नवमान्तगे।
दशान्तरे महाप्राज्ञ आयुर्दायसमाप्तये।।१०।।

इन्हीं खंडों में अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु के भेदों को समझना चाहिए। लग्न से पंचमांत अल्पायु, नवमान्त पर्यन्त मध्यमायु और इसके बाद दीर्घायु को समझना चाहिए।।१०।।

अथैवं लग्नद्यूनादि आरभ्य च दशाक्रमः।
प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।११।।

इसी प्रकार लग्न सप्तमादि से आरम्भ कर दशाक्रम जन्म से ही जानना चाहिए।।११।।

यत्र रुद्रग्रहस्यापि शुभदत्वं न भाव्यते।
तत्र जीवस्य नष्टत्वान्नेदं फलमिति स्थितिः।।१२।।

जिसमें रुद्रग्रह का भी शुभदत्व नहीं होता है, वहाँ पर जीव के नष्ट हो जाने से उपरोक्त फल नहीं होता है।।१२।।

अथैव रुद्रशूलान्तमायुर्दायेति कारणे।
योगेऽस्मिंश्च समुत्कर्षात्किञ्चिद्दर्शयति द्विज।।१३।।

इसी प्रकार से रुद्रशूलान्त आयुर्दाय होने का जो कारण होता है, उसका कारण कह रहा हूँ।।१३।।

प्राणीरुद्रशुभैर्दृष्टे पूर्वोक्तफलदायकः।
शुभयोगे न सन्देहो रुद्रशूलान्तमायुषि।।१४।।

यदि रुद्रग्रह शुभ दृष्ट हो तो पूर्वोक्त फल को देने वाला होता है और शुभ युक्त हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है, इसमें संदेह नहीं है।।१४।।

स्थित एव फलं जन्म कथितं कारणान्तरे।
निरुक्ते शुभसंयोगे किं कीर्तयति भो द्विज।।१५।।
पूर्वमेव फलं साधो समुत्कृष्टे तदेव चेत्।
सुतरां तदेव वक्तव्यं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।१६।।

कारणान्तर से पूर्वोक्त फल होता है किन्तु शुभयोग में कोई कारणांतर नहीं होता है।।१६।।

अनेन पूर्वयोगेन फलं किञ्चिद्धि न्यूनता।
आद्योदितादुक्तकालात्पूर्वं पश्चान्मृतिर्यदि।।१७।।
निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवादं वदाम्यहम्।
रविं विहाय नितरां पापयोगो भवेद्द्विज।।१८।।

इसमें भी यदि पूर्वोक्त फल यदि उत्कृष्ट हो तो वही होता है। यदि पूर्वोक्त फल में कुछ न्यूनता हो और उसके पूर्व पीछे मृत्यु हो जाय तो यह योग निष्फल होता है।।१८।।

योगोऽयं निष्फलो वाच्यः पुरा ब्रह्मप्रणोदितः।
इदं फलं न भवति योगेऽस्मिन्द्विजसत्तम।।१९।।
नाशयोगस्य वक्तव्यं फलं वापि भयङ्करम्।
अधुना सम्प्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज।।२०।।

किन्तु नाश होने के योग का फल भयंकर होता है। अब मैं गौणरुद्र का विवेचन कर रहा हूँ।।१९-२०।।

गुणप्रकर्षेण फलं विशेषेण तवाग्रतः।
गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।।२१।।

अब मैं गुण की प्रकर्षता से फल-विशेष को कह रहा हूँ। गौणरुद्र शनि, भौम, चन्द्र से देखा जाता हो।।२१।।

अभावे शुभयोगस्य पापयोगोत्तरे तथा।
शूलान्तात्फल विप्रेन्द्र आयुर्दायं भवत्यपि।।२२।।

शुभग्रह का योग न हो, पापयोग भी न हो, वा पाप योग हो अथवा भौम, शनि, चन्द्रमा के साथ और भी शुभग्रह की दृष्टि हो तो रुद्राश्रित राशि की अग्रिम राशि की दशा में मृत्यु होती है।।२२।।

शुभदृष्टे वा शूलान्तात्परञ्चायुर्भवेदपि।
योगद्वयपरत्वेन योजनीयं न संशयः।।२३।।

शुभग्रह के योग के अभाव में पापग्रह का योग होते हुए दोनों योगों का एक के बाद दूसरे का विचार करना चाहिए।।२३।।

एतद्योगद्वयं किञ्चिन्न्यूनतायामपि द्विज।
नेदं फलं प्रवक्तव्यं मैत्रेय भाषितं पुरा।।२४।।

इन दोनों के योगों के न्यून होने से पूर्व का फल नहीं होता है।।२४।।

शुभदृष्टिभवे चैव योगे च परपूर्ववत्।
शुभदृष्टावसन्त्यां च पापयोगाद्यभावतः।।२५।।

शुभ दृष्टि होते हुए अथवा शुभ दृष्टि के अभाव में पापयोगादि के अभाव में शुभ दृष्टि के होते हुए एक योग होता है।।२५।।

कृत एको हि योगश्च पूर्वयोगजमेव च।
अशुभयोगे शुभदृष्टौ योगोऽयमपरो द्विज।।२६।।

पापग्रह के योग में शुभ दृष्टि के होते हुए दूसरा योग होता है।।२६।।

पापयोगैरभावे च शुभदृष्टौ च संयुते।
[1]कैमुतिकाख्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः।।२७।।

पाप योग के अभाव में शुभ दृष्टि होते हुए कैमुतिक न्याय से तीसरा योग भी होता है।।२७।।

पुरा प्रोवाच यच्छम्भुस्तवाग्रे कथयाम्यहम्।
द्वितीययोजनायां तु शुभदृष्टिसमन्विते।।२८।।

पूर्व में शम्भु ने जो कहा था उसे मैंने तुमसे कहा। दूसरे योग में पापयोग शुभदृष्टि में।।२८।।

पापयोगस्य चाभावे योगः प्रथम उच्यते।
पापयोगे महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावके।।२९।।

---

१. कैमुतिकन्याय अर्थापत्ति को कहते है, जैसे चूहा लकड़ी को खा गया तो इससे मृदुपदार्थ मिठाई आदि को भी खा सकता है।

पापग्रह के योग के अभाव में प्रथम योग और पापग्रह योग में शुभदृष्टि में दूसरा।।२९।।

द्वितीययोगपक्षेऽहं पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम।
पापयोगस्य चाभावे पापदृष्टिविवर्जितः।।३०।।

अथवा पापयोग के अभाव में पापदृष्टि के न होने में।।३०।।

कैमुतिकाख्यन्यायेन तृतीयो योग उच्यते।
अथैवं प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पक्षान्तरे कथा।।३१।।

कैमुतिकन्याय से यह तीसरा योग हुआ। यह प्राणीरुद्र के पक्षान्तर से स्वरूप कहा है।।३१।।

तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते।
शुभयोगादियोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत्।।३२।।

प्रथम योग में शुभ दृष्टि से रहित होने में शुभादि योग होने से।।३२।।

तृतीयेन द्वयस्यापि योगभङ्गं करोत्यपि।
अधुनोक्तत्रयाभावे मन्दादिदृष्टिमात्रतः।।३३।।

तीसरे से दूसरे के साथ योग होने से तथा उक्त तीनों योगों के अभाव में शन्यादि दृष्टि के भेद से निर्विशंक कह रहा हूँ।।३३।।

एवं स्थिते सुयोगश्च निःशङ्कं प्रतिपाद्यते।
अशुभैः खेचरैर्दृष्टे पापयोग इति स्थितिः।।३४।।

अशुभ ग्रह की दृष्टि और पापयोग।।३४।।

शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।
तदायुः परतो विप्र समानादिति योजयेत्।।३५।।

शुभ योग से हीन शनि, भौम, चन्द्र से दृष्ट हो तो रुद्रशूल के बाद तक आयु होती है।।३५।।

प्रथमे द्वितीये सन्तः पापयोगैरभावतः।
योगो भङ्गमपेक्षा च तृतीयोक्तमिदं वदेत्।।३६।।

प्रथम, द्वितीय योग में पापयोग के अभाव में योग भंग होने से तीसरे योग की उत्पत्ति होती है।।३६।।

पापदृष्टिमात्रमेवं योगनिर्वाहकारणे।
अपवादविहीनेन इत्येवोक्तं तृतीयके।।३७।।

केवल पापग्रह मान्य की दृष्टि से योग होने के कारण तीसरा योग होता है।।३७।।

रुद्राभ्यां प्राणिगौणाभ्यां ताभ्यामाश्रितमेव च।
गुणविशेषे आयुरन्तं वक्ष्यामीह महामते।।३८।।

अब दोनों रुद्रों से और उनके आश्रित गुण-विशेष से आयु का निर्णय कर रहा हूँ।।३८।।

गौणरुद्रे शुभैर्योगेशुभदृष्टिसमन्विते।
रुद्रशूलान्तमायुश्च योजनीयं द्विजोत्तम।।३९।।

गौणरुद्र शुभ ग्रह से योग करता हो और शुभदृष्टि से युक्त हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है।।३९।।

पूर्वोक्त प्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च।
द्वाभ्यां शूलान्तमायुश्च तवाग्रे कथितं मया।।४०।।

पूर्वोक्त बली (प्राणि) रुद्र से जो दो योग कहे हैं उनमें दोनों रुद्रों की शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।४०।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणम्।
तयो रूपं भिन्नभिन्नं शृणुष्व मुनिसत्तम।।४१।।

अब दोनों के निर्वाह के कारण कह रह हूँ। दोनों के भिन्न- भिन्न रूप होते हैं।।४१।।

प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम।
शुभयोगेति का वार्ता शूलान्तायुर्विनिश्चितम्।।४२।।

प्राणिरुद्र शुभग्रहों से देखा जाता हो और शुभयोग हो तो रुद्रशूलान्त आयु होती है।।४२।।

गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायकः।
रोगशोकभयं कर्त्ता मृत्युं नैव करोति च।।४३।।

गौणरुद्र शुभग्रहों से दृष्ट हो तो क्लेशदायक, रोग-शोकदायक तथा भयकारक होता है, न कि मृत्युकारक।।४३।।

शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तरः।
तस्य शूलान्तमायुश्च निर्विशङ्कं न संशयः।।४४।।

यदि इस योग में शुभयोग भी हो तो निश्चय ही इसके शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।४४।।

उभौ रुद्रौ शुभैर्दृष्टावथवा योगद्वयोरपि।
शुभग्रहेण क्लेशश्च रुद्रशूलान्तमायुषि।।४५।।

दोनों रुद्र शुभ ग्रहों से दृष्ट और योग करते हों तो रुद्रशूलान्त आयु न हाकर केवल क्लेशमात्र होता है।।४५।।

प्राणी चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च।
तयोर्वा सम्प्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम।।४६।।

बलवान् या निर्बल रुद्रों से दोनों योगों में जो विशेषता होती है, उसे कह रहा हूँ।।४६।।

मार्त्तण्डरहितो चान्यः पापयोगकृते द्विज।
योगद्वयं न भवति पापयुक्तं द्वयोरपि।।४७।।

दोनों रुद्रों के दोनों योगों में सूर्य को छोड़कर अन्य पापग्रह योग करते हों तो दोनों योग नहीं होते हैं।।४७।।

शुभयोगः शुभैर्दृष्टैरुभयेऽपि विना रविम्।
पापयोगकृते विप्र भययोगो विनश्यति।।४८।।

शुभयोग शुभग्रह से दृष्ट दोनों हों तो पापग्रह से उत्पन्न भययोग निवृत्त हो जाता है।।४८।।

शुभयोगः शुभर्दृष्टिरभावे न भवत्यपि।
यत्रायुः कथयाञ्चक्रुर्वक्तव्यं द्विजसत्तम।।४९।।

शुभयोग शुभदृष्टि के अभाव में भी कुछ नहीं होता है।।४९।।

उभयोः पापयोगे च कश्चिद्रोगार्तिको भवेत्।
क्लेशः शोको नृपाद्भीतिः देशपर्यटनं द्विज।।५०।।

यदि दोनों पाप योग करते हों तो कुछ रोग आदि होते हैं, क्लेश, शोक, राजा से भय, देशपर्यटन होता है।।५०।।

शुभदृष्टेरभावे च शुभयोगविवर्जिते।
पापयोगप्रभावेण मरणं सारणं दृशा।।५१।।

शुभदृष्टि के अभाव में शुभयोग के बिना पापयोग के प्रभाव से मरण होता है।।५१।।

शुभयोगदृष्ट्यभावे पापयोगे द्विजोत्तम।
शुभवर्गो पापवर्गो तवाग्रे कथयाम्यहम्।।५२।।

अब मैं शुभ वर्ग और पाप वर्ग को कह रहा हूँ।।५२।।

अर्कारमन्दफणिनः क्रमात् क्रूरायथाक्रमम्।
चन्द्रोऽपि क्रूर एवात्र क्वचिदङ्गारकाश्रयात्।।५३।।

सूर्य, भौम, शनि और राहु ये यथाक्रम से क्रूर होते हैं। चन्द्रमा भी कभी भौम के संसर्ग से क्रूर होता है।।५३।।

गुरुःकविशिखिज्ञाश्च यथापूर्वं शुभग्रहाः।
क्रूरखेटा महाप्राज्ञ चार्काद्या उत्तरोत्तरम्।।५४।।

गुरु, शुक्र, केतु और बुध ये यथाक्रम से शुभग्रह हैं। सूर्यादि ग्रह क्रूर होते हैं।।५४।।

क्रूराः क्रूरभगाश्चैव महत्क्रूरा भवन्ति च।
शुभक्षेत्रगतैः क्रूरैः क्रूरता ह्युपशाम्यति।।५५।।

क्रूर ग्रह क्रूरग्रह की राशि में हों तो बड़े क्रूर होते हैं। शुभग्रह की राशि में क्रूरग्रह हों तो उनकी क्रूरता शान्त हो जाती है।।५५।।

गुर्वादयः शुभग्रहा यथापूर्वं बुधः कविः।
कवितः केतु विज्ञेयः केतुतो वाक्पतिर्द्विज।।५६।।

गुरु आदि शुभग्रह बुध से शुक्र यथापूर्व बली होते हैं। शुक्र से केतु और केतु से गुरु क्रम से उत्तरोत्तर बली होते हैं।।५६।।

क्रमेणैव विजानीयाच्छुभखेटोत्तरोत्तरम्।
यथापूर्वं क्रूरग्रहाः क्रूराश्रयसमागते।।५७।।

इसी क्रम से क्रूरग्रह क्रूरराशि में यथाक्रम से बली होते हैं।।५७।।

एवं क्रौर्यं समापन्नं क्रौर्यं तु शोभनाश्रयः।
एवं गुर्वादि सौम्याश्च शुभाः श्रेयातिशोभनाः।।५८।।

एवं गुरु आदि शुभग्रह भी शुभराशि में अत्यंत शुभद होते हैं।।५८।।

क्रूराश्रये सौम्यखेटाः सौम्यता नश्यते क्वचित्।
एवमेवापरायुक्तिं कथयामि द्विजोत्तम।।५९।।

कभी-कभी क्रूरग्रह की राशि में गये हुए शुभग्रह अपनी शुभता को नाश कर देते हैं।।५९।।

प्रत्येकं शुभराशिस्थो उच्चस्थो वा बुधः शुभः।
गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभाः स्मृताः।।६०।।

प्रत्येक शुभराशि में वा अपनी उच्चराशि में बुध शुभद होता है एवं गुरु-शुक्र शुभराशि में अत्यंत शुभद होते हैं।।६०।।

पूर्वस्मिन् पापयोगेन योगभङ्गद्वये द्विज।
निरूपितं तवाग्रे च निर्विशङ्कं न संशयः।।६१।।

एवं पूर्वोक्त पापग्रह के योग से दोनों पूर्वोक्त भंग योग कहा गया है।।६१।।

योगद्वयेऽपि भङ्गार्थे पापदृष्टौ विशेषकम्।
न दर्शयति कदापि स्यात् तवाग्रे कथयामि वै।।६२।।

किन्तु दोनों योगों में विशेषतः पापदृष्टि अपेक्षित है।।६२।।

शुभग्रहाणामभावे मन्दारेन्दुनिरीक्षिते।
पापयोगे शुभैर्दृष्टे परतश्चायुषि द्विज।।६३।।
प्राणिरुद्रेऽप्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते।
पापयोगेऽथवा दृष्टे तथा शुभनिरीक्षिते।।६४।।

शुभग्रहों की दृष्टि न हो, शनि,भौम, चन्द्रमा देखते हों अथवा पापग्रह का योग वा दृष्टि हो, शुभग्रह देखता हो तो पूर्ववत् तारतम्य से फल का विचार करना चाहिए।।६४।।

व्यापारतानुविज्ञेया पूर्ववद्द्विजसत्तम।
अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपलक्षणम्।।६५।।

इसी प्रकार उपपद की चर्चा से राहु की चर्चा से उपलक्षण मात्र है।।६५।।

एवं सूर्यातिरिक्तोऽपि पापयोगस्तथैव च।
तस्यैवेहानुवादाच्च राहोश्चोपबृंहणात्।।६६।।

सूर्य के अतिरिक्त पापग्रह के योग से भी योग होता है।।६६।।

परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रमाश्रयात्।
शुभस्थाने आयुरन्तः शूलत्रयमलङ्घनात्।।६७।।

इन परिग्रहों के रहते हुए रुद्रग्रह के आश्रय से शूलान्त पर्यन्त आयु होती है।।६७।।

न तु शूलदशायां च आयुरन्तं द्विजोत्तम।
एवं शूले चेत्तदन्तशूलरीत्येति बाधके।।६८।।

किन्तु शूल में मृत्यु न होकर उसके अन्त में मृत्यु होती है।।६८।।

पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः।
कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गार्थे च वदाम्यहम्।।६९।।

पूर्वोक्त दोनों योगों के भंग के लिए कह रहा हूँ। शुभग्रह का योग होने से पापग्रह का योग दुर्बल हो जाता है।।६९।।

शुभयोगेन वै विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः।
शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टे कथं क्षमः।।७०।।

एवं शुभ दृष्टि होते हुए पापग्रह की दृष्टि कैसे समर्थ हो सकती है।।७०।।

न भञ्जनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज।
शुभकृद्योगभङ्गार्थे पापयोगमपेक्षितम्।।७१।।

शुभग्रहजनित योग के भंग के लिए पापग्रहजनित योग होना आवश्यक है ।।५६-७१।।

शुभयोगे दृष्टिकृते पापयोगोऽपि भञ्जकः।
शुभदृष्टिकृते योगः पापयोगो विनश्यति।।७२।।

शुभग्रह का योग वा दृष्टि होने से पापयोग का भंग हो जाता है।।७२।।

यदायुर्दायमध्यस्थं वेदितव्यं द्विजोत्तम।
पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमर्क्षे मृतिं वदेत्।।७३।।

केवल पापयोग की दृष्टि मात्र ही हो तो प्रथम शूल में ही मृत्यु होती है।।७३।।

द्वौ रुद्रौ पूर्ववक्ष्येऽहं यदि चैकत्र संस्थितौ।
मित्रमध्यमशूलर्क्षे शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः।।७४।।

पूर्वोक्त दोनों रुद्र यदि एक ही स्थान में हों तो मध्यम शूल में मृत्यु होती है।।७४।।

द्वयोः पापे च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि।
यद्येकरुद्रः पापी च द्वितीयः शुभखेचरः।।७५।।

यदि एक रुद्र पापी हो और दूसरा शुभ हो तो मध्य शूल में मृत्यु होती है।।७५।।

मध्ये शूले मृतिर्विप्र निर्विशङ्कं भविष्यति।
शुभग्रहद्वयं विप्र एकत्र यदि तिष्ठति।।७६।।

और शुभमान्य का संबंध हो तो तीसरे शूल में मृत्यु होती है।।७६।।

अन्तशूले मृतिर्ज्ञेया शूलिना भाषितं पुरा।
एवं भेदानुभेदेन विद्यात् सर्वत्र बुद्धिमान्।।७७।।

इस प्रकार के भेदानुभेद से सर्वत्र विचार करना चाहिए। यह आवश्यक है कि दोनों रुद्र पाप वा शुभ हों।।७७।।

शूलक्षेत्रे च द्वौ रुद्रौ यदि पापोऽथवा शुभः।
मिश्रग्रहोऽथ वा विप्र चिन्तयेद्बलवत्तरः।।७८।।

वा मिश्रग्रह हैं और दोनों में बली कौन।।७८।।

दीर्घायुरायुयोगेन भङ्गाभावे द्विजोत्तम।
मृत्युः शूलदशायां च पापयोगं विना रविः।।७९।।

दीर्घायु योग में भंग के अभाव में रवि के बिना अन्य पापग्रहों के योग होने से शूल दशा में मृत्यु होती है।।७९।।

क्रूराश्च येषु क्षेत्रषु शुभानामाश्रयेषु च।
निर्याणमितरेषां तु शूलर्क्षे निर्दिशेदयम्।।८०।।

क्रूरग्रह जिस राशि में शुभग्रह के आश्रय से हों तो यह निर्याण अन्य ग्रहों के शूल में कहना चाहिए।।८०।।

शुभानामत्र पक्षे तु तथा क्रूराश्रयेषु च।
तस्मिन् जातकशूलर्क्षे मृतिं ब्रूयात्र संशयः।।८१।।

शुभग्रहों के पक्ष में क्रूरग्रहों के आश्रय में शूलर्क्ष में जातक की मृत्यु होती है।।८१।।

यद्यप्राणिरुद्रयोगे यत्किञ्चिन्न्यूनता द्विज।
तर्हि रुद्राश्रयं तच्च त्रिधा न परतोऽपि च।।८२।।

यदि निर्बल रुद्र के योग में कुछ न्यूनता हो तो रुद्राश्रय के द्वारा मृत्यु का विचार करना चाहिए।।८२।।

रुद्राश्रयेऽपि चायुर्दा समाप्तिर्भवति ध्रुवम्।
प्रायेण चिन्तयेद्विप्र पूर्वापरप्रयत्नतः।।८३।।

रुद्राश्रय में भी आयु की समाप्ति होती है।।८३।।

यद्बाह्यप्राणिरुद्रस्य योगे पूर्णे भवत्यपि।
रुद्रशूलपरत्वेन आयुर्दायसमाप्तये।।८४।।

जो बाह्य प्राणीरुद्र के योग में पूर्ण आयु होने स रुद्रशूलान्त आयु कहा है।।८४।।

रुद्राश्रयेण प्रायेण शूलमेकद्वयं त्रयम्।
उल्लङ्घनं कृतं विप्र यदि योगविशेषता।।८५।।

तथा रुद्राश्रय से प्रायः एक, दो वा तीसरे शूल का उल्लंघन योग-विशेष से किया है तो वह प्रायः रुद्राश्रय से ही होता है।।८५।।

तर्हि रुद्राश्रयेणैवं प्रायेणायुर्भवेद् ध्रुवम्।
तावद्वर्षेण कथनं जीवनं जातकस्य च।।८६।।

अतः उतना ही वर्ष जातक का जीवन कहना चाहिए।।८६।।

इत्युक्तं च प्रयाणे च पूर्वं रुद्राश्रयाद्द्विज।
आयुर्योगसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारकम्।।८७।।

उक्त योगादि निधन को प्रायः रुद्र के आश्रय से कहा है।।८७।।

रुद्राश्रयात्तु ह्येवं च निरुक्तं चायुषि द्विज।
किञ्चिद्विशेषरूपं च तवाग्रे दर्शयामि च।।८८।।

अब कुछ विशेष रूप से कह रहा हूँ।।८८।।

मेषलग्ने विशेषेण आयुरुद्राश्रयान्तके।
कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णायुर्न समाप्यते।।८९।।

मेष लग्न में रुद्राश्रयांत में कुष्ठरोगादि होता है और पूर्णायु को नहीं भोगता है।।८९।।

द्वन्द्वराशौ स्थितौ रुद्रौ प्राणी गौणद्वयेऽपि वा।
रुद्राश्रये तदन्ते वा आयुर्दायं भवत्यपि।।९०।।

मिथुन राशि में रुद्र हो तो रुद्राश्रय में वा उसके अंत में आयु की समाप्ति होती है।।९०।।

आयुर्वा योगभेदेन प्रथमे मध्यमोत्तमे।
दर्शयामि तवाग्रे च कथां शम्भुप्रचोदिताम्।।९१।।

पूर्व में जो अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु योग कहा है।।९१।।

स्वल्पायुः प्रथमे शूले मध्यमायुर्द्वितीयके।
दीर्घायुश्च तृतीयान्ते शूले च निधनं भवेत्।।९२।।

उसमें अल्पायु हो तो प्रथम शूल में, मध्यायु हो तो द्वितीय शूल में और दीर्घायु हो तो तृतीय शूलांत तक आयु होती है।।९२।।

ततो फलविशेषार्थं माहेश्वरग्रहं द्विज।
लक्षयन्ति तवाग्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम्।।९३।।

ग्रह का निर्णय कह रहा हूँ।।९३।।

चिन्तयेत्कारके लग्ने ह्यष्टमेशो महेश्वरः।
अथैवान्यप्रकारेण माहेश्वरं वदाम्यहम्।।९४।।

आत्मकारक से अष्टमेश महेश्वर ग्रह होता है। अन्य प्रकार से माहेश्वर ग्रह को कह रहा हूँ।।९४।।

कारके तुङ्गराशिस्थे स ग्रहो बलवत्तरः।
रिःफरन्ध्राधिपोर्मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः।।९५।।
कारकाच्च ग्रहाभावे नाथो माहेश्वरो भवेत्।
रिष्फरन्ध्राधिपौ विप्र बले सामान्यतां यदि।।९६।।

आत्मकारक अपनी उच्चराशि में हो तो आत्मकारक से १२, ६ वें भाव के स्वामियों में जो बली हो वही महेश्वरग्रह होता है।।९५-९६।।

द्वयं माहेश्वरं यातो यथा रुद्रग्रहौ द्वयम्।
ताभ्यां च निर्णयार्थाय प्रकारान्यं वदाम्यहम्।।९७।।

यदि दोनों में बल की समानता हो तो दोनों माहेश्वर होते हैं।।९७।।

स्वकारकस्य योगश्चेद्राहुकेतुरवीन्विना।
माहेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम।।९८।।

यदि आत्मकारक के साथ राहु-केतु हों।।९८।।

कारकस्याष्टमे पापग्रहो माहेश्वरो भवेत्।
रविचन्द्रौ च चान्द्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः।।९९।।

अथवा आत्मकारक से आठवें हों तो कारक से षष्ठेश रवि, चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र, शनि।।९९।।

शिखिना गणनायां च यः षष्ठः कारकग्रहात्।
सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो नवभागसमुच्चयात्।।१००।।

तथा केतु में से जो छठे हो वह माहेश्वर होता है।।१००।।

माहेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च।
ततो ब्रह्मग्रहं वक्ष्ये विशेषेण फलाय वै।।१।।

माहेश्वर ग्रह के अनुसार ही ब्रह्मग्रह की भी परिचर्या होने के कारण ब्रह्मग्रह का विचार कह रहा हूँ।।१।।

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि रिपुरन्ध्रव्ययाधिपाः।
एतेषु बलवान्विप्र मेषादिविषमस्थिते।।२।।

लग्न वा उससे सप्तम इन दोनों में जो बलवान् हो, उससे ६।८।१२ भाव के स्वामियों में जो बलवान् हो, वह मेषादि विषम राशियों में हो।।२।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये राशेश्च बलवान्भवेत्।
उच्चैरपृष्ठभागाद्यः संयोगो विद्यमानतः।।३।।

और लग्न वा सप्तम के पृष्ठभाग में उक्त तीनों गुणों से युक्त हो तो वह ब्रह्मग्रह होता है।।३।।

एतद्गुणत्रयाद्युक्तः सोऽपि ब्रह्माग्रहः स्मृतः।
लग्नस्य पृष्ठभागं च द्यूनाल्लग्नावधिर्द्विज।।४।।

सप्तम से लग्न पर्यन्त ६ भाव लग्न का पृष्ठ भाग।।४।।

सप्तमस्य पृष्ठभागं षट्कलग्नादिकं द्विज।
बलवान्विषमस्थोऽपि ब्रह्माखेटः स उच्यते।।५।।

और लग्न से सप्तम भाव के अन्दर सप्तम का पृष्ठभाग होता है।।५।।

ब्रह्मणालक्षणाक्रान्ते बलवान्वापि पातयोः।
शनिराहुरथो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज।।६।।

यदि ब्रह्मग्रह के लक्षण से युक्त शनि, राहु वा केतु हो तो इनमें जो बलवान् हो इनसे षष्ठेश ब्रह्मा होता है।।६।।

रव्यादिगणनायां च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः।
स्थानात्षष्ठराशिगे च षष्ठराश्यधिपोऽथवा।।७।।

सूर्यादि गणना से शनि आदि शनि से तीसरा ग्रह स्थान से ६ठा अथवा षष्ठेश।।७।।

सोऽपि ब्रह्माग्रहो ज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
बहुना ब्रह्मणाक्रान्ते को ग्रहो ग्राह्यमाणकः।।८।।

यदि बहुत से ग्रह ब्रह्मा के लक्षण के हों तो वही ब्रह्मग्रह होता है, जिसका।।८।।

सन्देहे निर्णयं चात्र तवाग्रे कथयामि च।
द्वित्र्यादिकः ग्रहाणां च योगो ब्रह्मेति लक्षितः।।९।।
योगः स्वजातियों ग्राह्यः कारकं याति यो ग्रहः।
बहूनामधिको भागः सोऽपि ब्रह्मा ग्रहोच्यते।।१०।।

अधिक अंश होता है वही ब्रह्मा होता है।।१०।।

राहुर्ब्रह्मत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत्।
विपरीतं विजानीयात्सर्वेषु न्यूनभागकम्।।११।।

यदि राहु ब्रह्मयोग का अधिकारी हो तो वहाँ विपरीत समझना चाहिए अर्थात् न्यूनांश वाला ही ब्रह्मा होता है।।११।।

इत्येकपापे पूर्वोक्तं ब्रह्मणा ग्रहकारकात्।
रन्ध्राधीशोऽष्टमस्थो वा जात्यप्राणैक्यवाक्यतः।।१२।।

अथवा आत्मकारक से अष्टमस्थ ग्रह वा अष्टमेश ब्रह्मा होता है।।१२।।

द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यथवा बहुब्रह्मणा।
सामान्यभागान्तरे हि कतमो ग्राह्यमाणकः।।१३।।

यदि पूर्वोक्त लक्षण से युक्त दो ब्रह्मा हों और अंशों में साधारण न्यूनाधिकता हो तो कौन-सा ग्रह ब्रह्मा होगा।।१३।।

सर्वे भागसमानास्तु अग्रहात्सग्रहो बली।
इति न्यायेन विज्ञेयं बलवान् ब्रह्मणोच्यते।।१४।।
ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि।
स च ब्रह्मग्रहो ग्राह्यः पुरा शम्भुप्रचोदितः।।१५।।

अथवा सभी के अंश समान हों तो जो ग्रह युक्त हो वही बली होता है, इत्यादि रीति से जो बलवान् हो वही ब्रह्मा होता है।।१४-१५।।

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्ममाहेश्वरस्य च।
विशेषेण फलं सम्यग्तवाग्रे द्विजनन्दन।।१६।।

हे द्विजनंदन! अब मै विशेष रूप से ब्रह्म और माहेश्वर ग्रहों के फल को तुमसे कह रहा हूँ।।१६।।

ब्रह्मग्रहाश्रितेशस्य दशादिः परिचिन्तयेत्।
माहेश्वरर्क्षपर्यन्तं जातकस्यायुषि द्विज।।१७।।

ब्रह्मग्रहाश्रित राशि की दशा और माहेश्वर ग्रह की राशि की दशा को बनाना चाहिए। ब्रह्मग्रह की राशिदशा से माहेश्वर ग्रह की राशि दशा पर्यन्त ही जातक की आयु होती है।।१७।।

तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशिरन्तर्गते मृतिः।
चराच्च स्थिरपर्यन्तं दशायां चिन्तयेद्द्विज।।१८।।

दशाओं के त्रिकोण राशियों की अंतर्दशा में मृत्यु होती है। अतः चर से स्थिर राशि की दशा पर्यन्त यह विचार करना चाहिए।।१८।।

तथा महादशायां च आयुर्दायं विलोकयेत्।
विंशोत्तर्यादिकं चैव यथान्यायेषु योजयेत्।।१९।।

तथा विंशोत्तरी महादशा और अंतर्दशा में भी आयु का विचार करना चाहिए।।१९।।

माहेश्वरस्य यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज।
तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशावन्तर्गते मृतिः।।२०।।

अथवा माहेश्वर से अष्टमेश के आश्रयीभूत जो राशि हो उस राशि से त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है।।२०।।

अत्राब्द इति निर्देशात्तत्तद्राशिदशाक्रमः।
अब्दो द्वादशधाभागे अन्तरैकेकराशि च।।२०।।

यहाँ पर वर्ष दशाकम से लेना चाहिए और वर्ष में १२ का भाग देने से अन्तर्दशा का वर्ष होता है।।२१।।

षष्ठाष्टमेशौ भवतो मारकावष्टमेश्वरः।
प्रायेण मारको राशिदशास्त्वत्र विशेषतः।।२२।।

षष्ठेश और अष्टमेश मारक होते हैं, किन्तु प्रायः अष्टमेश ही मुख्य मारक होता है।।२२।।

षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः।
षष्ठात् त्रिकोणगो वापि मुख्यमारक इष्यते।।२३।।

छठे स्थान में अधिक पापग्रह हों तो षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है अथव षष्ठेश से त्रिकोण राशि मारक होती है।।२३।।

मध्यायुषि मृतिः षष्ठदशायामष्टमस्य वा।
षष्ठात् त्रिकोणस्य पुनर्दीर्घाल्पविषये भवेत्।।२४।।

यदि मध्यायु हो तो छठी वा आठवीं दशा में मृत्यु होती है। दीर्घायु और अल्पायु हो तो छठे से त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है।।२४।।

षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत्।
षष्ठेशश्चेद्बलाढ्यः स्यात् तत्त्रिकोणे मृतिं वदेत्।।२५।।

यदि छठा स्थान बली हो तो उसके त्रिकोण में मृत्यु होती है। यदि षष्ठेश बलवान् हो तो उसके त्रिकोण में मृत्यु होती है।।२५।।

व्यवस्थेयं समस्तापि कारकादिदशास्वपि।
बलिनः शुक्रशशिनोर्ग्राह्यं षष्ठाष्टमादिकम्।।२६।।

यह व्यवस्था सभी कारक दशाओं में होती है। शुक्र-चन्द्रमा बली हों तो छठे, आठवें को लेना चाहिए।।२६।।

इति रुद्रमाहेश्वरब्रह्मग्रहादि मारकाध्यायः।

अथ पित्रादिनिर्याणाध्यायः

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम।
योगं निर्याणकाख्यातं यथा शम्भुप्रणोदितम्।।१।।

हे द्विजोत्तम! अब मै पित्रादिकों के मरण समय को कह रहा हूँ, जैसा कि शंकरजी ने कहा है।।१।।

लग्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज।
तस्य राशेः समारभ्य क्रमेण पूर्ववद्द्विज।।२।।

लग्न और सप्तम में जो राशि बलवान् हो उस राशि के अनुसार ।।२।।

प्रवर्त्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशान्तरे।
भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।३।।

प्रवर्तमान दशा से रुद्रशूल की दशा अन्तर में निश्चय ही पिता की मृत्यु होती है।।३।।

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्बली द्विज।
निर्विशंकं भवेत्तस्य शम्भुना कथितं पुरा।।४।।

लग्न और सप्तम में जो बली राशि हो उससे नवम राशि वह पितृकारक होती है।।४।।

मातापित्रोः कारकाभ्यां चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विज।
तदायुर्निधनं चापि दीर्घादीनां प्रभेदतः।।५।।

एवं माता- पिता के कारकों से पूर्ववत् उनकी आयु का विचार करना चाहिए।।५।।

भानुभार्गवयोर्मध्ये सद्वीर्याधिक्यतो द्विज।
ग्रहादित्यादिरीत्या च सखेटः पितृकारकः।।६।।

सूर्य और शुक्र में जो बली हो वह सूर्यादि ग्रहों में पितृकारक होता है।।६।।

चन्द्रमङ्गलयोर्मध्ये तथैव रविशुक्रयोः।
बलेन रहितः सोऽपि पापग्रहनिरीक्षितः।।७।।

चन्द्र- भौम में जो बलवान् हो वह मातृकारक होता है। इन चारों ग्रहों में निर्बल भी कारक होता है, किन्तु वह निर्बल पापग्रह से देखा जाता हो तो।।७।।

पित्रादिकर्त्ता भजते यथाक्रम द्विजोत्तम।
उभयोर्बलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ।।८।।

दोनों के बल समान हों तो दोनों पित्रादि कारक होते हैं। यहाँ दो प्रकार से बली और निर्बल लेना चाहिए।।८।।

द्विविदं चिन्तयेत्तत्र प्राण्यप्राणिविभेदतः।
पित्रादिकारकस्यैवं प्राणिफलं वदाम्यहम्।।९।।

इस प्रकार दो तरह के बली और निर्बल कारक होते हैं, जिसमें बलवान् पित्रादि कारक के फल को कह रहा हूँ।।९।।

पित्रादिकारके विप्र शुभग्रहनिरीक्षिते।
मातृकारकाश्रयीभूतराशिरेतत् त्रिकोणके।।१०।।

पित्रादि कारक शुभग्रह से देखा जाता हो एवं मातृकारक भी शुभ ग्रह से देखा जाता हो तो उनकी आश्रयीभूत राशि के त्रिकोण राशि की।।१०।।

दशायां निधनं वाच्यं मातापित्रोरथ त्रयम्।
इति प्राणिकारकस्य तवाग्रे कथितं फलम्।।११।।

दशा में माता- पिता की मृत्यु कहना चाहिए। इस प्रकार बली कारक से फल को कहा।।११।।

अप्राणिकारकस्यैवमष्टमेशो बलान्वितः।
तस्याश्रयीभूतराशित्रिकोणे निधनं भवेत्।।१२।।

तथा निर्बल कारक से अष्टमेश बली हो तो उसकी आश्रयीभूत राशि के त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु होती है।।१२।।

यदा रन्ध्रेश वीर्याढ्यं तच्छूले निधनं भवेत्।
पितृमातृकारकयोः शूले निधनमेव च।।१३।।

यदि अष्टमेश बली हो तो उसके शूल में अथवा पितृ-मातृकारक के शूल में मृत्यु होती है।।१३।।

अथ बाल्ये पितृमरणयोगमाह—

पित्रोः कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि च।
अर्कहीने पापयोगे शुभयोगविवर्जिते।।१४।।

पितृकारक और मातृकारक के बली और निर्बल होते हुए भी यदि कारक रवि को छोड़कर अन्य पापग्रहों के साथ हो तथा शुभग्रह से योग न होता हो तो।।१४।।

द्वादशाब्दान्यूनवर्षे पित्रोर्मृत्युर्यथाकमम्।
रविदृष्टावशुभयोगे नायं योगो द्विजोत्तम।।१५।।

बारह वर्ष की अवस्था के अन्दर ही बालक के माता-पिता की मृत्यु हो जाती है। सूर्य देखता हो और पापग्रह का योग होता हो तो यह योग नहीं होता है।।१५।।

रव्यारूढविलग्नेऽपि पित्रोर्भावं विचारयेत्।
तद्दशायां फलं वाच्यं पित्रोर्दुःखसुखादिकम्।।१६।।

रवि के आरूढ़ लग्न से भी पितृभाव का विचार कर उनकी दशा में माता-पिता के दुःख-सुख का विचार करना चाहिए।।१६।।

अथ मातुर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली राशिचतुर्थकः।
तस्याः शूलदशायां च मातुर्मृत्युर्न संशयः।।१७।।

लग्न वा सप्तम में जो बली हो उससे चौथी राशि की शूलदशा में माता की मृत्यु होती है।।१७।।

अथ भ्रातृनिर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम्।
तस्याः शूलदशायां च भ्रातृनिर्याणमेव च।।१८।।

लग्न और सप्तम में जो बली हो, उससे तृतीय राशि की शूलदशा में भाई का निधन होता है।।१८।।

अथ ज्येष्ठभ्रातुर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि लाभराशिर्बली द्विज।
तस्याः शूलदशायां च निर्याणमग्रजस्य च।।१९।।

लग्न वा सप्तम में जो बली हो, उससे ११वीं राशि की शूल दशा में ज्येष्ठ भाई की मृत्यु होती है।।१९।।

भगिनी-पुत्रयोर्निर्याणम्—

लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपञ्चमके बली।
तस्याः शूलदशायां च निर्याणं भगिनीपुत्रयोः।।२०।।

लग्न और सप्तम में जो बली हो, उससे पाँचवीं राशि की शूलदशा में भगिनी और पुत्र का निर्याण होता है।।२०।।

अथ कलत्रनिर्याणमाह—

कलत्रकारकः खेटस्तथा स्त्रीराशिचिन्तनम्।
तत्त्रिकोणदशायां च कलत्रनिधनं भवेत्।।२१।।

स्त्रीकारक और सप्तम में जो बली हो, उससे त्रिकोण राशि की दशा में स्त्री का निधन होता है।।२१।।

अथान्येषां निर्याणमाह—

तत्तत्कारकाश्च ये ये च त्रिकोणदशान्तरे।
तेषां च मातुलादीनां निधनं भवति ध्रुवम्।।२२।।

इससे अतिरिक्त जिसके निधन का विचार करना हो उसके कारकों की आश्रयीभूत राशि की दशा अंतर में उन लोगों का (मामा आदि का) निधन कहना चाहिए।।२२।।

अथ मृत्युसमये कष्टादिज्ञानमाह—

लग्नाद्वा कारकाच्चापि तृतीये पापखेचरे।
युते दृष्टेऽथ वा विप्र दुष्टं मरणमुच्यते।।२३।।

लग्न वा कारक से तीसरे स्थान में पापग्रह युत हों वा देखते हों तो जातक का दुर्मरण कष्ट से होता है।।२३।।

तत्तत्कारकतदीशात्तृतीये पापयोगकृत्।
तेषां तेषां प्रवक्तव्यं दुष्टं मरणमेव च।।२४।।

जिन लोगों के कारक और भावेश से तीसरे भाव में पापग्रह का योग हो, उनका दुष्ट मरण कहना चाहिए।।२४।।

तत्तद्भावात्कारकेशात्तृतीये शुभदृष्टियुक्।
तेषां तेषां प्रवक्तव्यं मरणं शुभमेव च।।२५।।

जिन-जिन भावों वा कारकेशों से तीसरे भाव में शुभग्रह का योग और दृष्टि हो तो उनका मरण सुख से होता है।।२५।।

शुभाशुभद्वये योगे दृष्टौ वापि तृतीयके।
शुभाऽशुभात्मकं विप्र मरणं भवति ध्रुवम्।।२६।।

यदि शुभ-पाप दोनों युत वा देखते हों तो सुख-दुःख दोनों मरण के समय होता है।।२६।।

अथ मरणनिमित्तान्याह—

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके।
राजहेतोश्च मरणं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।।२७।।

तृतीय भाव बलवान् सूर्य से युत वा दृष्ट हो तो राजा के कारण मृत्यु होती है।।२७।।

सहजे शशिना युक्ते दृष्टे वा यक्ष्मया मृतिः।
तृतीये शनिराहुभ्यां दृष्टे वापि युतेन वा।।२८।।

तीसरे भाव को चन्द्रमा देखता हो वा उसमें युत हो तो यक्ष्मारोग से मृत्यु होती है। तीसरा भाव शनि-राहु से युत वा दृष्ट हो तो।।२८।।

विषार्त्तिमरणं वाच्यं जलाद्वा वह्निपीडनात्।
गर्तादुच्चाच्च पतनं बन्धनाद्वा मृतिर्भवेत्।।२९।।

विष से वा जल से अथवा अग्निपीड़ा से मृत्यु होती है। अथवा ऊँचाई से गिरने वा बंधन से मृत्यु होती है।।२९।।

तृतीये चन्द्रमान्दी च षष्ठे वापि युते द्विज।
कृमिकुष्ठादिना तस्य मरणं च विनिर्दिशेत्।।३०।।

तीसरे भाव में वा छठे भाव में चन्द्रमा तथा गुलिक हों वा देखते हों तो कृमि वा कुष्ठ रोग से मृत्यु होती है।।३०।।

तृतीये गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकादिना मृतिः।
तृतीये भृगुयुग्दृष्टे मेहरोगेण वै मृतिः।।३१।।

तीसरे भाव को गुरु देखता हो वा उसमें युत हो तो शोफरोग से मृत्यु होती है।।३१।।

बहुयुक्ते तृतीये च बहुरोगयुता मृतिः।
तृतीये केतु सत्खेटैर्योगे दृष्टेऽथवा द्विज।।३२।।

यदि बहुत से ग्रह तीसरे भाव में हों तो बहुत रोगों से मृत्यु होती है। तीसरे भाव में शुभ ग्रह हों वा देखते हों।।३२।।

तत्रैव चन्द्रयोगे च तत्तद्रोगेण वै मृतिः।
कुजेन व्रणशस्त्राग्निदाहाद्यैर्मृत्युमादिशेत्।।३३।।

और चंद्रमा का भी योग हो तो उनके रोग से मृत्यु होती है। तीसरे भाव में मंगल हो, या उसे देखता हो तो व्रण-शस्त्र-अग्नि से जलने आदि से मृत्यु होती है।।३३।।

तृतीये सौम्यसंयुक्ते दृष्टे वापि तथा द्विज।
ज्वरेण तस्य मृत्युः स्यान्त्रिंविंशङ्कं द्विजोत्तम।।३४।।

तीसरे भाव में बुध हो अथवा उसे देखता हो तो ज्वर से मृत्यु होती है।।३४।।

अथ मरणप्रदेशज्ञानमाह—

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत्।
पापेन कीकटे देशे मिश्रे मिश्रस्थले मृतिः।।३५।।

तीसरे भाव में शुभग्रह का योग हो तो शुभ प्रदेश में मृत्यु होती है। पापग्रह का योग हो तो दुष्ट स्थान में और शुभ-पाप दोनों हों तो मिश्र स्थान में मृत्यु होती है।।३५।।

अथ ज्ञानपूर्वकं मृत्युमाह—

तृतीये गुरुशुक्राभ्यां योगे ज्ञानेन वै मृतिः।
गुरुशुक्रातिरिक्तानां योगे शिथिलता मृतौ।।३६।।

तीसरे भाव में गुरु-शुक्र हों तो ज्ञानपूर्वक मृत्यु होती है। इन दोनों से भिन्न ग्रह हों तो मृत्यु समय में अज्ञानता होती है।।३६।।

इति निधनप्रकरणम्।

अथ मारकभेदाध्यायः

त्रिविधाश्चायुषो योगाः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः।
द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत्।
चतुःषष्ट्याः पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृतम्।।१।।

तीन प्रकार के आयु के योग कहे गये हैं, जो कि अल्पायु, मध्यमायु और उत्तमायु वा दीर्घायु के नाम से प्रसिद्ध हैं। ३२ वर्ष से पूर्व अल्पायु होती है। इसके बाद ६४ वर्ष की अवस्था तक मध्यमायु होती है। इसके बाद दीर्घायु होती है।।१।।

उत्तमायुः शतादूर्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम।
चतुर्विंशतिवर्षान्तमायुर्ज्ञातुं न शक्यते।।२।।

इसके बाद १०० वर्ष तक दीर्घायु और इसके ऊपर उत्तमायु होती है। जन्म से २४ वर्ष पर्यन्त आयु का ज्ञान नहीं होता है अर्थात् उक्त समय तक आयु के ऊपर निर्भर नहीं रहना चाहिए।।२।।

जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षां तु कारयेत्।
पितृदोषैर्मृताः केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि।।३।।

तब तक यानि २४ वर्ष की अवस्था पर्यन्त जप, होम, चिकित्सा आदि से बालकों की रक्षा करनी चाहिए। उक्त वर्ष के अंदर कोई पिता के ग्रहों से, कोई माता के ग्रहों से।।३।।

अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यवः।
अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारां मृतिं वदेत्।।४।।

और कोई अरिष्ट योग से मर जाते हैं। इस तरह तीन प्रकार से बालकों की मृत्यु होती है। जिनकी अल्पायु होती है उनकी विपत्तारा की दशा में।।४।।

जातस्य मध्यमायुष्ये प्रत्यरौ च मृतिर्भवेत्।
दीर्घायुर्योगजातानां वधभे तु मृतिर्भवेत्।।५।।

मध्यमायु योग वाले की प्रत्यरि तारा की दशा में और दीर्घायु योग वाले की वध तारा की दशा में मृत्यु होती है।।५।।

अष्टमर्क्षं तृतीयं च लग्नादायुरुदाहृतम्।
द्वितीयं सप्तमस्थानं मारकस्थानमुच्यते।।६।।

जन्मलग्न से तीसरा और आठवाँ स्थान आयु का होता है और दूसरा तथा सातवाँ मारक स्थान होता है।।६।।

महामारकसंज्ञौ तौ मान्दिकेतू इति स्मृतौ।
जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ।।७।।

मांदि और केतु महामारक होते हैं और सप्तम, द्वितीय और आठवें भाव के स्वामी मारकेश होते हैं।।७।।

प्रायेण मारको राशिदशास्तत्राविशेषतः।
षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः।।८।।

प्रायः इन स्थानों की राशियाँ मारक होती हैं। छठे स्थान में अधिक पाप ग्रह हों तो षष्ठेश मुख्य मारक होता है।।८।।

षष्ठत्रिकोणगो वापि मुख्यमारक इष्यते।
मध्यायुषि मृतिः षष्ठदशायामष्टमस्य वा।।९।।

छठे से त्रिकोण भी मारक होता है। मध्यायु में छठे या आठवीं दशा में मृत्यु होती है।।९।।

षष्ठात् त्रिकोणस्य पुनर्दीर्घाल्पविषयो भवेत्।
षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत्।।१०।।

दीर्घायु में षष्ठ से त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है। षष्ठ स्थान वा षष्ठेश बली हो तो उसके त्रिकोण की दशा में मृत्यु होती है।।१०।।

षष्ठेशश्चेद्बलाढ्यः स्यात्तत्त्रिकोणे मृतिं वदेत्।
व्यवस्थेयं समस्तापि कारकादिदशास्वपि।।११।।

यह व्यवस्था सम्पूर्ण मारक दशा के लिए हैं।।११।।

मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिनः।
पाके पापयुजां पाके सम्भवे निधनं भवेत्।।१२।।

मारकेश की दशा में मारक स्थान स्थित पापग्रह की अन्तर्दशा में संभावना हो तो मृत्यु होती है।।१२।।

असम्भवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम्।
अभावे व्ययभावेशसम्बन्धिग्रहभुक्तिषु।।१३।।

यदि असंभव हो तो व्ययेश की दशा में मृत्यु होती है। इसके अभाव में व्ययेश के संबंधी ग्रह के अंतर में मृत्यु होती है।।१३।।

तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः।
मन्दश्चेत्पापसंयुक्तो मारकग्रहयोगतः।।१४।।

इसके अभाव में अष्टमेश की दशा में मृत्यु होती है। शनि पापग्रह से युक्त हो और मारकेश के साथ योग करता हो तो।।१४।।

तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहन्ता पापकृच्छनिः।
मारकग्रहसम्बन्धी पापकर्त्ता शनिस्तदा।
तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहन्ता भवति ध्रुवम्।।१५।।

सभी ग्रहों को छोड़कर वही मारक हो जाता है।।१५।।

एतद्दशान्तभुक्त्यादौ विचार्य्यैव मृतिं वदेत्।
षष्ठद्रेष्काणपश्चैव तथा वैनाशिकाधिपः।।१६।।

छठे द्रेष्काण (लग्न से २२वें द्रेष्काण) का स्वामी और २३वें नक्षत्र का स्वामी।।१६।।

विपत्तारात्प्रत्यरीशौ वधमेशस्तथैव च।
आद्यन्तपौ च विज्ञेयौ चन्द्राक्रान्तगृहात्तथा।।१७।।

विपत्तारा, प्रत्यरितारा, वधतारा का स्वामी, चन्द्र राशि से द्वितीय, द्वादश के स्वामी।।१७।।

दशाक्षिप्तेषु कालेषु मारको मरणप्रदः।
दुष्टतारापतेः पाके निर्याणं कथितं बुधैः।।१८।।

अपनी-अपनी दशाकाल मे मारक होते हैं अथवा पूर्वोक्त दुष्ट ताराओं के स्वामी की दशा में मृत्यु होती है।।१८।।

मारकग्रहाश्रितो राशिर्मारकस्वामिनोऽथवा।
ताभ्यां महादशाकाले विंशोत्तर्याः स्थिरादिकः।।१९।।

मारकेश के आश्रित राशि वा मारकेश जिस भाव में बैठा हो, उस राशि की महादशा में पापग्रह के अंतर में विंशोत्तरी के अनुसार मृत्यु होती है।।१९।।

पापे मृत्युर्विजानीयान्त्रिंविंशङ्कं द्विजोत्तम।
मारका बहवः खेटा यदि वीर्यसमन्विताः।।२०।।

यदि बलवान् बहुत से ग्रह हों तो सबसे बली होता है।।२०।।

तत्तद्दशान्तरे विप्ररोगकष्टादिसम्भवः।
षष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम्।।२१।।

वही मारक होता है, किन्तु उन लोगों की दशा-अन्तर के समय कष्टादि होता है तथा षष्ठेश की दशा में मृत्यु होती है।।२१।।

न्यूनातिरिक्तभेदेन बहुखेटास्तु मारकाः।
दुर्बलाश्रयराशीशदशास्वल्पार्तिदा भवेत्।।२२।।

न्यूनातिरिक्त अधिक मारक हों तो दुर्बल राशीश की दशा में अल्प कष्ट होता है।।२२।।

प्रबलस्य दशायां च महारोगार्त्तिमृत्युवत्।
भयशोकमृताद्भीतिस्तस्कराग्निभयं भवेत्।।२३।।
मारकस्य दशायां च महत्या निधनाश्रयी।
भूतामन्तर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भोः।।२४।।

प्रबल की दशा में महारोग से कष्ट और मृत्यु होती है और भय, शोक, मृत्युभय, चोरभय तथा अग्निभय होता है।।२४।।

मारकग्रहाश्रयीभूतमहापाके विचिन्तयेत्।
कारकाच्च विलग्नाद्वा सप्तमाद्वा द्वितीयकम्।।२५।।

मारकेश के आश्रित राशि की दशा-अंतर्दशा काल में उपरोक्त सभी बातों का विचार करना चाहिए। कारक से अथवा लग्न से सप्तम से दूसरे।।२५।।

षष्ठाष्टरिःफनाथान्तमपहाराष्टके मृतिः।
तेषामन्तर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलाढ्यकः।।२६।।
तदीयान्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम्।
अपरा पापकाले तु रोगदुःखार्तिवान्द्विज।।२७।।

छठे, आठवें, बारहवें इन आठों के स्वामियों की दशादि में मृत्यु कहना चाहिए। इनमें भी बलवान् अंतर्दशेश के समय में मृत्यु होती है और अन्य लोगों की अंतर्दशा आदि में रोग-दुःख आदि होता है।।२७।।

इति मारकभेदाध्यायः।

अथाष्टकवर्गाध्यायः

ज्ञात्वादौ करणस्थानं विन्दुरेखे च वर्गणाम्।
क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत्।।१।।

पहले भाव और ग्रहों के करण (शून्य) स्थान (रेखा) अर्थात् बिन्दु और रेखाओं का भलीभाँति ज्ञान करके तब अष्टकवर्ग के फल को-

कहना चाहिए। (इसका विस्तृत विवरण उत्तरार्ध में देखना चाहिए)।।१।।

अथ रवेरष्टकवर्गः—

स्वारार्किभ्यो दिनेशः स्वसुखमृतितपःखास्तलाभाद्ययातः
शुक्रादस्तारिरिष्के अरितनयतपोलाभवर्त्तीसुरेज्यात्।
चन्द्राल्लाभारिकर्मत्रिषु शशितनयात्सान्त्यधर्मात्मजेषु
प्रोक्तो लग्नाद्व्ययाम्बूपचयगृहगतः सुप्रशस्तोऽष्टवर्गात्।।२।।

अपने स्थान से तथा भौम और शनि से १,२,४,८,९,१०,७ और ११ इन स्थानों में सूर्य शुभफलदायक होता है। शुक्र से ७,६,१२ स्थानों में, गुरु से ६,५,९,११ स्थानों में, चन्द्रमा से ११,६,१०,३, स्थानों में, बुध से पूर्वोक्त स्थानों (११।६।३।१०) के साथ ११,९ स्थानों में और जन्मलग्न से १२,४,३,६,१०,११ स्थानों में शुभफल देता है अर्थात् रेखाप्रद होता है।।२।।

रवेरष्टकवर्गाङ्काः

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

अथ चन्द्राष्टकवर्गः—

इन्दुर्लग्नात्षडायत्रिदशषु कुसुतात्सस्वधर्मात्मजेषु
स्वात्सास्ताद्येषु सूर्यात्समदनमृतिषु त्रायधीषट्सुमन्दात्।
ज्ञात्केन्द्रात्मजाष्टत्रिषु विबुधगुरोः केन्द्ररन्ध्रान्त्यलाभे
शुक्राद्धीधर्मबन्धुस्मरसहजनभो लाभगश्च प्रशस्तः।।३।।

जन्मलग्न से ६,११,३,१० स्थानों में चन्द्रमा शुभफल देता है। भौम से २,३,५,६,९,१०,११ स्थानों में, अपने स्थान से १,३,६,७,१०,११ स्थानों में, सूर्य से ३,६ ,७,८,१०,११ स्थानों में; शनि से ३,११,५,६ स्थानों

अथ गुर्वष्टकवर्गचक्रम्—

बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	४	७	४	४	४
४	९	१२	५	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		१२	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११

अथ शुक्राष्टकवर्गः—

चन्द्रो व्यस्तारिखेषु व्यरिमदननभोऽन्त्येषु लग्नात्प्रशस्तो।
व्यन्तास्तारातिषु स्वाद्व्ययनिधनभवेष्वर्कतो दैत्यमन्त्री।।
धीधर्माष्टाप्तिबन्धुत्रिदशसु रविजाद्धीतपःस्वाष्टलाभे।
जीवात् ज्ञाद्धीत्रिलाभक्षतनवसुकुजाद्धीभवापोक्लिनेषु।।७।।

शुक्र चन्द्रमा से ७,६,१० स्थानों को छोड़कर शेष १,२,३,४,५,८,९,१०,११,१२ स्थानों में शुभफल देता है। लग्न से ६,७,१०,१२ को छोड़कर शेष स्थानों में, अपने स्थान से १२,६,७, को छोड़कर शेष स्थानों में, सूर्य से १२,८,११ स्थानों में, शनि से ५,९,८,११,४,३,१० स्थानों में, गुरु से ५,९,२,८,११, स्थानों में, बुध से ५,३ ,११,६,९ स्थानों में और भौम से ५,११,३,६,९,१२ स्थानों में शुभफल देता है।।७।।

अथ शुक्राष्टकवर्गचक्रम्—

शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

अथ बुधाष्टकवर्गः—

ज्ञः शुक्रात्स्वाद्यलाभाष्टमनवमसुखेसत्रिपुत्रेकुजार्क्यार्याः।
साज्ञादारेऽथ जीवाद्व्ययरिपुनिधनायेषुशस्तो दिनेशात्।।
धीधर्मान्त्यारिलाभे त्रितनुदशयुते स्वात्सषडाप्तिरन्ध्रे।
व्योमाम्बुधिरिन्दुतोऽरिस्वमृतितनुव्योमलाभाब्धिलग्नात्।।५।।

बुध शुक्र से २,१,११,८,९,४,३,५ स्थानों में शुभफल देता है। शनि से १,२,३,४ ,५,६,७,८,९,१०,११ स्थानों में, गुरु से १२,६,८,११ स्थानों में, सूर्य से ५,९,१२ ,६,११ स्थानों में, अपने स्थान से ५,९,१२,६,३,१,१० स्थानों में, चन्द्रमा से २,४ ,६,८,१०,११ और लग्न से ६,२,८,१,१०,११,४ स्थानों में शुभफल देता है।।५।।

अथ बुधाष्टकवर्गचक्रम्—

बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.
१	६	१	१	५	२	१	१
३	८	२	२	६	४	२	२
५	११	३	४	९	६	४	४
६	१२	४	७	११	८	७	६
९		५	८	१२	१०	८	८
१०		८	९		११	९	१०
११		९	१०			१०	११
१२		११	११			११	

अथ गुर्वष्टकवर्गः—

जीवो भौमात्स्वकेन्द्रागममृतिषु रवेः सधीधर्मेष्वथश्वात्।
स्वत्रिष्विन्दुजात्षट्स्वसुखसुततनुव्योमधर्मागमेषु ।।
लग्नात्सास्तेषु चन्द्रात्स्मरगुरुधनधीप्राप्तिभेष्वर्कपुत्रात्।
धीषट्त्र्यन्तेषु शुक्रात्स्वसुतशुभमतोलाभविद्वेषिभेषु।।६।।

गुरु भौम से २,१,४,७,१०,११,८ स्थानों में शुभफल देता है, सूर्य से १,२,४,५,८ ,९,१०,११ स्थानों में, बुध से ६,२,४,५,१,१०,९,११ स्थानों में, लग्न से १,२,३ ,४,५,६,७,९,१०,११ स्थानों में, चन्द्रमा से ७,९,२,५,११ स्थानों में, शनि से ५,६ ,३,१२ स्थानों में, शुक्र से २,५,९,११,६ स्थानों में शुभफल देता है।।६।।

अथ गुर्वष्टकवर्गचक्रम्—

बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.
१	२	३	१	२	१	१	१
२	५	५	२	५	२	२	२
३	६	६	४	७	४	४	४
४	९	१२	५	९	७	५	५
७	१०		७	११	८	६	६
८	११		८		१०	९	७
१०			९		१२	१०	९
११			१०			११	१०
			११				११

अथ शुक्राष्टकवर्गः—

चन्द्रो व्यस्तारिखेषु व्यरिमदननभोऽन्त्येषु लग्नात्प्रशस्तो।
व्यन्तास्तारातिषु स्वाद्व्ययनिधनभवेष्वर्कतो दैत्यमन्त्री।।
धीधर्माष्टाप्तिबन्धुत्रिदशसु रविजाद्धीतपःस्वाष्टलाभे।
जीवात् ज्ञाद्धीत्रिलाभक्षतनवसुकुजाद्धीभवापोक्लिनेषु।।७।।

शुक्र चन्द्रमा से ७,६,१० स्थानों को छोड़कर शेष १,२,३,४,५,८,९,१०,११,१२ स्थानों में शुभफल देता है। लग्न से ६,७,१०,१२ को छोड़कर शेष स्थानों में, अपने स्थान से १२,६,७, को छोड़कर शेष स्थानों में, सूर्य से १२,८,११ स्थानों में, शनि से ५,९,८,११,४,३,१० स्थानों में, गुरु से ५,९,२,८,११, स्थानों में, बुध से ५,३ ,११,६,९ स्थानों में और भौम से ५,११,३,६,९,१२ स्थानों में शुभफल देता है।।७।।

अथ शुक्राष्टकवर्गचक्रम्—

शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.
१	३	८	१	३	३	५	१
२	४	११	२	५	५	८	२
३	५	१२	३	६	६	९	३
४	८		४	९	९	१०	४
५	९		५	११	११	११	५
८	१०		८	१२			८
९	११		९				९
१०			११				११
११			१२				

अथ शनेरष्टकवर्गः

स्वात्सौरिस्त्र्यायपुत्रारिषु धरणिसुतात्सव्ययाज्ञेषु।
सूर्यात्केन्द्रेस्वाष्टसु ज्ञाद्वायमृतिस्वभवारातिधर्मेषु।
चन्द्रात्षट्त्र्यायस्थोविलग्नादुपचयहिबुकाद्येषुषट्त्र्याप्ति-
रिष्फेषुशुक्राद्वाचस्पतेश्चव्ययतनयभवारातिषु सुप्रशस्तः।।८।।

शनि अपने स्थान से ३,११,५,६, स्थानों में शुभफल देता है। भौम से ३,५,६,१२,१० स्थानों में, सूर्य से १,४,७,१०,२,११,८ स्थानों में, बुध से १२,८,२,११,८ स्थानों में, चन्द्रमा से ६,३,११ स्थानों में, लग्न से ३,६,१०,११,१ स्थानों में, शुक्र से ६,३, ११,१२ स्थानों में, गुरु से १२,५,११,६ स्थानों में शुभफल देता है।।८।।

अथ शनेरष्टकवर्गचक्रम्—

श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ल.
३	१	३	३	६	५	६	१
५	२	६	५	८	६	११	३
६	४	११	६	९	११	१२	४
११	७		१०	०	१२	३	९
	८		११	११			१०
	१०		१२	१२			११
	११						

अष्टकवर्गसाधन—

सूर्याष्टकवर्ग में सूर्य अपने स्थान से (जन्म के समय जिस राशि में है) १।२।४।७।८।९।१०।११ स्थान में शुभ फल देता है; अन्यत्र स्थानों में अशुभ फल देता है। जैसे निम्नलिखित जन्मांगचक्र में सूर्य कर्क राशि में है, अतः ४।५।७।१०।११।१२।१।२ राशियों में शुभ फलसूचक रेखा देगा, अन्य राशियों में बिन्दु रूप अशुभसूचक रेखा को देगा। इसी प्रकार सभी ग्रह अपन-अपने स्थान से शुभ और अशुभ सूचक रेखा और बिन्दु को देते हैं। जैसा कि नीचे चक्र में दिया है—

जन्माङ्गम्

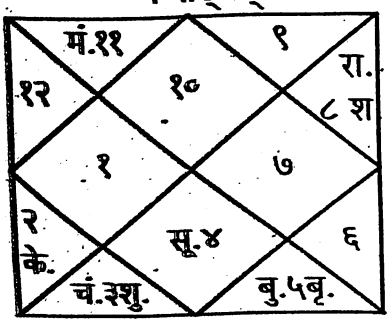

सूर्याष्टकवर्गः

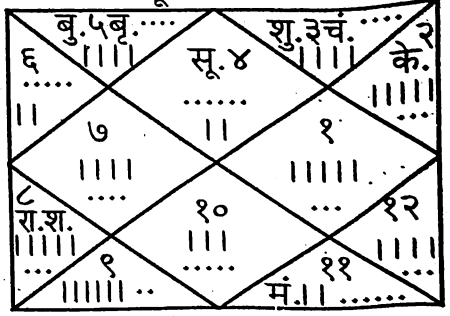

सूर्याष्टकवर्गः ४८

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	
रा.	४	३	११	५	५	३	८	१०	
४	।			।			।		३
५	।	।	।				।		४
६			।				।		२
७	।		।	।				।	४
८		।	।			।	।	।	५
९			।	।	।	।	।	।	६
१०	।			।	।				३
११	।		।				।		३
१२	।	।	।					।	४
१	।	।		।	।			।	५
	।		।	।		।	।		५
३				।	।		।	।	४

चन्द्राष्टकवर्गः ४९

ग्रह	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	ल.	
रा.	३	११	५	५	३	८	४	१०	
३	।	।	।	।				।	५
४		।		।					२
५	।		।	।	।				४
६		।	।	।	।	।			५
७					।	।	।		३
८		।	।		।			।	४
९	।	।	।	।				।	५
१०	।	।	।		।		।		५
११	२					।	।		२
१२			।	।	।		।		४
१	।	।	।	।	।	।		।	७
२	।	।	।	।	।	।	।		५
३	।	।		।	।	।	।		५

भौमाष्टकवर्गः

ग्र.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	ल.	
रा.	११	५	५	३	८	४	३	१०	
११	।								२
१२	।							।	२
१				।		।	।		३
२	।		।	।	।	।			५
३		।	।		।			।	४
४			।		।				२
५	।				।		।		३
६	।				।	।			३
७		।						।	२
८	।			।	।	।	।	।	६
९	।	।				।			३
१०		।	।	।				।	४

बुधाष्टकवर्गः

ग्र.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	ल.	
रा.	५	५	३	८	४	३	११	१०	
५	।		।	।			।	।	५
६			।	।		।	।		४
७	।		।				।	।	४
८				।	।	।	।	।	५
९				।	।			।	४
१०	।	।	।	।			।	।	५
११			।	।			।	।	४
१२		।	।	।		।	।		५
१	।		।			।	।	।	५
२	।	।	।	।	।	।	।	।	८
३	।	।	।	।			।		५
४	।	।	।	।		।		।	५
५	।	।	।	।			।	।	५
६	।	।	।	।			।		४
७	।	।	।	।		।		।	५
८	।	।	।	।	।		।		५
९	।	।	।	।				।	४
१०	।	।	।	।			।		४

गुर्वष्टकवर्गः

ग्र.	बृ.	शु.	शं.	सू.	चं.	मं.	बु.	ल.	
रा.	५	३	८	४	३	११	५	१०	
५	।			।		।	।		४
६	।					।	।	।	४
७	।	।	।	।	।			।	६
८	।	।		।		।	।	।	६
९					।	।	।		३
१०			।	।			।	।	४
११	।	।		।	।	।		।	६
१२	।	।	।	।		।			५
१		।	।	।	।		।	।	६
२	।			।		।	।	।	५
३	।						।	।	३
४		।		।	।			।	४

शुक्राष्टकवर्गः

ग्र.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	ल.	
रा.	३	८	४	३	११	५	५	१०	
३	।	।	।	।	।	।	।		७
४	।	।		।	।				४
५	।	।		।				।	४
६	।	।		।				।	४
७	।	।		।	।	।	।		४
८	।	।		।				।	१
९					।	।	।		८
१०	।	।		।	।	।		।	६
११	।	।	।	।	।			।	५
१२	।	।				।	।		४
१	।	।	।	।	।	।	।	।	८
२	।	।		।	।	।	।	।	६
३	।	।	।	।	।	।	।	।	६
४	।	।	।	।	।	।	।	।	४

शन्यष्टकवर्गः

ग्र.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	ल.	
रा.	८	४	३	११	५	५	३	१०	
८			।	।				।	४
९				।					१
१०	।	।		।	।	।		।	६
११		।							१
१२	।				।			।	३
१	।	।	।	।	।	।	।	।	८
२		।			।		।		३
३				।	।	।		।	४
४		।		।	।	।			४
५		।	।						२
६	।								१
७		।						।	२

लग्नाष्टकवर्गः

ग्र.	ल.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	
रा.	१०	४	३	११	५	५	३	८	
१०					।	।	।	।	४
११				।		।	।	।	४
१२	।		।		।				३
१		।	।	।		।	।	।	६
२		।				।	।		३
३			।		।	।	।	।	५
४		।			।	।	।	।	५
५		।					।		३
६	।		।	।	।	।		।	६
७		।			।	।			३

त्रिकोणशोधनम्—

त्रिकोणं तु चतुःप्रोक्तं मेषसिंहधनुस्तथा।
वृषकन्यामृगाख्येषु तुलाकुम्भयुगेषु च।।९।।

सम्पूर्ण राशिचक्र (१२ राशि) में चार (४) त्रिकोण हैं। त्रिकोण का अर्थ है— प्रथम, पंचम और नवम राशि। प्रत्येक त्रिकोण की प्रथम राशि क्रम से मेष, वृष, मिथुन और कर्क हैं। इसके अनुसार मेष, सिंह, धन प्रथम त्रिकोण; वृष, कन्या, मकर दूसरा; मिथुन, तुला, कुम्भ तीसरा और कर्क, वृश्चिक, मीन चौथा त्रिकोण है।।९।।

कर्कवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम्।
त्रिकोणेषु च यन्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्।।१०।।

प्रत्येक त्रिकोण की तीनों राशियों में जिस राशि की रेखा संख्या कम हो उसे त्रिकोण की अन्य दो राशि के रेखा की संख्या में घटावे। शेष उसी राशि के नीचें रख दे।।१०।।

एकस्मिन्भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोभयेत्।
समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोध्य बुद्धिमान्।।११।।

अल्प संख्या वाली राशि के नीचे शून्य रखे। यदि त्रिकोण की एक राशि के नीचे शून्य हो तो उसमें त्रिकोण-शोधन न करे अर्थात् ज्यों की त्यों रख दे। यदि त्रिकोण की तीनों राशिग्रों के नीचे रेखा बराबर हों तो त्रिकोण शोधन न कर तीनों राशियों के नीचे शून्य (०) ही रख देवें।।११।।

विशेष— इस प्रकार त्रिकोण-शोधन के तीन नियम हुए—

१. त्रिकोण की तीन राशियों में किसी राशि की रेखायें कम हों तो उस कम वाली संख्या को तीनों स्थान की संख्याओं में घटा दे।

२. यदि त्रिकोण की किसी एक राशि में शून्य रेखा हो तो ज्यों का त्यों रहने दे।

३. एवं यदि त्रिकोण की तीनों राशियों में बराबर रेखायें हों तो तीनों स्थानों में शून्य फल होगा।

उदाहरण— जैसे सूर्याष्टक वर्ग में मेष राशि में ५, सिंह में ४ और धन में ६ रेखायें हैं इन तीनों में सबसे कम ४ है अतः नियमानुसार मेष की ५ रेखाओं में से ४ घटाने से मेष राशि में १ स्थापना करनी होगी।

सिंह की ४ रेखाओं में से ४ घटाने से सिंह राशि में ० शून्य रहेगा एवं धनराशि की ६ रेखाओं में से ४ घटाने से धन राशि में २ रहेगा। अर्थात् त्रिकोण-शोधन के बाद मेष में १, सिंह में शून्य एवं धन में २ फल आया। इसी प्रकार उपर्युक्त नियम के अनुसार सूर्यादि सात ग्रहों और लग्न के अष्टक वर्ग का त्रिकोण-शोधन करना चाहिए। कहीं २ निम्नलिखित प्रकार से भी अष्टक वर्ग लिखने की प्रथा है—

सूर्याष्टकवर्गः ४८

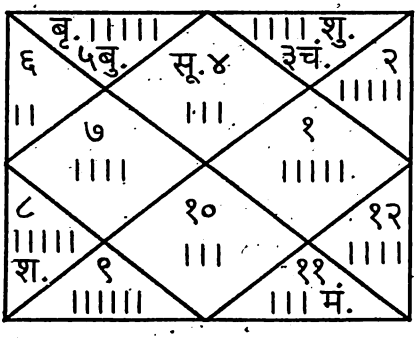

चन्द्राष्टकवर्गः ४९

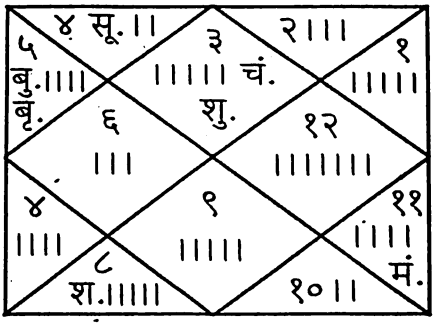

भौमाष्टकवर्गः ३९

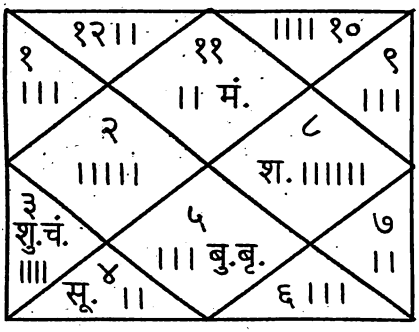

बुधाष्टकवर्गः ५४

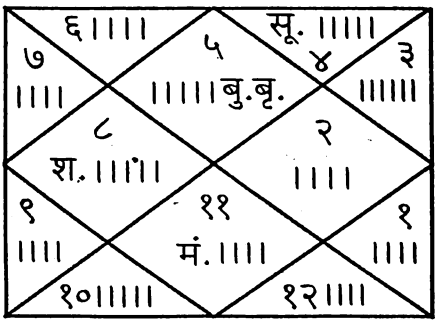

गुर्वष्टकवर्गः ५६

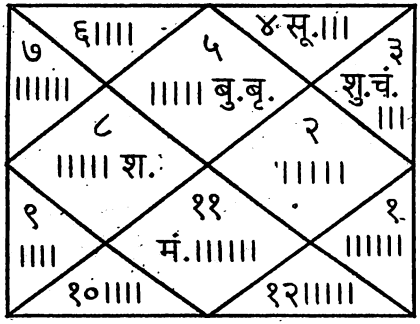

शुक्राष्टकवर्गः ५२

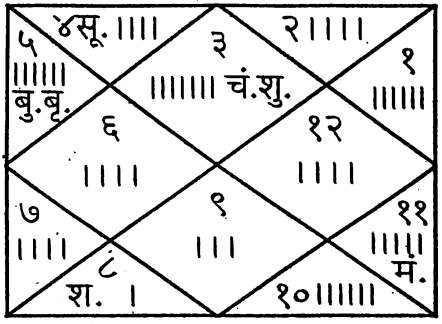

शन्यष्टकवर्गः ३९

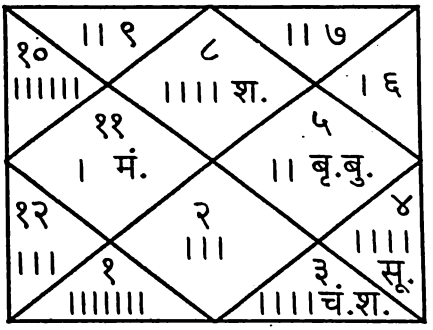

लग्नाष्टकवर्गः ४९

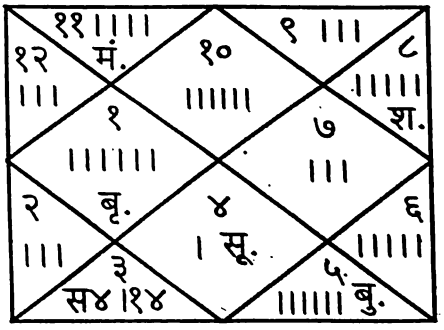

अथैकाधिपत्यशोधनम्—

एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता।
क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा संशोधयेद्बुधः।।१२।।

इस प्रकार त्रिकोण शोधन के बाद एकाधिपत्य शोधन करे। एक ग्रह की दो राशियों में त्रिकोण-शोधन के फलों से एकाधिपत्य शोधन होता है।।१२।।

क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते।
ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके।।१३।।
अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते।
फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।।१४।।
उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन।
उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत्।।१५।।
सग्रहा ग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात्।
एकत्र नास्ति चेत् सर्वहानिरन्यत्र कीर्त्तिता।
कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्।।१६।।

यदि एक ग्रह की दोनों राशियों में कोई ग्रह न हो तो अल्प संख्या को अधिक संख्या में घटाकर शेष को अधिक संख्या के नीचे रख दे और अल्पसंख्या को ज्यों का त्यों रख दे (१)। यदि एक राशि में ग्रह हो और दूसरी राशि में ग्रह न हो और जिस राशि में ग्रह हो उसकी संख्या ग्रहहीन राशि की संख्या से अल्प हो तो ग्रहहीन राशि की संख्या में अल्प संख्या को घटाकर शेष ग्रहहीन के नीचे रख दे और अल्प संख्या यथावत्

रख दे (२)। यदि ग्रहयुक्त राशि की संख्या अधिक हो और ग्रहहीन राशि में अल्प संख्या हो तो ग्रहहीन राशि में शून्य और ग्रहयुक्त राशि की संख्या यथावत् रखनी चाहिए (३)। यदि दोनों राशियाँ ग्रहयुक्त हों तो संशोधन नहीं करना चाहिए, यानि दोनों जगह यथावत् अंक रहने दे (४)। यदि एक ग्रहयुक्त हो और दूसरी राशि ग्रहहीन तथा दोनों की संख्या बराबर हो तो ग्रहहीन राशि के नीचे शून्य और ग्रहयुक्त राशि के नीचे वही संख्या रहेगी (५)। यदि दोनों ग्रहयुक्त वा ग्रहहीन हों अथवा दोनों में एक ग्रहयुक्त और एक ग्रहहीन हो किन्तु त्रिकोण-शोधन में किसी एक में शून्य हो तो दोनों में शून्य ही होगा (६)। कर्क और सिंह राशि के फल ज्यों के त्यों रहते हैं, इनमें एकाधिपत्य शोधन नहीं किया जाता है।।१२-१६।।

इति एकाधिपत्यशोधनम्।

अथ पिण्डोत्पत्याध्यायः

शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्धयेत्।
ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्धयेत्।।१।।

एकाधिपत्य शोधन के उपरान्त जिस राशि के नीचे जो संख्या हो उसे उस राशि के नीचे रखकर उस राशि के गुणक से गुणा करे। यदि राशि में ग्रह हो तब भी उस संख्या को उस ग्रह के गुणक से गुणा कर फल को उसके नीचे रख दे।।१।।

अथ राशि-ग्रहगुणकध्रुवाङ्कानाह—

गोसिंहौ दशगुणितौ दशभिर्मिथुनालिनौ।
वणिग्मेषौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरैः।।२।।

वृष-सिंह राशि को १० से, मिथुन-वृश्चिक को १० से, तुला और मेष को ७ से, कन्या-मकर को ५ से।।२।।

शेषाः स्वमानतो गण्या ग्रहगुणकमथोच्यते।
जीतारशुक्रसौम्यानां दशाष्टमुनिसायकाः।।३।।

और शेष राशियों को उनकी संख्या से (एकाधिपत्य शोधन के उपरान्त जो अंक जिस राशि के नीचे है उसे गुणाकर गुणन फल को राशि के नीचे रखना चाहिए। इसी प्रकार जिस राशि में जो ग्रह हो उस ग्रह के गुणक से राशि के नीचे वाले की संख्या (एकाधिपत्य शोधनोपरान्त

शेष अंक को) गुणाकर गणन फल को उस राशि के नीचे रख दे। यदि एक राशि में दो-तीन ग्रह हों तो उनके गुणकों से अलग-अलग उस संख्या को गुणाकर सभी का योगकर उस राशि के नीचे रखना चाहिए। गुरु, भौम, शुक्र और बुध का क्रम से १०,८,७,५, गुणक है।।३।।

बुधस्य संख्या शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत्क्रमात्।
सर्वेषां फलयोगोऽपि पिण्डमानं प्रकथ्यते।।४।।

इस प्रकार गुरु का १०, भौम का ८, शुक्र का ७, बुध का ५ और शेष ग्रहों का ५ गुणक है। सभी फलों के योग को पिण्ड कहते हैं।।४।।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.
गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गुणक	५	५	८	५	१०	७	५

सूर्याष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		योग		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखा	५	५	४	३	४	२	४	५	६	३	३	४	४८		
त्रिकोण शोधन	१	३	१	०	०	०	१	२	२	१	०	१	१२		
एकाधिपत्य शोधन	१	२	०	०	०	०	१	१	१	०	०	१	७		
राशिगुणन फल	७	२०	०	०	०	०	७	८	९	०	०	१२	६३	राशिपिंड	
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	५	०	०	०	०	५	ग्रहपिंड	

चन्द्राष्टवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९		
त्रिकोण शोधन	१०	१	१	०	०	१	०	३	१	०	०	५	१३		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	०	०	०	३	०	०	०	४	७		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	४२	०	०	०	४८	७२	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	१५	०	०	०	०	१५	ग्रहपिंड	८७

भौमाष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ल.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९		
त्रिकोण-शोधन	०	२	२	०	०	०	०	४	०	१	०	०	९		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		ग्रहपिंड	०

बुधाष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	४	४	६	५	५	४	४	५	४	५	४	४	५४		
त्रिकोण-शोधन	०	०	२	१	१	०	०	१	०	१	०	०	६		
एकाधिपत्य फल	०	०	०	१	१	०	०	०	०	०	०	०	२		
राशिगुणन शोधन	०	०	०	४	१०	०	०	०	०	०	०	०	१४	राशिपिंड	योग पिंड
ग्रहगुणन फल	०	०	०	५	१५	०	०	०	०	०	०	०	२०	ग्रहपिंड	३४

गुर्वष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	६	५	३	३	५	४	६	५	४	४	६	५	५६		
त्रिकोण-शोधन	२	१	०	०	१	०	३	२	०	०	३	२	१४		
एकाधिपत्य शोधन	०	१	०	०	१	०	२	२	०	०	०	०	६		
राशिगुणन फल	०	१०	०	०	१०	०	१४	१६	०	०	०	०	५०	राशिपिंड	यो पि
ग्रहगुणन फल			०	०	१५	०	०	१०	०	०	०	०	२५	ग्रहपिंड	७

शुक्राष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः	१	२	चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२		
त्रिकोण-शोधन	३	०	३	३	१	०	०	०	०	२	१	३	१६		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	३	१	०	०	०	०	१	१	०	६		
राशिगुणन फल	०	०	०	१२	१०	०	०	०	०	५	११	०	३८	राशिपिंड	योग पिंड ७३
ग्रहगुणन फल	०	०	०	१५	१५	०	०	०	०	०	८	०	३५	ग्रहपिंड	

शन्यष्टकवर्गशोधनम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		लग्न		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२			
रेखाः	७	३	४	४	२	१	२	४	५	६	१	३	४२		
त्रिकोण-शोधन	५	२	३	१	०	०	१	१	०	५	०	०	१८		
एकाधिपत्य शोधन	४	१	०	१	०	०	१	१	०	०	०	०	८		
राशिगुणन फल	२८	१०	०	४	०	०	७	८	०	०	०	०	५७	राशिपिंड	योग पिंड ६७
ग्रहगुणन फल			०	५	०	०	०	५	०	०	०	०	१०	ग्रहपिंड	

लग्नाष्टकवर्गशोधम्

जन्मकालीन ग्रहाः			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		ला. क्ष.		
राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	-		
रेखाः	६	३	५	२	५	५	३	६	३	४	४	३	४९		
त्रिकोण-शोधन	३	०	२	०	२	२	०	४	०	१	१	१	१६		
एकाधिपत्य शोधन	०	०	०	०	२	८	०	४	०	०	१	१	८		
राशिगुणन फल	०	०	०	०	२०	०	०	३२	०	०	११	१२		राशिपिंड ७५	योग पिंड ११३
ग्रहगुणन फल			०		१०			२०			८			ग्रहपिंड ३८	

प्रत्येक अष्टकवर्गों में मेषादि राशियों में कितनी-कितनी रेखायें प्राप्त हुई हैं और उनका योग क्या हुआ इत्यादि बातों को जानने के लिए सर्वाष्टक-वर्ग चक्र दिया जाता है—

सर्वाष्टकवर्गचक्रम्

राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योग
सूर्याष्टकवर्ग	५	५	४	३	४	२	४	५	६	३	३	४	४८
चन्द्राष्टकवर्ग	५	३	५	२	४	३	४	५	५	२	४	७	४९
भौमाष्टकवर्ग	३	५	४	२	३	३	२	६	३	४	२	२	३९
बुधाष्टकवर्ग	४	४	६	५	५	४	४	५	४	५	४	४	५४
गुर्वष्टकवर्ग	६	५	३	३	५	४	६	५	४	४	६	५	५६
शुक्राष्टकवर्ग	६	४	७	४	४	४	४	१	३	६	५	४	५२
शन्यष्टकवर्ग	७	३	४	४	२	१	२	४	५	६	१	३	३९
लग्नाष्टकवर्ग	६	३	५	२	५	५	३	६	३	४	४	३	४९
ग्रह			चं. शु.	सू.	बु. बृ.			श.			मं.		
योग	४२	३२	३८	२५	३२	२६	२९	३७	३३	३४	२९	३२	३८९

अष्टकवर्गयुक्तजन्माङ्गम्

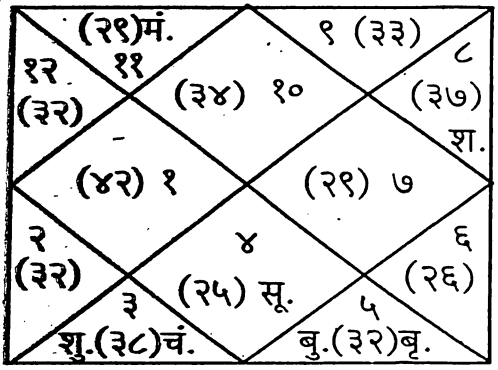

इति पिंडोत्पत्त्याध्यायः।

अथाष्टकवर्गफलाध्यायः

आत्मस्वभावशक्तिश्च पितृचिन्ता रवेः फलम्।
मनोबुद्धिंप्रसादश्च मातृचिन्ता मृगाङ्कतः।।१।।

आत्मा, स्वभाव, शक्ति और पिता का विचार सूर्य से करना चाहिए। मन, बुद्धि, प्रभाव और माता का विचार चन्द्रमा से करना चाहिए।।१।।

भ्रातृसत्त्वं गुणं भूमिं भौमेन तु विचिन्तयेत्।
वाणिज्यकर्मवृत्तिश्च बुधेन तु विचिन्तयेत्।।२।।

भाई, सत्त्वगुण, भूमि का विचार भौम से करना चाहिए। व्यापार वृत्ति का विचार बुध से करना चाहिए।।२।।

गुरुणा देहपुष्टिश्च बुद्धिपुत्रार्थसम्पदः।
भृगोर्विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम्।।३।।

गुरु से शरीर की पुष्टता, बुद्धि और पुत्र का विचार करना चाहिए। शुक्र से विवाह, भोगस्थान, वाहन।।३।।

वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैव निरीक्षयेत्।
आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकं महद्भयम्।।४।।

वेश्या का विचार करना चाहिए। आयुष्य, जीविका, दुःख, शोक, भय।।४।।

सर्वक्षयं च मरणं मन्देनैव निरीक्षयेत्।
रविः पिता शशी माता भ्राता भौमो बुधः सुहृत् ।।५।।

सर्वनाश और मृत्यु का विचार शनि से करना चाहिए। रवि पिता कारक बुध है।।५।।

मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये स्त्रियः सितः।
एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरुते शनिः।।६।।

ज्ञान, गुण का कारक गुरु और स्त्री (पत्नी) का कारक शुक्र है। इनकी राशि में जब शनि जाता है तो इन लोगों को कष्ट होता है।।६।।

तत्तद्भावजफलेन च गुणितं योगैक्यपिण्डं फलम्।
विंशत्या सह सप्तभिश्च विहतं तच्छेषताराशनौ।।७।।

जिन भावों का विचार करना हो उन २ भावों के फल (अष्टक वर्ग की रेखा) को उस ग्रह के योगपिंड को गुणाकर गुणनफल में २७ का भाग देने से जो शेष बचे तत्तुल्य अश्विनी से गिनने से जो नक्षत्र आवे उस पर जब शनि आता है।।७।।

ततः स्याज्जननीं सहोदरजवो बन्धुःसुतः स्त्री स्वयम्।
तत्तुल्यं विलयं प्रयाति विपुलं श्रीनाथहेतुश्च वा।।८।।

तब पिता, माता, भाई, बंधु, पुत्र, स्त्री आदि को कष्ट होता है अथवा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।।८।।

सूर्याष्टकवर्गफलम्—

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु।
अर्कस्थितात्तु नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम्।।९।।

सूर्याष्टक वर्ग का व्यास ग्रह सहित करे। सूर्य से नवम स्थान पिता का होता है।।९।।

तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्धयेद्योगपिण्डकम्।
सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुज।।१०।।

उस राशि के फल को (रेखा को) योगपिंड से गुणाकर गुणनफल में २७ का भाग देने से जो शेष हो, तत्संख्या के तुल्य अश्विनी से गिनने से जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र पर जब शनि जाता है।।१०।।

तस्मिन् काले पितृकष्टो भवतीति न संशयः।
तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपि वा।
मरणं तस्य जानीयाद्दशा छिद्रेषु कल्पयेत्।।११।।

तो उस समय पिता को कष्ट होता है, इसमे संदेह नहीं। अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण में (१०वें, ९वें नक्षत्र) जब शनि होता है तब पिता या पिता के तुल्य (चाचा आदि) का मरण होता है। उस समय की दशा को छिद्रदशा कहते हैं।।११।।

अथ पित्रोररिष्टकालमाह—

अर्कभात्तु तुर्यगे राहौ मन्दे वा भूमिनन्दने।
गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः।।१२।।

सूर्य से चौथे स्थान में राहु, शनि, भौम में से कोई हो और गुरु-शुक्र से न देखा जाता हो तो पिता को अरिष्टकारक होता है।।१२।।

लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि।
पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते।।१३।।

लग्न वा चन्द्रमा से नवम स्थान में जिस समय शनि हो और पापग्रह से युत तथा देखा जाता हो तो उस समय पिता का मरण कहे।।१३।।

दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः।
लग्नात्सुखेश्वरानिष्टदशायां च पितृक्षयः।।१४।।

यदि अनुकूल दशा हो तो अरिष्ट नहीं होता है। लग्न से सुखेश (चतुर्थेश) की अनिष्ट दशा में भी पिता का नाश होता है।।१४।।

पितृकर्मकर्त्ता योगः—

पितृजन्माष्टभे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा।
तेनैव पितृकर्माणि कारयेन्नात्र संशयः।।१५।।

पिता के जन्मलग्न से आठवीं राशि में जन्म हो और उस राशि के स्वामी लग्न में हों तो वह पिता के कर्म को करने वाला होता है।।१५।।

अथ पितृसुखयोगः—

सुखनाथदशायं तु बहुप्राप्तेश्च सम्भवः।
सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः।।१६।।

सुखेश की दशा में अधिक सुख पाने की संभावना होती है। सुखेश ११ वें भाव में हो अथवा चन्द्रमा से ११वें वा दशम भाव में हो तो जातक पिता के वश में रहने वाला होता है।।१६।।

पितृगृहे समायुक्ते जातः पितृवशानुगः।
पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः।।१७।।

पिता के जन्मलग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो वह पिता के धन का आश्रित होता है।।१७।।

पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः।
तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेष्ठो भवेन्नरः।।१८।।

पिता के जन्मलग्न से १०वीं राशि में उत्पन्न हो तो जातक पिता के गुणों के सदृश गुण वाला होता है और दशम राशि का स्वामी लग्न में हो तो पिता से श्रेष्ठ होता है।।१८।।

अथ विशेषफलमाह—

सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं मासे तद्दिवसेऽपि वा।
विवाहव्यवहारादि मासेऽस्मिन्वर्जयेत्सदा।।१९।।

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में शून्य हो उस राशि संबंधी मास और दिन में विवाह आदि शुभ कार्य, व्यवहार आदि न करे।।१९।।

कलहोत्पातदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च।
संशोध्यपिण्डं सूर्यस्य रन्ध्रमानेन वर्धयेत्।।२०।।

शून्य वाले मास में कलह, उत्पात आदि दुःख होते हैं। सूर्य के पिंड का शोधन कर अष्टम स्थान की फल रेखा से योगपिंड को गुणाकर।।२०।।

द्वादशहृतावशेषं मेषादिगणयेत्पुनः।
तस्मिन्मासे मृतिं विद्यात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा।।२१।।

उसमे १२ से भाग दे, शेष मेषादि से गिनने से जो राशि हो उस राशि के मास में अरिष्ट होता है अथवा उससे त्रिकोण राशि के मास में अरिष्ट होता है।।२१।।

इति सूर्याष्टकवर्गफलविचारः।

अथ चन्द्राष्टकवर्गफलविचारः—

चन्द्राच्चतुर्थगे मातुः प्रासादग्रामचिन्तनम्।
चन्द्राष्टवर्गे यच्छून्यं तत्र राशिगते विधौ।।२२।।

चन्द्रमा से चौथे माता, गृह, ग्राम का विचार करना चाहिए। चन्द्राष्टक वर्ग में जिस राशि में शून्य हो उस राशि में जब चन्द्रमा हो।।२२।।

तत्रक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत्।
चन्द्राष्टमेशनक्षत्रे त्रितयेषु विशेषतः।।२३।।

अथवा वह राशि जिन २ नक्षत्रों से बनती है उन २ नक्षत्रों पर जब चन्द्रमा हो तो शुभ कर्म नहीं करना चाहिए। चन्द्रमा से अष्टमेश जिस नक्षत्र पर हो, उससे त्रिकोण के दो नक्षत्र अर्थात् इन तीनों नक्षत्रों पर।।२३।।

आयामव्याधिदुःखानि लभते नात्र संशयः।
चन्द्रात्सुखफलात्पिण्डं वर्धयेत्सप्तद्विभाजयेत्।।२४।।

आयाम- व्याधि और दुःख की प्राप्ति होती है। चन्द्रमा से चौथे स्थान के फल को चन्द्राष्टक वर्ग के पिंड को गुणाकर गुणन फल में २७ का भाग देने से।।२४।।

शेषमृक्षे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत्।
तत्त्रिकोणेषु वा केचिन्मातृकष्टं समादिशेत्।।२५।।

शेष तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में शनि के रहने से माता की हानि होती है अथवा उससे त्रिकोण के नक्षत्रों पर शनि के रहने से माता को कष्ट होता है।।२५।।

उदाहरण– जैसे चन्द्रमा मिथुन राशि में है, उससे अष्टम मकर राशि के स्वामी शनि विशाखा नक्षत्र के चौथे चरण में वृश्चिक राशि में हैं, अतः विशाखा, शतभिषा और पुनर्वसु में आयामादि फल होंगे। चन्द्रमा से चौथे स्थान में फल ३ है, इससे योगपिंड ८७ को गुणने से २६१ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से १८ शेष हुआ। अश्विनी से गिनने से १८वाँ ज्येष्ठा नक्षत्र हुआ, अतः ज्येष्ठा नक्षत्र पर जब शनि आयेगा तो माता की हानि होगी।

इति चन्द्राष्टकवर्गफलम्।

अथ भौमाष्टकवर्गफलम्—

भौमाष्टवर्गे सञ्चिन्त्यं भ्रातृविक्रमधैर्यकम्।
भौमस्थितस्य सहजो राशिर्भ्रातृगृहं स्मृतम्।।२६।।

भौम के अष्टक वर्ग से भाई, पराक्रम, धैर्य का विचार करना चाहिए। भौम जिस राशि पर हो उससे तीसरी राशि भाई की होती है।।२६।।

त्रिकोणशोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि वै फलम्।
भूमेर्भवति भार्याया भ्रातृगेहसुखं तथा।।२७।।

त्रिकोण-शोधन के उपरान्त जिस राशि के नीचे अधिक फल हों उस राशि पर जब भौम जाता है तब भूमि, स्त्री, भाई और गृह का सुख होता है।।२७।।

भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातृको भवेत्।
फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्र भौमे स्थिते क्षतिः।।२८।।

यदि भौम निर्बल हो तो भाई दीर्घायु होते हैं। जिस राशि में फल शून्य हो उस राशि में भौम के रहते समय भाई को कष्ट होता है।।२८।।

तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्धयेत्पिण्डं च पूर्ववत्।
शेषमृक्षं शनौ याते भ्रातृहानिर्विनिर्दिशेत्।।२९।।

भौम से तीसरी राशि के रेखा से योगपिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से जो शेष नक्षत्र हो उस पर शनि के रहने से भाई को कष्ट होता है।।२९।।

उदाहरण— मंगल कुम्भ राशि में है, उससे तीसरी राशि मेष है, उसमें ३ रेखा है, उससे योगपिंड शून्य ० को गुणाकर २७ का भाग देने से शून्य शेष बचा। अतः रेवती नक्षत्र पर शनि के रहने से वा इससे त्रिकोण (५,९) नक्षत्र पर शनि के रहने से भाई को कष्ट होगा। इसी प्रकार १२ से भाग देने से शेष ० अर्थात् मीन राशि पर अथवा उससे त्रिकोण कर्क, वृश्चिक पर शनि के होने से भाई को कष्ट होगा।

इति भौमाष्टकवर्गफलम्।

अथ बुधाष्टकवर्गफलम्—

बुधात्तुर्ये कुटुम्बं च धनमित्रादिमातुलाः।
तत्पञ्चमे मन्त्रविद्यालिपिबुध्यादि चिन्तयेत्।।३०।।

बुध से चौथे भाव में कुटुम्ब, धन, मित्र, मामा का विचार और उससे पाँचवें भाव में मन्त्रणा, विद्या, लेख और बुद्धि का विचार करना चाहिए।।३०।।

बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ।
लभते कुटुम्बकादीनां विनाशं नात्र संशयः।।३१।।

बुधाष्टक वर्ग का संशोधन करके पूर्ववत् योगपिंड द्वारा नक्षत्र एवं राशि का ज्ञान कर कुटुम्बादि के दुःख-सुख आदि को समझना चाहिए।।३१।।

उदाहरण— बुध सिंह राशि में है, इससे चौथी वृश्चिक राशि में ५ रेखा है। इसे योगपिंड ३४ से गुणा कर २७ का भाग देने से शेष ८वाँ पुष्य नक्षत्र पर अथवा इससे त्रिकोण (५-९) नक्षत्र पर शनि के रहने से कुटुम्बादि को दुःख होगा। वा गुणनफल में १२ से भाग देने पर शेष २ वृष राशि अथवा इससे त्रिकोण पर शनि के रहने से कुटुम्बादि को दुःख होगा।

इति बुधाष्टकवर्गफलम्।

अथ गुर्वष्टकवर्गफलम्—

जीवात्पञ्चमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम्।
गुरुस्थितं सुतस्थाने यावच्च विद्यते फलम्।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावन्तः सन्ततिर्भवेत्।।३२।।

गुरु से पाँचवें भाव में ज्ञान, पुत्र, धर्म, धन आदि का विचार करना चाहिए। गुरु से पाँचवें भाव में जो फल (रेखा) है यदि वह राशि (पाँचवीं) गुरु के शत्रु वा नीच की न हो तो उतनी ही संतान होती है।।३२।।

संख्या नवांशतुल्या वा तदीशस्था नवा पुनः।
सुतमेशनवांशैश्च समानावपि कल्पयेत्।।३३।।

अथवा पंचमेश स्थित भाव के नवांश की संख्या तुल्य वा पंचमेश के नवांश की संख्या तुल्य संतान होती है।।३३।।

गुरोः सुतात्फलेनैव पिण्डात्संवर्ध्य पूर्ववत्।
शेषभं च गते सौरे पुत्रकष्टं न संशयः।।३४।।

गुरु से पाँचवें भाव के फल से गुरु के योगपिंड को गुणाकर २७ से भाग देने से शेष तुल्य नक्षत्र पर वा उससे त्रिकोण के नक्षत्र पर शनि के होने से पुत्र को कष्ट होता है।।३४।।

इति गुर्वष्टकवर्गफलम्।

अथ शुक्राष्टकवर्गफलम्—

मृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु।
येषु येषु फलानि स्युर्भूयांसि किल तत्र तु।।३५।।

ग्रहों के सहित शुक्र के अष्टकवर्ग को रखकर जिन-जिन राशियों में अधिक फल हों।।३५।।

भूमिं कलत्रं वित्तं च तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम्।
शुक्राज्जामित्रतो लब्धिं दारेशान्वितदिग्भवा।।३६।।

उसके अनुसार मनुष्यों को भूमि, स्त्री, धन और देश का आदेश करना चाहिए। शुक्र से ७वें स्थान के देश में वा सप्तमेश के देश में स्त्री का लाभ होता है।।३६।।

दाराधिपस्थितं क्षेत्रं दाराजन्मर्क्षकं विदुः।
तस्यांशके त्रिकोणे वा दाराजन्मर्क्षकं विदुः।।३७।।
मन्दाशे मन्दसंयुक्ते मन्दक्षेत्रेऽथवा भृगौ।
नीचांशे मन्दसंयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति।।३८।।

दारेश जिस राशि में हो वही राशि स्त्री की होती है। अथवा उसके नवांश की राशि वा उसके त्रिकोण की राशि स्त्री की राशि होती है।।३८।।

भौमांशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽपि वा।
भौमेन युतदृष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति।।३९।।

शुक्र शनि के नवांश में हो और शनि से युत हो अथवा शनि की राशि में हो, अपने नीचांश में पापग्रह से युक्त हो तो नीच स्त्री की इच्छा होती है। शुक्र भौम के नवांश में हो अथवा भौम की राशि में हो और भौम से युत वा देखा जाता हो तो परस्त्रीगामी होता है।।३९।।

जामित्रे मन्दभौमांशे तदीशे मन्दभौमभे।
वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः।।४०।।

सप्तम स्थान में शनि वा भौम का अंश हो और उसके स्वामी शनि वा भौम की राशि में हो तो उसकी स्त्री वेश्या वा जारिणी होती है।।४०।।

शुक्रजामित्रतो लब्धिस्त्रिकोणा द्देशदिक्स्त्रियः।
भृगुदारेशयुक्तर्क्षं फलसंख्या स्त्रियो विदुः।।४१।।

शुक्र से सातवें स्थान के अनुसार वा उससे त्रिकोण राशि के अनुसार देश, दिशा, स्त्री का कहना चाहिए। शुक्र से सप्तमेश से युत राशि के फल की संख्या तुल्य स्त्री की संख्या कहनी चाहिए।।४१।।

शुक्रांशकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता।
भवेच्छशाङ्कतुल्या वा दारेशस्य गुणान्विता।।४२।।

शुक्र के नवांश के सदृश वर्ण-रूप-गुण के युक्त वा चन्द्रमा के नवांश सदृश वा सप्तमेश के गुण के अनुरूप स्त्री होती है।।४२।।

शुक्रान्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम्।
तेषां बलविवेकेन भार्याया लक्षणं वदेत्।।४३।।

शुक्र से शनि त्रिकोण में हो तो स्त्री का सुख नहीं होता है और गुरु हो तो स्त्री का सुख होता है। इनके बल के अनुसार ही स्त्री के सुख-दुःख का विवेचन करना चाहिए।।४३।।

शुक्राज्जामित्रफलैः संवर्ध्य पिण्डञ्च पूर्ववत्।
स्त्रियः दुःखं सुखं ज्ञेयं पूर्वरीत्यनुसारतः।।४४।।

शुक्र से सातवें भाव के फल को पूर्ववत् शुक्र के योगपिंड से गुणा कर गुणनफल में २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र पर जब शनि जावे तो स्त्री को कष्ट कहना।।४४।।

इति शुक्राष्टकवर्गफलम्।

अथ शन्यष्टकवर्गफलम्—

शनैश्चरस्थितस्थानादष्टमं मृतिरुच्यते।
शनेरष्टकवर्गे च स्वस्यायुष्यं विनिर्दिशेत्।।४५।।

शनि जिस भाव में हो उससे आठवें स्थान में आयु का विचार करना चाहिए।।४४।।

लग्नात्प्रभृति मन्दान्तं फलान्येकत्र कारयेत्।
लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिवैरं समादिशेत्।।४६।।

लग्न से आरम्भ कर शनि पर्यन्त रेखाओं का योग करे। योग तुल्य वर्ष में शरीर में व्याधि और लोगों से वैर, विदेश यात्रा, धन की हानि होती है।।४६।।

मन्दाद्विलग्नपर्यन्तं फलान्येकत्र संयुतम्।
मन्दादिफलतुल्याब्दे व्याधिं तस्य समादिशेत्।।४७।।

शनि से लग्न पर्यन्त रेखाओं का योग करे। योग तुल्य वर्ष में पूर्व के तुल्य ही वर्ष में व्याधि आदि फल होते हैं।।४७।।

तयोर्योगसमाङ्के तु मृत्युयोगं प्रचक्षते।
शोध्यादि गुणनं कृत्वा पिण्डं संस्थाप्य यत्नतः।।४८।।

अष्टमस्य फलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम्।
शतादूर्ध्वं तत्पिण्डं शतमेवाग्रतस्त्यजेत्।।४९।।

दोनों के योग तुल्य वर्ष में मृत्युयोग वा व्याधि आदि फल होते हैं। शनि के त्रिकोणादि शोधन से उत्पन्न योगपिंड लग्न से अष्टम स्थान के फल से गुणाकर २७ से भाग देने पर शेष १०० से अधिक बचे तो उसमें से १०० घटाकर शेष तुल्य आयु होती है।।४९।।

आयुःपिण्डं तु जानीयात्प्राग्वद्वेलां तु कल्पयेत्।
त्रिकोणैकाधिपत्यादि शोधनं विरचय्य च।।५०।।
पिण्डं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः।
सप्तविंशतिहच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः।।५१।।
समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फलं गृहे।
तत्र नास्ति फलं तस्य यदायाति शनैश्चरः।।५२।।

इस प्रकार आयुपिंड को जानकर समय का निश्चय करे। एकाधिपत्य आदि शोधन बनाकर शनि के सम्पूर्ण अष्टकवर्ग में जिस राशि का फल न हो अर्थात् शून्य हो तो उस राशि में जब शनि होता है तो उसका कोई फल नहीं होता है।।५०-५२।।

तद्गृहे रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृतिं वदेत्।
दशाछिद्रसमायोगे मृत्युरेव न संशयः।।५३।।

तथा उस राशि में जब सूर्य-चन्द्र होते हैं और अनिष्टकारी दशा होती है तो मृत्यु होती है, इसमें सन्देह नहीं।।५३।।

विलग्नशनिमध्यगानि च फलानि सन्ताडयेन्नगै-
र्भविहतानि शेषमितर्क्षे खले याति चेत्।
तदा धनसुखक्षतिं तदनु चाङ्गभादष्टमस्थितै-
र्विगुणयेत्पिण्डं भपरिशेषभस्थे शनौ।।५४।।

लग्न से शनि पर्यन्त फलों को सात ७ से गुणाकर २७ से भाग देने पर शेष तुल्य नक्षत्र पर पापग्रह के रहने से सुख की हानि होती है। लग्न से अष्टम स्थान के फल से शनि के योगपिंड को गुणाकर २७ का भाग देने से शेष तुल्य नक्षत्र अथवा कोण नक्षत्र (५।९) पर शनि के होने से सुख-धन की हानि होती है।।५४।।

उदाहरण— लग्न से शनि पर्यन्त क्रम से ६+१+३+७+३+४+२+१+२=२९ रेखाओं का योग २९ हुआ। तत्तुल्य वर्ष अर्थात् २९वें वर्ष में शरीर में व्याधि, विदेशयात्रा, धन की हानि होगी एवं शनि से लग्न पर्यन्त रेखाओं के योग ४+५=९ तुल्य वर्ष में पूर्ववत् कष्ट आदि फल होगा। दोनों के योग तुल्य ३८वें वर्ष में पूर्ववत् कष्ट आदि फल होंगे। अथवा शनि के योगपिंड ६७ को लग्न से आठवें भाव की रेखा संख्या ५ से गुणने पर ३३५ हुआ। इसमें २७ का भाग देने पर शेष ११ हुआ, अश्विनी से गिनने से पूर्वाफाल्गुनी वा इससे त्रिकोण स्वाती, मूल नक्षत्र पर जब शनि होंगे तो कष्ट होगा। लग्न से शनि पर्यन्त रेखा की संख्या २९ इसे ७ से गुणने से २०३ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से शेष १४ के तुल्य चित्रा नक्षत्र हुआ। इस पर पापग्रह के रहने से धन-सुख की हानि होगी।

इति शनेरष्टकवर्गफलम्।

सर्वाष्टकवर्ग (समुदायाष्टकवर्ग) फलम्—

सर्वाष्टकग्रहफलैश्च नियोज्यचक्रं
मूर्त्यादिभावमशुभं शुभमेव तत्र।
जन्मादितः फलसमानदशा समीक्ष्य
यात्राविवाहसमये बहुमूलयुक्ता।।५५।।

सभी ग्रहों के अष्टक वर्ग की रेखाओं के योग से सर्वाष्टक वर्ग बनता है (पृ. ३१८ में देखिए)। इसमें लग्न से द्वादश भाव की राशियों को देखना चाहिए। जिस राशि में रेखा अधिक हो उसकी दशा में यात्रा, विवाह आदि करने से अधिक शुभफल होता है।।५५।।

मेषादिभानां सकलाष्टवर्गे
उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात्।
धृत्यादि तत्त्वान्तमितं कनिष्ठं
त्रिंशावसानं किल मध्यवीर्याः।।५६।।

सर्वाष्टकवर्ग में जिस राशि में १८ से कम रेखा हो वह कष्टप्रद और २५ तक रेखा हो तो कनिष्ठ फल, ३० पर्यन्त मध्यफल।।५६।।

त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः
शरीरसौख्यार्थयशो विशेषाः।

स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः
क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः।।५७।।

और इसके बाद जितनी रेखा हो वह शुभप्रद राशि होती है। उस राशि की दशा में शरीर का सुख, यश और धन का विशेष लाभ होता है। अपने-अपने अष्टकवर्ग में जिस राशि में ४ से कम रेखा होती है वह राशि कष्टप्रद और ४ से अधिक रेखावाली राशि सुखप्रद होती है।।५७।।

दशमभवनरेखाभ्योऽधिकं लाभमानं
भवति यदि विहीनं स्याद्व्ययाख्यं ततोऽपि।
अधिकतरविलग्नं भोगसम्पत्तिभूयः
विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य।।५८।।

दशम भाव की रेखा से अधिक लाभ भाव में रेखा हो और लाभ भाव से अल्प द्वादशभाव में तथा इससे अधिक लग्न भाव में रेखा हो तो वह जातक अधिक धन-संपत्तिवाला होता है। यदि इससे विपरीत हो तो विपरीत फल होता है।।५८।।

प्राग्दाक्षिण्यादिभानां सकलफलयुतिं दिक्चतुष्कक्रमेण
कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभनं हानिमल्पात्।
सौम्याः स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुते दिग्विभागे स्वकार्ये
वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः।।५९।।

लग्नादि भावों को प्राग्दक्षिण क्रम से अर्थात् लग्न, द्वादश, एकादश भाव की पूर्वदिशा; दशम, नवम, अष्टम भाव की दक्षिणदिशा; सप्तम, षष्ठ, पंचम भाव की पश्चिम दिशा और चतुर्थ, तृतीय और द्वितीय भाव की उत्तर दिशा कल्पना करें। दिशा के प्रत्येक भावों की रेखाओं का योग करके एकत्र रख दे। जिस दिशा में अधिक रेखा हो और उसमे शुभग्रह युत हों, अपनी उच्च राशि में हों तो उस दिशा से धन का लाभादि होता है। धनेश की दिशा से धन का लाभ और अष्टमेश की दिशा में शरीर में क्लेश होता है, यह यात्रा में देखना चाहिए।।५९।।

अथ भावफलम्—

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकंयत्तद्राशिसम्भवफलैश्चतदुक्तपिण्डम्।
पिण्डेरेखाताडिते भावशेषे राशौ यदायाति सौरिः समायाम्।।६०।।

शुभ-अशुभ भावों को देखकर उनकी राशियों के रेखापिंड को रेखा से गुणाकर १२ का भाग देने से शेष तुल्य राशि पर जब शनि जाता है।।५९।।

यस्यां तत्तद्भावहानिं च विद्यात्
पूर्वे अंशे वाथवा तत्त्रिकोणे।
कृत्वा बिन्दुभ्यस्तु कालं सुधीमां-
स्तस्मात् वाच्यः प्राप्तिकालः शुभत्वे।।६१।।

उस वर्ष में राशि संबंधी भाव की हानि होती है अथवा उस राशि से त्रिकोण राशि में जब शनि जाता है तब भी उस भाव को हानि होती है। यदि भाव शुभ है तो रेखा से भिन्न भाव के बिन्दुओं से उस भाव के शुभ फल की प्राप्ति के समय को कहना चाहिए।।६०।।

अथारिष्टसमयज्ञानमाह—

मृत्युभावेशभात्कोणनिघ्नं फलं मृत्युजं सूर्यशेषर्क्षयुक्ते रवौ।
तत्त्रिकोणेऽथवारिष्टमासं वदेत्तातमातुर्गृहाद्येऽथवा कल्पयेत्।।६२।।

अष्टमेश जिस राशि में है उस राशि के त्रिकोण-शोधन से उत्पन्न फल को अष्टम भाव स्थित फल से गुणाकर उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि पर अथवा उससे त्रिकोण राशि पर सूर्य के आने से उस मास में अरिष्ट होता है।।६२।।

अवस्थापरत्वेन शुभाशुभविचारः—

मीनाद्यं मिथुनान्तकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः
कर्काद्यं वणिजान्तकं तरुणता संज्ञं च मध्यं बुधैः।
कुम्भान्तं स्थविराह्वयं च बहुभिर्यत्तत्फलैः संयुतं
तत्सौख्यार्थविशेषकं बलयुतेनैतद्विशेषाच्छुभम्।।६३।।

मीन राशि से मिथुन पर्यन्त चार राशियों की प्रथम (बाल्यावस्था) अवस्था होती है। कर्क राशि से तुला पर्यन्त चार राशियों की तरुण (युवावस्था) अवस्था होती है। वृश्चिक राशि से कुम्भ पर्यन्त चार राशियों की स्थविर (वृद्धावस्था) अवस्था होती है। जिन-जिन अवस्था के रेखाओं का योग अधिक हो उन-उन अवस्थाओं में सुख होता है।।६३।।

विशेष— जैसे सर्वाष्टकवर्गचक्र में—

	राशयः	फलानि	योगः
(१)	—१२+१+२+३=	३२+४२+३२+३८=	१४४
(२)	४+५+६+७=	२५+३२+२६+२९=	११२
(३)	८+९+१०+११=	३७+३४+३।४+२९=	१३३
			३८९

प्रथम अवस्था में १४४ रेखा है, अतः प्रथम अवस्था सुखमय व्यतीत होगी। क्योंकि लग्न सहित सप्तग्रहों की सम्पूर्ण रेखाओं का योग ३८९ है, इसका खंडत्रय करने से १२९ होता है। इससे अल्प रेखा में कष्ट आदि की संभावना होती है। इसी प्रकार युवावस्था में ११२ रेखा है, अतः कुछ कष्ट से व्यतीत होगा। वृद्धावस्था में १३३ रेखायें हैं, अतः वृद्धावस्था सुखमय व्यतीत होगी।

अथ राहुयुक्तगुरुफलम्—

राहुयुक्तगुरुराशिगे गुरौ तत्त्रिकोणमथ रिष्टकारकम्।
अल्पमृत्युरिपुभावनाथको योगकृत्तदिह मृत्युसम्भव।।६४।।

राहु से युक्त गुरु की राशि में गुरु हो अथवा उससे त्रिकोण की राशि में हो तो अरिष्टकारक होता है। यदि षष्ठेश योग करता हो तो मृत्यु होती है।।६४।।

अथ निधनार्कमाह—

मृत्युपद्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः।
अर्कलिप्ताहतो राहुलिप्तागणश्चक्रलिप्ताप्तयुक्तो रविर्मृत्युदः।।६५।।

अष्टम स्थान का स्वामी जिस द्वादशांश में हो उससे त्रिकोण राशि में जब राहु जाये तो उससे (अष्टमेश राशि के) त्रिकोण राशि में सूर्य के जाने से मृत्यु होती है। सूर्य की कला-विकला को राहु की कला-विकला से गुणाकर गुणनफल में चक्रकला (२१६००) से भाग दें, जो लब्ध हो उसे सूर्य की कला में जोड़ दें। उसका राश्यादि बनावे, उसके तुल्य सूर्य जिस मास में हो उस मास में मृत्यु होती है।।६५।।

भौममार्त्तण्डलिप्ताहतिः कारयेच्चक्रलिप्ताहृताल्लब्धयुक्तो रविः।
यातियस्मिंस्तदातत्त्रिकोणेऽपिवाक्लेशमाहुःक्षयंमासिधीमान्वदेत्।।

भौम की कला को सूर्य की कला से गुणा कर दे, गुणनफल में २१६०० से भाग दें, लब्ध को सूर्य की कला में जोड़ दे। योगफल का राश्यादि

बनावे, उस राश्यादि के तुल्य सूर्य जिस मास में हों, उस मास में क्लेश अथवा मृत्यु कहना।।६५।।

उदाहरण— सूर्य ३।१८।२६ इसका कला बनानें से ६५०६ हुआ। राहु ७।१३।२७ इसका कला १३४०७ हुआ। सूर्य के कला से राहु के कला को गुणने से गुणनफल ८७२२५९४२ हुआ। इसमें २१६०० का भाग देने से लब्ध ४०३८ हुआ। इसे सूर्य की कला में जोड़ने से १०५४४ हुआ। इसमें ६० का भाग देने से लब्ध १७५ अंश और शेष ४४ कला हुआ। अंश में ३० का भाग देने से ५ राशि २५ अंश और ४४ कला हुआ। इसके तुल्य राश्यादि सूर्य जब जिस मास में होगा उस मास में मृत्यु होगी।

मंगल राश्यादि १०।२२।३२ इसका कला १९३२० हुआ। इसे सूर्य के कला ६५०६ से गुण दिया तो गुणनफल १२५६९५९२० हुआ। इसमें २१६०० से भाग देने से लब्धि ५८१९ हुई। इसे सूर्य के कला में जोड़ देने से १२३२५ कला हुआ। इसका राश्यादि बनाने से ६।२५।२५ हुआ। इसके तुल्य सूर्य जब होवें उस समय कष्ट वा मृत्यु कहना।

अथ निधनचन्द्रमाह—

अष्टमेशत्रिकोणे विधुः स्याद्यदा योगमिन्दौ तथा तन्नवांशेऽपि वा।
तत्त्रिकोणे प्रयाते मृतिं निर्दिशेन्निश्चयात्स्वल्परेखोद्भवेवासरे।।

अष्टमेश जिस राशि में है उससे त्रिकोण राशि में जब चन्द्रमा होता है अथवा अष्टमेश जिस नवांश में है उससे त्रिकोण राशि में जब चन्द्रमा हो और उस दिन अल्प रेखा हो तो उस दिन मृत्यु होती है।।६६।।

अथ सशान्तिकरेखाफलम्—

रेखाभिः सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणां भवेत्।
सुवर्णं विंशतिपलं दद्याद् द्वौ तिलपर्वतौ।।६७।।

जिस राशि में सात रेखायें हों उस राशि के सूर्य में जातक को कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए २० तोला सोना और २ तिल के पर्वत दान करना चाहिए।।६७।।

रेखाभिर्वसुभिर्जाते शीघ्रं मृत्युवशो नरः।
असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम्।।६८।।

जिस राशि में ८ रेखायें हों उस मास में मृत्यु तुल्य कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए कपूर का तुलादान करना चाहिए।।६८।।

रेखाभिर्नवभिः सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम्।
अश्वैश्चतुर्भिः संयुक्तं रथं दद्याच्छुभाप्तये।।६९।।

नव रेखाएँ जिस राशि में हों उस मास में सर्प का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए ४ घोड़ों के सहित रथ का दान करना चाहिए।।६९।।

रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणांस्त्यजति मानवः।
दद्याच्छुभफलावाप्त्यै कवचं वज्रसंयुतम्।।७०।।

जिस राशि में दस रेखाएँ हों तो उस मास में शस्त्र से भय होता है। इसकी शान्ति के लिए वज्र ही से युक्त कवच का दान करना चाहिए।।७०।।

रुद्रैः प्राप्याभिशापं च प्राणैर्युक्तो भवेन्नरः।
दिक्पलैः स्वर्णघटितां प्रदद्यात्प्रतिमां विधोः।।७१।।

जिस राशि में ११ रेखाएँ हों तो उस मास में अभिशाप से मृत्युभय होता है। उससे बचने के लिए १० तोले सुवर्ण की चन्द्रमा की प्रतिमा को दान करें।।७१।।

आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृतिं वदेत्।
भूमिं दद्यात्ब्राह्मणाय दाने शुभफलं भवेत्।।७२।।

जिस राशि में १२ रेखायें हों उस मास में जल से मृत्युभय होता है। उसकी शान्ति के लिए भूमि का दान करना चाहिए।।७२।।

त्रयोदशमितैर्व्याघ्रान्मानवो मृत्युमाप्नुयात्।
विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दानं कुर्याच्छुभाप्तये।।७३।।

जिस राशि में १३ रेखायें हों उस मास में व्याघ्र का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए विष्णु की हिरण्यगर्भ प्रतिमा (शालिग्राम) का दान करना चाहिए।।७३।।

अचिराज्जीवितं जह्याच्छक्रैः कालेन भक्षितः।
वराहप्रतिमां दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम्।।७४।।

जिस राशि में १४ रेखाएँ हों तो उस मास में अधिक कष्ट होता है। उसकी शान्ति के लिए सुवर्ण की वाराह की प्रतिमा का दान करना चाहिए।।७४।।

राज्ञो भयं तिथिमितैस्तत्र हस्ती प्रदीयते।
रिष्टं भूपैः कल्पतरोः प्रतिमां च निवेदयेत्।।७५।।

जिस राशि में १५ रेखाएँ हों उस मास में राजभय की संभावना होती है। इसकी शान्ति के लिए हाथी का दान करना चाहिए। जिस राशि में १६ रेखा हों उस मास में कष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिए कल्पतरु की प्रतिमा का दान करे।।७५।।

कृषिचक्रैर्व्याधिभयं गुडधेनुं निवेदयेत्।
कलाहोऽष्टेन्दुभिर्दद्याद्रत्नगोभूहिरण्यकम्।।७६।।

जिस राशि में १७ रेखा हों उस मास में व्याधि का भय होता है। उसके शान्त्यर्थ गुड़ के धेनु का दान करें। जिस राशि में १८ रेखा हों उस मास में कलह होने का भय होता है। उसकी शान्ति के लिए गौ, भूमि, रत्न और सुवर्ण का दान करना चाहिए।।७६।।

देशत्यागोऽङ्कचन्द्रैः स्याच्छान्तिं कुर्याद्विधानतः।
विंशत्या बुद्धिनाशः स्यात्कुर्याल्लक्षमितं जपम्।।७७।।

जिस राशि में १९ रेखा हों उस मास में देश के त्यागने का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए विधिपूर्वक शान्ति करनी चाहिए। जिस राशि में २० रेखा हों उस मास में बुद्धि का नाश होता है। इसकी शान्ति के लिए १ लक्ष जप करना चाहिए।।७७।।

भूमिपक्षै रोगपीडा दद्यात् धान्यस्य पर्वतम्।
यमाश्विभिर्वन्थुपीडा दद्यादादर्शकं बुधः।।७८।।

जिस राशि में २१ रेखा हों उस मास के रवि में रोग और पीड़ा होती है। उसकी शान्ति के लिए धान्य का पर्वत देना चाहिए। जिस राशि में २२ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बन्धुओं को पीडा होती है। उसकी शान्ति के लिए आदर्श (ऐनक) का दान करना चाहिए।।७८।।

रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशान्प्रपद्यते।
सौवर्णीं प्रतिमां दद्याद्रवेः सप्तपलैः क्रमात्।।७९।।

जिस राशि में २३ रेखा हों उस राशि के रवि में अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। उसकी शान्ति के लिए सूर्य की सोने की सात तोले की प्रतिमा देनी चाहिए।।७९।।

वेदाश्विभिर्बन्धुहीनो दद्याद्गोदानकं दश।
सर्वरोगादिनाशार्थं जपहोमादि कारयेत्।।८०।।

जिस राशि में २४ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बन्धुओं का नाश होता है। उसके शान्त्यर्थ १० गोदान करना चाहिए और सभी रोगों के शान्त्यर्थ जप-होम आदि करना चाहिए।।८०।।

शराश्विभिस्तथा विद्वन्प्रज्ञा मन्दोऽभिजायते।
ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा।
धनक्षयः स्यान्नक्षत्रैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत्।।८१।।

जिस राशि में २५ या २६ रेखा हों उस राशि के सूर्य में बुद्धि मंद होती है। इसके शान्त्यर्थ वागीश्वरी देवी की उपासना करनी चाहिए। जिस राशि में २७ रेखा हों उस राशि के सूर्य में धन की हानि होती है। उसकी शान्ति के लिए श्रीसूक्त का जप करना चाहिए।।८१।।

वसुपक्षयुते मासे न लाभो हानि खेचरैः।
सूर्यहोमश्च विधिना कर्त्तव्यः शुभकांक्षिभिः।।८२।।

जिस राशि में २८ रेखा हों उस राशि के सूर्य में किसी प्रकार का लाभ नहीं होता है। इसके शान्त्यर्थ विधिवत् सूर्य का हवन कराना चाहिए।।८२।।

एकोनत्रिंशता चापि चिन्ता व्याकुलितो भवेत्।
घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः।।८३।।

जिस राशि में २९ रेखा हों उस राशि के सूर्य में मनुष्य चिन्ता से व्याकुल होता है। उसके शान्त्यर्थ घी, वस्त्र-सुवर्ण का दान करना चाहिए।।८३।।

त्रिंशता धनधान्याप्तिरिति जातकनिर्णयः।
भूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसम्पद्गुणाग्निभिः।।८४।।

जिस राशि में ३० रेखा हों उस राशि के सूर्य में धन-धान्य का लाभ होता है। जिस राशि में ३१ रेखा हों उस मास में बड़े उद्योग की तथा पुत्र और सम्पत्ति का लाभ होता है।।८४।।

सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्वितः।
पञ्चरामैर्भवेद्धीमान्षट्त्रिंशत्सुतवित्तदा।।८५।।

जिस राशि में ३४ रेखा होती है उस मास में सुवर्ण, वस्त्र आदि का लाभ होता है। जिस राशि में ३५ रेखा हों उस मास में बुद्धि में प्रखरता और जिसमें ३६ रेखा हों उस राशि में पुत्र-धन का लाभ होता है।।८५।।

सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिंशत्सुखार्थदा।
द्रव्यरत्नाप्तिरेकोनचत्वारिंशाच्च विद्यते।।८६।।

जिस राशि में ३७ रेखा हों उस मास में धन का लाभ होता है। जिस राशि में ३८ रेखा हों उस मास में धनसुख होता है। जिस राशि में ३९ रेखा हों उसमें द्रव्य-रत्न का लाभ होता है।।८६।।

धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्धते।
अत ऊर्ध्वं यशोऽर्थाप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते।।८७।।

जिस राशि में ४० रेखा हों उस मास में धन-कीर्ति में वृद्धि होती है। इसके बाद जितनी ही अधिक रेखा होती है उतना ही अधिक यश-धन का लाभ उत्तरोत्तर होता है।।८७।।

अथ शुभाशुभफलमाह—

शुभखचरफलैक्यं प्राप्तवर्षे नितान्तं
धनतनयसुखानां भाजनं स्यान्मनुष्यः।
धरणितनयवर्गे विन्दुसंज्ञांतयोगे
तनुलयमिह वर्षे पापगे मृत्युभीतिः।।८८।।

शुभग्रह की रेखाओं के योगतुल्य वर्ष में धन, पुत्र, सुख को भोगने वाला मनुष्य होता है। भौमाष्टक वर्ग में भौम से लग्नांत फलों के योगतुल्य वर्ष और लग्न से भौमांत रेखाओं के योगतुल्य वर्ष में पापग्रह का योग होने से कष्ट होता है।।८८।।

इति बृहत्पाराशरहोरायाम् अष्टकवर्गफलाध्यायः।

अथ पूर्वजन्मशापद्योतकाध्यायः

पार्वत्युवाच—

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणे वृषध्वज।
केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम्।।१।।

पार्वतीजी ने कहा— हे देवों के देव, जगत् के स्वामी, शूलपाणि, वृषध्वज! किस दुर्योग के कारण मनुष्यों की सन्तानों का नाश होता है।।१।।

तत्सर्वमत्र योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर।
शापमोक्षं च कृपया प्राणिनामल्पमेधसाम्।।२।।

और हे शशिशेखर! उन सभी योगों को मुझे बताइये और उस शाप से कैसे मनुष्य मुक्त हो सकता है इसे भी बताने की कृपा करें।।२।।

शङ्कर उवाच—

साधु पृष्टं त्वया देवि कथयामि सविस्तरात्।
शृणुष्वेकमना भूत्वा बलाबलवशादपि।।३।।

शंकरजी ने कहा— तुमने बड़ा ही अच्छा प्रश्न किया है। हे देवि! मैं उसे विस्तार से कहूँगा, तुम एकाग्रचित्त से सुनो।।३।।

ज्ञेयं सुनिश्चितं सर्वं राशिचक्रे विशेषतः।
मेषादि मीनपर्यन्तं मूर्त्यादिद्वादशक्रमात्।।४।।

यह सब राशिचक्र में निश्चित है।।४।।

भावं च भावजं ज्ञात्वा फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।
तनुर्वित्तं बन्धुमातृपुत्रशत्रुस्मरो मृतिः।।५।।

मेषादि राशियों के बारह भाव तनु, धन, सहज, सुख, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु।।५।।

पितृकर्म च लाभं च व्ययान्ता भावसंज्ञकाः।
गुरुलग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ।।६।।

धर्म, कर्म, आय और व्यय होते हैं। इसमें गुरु, लग्नेश, दारेश और पंचमेश।।६।।

सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता।
रव्यारराहुशनयः पुत्रस्था बलसंयुताः।
कारकाख्यात्क्षीणबलादनपत्यत्वमादिशेत्।।७।।

ये सभी निर्बल हों तो अनपत्य योग होता है। सूर्य, भौम, राहु, शनि पुत्रस्थान में हों और बली हों तथा पुत्रकारक (गुरु) निर्बल हो तो अनपत्य (निःसन्तान) योग होता है।।७।।

अथ शापज्ञानमाह—

पुत्रस्थानगते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते।
कुजक्षेत्रगते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।८।।

यदि पाँचवें भाव में राहु हो तथा भौम से देखा जाता हो अथवा भौम की राशि में हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।८।।

पुत्रेशे राहुसंयुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने।
चन्द्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।९।।

पंचमेश राहु से युक्त हो, पंचम में शनि हो और चन्द्रमा से युत वा दृष्ट हो तो सर्प के शाप से संतान नष्ट होते हैं।।९।।

कारके राहुसंयुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते।
विलग्नेशे भौमयुते सर्पशापात्सुतक्षयः।।१०।।

कारक (गुरु) राहु से युक्त हो, पंचमेश बलहीन से लग्नेश भौम से युत हो तो सर्प के शाप से संतान नष्ट होते हैं।।१०।।

कारके भौमसंयुक्ते लग्ने च राहुसंयुते।
पुत्रस्थानेश्वरे दुःस्थे सर्पशापात्सुतक्षयः।।११।।

कारक (गुरु) भौम से युक्त हो, लग्न में राहु हो और पंचमेश ६।८।१२ भाव में हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।११।।

भौमांशे भौमसंयुक्ते पुत्रेशे सोमनन्दने।
राहुमान्दियुते लग्ने सर्पशापात्सुतक्षयः।।१२।।

भौम के अंश में भौम से युक्त पंचमेश बुध हो और लग्न, राहु, मान्दि (गुलिक) हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।१२।।

पुत्रस्थाने कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते।
सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः।।१३।।

यदि पंचम भाव मंगल की राशि (७, ८) हो और पंचम में राहु युत हो, बुध से युत वा दृष्ट हो तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।१३।।

पुत्रस्था भानुमन्दाराः स्वर्भानुः शशिजोऽङ्गिराः।
निर्बलौ पुत्रलग्नेशौ सर्पशापात्सुतक्षयः।।१४।।

पंचम भाव में सूर्य, शनि, मंगल, राहु, बुध, गुरु हों और पंचमेश, लग्नेश निर्बल हों तो सर्प के शाप से संतान की हानि होती है।।१४।।

लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भौमसंयुते।
कारके राहुसन्दृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः।।१५।।

लग्नेश राहु से युत हो, पंचमेश मंगल से युत हो, कारक (गुरु) राहु से युत हो तो सर्प के शाप से सन्तान की हानि होती है।।

अथ शान्तिमाह—

ग्रहयोगवशादेवं योगं ज्ञात्वा सुधीमता।
तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत्।।१६।।

इस प्रकार ग्रहयोगवश शाप को जानकर उस दोष के शान्त्यर्थ नाग की पूजा करे।।१६।।

स्वगुह्योक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्सुधीः।
नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत्।।१७।।

अपने वेदोक्त गृह्यसूत्र के अनुसार विधानपूर्वक सुवर्ण की नागमूर्त्ति बनाकर उसकी प्रतिष्ठा करे और उसका यथोक्त रीति से पूजन करे।।१७।।

गोभूतिलहिरण्यादि दद्याद्वित्तानुसारतः।
एवं कृते तु नागेन्द्रप्रसादाद्वर्धते कुलम्।।१८।।

गौ, भूमि, तिल, सुवर्णादि का दान अपनी शक्ति के अनुसार करे। ऐसा करने से नागदेव प्रसन्न होकर कुल की वृद्धि करते हैं।।१८।।

अथ पितृशापात्सुतक्षययोगम्—

पुत्रस्थानगते भानौ नीचे मन्दाशकस्थिते।
पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः।।२०।।

पंचम स्थान में सूर्य अपनी नीच राशि में शनि के अंश में हों और उसके आगे तथा पीछे पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।१९।।

पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते।
क्रूरेऽन्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः।।२०।।

पुत्रस्थानेश सूर्य हो, क्रूरग्रहों के मध्य में त्रिकोण में पापग्रह हों, पापग्रह से देखे जाते हों तो पिता के शाप से वंश की क्षति होती है।।२०।।

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेषु भानसंयुते।
पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२१।।

सूर्य की राशि में गुरु हो और पंचमेश सूर्य से युत हो तथा पंचम और लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से सन्तान की हानि होती है।।२१।।

लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंयुते।
पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२२।।

लग्नेश दुर्बल होकर पंचम भाव में हो और पंचमेश सूर्य से युत हो तथा पंचम और लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२२।।

पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते।
लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः।।२३।।

पितृस्थानेश (१०वें भाव का स्वामी) पाँचवें भाव में हो और पंचमेश १०वें भाव में हो तथा लग्न और पाँचवें भाव में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२३।।

पितुःस्थानाधिपो भौमः पुत्रेशेन समन्वितः।
लग्ने पुत्रे पितृस्थाने पापात्सन्ततिनाशनम्।।२४।।

पितृस्थान (१०) का स्वामी होकर भौम पंचमेश से युत हो और लग्न, पंचम तथा दशम में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२४।।

पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापराशिगे।
सपापे पुत्रलग्नेशे पितृशापात्सुतक्षयः।।२५।।

पितृस्थान (१०) का स्वामी ६, ८, १२ भाव में हो तथा कारक (गुरु) पापग्रह की राशि में हो और पंचमेश तथा लग्नेश पापयुत हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२५।।

लग्नपञ्चमभावस्था भानुभौमशनैश्चराः।
रन्ध्रे रिःफे राहुजीवौ पितृशापात्सुतक्षयः।।२६।।

लग्न तथा पंचम भाव में सूर्य, भौम, शनि हों और ८, १२ स्थान में राहु तथा गुरु हों तथा लग्न में पापग्रह हों तो पिता के शाप से संतान की हानि होती है।।२६।।

लग्नाष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनन्दने।
पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षयः।।२७।।

बारहवें लग्न से आठवें में सूर्य हों,पाँचवें भौम में शनि हो, पंचमेश राहु से युत हो और लग्न में पापग्रह हों तो पितृशाप से संतान की हानि होती है।।२७।।

व्ययेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रेशे पुत्रराशिगे।
पितृस्थानाधिपे रन्ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः।।२८।।

व्यय भाव के स्वामी लग्न में हो और अष्टमेश पाँचवें भाव में हो तथा पितृस्थानेश आठवें भाव में हो तो पिता के शाप से संतानहीन होता है।।२८।।

रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा।
कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षयः।।२९।।

रोगेश पंचम भाव में पितृभावेश के साथ हो और कारक (गुरु) राहु से युत हो तो पिता के साप से संतान की हानि होती है।।२९।।

तद्दोषपरिहारार्थं गयाश्राद्धं च कारयेत्।
ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र अयुतं वा सहस्रकम्।।३०।।
कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम्।
एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र संशयः।।३१।।

इस दोष के शान्त्यर्थ गयाश्राद्ध करे और एक हजार वा दस हजार ब्राह्मणों को भोजन करावे। इसके बाद कन्यादान और सवत्सा गौ का दान करे। इतना करने से पिता प्रसन्न होकर।।३१।।

वर्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तदा।
दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।।३२।।

उसे पुत्र-पौत्र से संपन्न कर कुल की वृद्धि करते हैं। इस प्रकार दृष्टि तथा योगवश पंडित लोग फल का विचार करें।।३२।।

अथ मातृशापात्सुतक्षययोगः—

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे नीचे वा पापमध्यगे।
हिबुके पञ्चमे वापि मातृशापात्सुतक्षयः।।३३।।

पंचमेश चन्द्रमा अपनी नीच राशि में वा पापग्रह के मध्य में हो और ४,५ भाव में पापग्रह हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३३।।

लाभे मन्दसमायोगे मातृस्थाने शुभेतरे।
नीचे पञ्चमगे चन्द्रे मातृशापात्सुतक्षयः।।३४।।

एकादश स्थान में शनि हो और चौथे भाव में पापग्रह हो तथा अपने नीच में चन्द्रमा पाँचवें भाव में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३४।।

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे लग्नेशे नीचराशिगे।
चन्द्रपापसमायोगे मातृशापात्सुतक्षयः।।३५।।

पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हो, लग्नेश अपनी नीच राशि में हो तथा चन्द्रमा पाप से युत हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३५।।

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे चन्द्रे पापांशसंयुते।
लग्ने पुत्रे पापयुते मातृशापात्सुतक्षयः।।३६।।

पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हो, चन्द्रमा पापांश में हो, लग्न और पंचम में पापग्रह हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३६।।

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे मन्दराह्वारसंयुते।
भाग्ये वा पुत्रराशौ वा कारके पुत्रनाशनम्।।३७।।

पंचमेश चन्द्रमा शनि, राहु, भौम से युत हो, कारक (गुरु) भाग्य वा पाँचवें भाव में हो तो संतान की हानि होती है।।३७।।

मातृस्थानाधिपे भौमे शनिराहुसमन्विते।
भानुचन्द्रयुते पुत्रे लग्ने सन्ततिनाशनम्।।३८।।

चौथे भाव का स्वामी भौम, शनि, राहु से युत हो, संतान भाव और लग्न सूर्य-चन्द्र से युत हों तो संतान की हानि होती है।।३८।।

लग्नात्मजेशौ शत्रुस्थौ रन्ध्रे मात्राधिपे स्थितौ।
पितृनाशाधिपौ लग्ने मातृशापात्सुतक्षयः।।३९।।

लग्नेश, पंचमेश छठे भाव में, आठवें भाव में मातृभावेश हों और दशम, अष्टम भाव के स्वामी लग्न में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।३९।।

षष्ठाष्टमेशौ लग्नस्थौ व्यये मात्राधिपे सुते।
चन्द्रे जीवे पापयुते मातृशापात्सुतक्षयः।।४०।।

६, ८ भाव के स्वामी लग्न में, १२वें भाव में सुखेश और चन्द्रमा-गुरु पाप से युक्त होकर पाँचवें भाव में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४०।।

पापमध्यगते लग्ने क्षीणे चन्द्रे च सप्तमे।
मातृपुत्रे राहुमन्दौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४१।।

लग्न पापग्रहों के मध्य में हो, क्षीण चन्द्रमा सातवें भाव में हो, ४, ५ भाव में राहु-शनि हों तो माता के शाप से सन्तान की हानि होती है।।४१।।

नाशस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे नाशराशिभे।
चन्द्रमातृपतौ दुःस्थे मातृशापात्सुतक्षयः।।४२।।

अष्टमेश पाँचवें भाव में और पंचमेश आठवें भाव में हो और चन्द्रमा तथा सुखेश ६, ८, १२ भाव में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४२।।

चन्द्रक्षेत्रे यदा लग्ने कुजराहुसमन्विते।
चन्द्रमन्दौ पुत्रसंस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४३।।

यदि कर्क राशि लग्न में हो तथा भौम-राहु से युत हो, चन्द्र-शनि पाँचवें भाव में हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४३।।

लग्ने पुत्रे रन्ध्ररिःफे आरराहुरविः शनिः।
मातृलग्नाधिपौ दुःस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४४।।

लग्न, पंचम, आठवें, बारहवें भाव में भौम, राहु, रवि और शनि हों तथा मातृभावेश ६, ८, १२ में हो तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४४।।

नाशस्थानं गते जीवे कुजराहुसमन्विते।
पुत्रस्थाने मन्दचन्द्रौ मातृशापात्सुतक्षयः।।४५।।

आठवें भाव में भौम-राहु से युक्त गुरु हो और पाँचवें भाव में शनि-चन्द्र हों तो माता के शाप से संतान की हानि होती है।।४५।।

ग्रहयोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः।
शुभे सौख्यं विनिर्दिष्टं मिश्रे मिश्रं प्रकीर्त्तितम्।।४६।।

ग्रहयोगवश सभी फलों को करे। शुभयोग से शुभ फल, पापयोग से पापफल तथा मिश्रयोग से मिश्रित फल कहना चाहिए।।४६।।

अथास्य शान्तिमाह—

सेतुस्नानं प्रकुर्वीत गायत्री लक्षसंज्ञके।
ग्रहदानं च कर्त्तव्यं रौप्यपात्रे पयःस्थितिः।।४७।।

एक लक्ष गायत्री का जप कराके वा करके सेतुस्नान करे। ग्रहदान और चाँदी के पात्र में दूध का दान करे।।४७।।

ब्राह्मणान् भोजयेत्तद्वदश्वत्थस्य प्रदक्षिणम्।
कर्तव्यं भक्तियुक्तेन चाष्टविंशसहस्रकम्।।४८।।

ब्राह्मणों को भोजन करावे और भक्ति से युक्त होकर २८ हजार पीपल की प्रदक्षिणा करे।।४८।।

एवं कृते तदा देवि शापान्मोक्षो भविष्यति।
सत्पुत्रं लभते पश्चात्वृद्धिः स्यात्तस्य सन्ततेः।।४९।।

ऐसा करने से शाप से मुक्ति मिल जाती है और अच्छे पुत्र का लाभ होता है तथा संतान की वृद्धि होती है।।४९।।

अथ भ्रातृशापात्सुतक्षययोगः—

भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते।
पुत्रलग्नेश्वरौ रन्ध्रे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५०।।

भ्रातृस्थान (३) के स्वामी भौम-राहु से युत होकर पाँचवें भाव में हों और पंचमेश, लग्नेश आठवें भाव में हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५०।।

लग्ने सुते कुजे मन्दे भ्रातृपे भाग्यराशिगे।
कारके नाशराशिस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५१।।

लग्न पंचम भाव में भौम-शनि हों, भ्रातृभावेश भाग्य भाव में हो तथा कारक (भौम) आठवें भाव में हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५१।।

भ्रातृस्थाने गुरौ नीचे मन्दः पञ्चमगो यदि।
नाशस्थौ तु चन्द्रारौ भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५२।।

भ्रातृस्थान (३) में नीच राशि में गुरु हो और शनि पाँचवें भाव में हो और आठवें भाव में चन्द्र-शनि हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५२।।

मूर्त्तिस्थानाधिपे रिःफे भौमः पञ्चमगो यदि।
पुत्रेशे रन्ध्रभावस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५३।।

लग्नेश बारहवें भाव में, पंचम भाव में भौम हो और पंचमेश आठवें भाव में हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५३।।

पापमध्यगते लग्ने सुतभे पापमध्यगे।
नाथौ च कारकौ दुःस्थौ भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५४।।

पापग्रह के मध्य में लग्न हो और पंचम भाव भी पापग्रह के मध्य में हो, दोनों के स्वामी और कारक ६, ८, १२ भाव में हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५४।।

कर्मेशे भ्रातृभादस्थे पापयुक्ते तथा शुभे।
पुत्रे च कुजसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५५।।

कर्मेश पापग्रह से युत होकर भ्रातृस्थान में हो और पाँचवें भाव में भौम युत हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५५।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे शनिराहुसमन्विते।
रिःफे विदारौ वर्त्तते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५६।।

पंचम भाव में बुध की राशि (३।६) हो और उसमें शनि-राहु युक्त हों तथा बारहवें भाव में बुध-भौम हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५६।।

लग्नेशे भ्रातृराशिस्थे भ्रातृस्थानाधिपे सुते।
लग्नभ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५७।।

लग्नेश भ्रातृभाव में, भ्रातृभावेश पाँचवें भाव में हो तथा लग्न भ्रातृ पाँचवें भाव में पापग्रह हो तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५७।।

भ्रात्रीशे नाशराशिस्थे पुत्रस्थे कारके तथा।
राहुमान्दियुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५८।।

तृतीय भाव का स्वामी ८वें भाव में और पाँचवें भाव में कारक राहु-मांदि (गुलिक) से युत वा दृष्ट हो तो भाई के शाप से संतान को कष्ट होता है।।५८।।

नाशस्थानाधिपे पुत्रे भ्रातृनाथेन संयुते।
रन्ध्रे आरार्किसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः।।५९।।

अष्टमेश पाँचवें भाव में तृतीयेश से युक्त हो, आठवें भाव में भौम-शनि हों तो भाई के शाप से संतान की हानि होती है।।५९।।

अस्य शान्तिमाह—

भ्रातृशापविमोक्षार्थं श्रवणं विष्णुकीर्त्तनम्।
चान्द्रायणं चरेत्पश्चात्कावेर्य्यां विष्णुसन्निधौ।।६०।।

भाई के शाप की शान्त्यर्थ विष्णु का कीर्त्तन सुनना चाहिए। चान्द्रायण व्रत करे। बाद में कावेरी नदी के किनारे विष्णु के सन्निकट।।६०।।

अस्वत्थस्थापनं कार्यं दशधेनूः प्रदापयेत्।
प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्फलान्विताम्।
एवं यः कुरुते भक्त्या पुत्रवृद्धिः प्रजायते।।६१।।

पीपल के वृक्ष की स्थापना कर दस गौ का दान करे, इसके बाद प्राजापत्य करके भूमि का दान करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक करने से पुत्र की वृद्धि होती है।।६१।।

अथ मातुलात्सुतक्षययोगः—

पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते।
लग्ने मन्दसमायोगे मातुलात्सुतनाशनम्।।६२।।

यदि पाँचवें भाव में बुध, गुरु, भौम, राहु हों, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सन्तान की हानि होती है।।६२।।

लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे शनिभौमबुधान्विते।
ज्ञेयो मातुलशापत्वात्पुत्रसन्ततिनाशनम्।।६३।।

लग्नेश और पंचमेश शनि, भौम, बुध के साथ एकत्र हों तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६३।।

लुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने।
लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य सन्ततिनाशनम्।।६४।।

लग्नेश अस्त होकर लग्न में हो और सातवें भाव में शनि हो और लग्नेश बुध के साथ हो तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६४।।

ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्ययेशेन समन्विते।
शशिसौम्यकुजे पुत्रे तस्य सन्ततिनाशनम्।।६५।।

व्ययेश से युत होकर सुखेश लग्न में हो और चन्द्रमा, बुध, भौम संतान भाव में हों तो मामा के शाप से संतान की हानि होती है।।६५।।

अस्य शान्तिमाह—

तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्थापनमुच्यते।
वापीकूपतडागादेर्निर्माणं सेतुबन्धनम्।।६६।।

उपर्युक्त दोष की शान्ति के लिए विष्णु की स्थापना करे। बावली, कूआँ, तालाब को बनवाये।।६६।।

पुत्रवृद्धिर्भवेत्तस्य सम्पद्वृद्धिः प्रजायते।
एवं योगग्रहेणैव फलं ब्रूयाद्विचक्षणैः।।६७।।

पुल का निर्माण करावे तो पुत्र की वृद्धि, संपत्ति की भी वृद्धि होती है। इस प्रकार ग्रहयोगवश पंडित लोग फल का विचार करें।।६७।।

ब्रह्मणशापात्सुतक्षययोगः—

गुरुक्षेत्रे यदा राहुः पुत्रे जीवारभानुजाः।
धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।६८।।

यदि गुरु की राशि (९, १२) में राहु हो, पाँचवें भाव में गुरु, भौम, शनि हों और धर्मेश आठवें भाव में हो तो ब्रह्म (ब्राह्मण) के शाप से संतान का अभाव होता है।।६८।।

विद्याबलेन यो मर्त्यो ब्राह्मणानवमन्यते।
तद्दोषाद्ब्रह्मशापाच्च तस्य सन्ततिनाशनम्।।६९।।

विद्या वा बलप्रयोग से जो कोई ब्राह्मण का अपमान करता है, उसके दोष और ब्राह्मण के शाप से वह संतानहीन होता है।।६९।।

धर्मेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे नाशराशिगे।
जीवारराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७०।।

धर्मेश पाँचवें भाव में हो और पंचमेश धर्म भाव में हो तथा गुरु, भौम, राहु आठवें भाव में हों तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७०।।

धर्माधिपे नीचगते व्ययेशे पुत्रराशिगे।
राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७१।।

धर्मेश अपनी नीचराशि में हो और व्ययेश पंचम भाव में हो, राहु से युत वा दृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७१।।

जीवे नीचगते राहुर्लग्ने वा पुत्रराशिगे।
पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७२।।

गुरु नीचराशि में हो, राहु लग्न वा पंचम भाव में हो और पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७२।।

पुत्रस्थानाधिपे जीवे रन्ध्रे पापसमन्विते।
पुत्रेशावर्कचन्द्रौ वा ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७३।।

पंचमेश गुरु आठवें भाव में पापग्रह से युक्त हो अथवा पंचमेश रवि-चन्द्र हों तो भी ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७३।।

मन्दांशे मन्दसंयुक्ते जीवे भौमसमन्विते।
पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७४।।

शनि के अंश में शनि-भौम संयुक्त गुरु हो, पंचमेश बारहवें भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७४।।

लग्ने गुरुयुते मन्दे भाग्ये राहुसमन्विते।
व्यये गुरुसमायुक्ते ब्रह्मशापात्सुतक्षयः।।७५।।

लग्न में गुरु हो, शनि-राहु से युक्त हो, भाग्यभाव में और गुरु व्यय भाव में हो तो ब्रह्मशाप से संतान का अभाव होता है।।७५।।

अस्य शान्तिमाह–

तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कुर्याच्चान्द्रायणं नरः।
ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुर्दद्यात्सदक्षिणाम्।।७६।।

उस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण एवं ब्रह्मकूर्च व्रत (प्रायश्चित्त) करके दक्षिणा सहित गोदान।।७६।।

पञ्चरत्नानि देयानि सुवर्णेन समन्वितम्।
अन्नदानं ततः कुर्यादयुतं च सहस्रकम्।।७७।।

और पंचरत्न सोने के साथ दान करके दस हजार वा एक हजार का अन्नदान करें।।७७।।

एवं कृते तु सत्पुत्रं लभते नात्र संशयः।
मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुत्रसुखमेधते।।७८।।

ऐसा करने से मनुष्य शाप से मुक्त होकर पुत्र को प्राप्त करता है और शापमुक्त होकर शुद्धात्मा होकर सुख को भोगता है।।७८।।

पत्नीशापात्सुतक्षययोगः–

दारेशे पुत्रभावस्थे दारेशस्थांशपे शनौ।
पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।७९।।

सप्तमेश पंचम भाव में हो तथा सप्तमेश के नवांश का स्वामी शनि हो, पंचमेश आठवें भाव में हो तो स्त्री के शाप से संतान की हानि होती है।।७९।।

कलत्रेशे नाशसंस्थे रिःफेशे पुत्रराशिगे।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८०।।

सप्तमेश आठवें भाव में और व्ययेश पाँचवें भाव में हो, कारक (शुक्र) पापयुक्त हो तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८०।।

पुत्रस्थानगते शुक्रे कामपे रन्ध्रमाश्रिते।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८१।।

पंचम स्थान में शुक्र हो, सप्तमेश आठवें भाव में हो तथा कारक पापयुक्त हो तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८१।।

कुटुम्बे पापसम्बन्धे कामेशे नाशराशिगे।
पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८२।।

दूसरे भाव में पापग्रह हो, सप्तमेश आठवें भाव में हो और पाँचवें भाव में पापग्रह युत हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८२।।

भाग्यस्थानगते शुक्रे दारेशे नाशराशिगे।
लग्ने पापे सुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८३।।

नवम भाव में शुक्र, पंचमेश आठवें भाव में तथा लग्न और पाँचवें में पापग्रह हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८३।।

भाग्यस्थानाधिपे शुक्रे पुत्रेशे शत्रुराशिगे।
गुरुलग्नेशदारेशा दुःस्थाः सन्ततिनाशनम्।।८४।।

भाग्येश शुक्र हो, पंचमेश छठे स्थान में हो और गुरु, लग्नेश, दारेश ६, ८, १२ भावों में हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८४।।

पुत्रस्थाने भृगुक्षेत्रे राहुचन्द्रसमन्विते।
व्यये लग्ने धने पापे स्त्रीशापात्सुतक्षयः।।८५।।

पंचम भाव में शुक्र की राशि (२,७) राहु-चन्द्र से युक्त हो और १२, १, २ भावों में पापग्रह हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८५।।

सप्तमे मन्दशुक्रौ च रन्ध्रेशे पुत्रभे रवौ।
लग्ने राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८६।।

सातवें भाव में शनि-शुक्र हों, अष्टमेश पाँचवें भाव में हो रवि राहु लग्न में हों तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्थे भृगुनन्दने।
राहुयुक्तेक्षिते वापि पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८७।।

दूसरे भाव में भौम, बारहवें भाव में गुरु, पाँचवें भाव में शुक्र हों, दाहयुक्त वा दृष्ट हों तो स्त्रीशाप से पुत्र का अभाव होता है।।८७।।

नाशस्थौ वित्तदारेशौ पुत्रलग्ने कुजे शनौ।
कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८८।।

आठवें भाव में धनेश, सप्तमेश हों, पाँचवें और लग्न में भौम-शनि हों तथा कारक पापयुक्त हो तो स्त्रीशाप से संतान का अभाव होता है।।८८।।

लग्नपञ्चमभाग्यस्था राहुमन्दकुजाः क्रमात्।
रन्ध्रस्थौ पुत्रदारेशौ पत्नीशापात्सुतक्षयः।।८९।।

लग्न पंचम, नवम में राहु, शनि, भौम हों और आठवें भाव में पंचमेश, सप्तमेश हों तो स्त्री के शाप से संतान का अभाव होता है।।८९।।

अस्य शान्तिमाह—

तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कन्यादानं समाचरेत्।
लक्ष्मीनारायणं देयं सर्वाभरणभूषितम्।।९०।।

इस दोष के शान्त्यर्थ कन्यादान करे। लक्ष्मीनारायण की मूर्त्ति सभी आभरणों से युक्त।।९०।।

मूर्त्तिदानं च कर्त्तव्यं दशधेनूः प्रदापयेत्।
शय्यां च भूषणं चैव दम्पत्योर्दापयेत्सुधीः।
पुत्रं प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते।।९१।।

दान करे, दश धेनु का दान करें, शय्या-आभूषण सपत्नीक ब्राह्मण को दे। ऐसा करने से पुत्र होता है तथा भाग्यवृद्धि भी होती है।।९१।।

प्रेतशापात्सुतक्षययोगः—

मन्त्रशापमिदं मर्त्यः पिशाचं बाध्यते सदा।
कर्मलोपं पितृभ्यश्च तच्छापाद्वंशनाशनम्।।९२।।

जब पितरों के कर्म का लोप होता है अर्थात् उनके श्राद्धादि ठीक से नहीं होते हैं तो पिशाच (प्रेत) हो जाते हैं तथा वे वंशवृद्धि को नहीं होने देते।।९२।।

पुत्रस्थितौ मन्दसूर्यौ क्षीणचन्द्रस्तु सप्तमे।
लग्ने व्यये राहुजीवौ प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९३।।

पाँचवें भाव में शनि-सूर्य हों और सातवें भाव में क्षीण चन्द्र हो तथा लग्न और बारहवें भाव में राहु तथा गुरु हों तो प्रेतेशाप से वंश का अभाव होता है।।९३।।

पुत्रस्थानाधिपे मन्दे नाशस्थे लग्नगे कुजे।
कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९४।।

पंचमेश शनि आठवें भाव में, लग्न में भौम और कारक आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९४।।

लग्ने पापे व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजाः।
पुत्रेशे रन्ध्रभावस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९५।।

लग्न में पापग्रह हों तथा बारहवें भाव में सूर्य हो और पाँचवें भाव में भौम, शनि, बुध हों और पंचमेश आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।९५।।

लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनन्दने।
कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९६।।

लग्न में राहु, पाँचवें भाव में शनि और कारक आठवें भाव में हों तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९६।।

लग्ने राहौ च शुक्रेज्ये चन्द्रे मन्दयुते तथा।
लग्नेशे मृत्युराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९७।।

लग्न में राहु, शुक्र, गुरु हों, चन्द्रमा शनि से युत हो, लग्नेश आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से पुत्र का अभाव होता है।।९७।।

लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनन्दने।
कुजदृष्टे युते वापि प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९८।।

लग्न में राहु तथा पाँचवें भाव में शनि हो, भौम से युत वा दृष्ट हो तो प्रेतशाप से पुत्र का अभाव होता है।।९८।।

कारके नीचराशिस्थे पुत्रस्थानाधिपे तथा।
नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षयः।।९९।।

कारक नीचराशि में हो और पंचमेश भी अपने नीच में हो तथा नीचराशिस्थ ग्रह से युत वा दृष्ट हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।९९।।

लग्ने मन्दे सुते राहौ रन्ध्रे भानुसमन्विते।
व्यये भौमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१००।।

लग्न में शनि, पाँचवें भाव में राहु, आठवें भाव में सूर्य युक्त हो और बारहवें भाव में भौम हो तो प्रेतशाप से वंश का अभाव होता है।।१००।।

कामस्थानाधिपे दुःस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते।
मन्दमान्दियुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१०१।।

सप्तमेश ६, ८, १२ भाव में भौम हो, पाँचवें भाव में चन्द्रमा हो, लग्न में शनि और गुलिक हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।१०१।।

बाधास्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते।
कारके नाशसंशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः।।१०२।।

अष्टमेश शनि-शुक्र से युत होकर पाँचवें भाव में हो और कारक आठवें भाव में हो तो प्रेतशाप से संतान का अभाव होता है।।१०२।।

अस्य शान्तिमाह—

तद्दोषस्य शान्त्यर्थं विष्णुश्राद्धं समाचरेत्।
रुद्राभिषेकं कुर्वीत ब्रह्ममूर्तिं प्रदापयेत्।।१०३।।

उपर्युक्त प्रेतशाप के निवृत्त्यर्थ विष्णुपद (गया) में श्राद्ध करना चाहिए और रुद्राभिषेक करके ब्रह्म की मूर्त्ति का दान।।१०३।।

धेनुं रजतपात्रं च नीलं चैव प्रदापयेत्।
एतत्कर्मकृते तत्र शापमोक्षः प्रजायते।।१०४।।

तथा धेनु तथा चाँदी के पात्र और नीलमणि का दान करना चाहिए। इतने कर्मों के करने से मुक्ति हो जाती है और कुलवृद्धि होती है।।१०४।।

अथ बहुपुत्रयोगः--

पुत्रे राहुरविः सौम्याः कारके शुभसंयुते।
शुभेन वीक्षिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०५।।

पंचम भाव में राहु, सूर्य, बुध हों, कारक (गुरु) शुभग्रह से युत हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तो बहुत-से पुत्र होते हैं।।१०५।।

पुत्रेशे शुभराशिस्थे शुभदृष्टिसमन्विते।
कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०६।।

पंचमेश शुभग्रह की राशि में शुभग्रह की दृष्टि से युक्त हो, कारक केन्द्र में हो तो बहुत पुत्र होते हैं।।१०६।।

लग्नेशे पुत्रराशिस्थे पुत्रेशे लग्नमाश्रिते।
केन्द्रत्रिकोणगे जीवे बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०७।।

लग्नेश पाँचवें भाव में, पंचमेश लग्न में, केन्द्र (१,४,७,१०), त्रिकोण (९,५) भाव में गुरु हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०७।।

पुत्रस्थानगते राहौ मन्दांशकविवर्जिते।
बहुपुत्रं नरं विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते।।१०८।।

पाँचवें भाव में राहु शनि के नवांश में न हो, यदि शुभग्रह देखता हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०८।।

पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसंयुते।
कारके शुभसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत्।।१०९।।

पंचमेश अपने उच्च में हो, लग्नेश शुभग्रह से युत हो और कारक शुभग्रह हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१०९।।

पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभवीक्षिते।
शुभेन सहिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत्।।११०।।

पंचम स्थान में पंचमेश वा गुरु हो, शुभग्रह से दृष्ट हो या शुभग्रह से युक्त हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११०।।

परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे।
पुत्रेशे बलसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत्।।१११।।

गुरु पूर्ण बली हो तथा लग्नेश पाँचवें भाव में हो और पंचमेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।१११।।

पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते।
लग्नेशे बलयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११२।।

पाँचवें पूर्ण बली गुरु हो, लग्नेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११२।।

वर्गोत्तमांशगे जीवे लग्नेशस्यांशपे शुभे।
पुत्रेशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११२।।

गुरु वर्गोत्तम नवांश में हो, लग्नेश के नवांश में शुभग्रह हो, पंचमेश से युत वा दृष्ट हो तो बहुत पुत्र होते हैं।।११३।।

वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते।
वैशेषिकांशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११४।।

धनेश पूर्णबली होकर पाँचवें भाव में हो, गुरु वैशेषिकांश में हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११४।।

लग्नपुत्राधिपौ स्वोच्चे अन्योऽन्यं चापि वीक्षितौ।
परस्परस्थानगतौ पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११५।।

लग्नेश और पंचमेश अपनी उच्चराशि में हों, परस्पर देखते हों और परस्पर स्थान में हों तो अनेक पुत्र होते हैं।।११५।।

पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभसंयुते।
शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११६।।

पंचमेश जिस नवांश में हो, उसका स्वामी शुभग्रह से युत हो वा शुभग्रह से दृष्ट हो तो अनेक संतान होती हैं।।११६।।

लग्नपुत्राधिपौ केन्द्रे शुभग्रहसमन्वितौ।
कुटुम्बेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११७।।

लग्नेश और पंचमेश केन्द्र में शुभ ग्रह से युत हों, धनेश बलवान् हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११७।।

लग्नेशे दारभावस्थे दारेशे लग्नमाश्रिते।
द्वितीयेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृताः।।११८।।

लग्नेश सातवें भाव में, सप्तमेश लग्न में हो और धनेश बली हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११८।।

दारेशग्रहसंयुक्तनवांशभवनाधिपे ।
पुत्रवित्तविलग्नेशैर्दृष्टे तु बहुपुत्रता।।११९।।

दारेश से युत ग्रह का नवमांशेश पंचमेश, धनेश तथा लग्नेश से देखा जाता हो तो अनेक पुत्र होते हैं।।११९।।

इति बहुपुत्रयोगाः।

अथानपत्ययोगः—

पुत्रवित्तकलत्रेशसंयुक्तनवभागपाः ।
पापांशकाः पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२०।।

पंचम, धन, सप्तम के स्वामियों से युक्त नवमांशेश का नवांश पापग्रह का हो अथवा पापयुत हो तो अनपत्य योग होता है।।१२०।।

व्ययेशसंयुतांशेशे मृत्युराशौ स्थिते सति।
पुत्रेशे क्रूरषष्ठ्यंशे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२१।।

लग्नेश से युत अंशेश आठवें भाव में हो और पंचमेश क्रूरग्रह से षष्ठ्यंश में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२१।।

गुरुलग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च।
सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता।।१२२।।

गुरु, लग्नेश, सप्तमेश और पंचमेश निर्बल हों तो अनपत्य योग होता है।।१२२।।

लग्नपुत्रेश्वरौ दुःस्थौ कारके नीचराशिगे।
अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२३।।

लग्नेश और पंचमेश ६, ८, १२ भाव में हों, कारक नीच राशि में हो, कोई अनपत्यग्रह (पापग्रह) पाँचवें भाव में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२३।।

क्रूरषष्ठ्यंशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिपे।
पुत्रेशे नाशराशिस्थे अनपत्यत्वमादिशेत्।।१२४।।

गुरु क्रूरग्रह के षष्ठ्यंश में हो, पाँचवें भाव में अष्टमेश हो और पंचमेश आठवें भाव में हो तो अनपत्य योग होता है।।१२४।।

इत्यनपत्ययोगाः।

अथ चिरकालात्पुत्रप्राप्तियोगः—

लग्नाधिपे कुजे स्वोच्चे रन्ध्रे मन्दयुते रवौ।
शुभदृष्टिसमायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२५।।

लग्नेश भौम अपनी उच्चराशि में, आठवें भाव में शनि से युत रवि हो और शुभग्रह से देखा जाता हो तो अधिक दिन में संतान होती है।।१२५।।

लग्ने मन्दे गुरौ रन्ध्रे व्यये भौमसमन्विते।
शुभदृष्टे स्वतुङ्गे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२६।।

लग्न भाव में शनि, गुरु आठवें भाव में, बारहवें भाव में भौम हो वा शुभदृष्ट अपने उच्च में हो तो बहुत दिनों में संतान होती है।।१२६।।

पुत्रस्था मन्दजीवज्ञा लग्ने पुत्राधिपे शुभे।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२७।।

संतान भाव में शनि, गुरु और बुध हों, पंचमेश शुभग्रह हो, पंचमेश शुभग्रह की राशि में हो तो अधिक समय में संतान होती है।।१२७।।

सुते राह्वर्कशुक्रेज्याः शुभर्क्षे शुभवीक्षिते।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२८।।

पाँचवें भाव में शुभग्रह की राशि में राहु, सूर्य, शुक्र, गुरु हों, शुभग्रह से देखे जाते हों और पंचमेश शुभ राशि में हो तो बहुत दिनों में संतान होती है।।१२८।।

लग्ने सौम्ये धने पापे तृतीये पापखेचरे।
पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः।।१२९।।

लग्न में शुभग्रह, दूसरे भाव में पापग्रह, तीसरे में पापग्रह और पंचमेश शुभराशि में हो तो बहुत समय में संतान होती है।।१२९।।

अथ दत्तकपुत्रयोगः—

पुत्रस्थाने कुजे मन्दे बुधक्षेत्रे विलग्नगे।
बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्तसुतादयः।।१३०।।

पंचम भाव में भौम, शनि हों, जन्मलग्न में बुध की राशि हो और बुध से दृष्ट वा युत हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३०।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मन्दक्षेत्रेऽथवा भवेत्।
मन्दमान्दियुते दृष्टे तदा दत्तादयः सुताः।।१३१।।

पंचम भाव में बुध वा शनि की राशि हो और शनि तथा गुलिक से युत वा दृष्ट हो तो दत्तक पुत्र होते हैं।।१३१।।

पुत्रेशे मन्दसंयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते।
लग्नाधिपे बुधांशे वा दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३२।।

पंचमेश शनि से युत हो, भौम-बुध से देखा जाता हो, लग्नेश बुध के नवांश में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३३।।

कामेशे लाभभावस्थे पुत्रेशे शुभसंयुते।
पुत्रे मन्दे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३३।।

सप्तमेश एकादश भाव में, पंचमेश शुभग्रह से युक्त हो, पाँचवें भाव में शनि वा बुध हो तो दत्तक संतति होती है।।१३३।।

पुत्रेशे भाग्यभावस्थे भाग्येशे कर्मराशिगे।
पुत्रे मन्देन संदृष्टे दत्तपुत्रेण सन्ततिः।।१३४।।

पंचमेश भाग्यभाव में, भाग्येश कर्मभाव में, पाँचवें भाव को शनि देखता हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३४।।

लग्नाधिपे भृगुः स्वोच्चे पुत्रे मन्दसमन्विते।
कारके बलसंयुक्ते दत्तपुत्रा तु सन्ततिः।।१३५।।

लग्नेश और शुक्र उच्च में हो, पाँचवें भाव में शनि हो और कारक बली हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३५।।

पुत्रस्थानाधिपे चन्द्रे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे।
परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३६।।

पंचमेश चन्द्र लग्न में, पाँचवें भाव में शनि हो, गुरु बलवान् हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३६।।

पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ।
पुत्राधिपे बलयुते दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३७।।

पंचमेश रवि लग्न में और पंचम में शनि-बुध हों, पंचमेश बली हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३७।।

लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते।
कारके लाभराशिस्थे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत्।।१३८।।

लग्नेश बुध पाँचवें भाव में भौम से देखा जाता हो और कारक लाभभाव में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३८।।

लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते।
पुत्रेशे भौमराशिस्थे दत्तपुत्रा भवन्ति हि।।१३९।।

लग्नेश गुरु पाँचवें भाव में शनि से देखा जाता हो और पंचमेश भौम की राशि में हो तो दत्तक पुत्र होता है।।१३९।।

अस्य शान्तिमाह—

वंशान्तो हरिरुष्णगो त्रिपुरहाऽब्जे भूसुते रुद्रियं
सौम्ये सम्पुटकांस्यपात्रविधिवज्जीवेन पैत्र्यातिथिः।
शुक्रे गोप्रतिपालनं च कथितं मन्दे च मृत्युञ्जयः
कन्यादानभुजङ्गकेतुकपिलाः सन्तानसौख्यप्रदाः।।१४०।।

यदि संतान के बाधक सूर्य हो तो हरिवंशपुराण सुनना चाहिए। चन्द्रमा के लिए शिवपूजन, भौम हो तो रुद्राभिषेक, बुध हो तो विधिवत् कांस्यपात्र और संपुट, गुरु हो तो पितृपूजन (गयाश्राद्ध), शुक्र हो तो गो-सेवा, शनि हो तो मृत्युञ्जय का जप, राहु हो तो कन्यादान और केतु हो तो कपिला गौ का दान करने से सन्तान का सुख होता है।।१४०।।

यावत्संख्या भवेद्राशिस्तावद्वारं विनिर्दिशेत्।
शिवविष्णुस्थापनाद्वा लक्षजापात्सुखं भवेत्।।१४१।।

पाँचवें भाव की राशिसंख्या के समान वार हरिवंश सुनना चाहिए। अथवा शिव-विष्णु की मूर्त्ति की स्थापना करे और लक्ष जप करावें तो अवश्य संतान का सुख होता है।।१४१।।

इति पूर्वजन्मशापद्योतकाध्यायः।

अथ दशाध्यायः

अथ दशाभेदमाह—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दशाभेदाननेकशः।
विंशोत्तरी दशा चोक्ता षोडशोत्तरी तथैव च।।२।।

पराशरजी बोले— मैं अनेक प्रकार के दशा के भेदों को कह रहा हूँ, उसे सुनो। विंशोत्तरी दशा, षोडशोत्तरी दशा।।२।।

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा।
पञ्चोत्तरी दशा तद्वद्दशा शतसमा स्मृता।।३।।

द्वादशोत्तरी दशा, अष्टोत्तरी दशा, पंचोत्तरी दशा, शतसमा दशा।।३।।

दशा हि चतुरशीतिः प्राह चाथ द्विसप्ततिः।
तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विंशतिः समा।।४।।

चतुरशीतिसमा दशा, द्विसप्ततिसमा दशा, षष्टिसमा दशा, षड्विंशतिसमा दशा।।४।।

नवमांशनवदशा राश्यंशकदशाः स्मृताः।
दशा कालाभिधा चक्रदशा चक्र मुनीश्वरैः।।५।।

नवमांशनव दशा, राश्यंशक दशा, काल दशा, कालचक्र दशा, चक्र दशा।।५।।

चरपर्या दशा चाथ स्थिरदशा च द्विजोत्तम।
अथोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा।।६।।

चरपर्याय दशा, स्थिर दशा, उत्तर दशा, ब्रह्मग्रह दशा।।६।।

केन्द्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादि दशा मता।
माण्डूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि च।।७।।

केन्द्रादि दशा, कारकादि दशा, मांडूकी दशा, शूल दशा।।७।।

योगार्धजा दशा विप्र दृग्दशां कथयाम्यहम्।
दशा त्रिकोणनामा वै राशीनां च दशा तथा।।८।।

योगार्धदशा, दृग्दशा, त्रिकोण दशा, राशि दशा।।८।।

तारा दशा तथा ज्ञेया दशा रोगा च वर्णदा।
पञ्चस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता।।९।।

तारा दशा, वर्णद दशा, पंचस्वर दशा, योगिनी दशा।।९।।

ततः पैण्ड्यदशा ज्ञेया तथांशकदशा द्विज।
नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता।।१०।।

पिंड दशा, अंश दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा।।१०।।

सन्ध्या दशा च ज्ञातव्या पाचका च दशा द्विज।
द्विचत्वारिंशद्भेदाः स्युः कथयामि तवाग्रतः।।११।।

सन्ध्या दशा और पाचक दशा— इस प्रकार ४२ प्रकार की दशा होती है।।११।।

अथ विंशोत्तरीदशामाह—

आनयनप्रकारं च शृणुष्व द्विजपुङ्गव।
नामनक्षत्रपर्यन्तमार्क्षादि कृत्तिकादितः।।१२।।

हे द्विजश्रेष्ठ! उसके आनयन प्रकार को कह रहा हूँ। कृत्तिका से राशिनाम पर्यन्त ही गिनना चाहिए।।१२।।

सैषा कृष्णेऽर्कहोरायां चन्द्रहोरागते सिते।
दहनात्स्वर्क्षपर्यन्तं गणयेन्नवभिर्हरेत्।।१३।।

कृष्णपक्ष में रवि के होरा में और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा की होरा में कृत्तिका से कृत्तिका नक्षत्र से अपने जन्मनक्षत्र तक गिन कर ९ से भाग देने पर शेष तुल्य।।१३।।

सूर्येन्दुक्ष्माजतमसो वाक्पतिर्मन्दचन्द्रजा।
केतुशुक्रौ क्रमादेते विज्ञेयाश्च दशाधिपाः।।१४।।

क्रम से सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु, शुक्र की दशा होती है।।१४।।

रसाशामुनिधृत्यब्दा भूपविधृतिवत्सराः।
सप्तेन्दवो नगा व्योमबाहवो क्रमतो मताः।।१५।।

और क्रम से ६,१०,७,१८,१६,१९,१७,७,२० वर्ष इन की दशा के वर्ष होते हैं।।१५।।

अथ दशायाः भुक्तभोग्यानयनम्—

दशामानं भयातघ्नं भभोगेनोद्धृतं फलम्।
भुक्तवर्षादिकं ज्ञेयं दशावर्षाच्च संशोध्यम्।
शेषं वर्षादिकं भोग्यं दशायाः भवति ध्रुवम्।।१६।।

जिस ग्रह की दशा में जन्म हो, उसके वर्षमान से भयात को गुणाकर गुणन फल में भभोग से भाग देने से लब्धि वर्ष- मास- दिन- घटी- पल भुक्त दशा होती है। इसे दशा के सम्पूर्ण वर्ष में घटा देने से भाग्यदशा शेष होती है।।१६।।

स्फुटतरो हि मगुः कलिकात्मकः खखगजैर्विभजेद्गत ऋक्षकम्।
तदुडुवर्षगुणं च समादिकं खखगजैर्विभजेत्फलमत्र हि।।१७।।

अथवा स्पष्ट चन्द्रमा की कला बनाकर ८०० से भाग देने से लब्धि गत नक्षत्र होता है। उससे दशा का ज्ञान कर दशावर्ष से शेष को गुणा कर ८०० से भाग देने से मास आदि भुक्त होते हैं। उसे दशावर्ष में घटाने से शेष भोग्य वर्षादि होता है।।१७।।

अथ विंशोत्तरीदशाज्ञानर्थं चक्रम्—

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रहाः
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	दशावर्षाणि
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पु.	श्ले.	म.	पू.फा.	नक्षत्राणि
उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	
उ.षा.	श्र.	ध.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ.	

उदाहरण— पुनर्वसु नक्षत्र के प्रथम चरण का भयात १०।३२ भभोग ५५।५३ है। कृतिका से गिनने से गुरु की दशा में जन्म हुआ। गुरु के दशा वर्ष १६ से भयात के पल ६३२ को गुणाकर गुणनफल १०११२ में पलात्मक भभोग ३३५३ से भाग देने से लब्धि ३ वर्ष हुआ। शेष ५३ को १२ से गुणाकर गुणनफल ६३६ में भभोग का भाग देने से

लब्धि शून्य मास और शेष ६३६ को ३० से गुणाकर गुणनफल १९०८० में भभोग का भाग देने से लब्ध ५० दिन हुआ। शेष २३१५ को ६० से गुणाकर गुणनफल १३८९०० में भभोग का भाग देने से लब्धि ४१ घटी हुआ। शेष १४२७ को ६० से गुणाकर गुणनफल ८५६२० में भभोग से भाग देने से लब्धि २५ पल हुआ। इस प्रकार जन्म के पूर्व गुरु की दशा ३ वर्ष मास ५ दिन ४१ घटी और २५ पल भुक्त हो चुकी। इसे गुरु के दशावर्ष १६ में घटाने से भोग्य अर्थात् शेष दशावर्ष १२, मास ११, दिन २४, घटी १८ और ३५ पल भोग्य था।

विंशोत्तरीदशाचक्रम्—

बृ.	श.	बृ.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ग्रहाः
१२	१९	१७	७	२०	६	१०	७	१८	वर्ष
११									मा.
२४									दि.
१८									घ.
३५									प.
२०१३	२०२६	२०४५	२०६२	२०६९	२०८९	२०९५	२१०५	२११२	२१३०
३	३	३							
१८	१२	१२							
२६	४४	४४							
१४	४९	४९							

इति विंशोत्तरीदशाक्रमः।

अथ षोडशोत्तरीदशाक्रम—

एकोपचयते रुद्राद्धृत्यन्तं वत्सराः क्रमात्।
रविर्भौमो गुरुर्मन्दः केतुश्चन्द्रो बुधो भृगुः।।१८।।

११ में एक-एक १८ तक जोड़ने से दशावर्ष ११।१२।१३।१४।१५।१६।१७।१८ क्रम से सूर्य, भौम, गुरु, शनि, केतु, चन्द्रमा, बुध और शुक्र का होता है।।१८।।

अष्टौ दशाधिपाः प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहाः।
पुष्यभाज्जन्मभं यावद्गणयेद्वसुभिर्हरेत्।।१९।।

राहु को छोड़कर नवग्रह में आठ ही ग्रह दशेश होते हैं। पुष्य से जन्म-नक्षत्र तक गिनने से जो संख्या हो उसमें ८ से भाग देने पर शेषांक तुल्य सूर्य आदि की दशा होती है।।१९।।

सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके।
तदा नृणां फलार्थाय विचिन्त्या षोडशोत्तरी।।२०।।

शुक्लपक्ष में जन्म हो और लग्न में सूर्य की होरा हो अथवा कृष्णपक्ष में जन्म हो और लग्न में चन्द्रमा की होरा हो तो दशाफल जानने के लिए षोडशोत्तरी दशा लेना चाहिए।।२०।।

अथ षोडशोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	मं.	बृ.	श.	के.	चं.	बु.	शु.	ग्रहाः
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	वर्षाणि
पु.	श्ले.	म.	पू.फा.	उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	नक्षत्राणि
स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	उ.षा.	श्र.	
ध.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ.	कृ.	
रो.	मृ.	आ.	पुन.	X	X	X	X	

नोट— इस दशा का भुक्त-भोग्य विंशोत्तरी दशा के समान ही भयात भोग द्वारा लाना चाहिए।

इति षोडशोत्तरीदशाक्रमः।

अथ द्वादशोत्तरीदशाक्रमम्—

सूर्यो गुरुः शिखी ज्ञोऽगुः कुजो मन्दो निशाकरः।
शुक्रहीना दशा ह्येतद्विचयात्सप्तमात्समाः।।२१।।

सूर्य, गुरु, केतु, बुध, राहु, भौम, शनि और चन्द्रमा ये ही शुक्र को छोड़कर दशेश होते हैं और सात से दो-दो जोड़ने से इनके दशा वर्ष भी होते हैं।।२१।।

जन्मभात्पौष्णपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्भजेत्।
नवामांशे यदा जाता शुकस्य द्वादशोत्तरी।।२२।।

जन्मनक्षत्र से रेवती पर्यन्त गिनकर जो संख्या हो उसमें ८ का भाग देने से शेष तुल्य दशेश होते हैं। यदि शुक्र के नवमांश में जन्म हो तो द्वादशोत्तरी दशा से फल कहना चाहिए।।२२।।

नोट— यहाँ भी विंशोत्तरी दशा के समान ही भुक्त-भोग्य लाना चाहिए।

अथ द्वादशोत्तरीदशाचक्रम्—

सू.	बृ.	के.	बु.	रा.	मं.	श.	चं.	ग्रहाः
७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	वर्षाणि

इति द्वादशोत्तरीदशाक्रमः।

अथाष्टोत्तरीदशामाह—

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो भृगुः।
एते दशाधिपाः प्रोक्ता विकेतुश्च नवग्रहाः।।२३।।

केतु को छोड़कर नवग्रहों में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, शनि, गुरु, राहु और शुक्र दशा के स्वामी होते हैं।।२३।।

रसाः पञ्चेन्दवो नागाः शैलचन्द्रनभेन्दवः।
गोब्जाः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतनादयः।।२४।।

इनके ६, १५, ८, १७, १०, १९, १२, २१ ये क्रम से सूर्यादि के दशावर्ष होते हैं।।२४।।

लग्नेशात्केन्द्रकोणस्थे राहौ लग्ने सितं विना।
अष्टोत्तरी दशा प्रोक्ता शिवाद्या द्विजसत्तम।।२५।।

यदि लग्नेश से केन्द्र-त्रिकोण में राहु हो और लग्न में शुक्र हो तो अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिए। इसका आरम्भ आर्द्रा नक्षत्र से आरम्भ कर अपने जन्मनक्षत्र तक गिनना चाहिए।।२५।।

चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः।
यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेच्च यथाक्रमात्।।२६।।

आर्द्रा से चार नक्षत्र के अन्तर्गत अपना जन्मनक्षत्र हो तो सूर्य की दशा, इसके बाद ३ नक्षत्र में चन्द्रमा की, इसके बाद के चार नक्षत्रों में भौम की, इसके बाद ३ नक्षत्र में बुध की, इसके बाद ४ नक्षत्र में शनि की, इसके बाद ३ नक्षत्र में गुरु की, इसके बाद ४ नक्षत्र में राहु की और शेष ४ नक्षत्र में शुक्र की दशा होती है।।२६।।

अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवादि कृत्तिकादितः।
लग्ने सग्रहे शैवाद् विग्रहे कृत्तिकादितः।।२७।।

अष्टोत्तरी दशा दो प्रकार की होती है। यदि लग्न में कोई ग्रह हो तो आर्द्रा नक्षत्र से और यदि कोई ग्रह न हो तो कृत्तिका से गणना करना चाहिए।।२७।।

नोट— दशा का भुक्त-भोग्य साधन पूर्ववत् करना चाहिए।

अष्टोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	श.	बृ.	रा.	शु.	ग्रहाः
६	१५	८	१७	१०	१९	१२	२१	वर्षाणि
आर्द्रा. पु. पु. श्ले.	म. पू.फा. उ.फा.	ह. चि. स्वा. वि.	अनु. ज्ये. मू.	पू.षा. उ.षा. ध. श्र.	ध. श. पू.भा.	उ.भा. रो. अ. भ.	कृ. रो. मृ.	
७२	१८०	९६	२०४	१२०	२२८	१४४	२५२	मासाः

विशेष— यहाँ दशा के भुक्त-भोग्य के लाने में भभोग और दशा वर्ष का मान इस प्रकार लेना चाहिए। नक्षत्र का जितना चरण बीत गया हो उतना भभोग में से घटाकर शेष को भभोग मानना चाहिए। जैसे किसी का जन्म नक्षत्र के दूसरे चरण में है और भभोग ६४।१६ है और भभोग का चतुर्थांश १६।४ एक चरण का मान हुआ। इसे भभोग में घटा देने से ४८।१२ यही भभोग हुआ, क्योंकि एक चरण बीतने के बाद जन्म हुआ है। इसी प्रकार जिस ग्रह की दशा में जन्म हो उसके वर्ष का भी ४ या ३ भाग करके अर्थात् उस ग्रह की दशा ४ नक्षत्रों की हो तो ४ भाग अन्यथा ३ भाग कर दशावर्ष लेना चाहिए। जैसे सूर्य की दशा चार नक्षत्रों की है और उसका दशावर्ष ६ है, अतः एक नक्षत्र का दशामान १८ मास हुआ, इससे भयात को गुणा कर भभोग का भाग देने से भुक्त वर्षादि आते हैं।

अथ पञ्चोत्तरीदशामाह—

पातौ विनानुराधादि विज्ञेयं जन्मभावधि।
गणयेत्सप्तभिर्भक्ते शेषे कल्प्या दशा शुभाः।।२८।।

पात (राहु-केतु) को छोड़कर अनुराधा से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ७ से भाग देने से शेष तुल्य क्रम से।।२८।।

रविज्ञार्कसुतो भौमो भार्गवो रजनीकरः।
वाक्पतिश्च कर्काङ्गे तस्यैव द्वादशाङ्गके।।२९।।

सूर्य, बुध, शनि, भौम, शुक्र, चन्द्रमा और गुरु की दशा होती है। किन्तु कर्क लग्न और उसी के द्वादशांश में जन्म हो तो पंचोत्तरी दशा लेनी चाहिए।।२९।।

द्वादशारभ्य धृत्यन्ताः एकोत्तरदशा समाः।
क्रमात्सदा ग्रहाणां च राहुकेतू विना दशा।।३०।।

१२ से आरम्भ कर एक-२ बढ़ाने से १८ पर्यन्त क्रम से इनके दशा वर्ष होते हैं। यह दशा राहु-केतु को छोड़कर सात ही ग्रह की होती है।।३०।।

पञ्चोत्तरी दशा चिन्त्या निर्विशङ्कं द्विजोत्तम।
बलाबलविवेकेन यथान्यायेन योजयेत्।।३१।।

बलाबल के विचार से शुभ-अशुभ समझना चाहिए।।३१।।

अथ पञ्चोत्तरीदशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	बु.	श.	मं.	शु.	चं.	बृ.	ग्रहाः
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	वर्षाणि
अनु. शत. रो. पू.फा.	ज्ये. पू.भा. मृ. उ.फा.	मू. उ.भा. आ. ह.	पू.षा. रे. पुन. चि.	उ.षा. अ. पु. स्वा.	श्र. भ. श्ले. वि.	ध. कृ. म.	नक्षत्राणि

इति पञ्चोत्तरी दशा।

अथ शताब्दिकां दशामाह—

वर्गोत्तमगते लग्ने दशा चिन्त्या शताब्दिका।
पौष्णभाज्जन्मभं यावत् गणयेत्सप्तभिर्भजेत्।।३२।।

यदि लग्न में वर्गोत्तम नवांश हो तो शताब्दिका (१०० वर्ष की) दशा को लेना चाहिए। रेवती से जन्मनक्षत्र तक गिनकर सात से भाग देने पर शेष तुल्य।।३२।।

शेषाङ्के रवितो ज्ञेया दशा शतसमाभिधा।
रविश्चन्द्रो भृगुश्चान्द्रिर्जीवो विश्वम्भरात्मजः।।३३।।

सूर्य से गिनकर शताब्दिका दशा में दशेश होते हैं। रवि, चन्द्र, शुक्र, बुध, गुरु, भौम।।३३।।

दैवाकरिः क्रमादेते बाणा बाणा दिशो दश।
नखा नखाः खरामाश्च वर्षाणि दिनपादितः।।३४।।

और शनि— ये दशेश और क्रम से ५, ५, १०, १०, २०, २० और तीस वर्ष इनकी दशा होती है।।३४।।

नोट— दशा का भुक्त-भोग्य पूर्ववत् निकालना चाहिए।

अथ शताब्दिकादशाज्ञानाय चक्रम्—

सू.	चं.	शु.	बु.	बृ.	मं.	श.	ग्रहाः
५	५	१०	१०	२०	२०	३०	वर्षाणि
रे. पुन. चि. उ.षा.	अ. पु. स्वा. श्र.	भ. श्ले. वि. ध.	कृ. म. अनु. श.	रो. पू.फा. ज्ये. पू.भा.	मृ. उ.फा. मू. उ.भा.	आ. ह. पू.षा. +	नक्षत्राणि

इतिं शताब्दिका दशा।

अथ चतुरशीत्यब्दिकां दशामाह—

रविश्चन्द्रः कुजः सौम्यो जीवः शुक्रः शनिश्चरः।
तमध्वजौ विना सर्वे ग्रहा द्वादश हायनाः।।३५।।

रवि, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र और शनि की राहु-केतु को छोड़कर १२ बारह वर्ष की दशा होती है।।३५।।

षवनाज्जन्मभं यावत्सप्ततष्टे दशा भवेत्।
चतुरशीतिका ज्ञेया कर्मेशे कर्मसंस्थिते।।३६।।

स्वाती से जन्मनक्षत्र तक गिनकर सात से भाग दें, शेष तुल्य सूर्यादि की दशा होती है। इसे चतुरशीत्यब्दिका (८४ वर्ष की) दशा कहते हैं। यदि कर्मेश कर्मस्थान में हो तो उस समय इस दशा को लेना चाहिए।।३६।।

अथ चतुरशीत्यब्दिकादशाचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	वर्षाणि
स्वा. श्र. भ. श्ले.	वि. ध. कृ. म.	अनु. श. रो. पू.फा.	ज्ये. पू.भा. मृ. उ.फा.	मू. उ.भा. आ. ह.	पू.षा. रे. पुन. चि.	उ.षा. श्र. पु. +	नक्षत्राणि

इति चतुरशीत्यब्दिका दशा।

अथ द्विसप्ततिकां दशामाह—

लग्नेशे सप्तमे यत्र लग्ने वै मदनाधिपे।
चिन्तनीया दशा तत्र द्व्यधिका सप्ततिः समाः।।३७।।

यदि लग्नेश सप्तम में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो द्विसप्ततिका (७२ वर्ष की) दशा से फल विचारना चाहिए।।३७।।

नव वर्षाणि सर्वेषां विकेतूनां ग्रहात्मनाम्।
मूलाज्जन्मर्क्षपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरेत्।
शेषे दशा विचिन्त्या च फलं तस्माद्विचारयेत्।।३८।।

मूल नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ८ से भाग देने से शेष तुल्य केतू को छोड़कर सूर्यादि ग्रहों की ९ नव वर्ष की दशा होती है।।३८।।

अथ द्विसप्ततिकादशाचक्रम्—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	ग्रहाः
९	९	९	९	९	९	९	९	वर्षाणि
मू. रे. पु. वि.	पू.षा. अ. श्ले. अनु.	उ.षा. भ. म. ज्ये.	श्र. कृ. पू.फा.	ध. रो. उ.फा.	श. मृ. ह.	पू.भा. आ. चि.	उ.भा. पुन. स्वा.	नक्षत्राणि

इति द्विसप्ततिका दशा।

अथ षष्ट्यब्दिकां दशामाह—

यदार्को लग्नराशिस्थश्चिन्त्या षष्टिसमा दशा।
दास्त्रास्त्रयं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः।।३९।।

यदि सूर्य जन्मलग्न में हो तो षष्टिहायनी (६० वर्ष की) दशा का विचार करना चाहिए। अश्विनी नक्षत्र से ४ नक्षत्र के बाद ३ नक्षत्र, पुनः ४ नक्षत्र, फिर ३ नक्षत्र इस क्रम से।।३९।।

गुर्वर्कभूसुतानां च वर्षाणि दिङ्मितानि च।
ततः शशिज्ञशुक्रार्कपुत्रागूनां समाश्च षट्।।४०।।

गुरु, सूर्य , भौम, दश-दश वर्ष, इसके बाद चन्द्रमा, बुध, शुक्र, शनि, और राहु की ६-६ वर्ष की दशा होती है।।४०।।

अथ षष्टिहायनीदशाचक्रम्—

सू.	सू.	मं.	चं.	बु.	शु.	श.	रा.	ग्रहाः
१०	१०	१०	६	६	६	६	६	वर्षाणि
श्र. भ. कृ.	रो. मृ. आ. पुन.	श्ले. म.	फा. उ.फा. ह. चि.	स्वा. वि. ध.	ज्ये. मू. पू.षा. उ.षा.	श्र. ध. श.	पू.भा. उ.भा. रे.	नक्षत्राणि

इति षष्टिहायनी दशा।

अथ षट्त्रिंशतिकां दशामाह—

श्रवणाज्जन्मभं यावद्गणयेदष्टभिर्भजेत्।
शशाङ्कार्कसुरेज्यारज्ञार्कजौशुक्रराहवः ।।४१।।

श्रवण नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर ८ से भाग देने से शेषतुल्य क्रम से चन्द्र, सूर्य, गुरु, भौम, बुध, शनि, शुक्र, राहु की दशा होती है।।४१।।

एकोपचयतश्चैकाद्वर्षाण्येषां क्रमात्स्मृताः।
दिवसे सूर्यहोरायां रात्रौ वै चन्द्रहोरके।।४२।।

और १ से एक अंक के वृद्धि तुल्य इनकी दशा का वर्ष होता है। दिन में सूर्य की होरा में और रात में चन्द्र की होरा में जन्म हो तो यह दशा लेनी चाहिए।।४२।।

अथ षट्त्रिंशदब्दिकां दशाचक्रम्—

चं.	सू.	बृ.	मं.	बु.	श.	शु.	रा.	ग्रहाः
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्षाणि
श्र. कृ. पू.फा. मू.	ध. रो. उ.फा. पू.षा.	श. मृ. ह. उ.षा.	पू.भा. आ. चि. +	उ.भा. पुन. स्वा. +	रे. पु. वि. +	अ. श्ले. अनु. +	भ. म. ज्ये. +	नक्षत्राणि

इति षट्त्रिंशदब्दिका दशा।

अथ कालदशामाह—

सन्ध्या पञ्चघटी प्रोक्ता दिनषष्ट्यंशनाडिका।
सूर्यबिम्बादधः पूर्वं परस्तादुदयादपि।।४३।।

दिन-रात्रि का मान ६० घटी होता है, इसका चार विभाग किया गया, सूर्य के बिम्ब के आधा उदय के पहले ५ घटी और बाद में ५ घटी; यों दोनों मिलाकर १० घटी की प्रातः सन्ध्या एवं अर्धास्त सूर्यबिम्ब के पूर्व ५ घटी तथा इसके पश्चात् ५ घटी अर्थात् १० घटी की सायं सन्ध्या होती है।।४३।।

सन्ध्याद्वयं विंशत्याघटिकाभिः प्रकीर्त्तितम्।
दिनस्य विंशतिर्घट्यः पूर्णसंज्ञा उदाहृता।।४४।।

इस प्रकार से दोनों संध्यायें २० घटी की होती हैं। शेष दिन के २० घटी की पूर्ण संज्ञा।।४४।।

निशायाम्मुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः।।४५।।
सूर्योदयस्य या सन्ध्या खण्डाख्या दशनाडिकाः।।४५।।

और इसी प्रकार रात्रि के २० घटी की मुग्धा संज्ञा होती है। सूर्योदय के सन्ध्या की खण्ड संज्ञा।।४५।।

अस्तकालस्य या सन्ध्या सुधाख्या दशनाडिकाः।
पूर्णमुग्धे गतघटीषड्गुणे नवधा लिखेत्।।४६।।

और सायंकाल की संध्या को सुधा कहा है। यदि पूर्णा या मुग्धा में जन्म हो तो दोनों के गतघटी को ६ से गुणा कर एकत्र रख दें।।४६।।

तथा खण्डसुधासूर्ये हते तु नवधा लिखेत्।
विभक्तानीन्द्रिययुगैर्मानख्यानफलानि च।।४७।।

यदि खंड या सुधा में जन्म हो तो १२ से गुणाकर एकत्र रखकर दोनों जगह ४५ से भाग देने से जो फल आवे उसें नव जगह रखकर।।४७।।

क्रमात्सूर्यादिकानां च मानमुक्तं मुनीश्वरैः।
स्वस्वमानं स्वसंख्याभिर्गुणिते स्युः समादयः।।४८।।

सूर्यादि ग्रहों की संख्या १,२ आदि से गुणा कर देने से उनके दशावर्षादि होते हैं।।४८।।

उदाहरण— जैसे किसी का दिन इष्टकाल २।२६।१ है, इसमें से सूर्योदय के संध्यामान घटी में घटा देने से शेष ७।४४ बचा, अतः खण्ड

दशा में जन्म हुआ। इसे ६ से गुणा करने से गुणनफल ४६।२४ हुआ। इसमें ४५ से भाग देने से १।०।२४।०।१० इसे ९ जगह लिखकर १,२,३,४,५,६,७,८,९ से गुणा करने से सूर्य आदि ग्रहों के क्रम से दशा वर्ष हुए।

इति कालदशा।

अथ चक्रदशामाह—

राशीश्वराद्दशा ज्ञेया सूर्यादीनां क्रमात्पुनः।
दिवारात्रिस्तथा सन्ध्यात्रिकाले त्रिविधा दशा।।४९।।

दिन, रात और संध्या के अनुसार राशी और राशीस्वर के अनुसार ३ प्रकार की दशा होती है।।४९।।

दिवालग्नेशस्थिताद्भाच्च रात्रौ लग्नश्रितात्तथा।।५०।।
सन्ध्यायां धनभावस्थाद् ज्ञेया चक्रदशा बुधैः।।५०।।

दिन में जन्म हो तो लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि से, रात में जन्म हो तो लग्न में जो राशि हो उससे और संध्या में जन्म हो तो द्वितीय भाव की राशि से सूर्यादि ग्रहों की दशा होती है।।५०।।

राशीनां दश वर्षाण्येकैकस्य दशा भवेत्।
क्रमाद् द्वादशराशीनां विज्ञातव्या द्विजोत्तम।।५१।।

क्रम से १२ राशियों की प्रत्येक का दश-दश वर्ष दशा का प्रमाण होता है, इसे चक्रदशा कहते हैं।।५१।।

उदाहरण— दिन में जन्म है (पृ. २४ का चक्र देखो), लग्नेश शनि वृश्चिक राशि में है, अतः वृश्चिक राशि से दशा का आरम्भ हुआ। स्पष्टार्थ चक्र देखिए।

वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
२०१३	२३	३३	४३	५३	६३	७३	८३	९३	२१०३	१३	२३
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८

इति चक्रदशा।

मतान्तर से चक्रदशा—

चक्राख्याथ दशां वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन।
लग्नस्थस्य दशा चादौ ततो वित्तस्थितादयः।।१।।

यह दशा दो प्रकार की होती है। प्रथम भावस्थ ग्रह की और दूसरी भावों की। हे द्विजनंदन! मैं तुमसे चक्रदशा को कहता हूँ। पहले जन्मलग्न में बैठे ग्रह की, उसके बाद धन आदि भावों में बैठे हुए ग्रहों की दशा होती है।।१।।

द्वित्र्यादयो यदैकस्था तदा भागादयोऽधिकात्।
तत्रापि तुल्ये नैसर्गाद्बलात्सर्वाधिकस्य च।।२।।

यदि एक ही भाव में दो या तीन ग्रह हों तो उनमें जिसका अधिक अंश हो उसका पहले, इसके बाद उससे न्यूनांश की दशा होती है। यदि अंशादि भी समान हों तो नैसर्गिक बल जिसका अधिक हो उसी की पहले दशा होगी।।२।।

राशिप्रमितवर्षाणि भागाहतश्चानुपाततः।
भावानामपि लग्नाच्च वर्षाणि दिङ्मितानि च।।३।।

जिस भाव में ग्रह है उस भाव की राशि से संख्या तुल्य वर्ष प्रमाण दशा वर्ष और अंश से अनुपात द्वारा मासादि लेना चाहिए। भावों की दशा जन्मलग्न से आरम्भ कर प्रत्येक भावों की दशा होती है। इनका दशा वर्ष प्रत्येक भाव का दश-दश वर्ष का होता है।।३।।

भुक्ता दशाऽनुयाताद्वा विज्ञेया स्वस्वकल्पनात्।
अन्तर्दशापि सुधिया सूक्ष्मादेशाय चिन्तयेत्।।४।।

दशा का भुक्त अनुपात द्वारा लाना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्म फल कहने के लिए अन्तर्दशा का भी साधन करना चाहिए।।४।।

अथ कालचक्रदशामाह—

वन्देऽहं गोपिकानाथं भारतीं गणनायकम्।
पार्वत्यै कथिता पूर्वं कालचक्रं पिनाकिना।।५२।।

श्रीकृष्ण, सरस्वती एवं गणेशजी को प्रणाम कर जो कि शंकरजी ने पार्वती से पूर्व में कालचक्र को कहा था।।५२।।

तच्चक्रसारमुद्धृत्य लघुमार्गेण कथ्यते।
शुभाशुभं मनुष्याणां भूतभव्यं च भावि तत्।।५३।।

उसके तत्त्व को लेकर लाघव से मैं कालचक्र को कह रहा हूँ, जो

मनुष्यों के भूत, वर्तमान और भविष्य के शुभ-अशुभ को बताने वाला है।।५३।।

द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम्।
गृहा द्वादश जायन्ते सव्यचक्रे यथाक्रमम्।।५४।।

खड़ी और आड़ी रेखाओं से १२ कोष्ठ का चक्र बना के।।५४।।

द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकाँल्लिखेत्।
एवं द्वादशराश्याख्यं कालचक्रमुदीरितम्।।५५।।

उसके दूसरे आदि कोष्ठ में मेषादि राशियों को लिखे। उनके आगे कहे अनुसार नक्षत्रों का न्यास करे। इसी प्रकार एक दूसरा चक्र भी बनावे। दोनों में एक की सव्य और दूसरे की अपसव्य कल्पना कर आगे कहे हुए रीति के अनुसार राशि तथा नक्षत्रों का न्यास करे। इसी को १२ राशि का कालचक्र कहते हैं।।५५।।

चक्रे नक्षत्रन्यासविधिः—

अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे प्रतिष्ठितम्।
रोहिण्यादि त्रयं चैव अपसव्ये यथाक्रमम्।।५६।।

अश्विनी से तीन नक्षत्र सव्य चक्र में, रोहिणी से ३ नक्षत्र अपसव्य चक्र में।।५६।।

अश्विन्यादितिहस्तर्क्षमूलवाताहिवह्नयः।
विश्वर्क्षपूर्वाभाद्रं च रेवती सव्यतारकाः।।५७।।

पुनर्वसु से ३-३ नक्षत्र सव्य-अपसव्य चक्र में लिखने से सव्य चक्र में अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, स्वाती, श्लेषा, कृत्तिका, उत्तराषाढ़, पूर्वाभाद्रपद और रेवती— ये १० नक्षत्र सव्य चक्र में हुए।।५७।।

एतद्दशोडुपादानामश्विन्यादौ च वीक्षयेत्।
विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्वती।।५८।।

इन नक्षत्रों के चरणों को अश्विनी के चरणों के समान ही देखना चाहिए। इसका विशद प्रकार आगे कह रहा हूँ।।५८।।

देहजीवज्ञानप्रकारमाह—

देहजीवौ मेषचापौ दास्त्रादाद्यचरणस्य च।
मेषादि चापपर्यन्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।५९।।

अश्विनी नक्षत्र के पहले चरण मेष देह और धनराशि जीव संज्ञक होती है और मेष से धन पर्यन्त नव राशियाँ (मेष, वृष, मिथुन, कर्क,

सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन) और इनके स्वामी क्रम से दशाधीश होते हैं।।५९।।

देहजीवौ नक्रयुग्मौ दिगीशार्काष्टभूधराः।
षड्वेदशरलोकानां राशिपाश्च दशाधिपाः।।६०।।

अश्विनी के दूसरे चरण में मकर देह और मिथुन जीव संज्ञक होता है और १०, ११, १२, ८, ७, ६, ४, ५, ३ राशियों अर्थात् मकर, कुम्भ, मीन, वृश्चिक, तुला, कन्या, कर्क, सिंह और मिथुन के स्वामी दशाधिपति होते हैं।।६०।।

दास्त्रादि दशतारााणां तृतीयचरणेषु च।
गौर्देहो मिथुनं जीवो द्वेकार्केशदशाङ्ककाः।।६१।।
क्वक्षिरामाख्यनाथास्ते दशाधिपतयः क्रमात्।
अश्विन्यादिदशोडूनां चतुर्थचरणेषु च।।६२।।

अश्विनी आदि १० नक्षत्रों के ३ रे चरण में वृष देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती है और २, १, १२, ११, १०, ९, १, २, ३ राशियों के स्वामी क्रम से दशा के स्वामी होते हैं। अश्विनी आदि १० नक्षत्रों के चौथे चरण में।।६२।।

कर्कमीनौ देहजीवौ कर्कादिनवमेश्वराः।
दशाधिपाश्च विज्ञेया शृणु पार्वति निश्चितम्।।६३।।

कर्क देह और मीन राशि जीव संज्ञक होती है और कर्क से मीन पर्यन्त ९ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।६३।।

याम्येज्यचित्रातोयर्क्ष उत्तराभाद्रपदास्तथा।
एतत्पञ्चजोडुपादानां भरण्यादौ च वीक्षयेत्।।६४।।

भरणी, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढ़, उत्तराभाद्रपद इन पाँच नक्षत्रों के चरणों का भरणी नक्षत्र के समान ही विचार करना चाहिए।।६४।।

याम्यप्रथमपादस्य देहजीवावलिर्झषः।
नागागर्तुपयोधीषु रामाक्षीन्द्वर्कभेश्वराः।।६५।।

भरणी के प्रथम चरण में वृश्चिक देह और मीन राशि जीव संज्ञक हैं। ८।७।६।४।५।३।२।१।१२ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६५।।

याम्यद्वितीयपादस्य देहजीवौ घटाङ्गने।
रुद्रदिङ्नन्दचन्द्राक्षिरामाब्धीषु दशेश्वराः।।६६।।

भरणी के दूसरे चरण में कुम्भ देह और कन्या जीव संज्ञक है। ११।१०।९।१।२।३।४।५।६ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६६।।

याम्यतृतीयपादस्य देहजीवौ तुलाङ्गने।
सप्ताष्टाङ्कदिगीशार्कगजाद्रिरसराशिपाः।।६७।।

भरणी के तीसरे चरण में तुला देह और कन्या जीव संज्ञक होते हैं। ७।८।९।१०।११।१२।८।७।६ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६७।।

देहजीवौ कर्कचापौ चतुर्थचरणे स्मृतौ।
वेदबाणाग्निनेत्रेन्दुसूर्येशदशनन्दपाः ।।६८।।

भरणी के चौथे चरण में कर्क देह और धन राशि जीवसंज्ञक है। ४।५।३।२।१।१२।११।१०।९ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।६८।।

सव्यमेवं विजानीयादपसव्यं तु कथ्यते।
द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम्।।६९।।

उपर्युक्त सव्य चक्र को कहा, अब अपसव्य चक्र को कह रहा हूँ। १२ कोष्ठ का ऊपर-नीचे चक्र को लिखकर।।६९।।

द्वितीयादिषु कोष्ठेषु वृश्चिकाद्व्यस्तमालिखेत्।
प्राजापत्यमघेन्द्राग्निं श्रवणं च चतुष्टयम्।।७०।।

दूसरे आदि कोष्ठ में वृश्चिकादि उलटे राशियों को लिखे। उसमें रोहिणी, मघा, विशाखा और श्रवण इन चार नक्षत्रों को लिखे।।७०।।

धातृवद्वीक्षयेद्देहजीवौ कर्कधनुर्धरौ।
नवदिग्रुद्रसूर्येन्दुनेत्राङ्गीष्वब्धिराशिपाः।।७१।।

उपर्युक्त चार नक्षत्रों में रोहिणी के समान ही देह-जीव का विचार करना चाहिए। यथा रोहिणी के प्रथम चरण में कर्क देह और धन राशि जीवसंज्ञक है। ९।१०।११।१२।१ ।२।३।५।४ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७१।।

धातृद्वितीयचरणे तुलास्त्रीदेहजीवकौ।
षष्ठसप्ताष्टार्करुद्रा दिगङ्कवसुसप्तपाः।।७२।।

रोहिणी के दूसरे चरण में तुला देह और कन्या जीव संज्ञक हैं। ६।७।८।१२।११।१०।९।८।७ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७२।।

धातृतृतीयचरणे देहजीवौ कुम्भाङ्गने।
षट्बाणाब्धिगुणाक्षीन्दुनन्ददिग्रुद्ररराशिपाः।।७३।।

रोहिणी के तीसरे चरण में कुम्भ देह और कन्या जीव संज्ञक है। ६।५।४।३।२।१।९।१०।११ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।७३।।

रोहिण्यन्तपदे देहजीवालिझषौ स्मृतौ।
सूर्येन्दुद्विगुणेष्वब्धितर्कशैलाष्टराशिपाः।।७४।।

रोहिणी के चौथे चरण में वृश्चिक देह और मीन जीव संज्ञक हैं। १२।१।२।३।५।४।६।७।८ राशियों के स्वामी क्रम से दशेश होते हैं।।७४।।

चान्द्ररौद्रभगार्यम्णमित्रेन्द्रवसुवारुणम्।
एतत्ताराष्टकं चैव विज्ञेयं चान्द्रवत्क्रमात्।।७५।।

मृगशिरा, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, अनुराधा, जेष्ठा, धनिष्ठा और शतभिषा— इन आठ नक्षत्रों के देह-जीवादि को मृगशिरा के समान समझना।।७५।।

देहजीवौ कर्कमीनौ मृगाद्यचरणस्य च।
व्यस्तमीनादि कर्कान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।७६।।

मृगशिरा के प्रथम चरण में कर्क देह और मीन राशि जीव संज्ञक हैं। मीन से उलटे कर्क पर्यन्त (१२।११।१०।९।८।७।७।६।५।४) राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७६।।

गौर्देहो मिथुनं जीवो इन्दुभस्य द्वितीयके।
त्रिद्व्येकाङ्कदिगीशार्कचन्द्रद्विभवनाधिपाः।।७७।।

मृगशिरा के दूसरे चरण में वृष देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती हैं। ३।२।१।९।१०।११।१२।१।२ राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७७।।

देहजीवौ नक्रयुग्मे मृगपादे तृतीयके।
त्रिबाणाब्धिरसागाष्टसूर्येशदशराशिपाः।।७८।।

मृगशिरा के तीसरे चरण में मकर देह और मिथुन राशि जीव संज्ञक होती है। ३।५।४।६।७।८।१२।११।१० राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७८।।

मेषचापौ देहजीवाविन्दुभस्य चतुर्थके।
व्यस्तं चापादि मेषान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः।।७९।।

मृगशिरा के चौथे चरण में मेष देह और धन जीव संज्ञक हैं। धन राशि से मेष पर्यन्त विलोम (९।८।७।६।५।४।३।२।१) राशियों के स्वामी दशेश होते हैं।।७९।।

एवं व्यस्ततरे ज्ञेयं देहजीवदशादिकम्।
स्पष्टं तवाग्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे।।८०।।

हे पार्वति! यह अपसव्य चक्र के देह-जीव आदि को तुम्हारे सामने कहा।।८०।।

अथ दशावर्षाणि—

भूतैकविंशगिरयो नवदिक् षोडशाब्धयः।।८१।।
सूर्यादीनां क्रमादब्दाः राशीनां स्वामिनो वशात्।।८१।।

५।१२।७।९।१०।१६।४ यह क्रम से सूर्यादि ग्रहों के दशावर्ष राशियों के अधिपति के क्रम से हैं। विशेष चक्र को देखिए।।८१।।

चक्रम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	अधिपाः
७	१६	९	२१	५	९	१६	७	१०	४	४	१०	दशावर्षाणि

दशाज्ञानप्रकारमाह—

नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः।
तदादि नवपर्यन्तमायुषं परिचक्षते।।८२।।

मनुष्य के जन्मकाल वा प्रश्नकाल में नक्षत्र का जो अंश (चरण) हो उससे आरम्भ करके नव (९) राशियों के वर्ष संख्या तुल्य उस मनुष्य की आयु होती है।।८२।।

सम्पूर्णायुर्भवेदादावर्धमंशस्य मध्यमम्।
अपमृत्युसमं कष्टमंशान्ते चापरे जगुः।।८३।।

अन्य विद्वानों का कहना है कि नक्षत्र के चरण के आदि में जन्म हो तो पूर्णायु, मध्य में आधी और अन्त में कष्ट वा अल्पायु होती है।।८३।।

नक्षत्रचरणतः नवांशज्ञानम्—

ज्ञात्वैवं स्फुटसिद्धान्तं राश्यंशं गणयेद्बुधः।
अनुपातेन वक्ष्यामि तदुपायंमतः परम्।।८४।।

इस सिद्धान्त को जानकर राशि के अंश की गणना करना चाहिए। अब मैं अनुपात द्वारा उसके जानने का उपाय कह रहा हूँ।।८४।।

गततारा त्रिभिर्भक्ता शेषं चत्वारि संगुणम्।
वर्तमानपदेनाढ्यं राशीनामंशको भवेत्।।८५।।

गतनक्षत्र संख्या (अश्विनी से जन्मनक्षत्र के पूर्व नक्षत्र की संख्या) को ३ से भाग देने से जो शेष बचे उसे ४ से गुणाकर गुणनफल में जन्मनक्षत्र वा वर्तमान नक्षत्र के वर्तमान चरण संख्या को जोड़ दे। जो संख्या हो वही मेष से गिनने से नवांश होता है।।८५।।

उदाहरण— जैसे पुनर्वसु के प्रथम चरण में जन्म है तो गतनक्षत्र (आर्द्रा) संख्या ६ में तीन से भाग देने पर शेष को ४ से गुणाकर उसमें पुनर्वसु के प्रथम चरण की संख्या १ जोड़ने से १० मेष से गिनने से मेष ही का नवांश हुआ।

चक्रे राशीनां वर्षयोगसंख्यामाह—

मेषगोयमकुलीरराशिषुस्वांशकेषु परमायुरुच्यते।
ज्ञानकं १०० मद ८५ गज ८३ स्तदा ८६ क्रमात्त-
त्त्रिकोणभवनेषु तद्भवेत्।।८६।।

कालचक्र में स्थित मेषादि राशियों से मेषांश में १००, वृषांश में ८५, मिथुनांश में ८३ और कर्कांश में ८६ वर्ष योग वा परमायु होता है। इन राशियों के त्रिकोण (५।९) राशियों में भी यही वर्ष योग होते हैं।।८६।।

स्पष्टार्थं चक्रम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंशकाः
१००	८५	८३	८६	१००	८५	८३	८६	१००	८५	८३	८६	वर्षयोगः

विशेष— यहाँ ज्ञानकं मदगज आदि शब्दों से 'कटपयवर्गभवैरिह अंकाः' इत्यादि के अनुसार अंकों को समझना चाहिए।

दशारम्भज्ञानप्रकारमाह—

ये जीवा अंशके जाता गतनाडीपलेन तु।
तदंशस्य हताङ्कस्तु पञ्चभूमिविभाजिताः।।८७।।

मनुष्य का जन्म नक्षत्र के जिस चरण में हो उसके गत घटी-पल को उसके वर्ष संख्या से गुणाकर गुणन फल में १५ का भाग देने से।।८७।।

एवं महादशारम्भे सूर्यादीनां यथाक्रमात्।
गणयेन्नवपर्यन्तमायुष्यं तत्प्रकीर्त्तितम्।।८८।।

लब्धि दशा का भुक्त वर्षादि होता है। इसे दशावर्ष में घटाने से भोग्य वर्षादि होता है। इस प्रकार से दशा का आरम्भ होता है।।८८।।

उदाहरण— किसी का पुनर्वसु नक्षत्र के तृतीय चरण में जन्म है। पुनर्वसु सव्य नक्षत्र है। उसका देहाधिपति भौम और जीवाधिपति गुरु है। पुनर्वसु का भभोग ५५।५२ भयात ३२।१० है। भभोग का चार भाग करने से एक भाग घट्यादि १३।४८।१५ हुआ। यही एक चरण का मान है। इसे दूना कर भयात से घटाने से शेष ४।१३।३० यह पुनर्वसु के तीसरे चरण की भुक्त घट्यादि है। इसका दशा वर्ष १०० है, इससे शेष घट्यादि को गुणा करने से ४००।१३००।३००० सवर्णन करने से ४२२।३०।१० हुआ। इसमें १५ का भाग देने से २८।३।१८ वर्षादि जन्मकाल में भुक्त हुआ। पुनर्वसु सव्य गणना में है, देहादि जीव पर्यन्त गणना होगी। अतः पुनर्वसु प्रथम चरण में देह मेष और जीव धनु है। अतः भुक्त वर्षादि २८।३।१८ में मेष से वृष पर्यंत के योग-वर्ष २३ को घटाने से ५।३।१८ यह वर्षादि मिथुन के भुक्त वर्षादि हुए। अतः इसे बुध के वर्षमान ९ से घटाने से ३।८।४२ वर्षादि भोग्य हुआ। अतः विंशोत्तरी दशा के समान ही मिथुन आदि दशा का क्रम हुआ। शेष चक्र से स्पष्ट है।

कालचक्रदशा—

मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	मे.	वृ.	
५ ३ १८	२१	५	९	१६	७	१०	७	१६	
२०१३	२०१८	२०३९	२०४४	२०५१	२०६२	२०७४	२०८४	२०९१	२१०७
३ १८	७ ०६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६	७ १६

दशानां नक्षत्राणि तत्पादानि च				नक्ष.	पा.	जीवा-विषाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	परमा. वर्षा.	देहा-विषाः	राश्य. अंशा
मृ. १च.	अ. १च.	पू. १च.	घ. १च.	मृगशिरा, पूर्वफाल्गुनी, अनुराधा, शतभिषा	१	बृ.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	८६	चं.	क.
मृ. २च.	अ. २च.	पू. २च.	घ. २च.		२	बु.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	८३	शु.	मि.
मृ. ३च.	अ. ३च.	पू. ३च.	घ. ३च.		३	बु.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	८५	श.	वृ.
मृ. ४च.	अ. ४च.	पू. ४च.	घ. ४च.		४	बृ.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	१००	मं.	मे.
आ. १च.	ज्ये. १च.	उ. १च.	शत. १च.	आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी स्वाती, शतभिषा	१	बृ.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	८६	चं.	मी.
आ. २च.	ज्ये. २च.	उ. २च.	शत. २च.		२	बु.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	८३	शु.	कुं.
आ. ३च.	ज्ये. ३च.	उ. ३च.	शत. ३च.		३	बु.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	८५	श.	म.
आ. ४च.	ज्ये. ४च.	उ. ४च.	शत. ४च.		४	बृ.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	सू.= ५व.	चं.= २१व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	१००	मं.	घ.

अथ कालचक्रदशायां सव्यमार्गचक्रम्

दशानां नक्षत्राणि तत्पादानि च					नक्ष.	पा.	देहा-धी.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	परमा. वर्षा.	जीवा-धिपाः	राश. अंशाः
अ. १च.	मू. १च.	पुन. १च.	पू. १च.	ह. १च.	अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद	१	मं.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	१०० वर्ष	बृ.	मे.
अ. २च.	मू. २च.	पुन. २च.	पू. २च.	ह. २च.		२	श.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	८५ वर्ष	बु.	बृ.
अ. ३च.	मू. ३च.	पुन. ३च.	पू. ३च.	ह. ३च.		३	शु.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	८३ वर्ष	बु.	मि.
अ. ४च.	मू. ४च.	पुन. ४च.	पू. ४च.	ह. ४च.		४	चं.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	८६ वर्ष	बृ.	कं.
भ. १च.	चि. १च.	पु. १च.	पू.षा. १च.	उ.भा. १च.	भरणी, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढ़, उत्तराभाद्रपद	१	मं.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	१०० वर्ष	बृ.	सिं.
भ. २च.	चि. २च.	पु. २च.	पू.षा. २च.	उ.भा. २च.		२	श.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	८५ वर्ष	बु.	कं.
भ. ३च.	चि. ३च.	पु. ३च.	पू.षा. ३च.	उ.भा. ३च.		३	शु.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	मं.= ७व.	शु.= १६व.	बु.= ९व.	८३ वर्ष	बु.	तु.
भ. ४च.	चि. ४च.	पु. ४च.	पू.षा. ४च.	उ.भा. ४च.		४	चं.	चं.= २१व.	सू.= ५व.	बु.= ९व.	शु.= १६व.	मं.= ७व.	बृ.= १०व.	श.= ४व.	श.= ४व.	बृ.= १०व.	८६ वर्ष	बृ.	वृ.